आचार्य रामदेव त्रिपाठी

माध्यमिक
हिन्दी व्याकरण एवं रचना

लेखक की अन्य कृतियाँ

आलोचना—

(१) हिन्दी भाषा का विकास—राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली,
(उत्तर-प्रदेश-सरकार से पुरस्कृत)

(२) भाषा विज्ञान की भारतीय परंपरा और पाणिनि—विहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना

(३) हिन्दी भाषानुशासन—बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना

(४) हिन्दी भाषा विज्ञान— ,, ,, ,, ,, ,,

(५) माध्यमिक हिन्दी व्याकरण और रचना—
आवासीय पटना सेन्ट्रल स्कूल, पटना-२०

(६) संक्षिप्त भोजपुरी व्याकरण—भोजपुरी अकादमी, पटना

(७) संस्कृत धातु पाठ—यन्त्रस्थ

(८) पाणिनि की भाषिक दृष्टि—अपूर्ण

काव्य—

(१) धर्मरथी (विभीषण विजय, प्रबन्धकाव्य)—गिरिश प्रकाशन, पटना

(२) सुमिरन (भोजपुरी मुक्तक कविताएँ)—शान्ता प्रकाशन, पटना

(३) अतिरथी (अर्जुन विजय)—प्रबन्ध काव्य—यन्त्रस्थ

(४) चतुष्पथ—(मुक्तक, गीत)—लक्ष्मी पुस्तकालय, पटना

(५) दुविधा (मुक्तक कविताएँ)—यन्त्रस्थ

(६) ध्यान शतकम्—संस्कृत स्फुट कविताएँ—यन्त्रस्थ

निबन्ध—

(१) समाज और साहित्य—यन्त्रस्थ

(२) वन्दे मातरम्— ,,

पाठ्य पुस्तक—

(१) संस्कृत की तीसरी से लेकर दसवीं तक की सभी पाठ्य पुस्तकों का लेखन या समीक्षण—पाठ्य पुस्तक प्रकाशन निगम, पटना

(२) संस्कृत सीखें—यन्त्रस्थ

स्थायी पता—द्वारा डॉ० [illegible], मुसल्लहपुर, पटना-६

माध्यमिक हिन्दी व्याकरण एवं रचना

माध्यमिक विद्यालयों, १० + २ इन्टरमीडियट महाविद्यालयों तथा समकक्ष
नेतरहाट आवासीय विद्यालय, तिलैया सैनिक स्कूल एवं अखिल भारतीय
पब्लिक स्कूल प्रतियोगिता परीक्षाओं के लिए उपयोगी

आचार्य रामदेव त्रिपाठी, डी० लिट्०
एम०ए० (संस्कृत एवं हिन्दी), व्याकरणाचार्य, साहित्याचार्य, न्यायशास्त्री, साहित्यरत्न
सेवा-निवृत्त प्राचार्य, नेतरहाट अन्त महाविद्यालय एवं पब्लिक स्कूल
तथा विजिटिंग प्रोफेसर, संस्कृत विश्व विद्यालय, दरभंगा

प्रकाशक
आवासीय पटना सेन्ट्रल स्कूल
कंकड़बाग, पटना-२०

MADHYAMIK HINDI VYAKARAN AVAM R

by

Acharya Ramadeva Thipathy, D. Lit

Price : Rs. 15/-

माध्यमिक हिन्दी व्याकरण एवं रचना

प्रकाशक : डा० वाई० के० सुदर्शन
आवसीय पटना सेन्ट्रल स्कूल
कंकड़बाग, पटना-२०

सर्वाधिकार : लेखकाधीन

संस्करण : प्रथम, १९८५

प्राप्तिस्थान : आवासीय पटना सेन्ट्रल स्कूल
कंकड़बाग, पटना-२०

मूल्य : रु० १५/- (पन्द्रह रुपए)

मुद्रक : जयदुर्गा प्रेस, नयाटोला, पटन

हिन्दी व्याकरण के आधार स्तम्भ

पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी

पं० कामता प्रसाद गुरु

तथा

आचार्य किशोरी दास वाजपेयी

को

सादर समर्पित
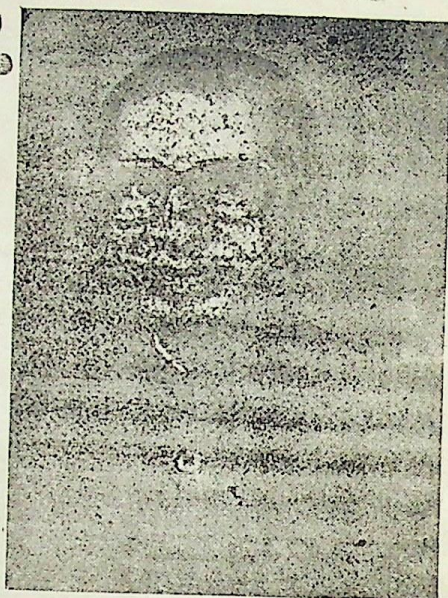
—रामदेव त्रिपाठी

आचार्य रामदेव त्रिपाठी डी० लिट०

(क) प्रारम्भ में गुरुकुल पद्धति (जिसमें पाणिनीय व्याकरण की अष्टाध्
महाभाष्य आदि तथा वेद, उपनिषद् आदि आर्ष ग्रन्थ थे) द्वारा, अध्ययन

(ख) तदनन्तर संस्कृत की टोल पद्धति (प्राचीन) से अध्ययन :

प्रथमा—व्याकरण साहित्य १९३३ प्रथम श्रेणी शास्त्री—साहित्य ,, प्रथम श्
मध्यमा— ,, ,, १९३६ ,, ,, आचार्य—व्याकरण १९४० ,
शास्त्री—व्याकरण १९३८ ,, ,, शास्त्री—न्याय ,, ,,
मध्यमा—न्याय १९३९ ,, ,, आचार्य—साहित्य १९४१ ,,

(ग) अन्ततः आधुनिक (अँगरेजी) पद्धति से अध्ययन :

मैट्रिक—पटना विश्वविद्यालय (१९४३)—जिले में प्रथम स्थान प्राप्
छात्रवृत्ति प्राप्त।

बी०ए० ऑनर्स ,, ,, (१९४७), संस्कृत ऑनर्स—प्रथम श्रेणी में
स्थान। स्वर्णपदक तथा स्नातकोत्तर छात्रवृत्ति, जो पूरे राज्य में केवल छह

साहित्यरत्न — हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग (१९४७)—प्रथम श्रेणी

एम०ए० (संस्कृत)—पटना विश्वविद्यालय (१९४९)—प्रथम श्रेणी में प्रथम स्
स्वर्णपदक तथा २०० रु० की पुस्तकों द्वारा पुरस्कृत; शोध छात्रवृत्ति भी।

एम० ए० हिन्दी—पटना विश्वविद्यालय—(१९६४) प्रथम श्रेणी।

डी०लिट्०—बिहार विश्वविद्यालय—(१९६७)—शोध विषय : "भाषा
की भारतीय परम्परा और पाणिनि"

पृष्ठभूमि

आलोचना और तुलना की दृष्टि से हिन्दी व्याकरण की प्रायः सभी महत्त्व-पूर्ण पुस्तकों को गंभीरता से पढ़ने का सुयोग मुझे १९६४ में मिला। हिन्दी का एम० ए० देने में भाषाविज्ञान के अध्ययन के लिए व्याकरण का अध्ययन, मनन भी मुझे लाभप्रद, आवश्यक लगा। इसके पूर्व मैट्रिक, आई० ए०, बी० ए० में परीक्षा मात्र की दृष्टि से पल्लवग्राही अध्ययन ही हुआ था। परिणामतः मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि—(१) हिन्दी व्याकरण भी अंग्रेजी व्याकरण के ही शीर्षकों के अनुसार अध्याय-विभाग कर लिखने में अधिक स्पष्टता होगी, क्योंकि (क) दोनों आधुनिक तथा विश्लेष-प्रधान भाषाएँ हैं, और (ख) हिन्दी का विकास (विशेषतः काल रचना) अंग्रेजी भाषा के प्रकाश में ही हुआ है। (२) परन्तु हिन्दी की पद-रचना (प्रत्यय, विभक्ति, सन्धि, समास आदि) तथा वाक्य-रचना पूर्णतः संस्कृत की अनुवर्त्तिनी है, अतः हिन्दी व्याकरण का शरीर, गति, संस्कार संस्कृत व्याकरण का अनुसरण करेंगे, परिधान अंग्रेजी व्याकरण का। (३) इसलिए हिन्दी (या किसी भी आधुनिक भाषा) का आधुनिक व्याकरण पाणिनि की सूत्र पद्धति से लिखना कठिन और असुविधा-प्रद ही नहीं, अलाभप्रद भी होगा। (४) किन्तु वस्तुस्थिति यह है कि हिन्दी के वैयाकरणों ने इसका संतुलन नहीं रखा है। किसी पर संस्कृत व्याकरण का उचित अनुपात से अधिक दवाब पड़ गया है, किसी पर अंग्रेजी का। (५) अंग्रेजी व्याकरण के ढर्रे पर लिखनेवाले ही विषय अधिक स्पष्ट कर सके हैं, किन्तु विवेचन में उनसे भी बहुत स्खलन हो गए हैं। कारण यह है कि साहित्यिक उच्च हिन्दी के ७० प्रतिशत शब्द शुद्ध संस्कृत के हैं, जिनका निर्माण संस्कृत के नियमों (प्रत्यय, संधि, समास आदि) के अनुसार हुआ है। हिन्दी के वाक्य भी संस्कृत के अनुसार बनते हैं, अंग्रेजी के अनुसार नहीं। इस कारण

जिन्हें पाणिनीय व्याकरण के कृत्, तद्धित, आदि प्रत्ययों; सुप्, तिङ् विभक्तियों, धातु, प्रातिपदिक आदि प्रकृतियों; सन्धि, कारक, समास आदि प्रक्रियाओं का गहरा ज्ञान नहीं था, वे हिन्दी भाषा के पदों, वाक्यों का सही विश्लेषण ही नहीं कर पाये। अब तक सर्वाधिक पूर्ण तथा सुन्दरतम मौलिक व्याकरण के लेखक स्व० कामता प्रसाद गुरु भी इस त्रुटि से मुक्त नहीं हो सके। (६) विश्लेषण के लिए हिन्दी की निजी विशेषता के विकास का भी ज्ञान आवश्यक है। उदाहरणार्थ, हिन्दी वाले यह नहीं समझ सके कि 'परिषद्-पत्रिका', 'सुहद्-संघ', 'संसद्-सदस्य' अशुद्ध शब्द है, सन्धि से सर्वत्र द् का त् हो जाएगा; अन्यथा उद्पात, उद्साह आदि प्रयोग होने लगेंगे। यदि मनोकामना बनाएँगे, तो पुरस्कार नहीं, पुरोकार बनने लगेगा। पुनर्परीक्षा होगा, तो अन्तःपुर नहीं अन्तर्पुर होने लगेगा। गुरु के सन्धि नियम ८१ से अधः+गति=अधोगति के अनुसार अन्तः+गत= अन्तोगत क्यों नहीं हुआ, अन्तर्गत कसे हो गया ? इस प्रकार की त्रुटियाँ सन्धि, उपसर्ग, समास, कृत् प्रत्यय, तद्धित प्रत्यय, कारक, विभक्ति, काल, संयुक्त क्रिया सभी के विचारों में हुई हैं। गुरु ने ठीक ही विश्लेषण किया है कि हिन्दी ने वाच्य के छह प्रकार विकसित कर लिये हैं। उसमें न संस्कृत की भाँति तीन (या चार) वाच्य हैं, न अंग्रेजी की भाँति दो। किन्तु किशोरीदास वाजपेयी ने संस्कृत के आधार पर उसका अनुचित खंडन कर दिया है। वाजपेयी जी का 'हिन्दी शब्दानुशासन' भी व्याकरण का स्वतंत्र पूर्ण ग्रन्थ नहीं। वह केवल कुछ टिप्पणियों; सुझावों से भरा है। व्याकरण की और पुस्तकें तो संकलन मात्र है।

१९६७ में जिस समय मैंने अपना शोध प्रवन्ध लिखकर उसे प्रकाशनार्थं राष्ट्रभाषा परिषद्, बिहार, पटना को दिया, उसी समय मैंने बिहार के कीर्त्ति-प्राप्त प्रकाशकों से अनुरोध किया था कि यदि वे प्रकाशित करने का वचन दें तो मैं एक आधुनिक हिन्दी व्याकरण लिखूँ। किन्तु प्रकाशकों ने हिन्दी के दो-दो महारथियों (डा० वासुदेव नन्दन प्रसाद तथा डा० वचनदेव कुमार) की रचनाएँ प्रकाशित करने के बाद इसकी उपयोगिता नहीं समझी। बाजार में आई ये दोनों पुस्तकें रचना (तथा परीक्षा) की दृष्टि से तो वास्तव में बहुत ही उपयोगी बन पड़ी हैं। माध्यमिक से भारतीय-प्रशासन-सेवा तक की सभी परीक्षाओं में निर्धारित हिन्दी व्याकरण के प्रायः सभी रचनात्मक तत्त्वों की इनमें मार्गदर्शन के लिए पर्याप्त चर्चा हो गई है, किन्तु व्याकरण के तत्त्व-विश्लेषण में होती आ रही भूलें इनमें बढ़ी ही हैं, घटी नहीं। फिर भी बाजार पर इन्हीं दोनों का अधिकार छाया हुआ है।

व्याकरण-लेखन से विमुख होकर मैंने 'हिन्दी भाषा का विकास' लिखा जिसमें आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा भी संयुक्त लेखक थे। राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली ने १९७१ में इसे प्रकाशित किया। बाजार में इसे अच्छा यश मिला। तब तक राष्ट्रभाषा परिषद्, बिहार ने मेरे एक दूसरे भाषा वैज्ञानिक ग्रन्थ 'भाषाविज्ञान की भारतीय परंपरा और पाणिनि' का भी मुद्रण आरम्भ करा दिया। इन दोनों पुस्तकों से हिन्दी भाषा विज्ञान तथा व्याकरण के क्षेत्र में मेरा भी नाम लिया जाने लगा। फलतः बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी के तत्कालीन अध्यक्ष डा० शिवनन्दन प्रसाद, डी० लिट० ने मुझसे एक 'हिन्दी व्याकरण ऐतिहासिक दृष्टि से' लिख देने का अनुरोध किया। इस ग्रन्थ से स्नातक तथा स्नातकोत्तर दोनों स्तरों की आवश्यकता की पूर्त्ति की अपेक्षा थी, किन्तु इसमें रचना अंश की उपेक्षा थी। इसी बीच राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, दिल्ली ने मुझसे एक माध्यमिक परीक्षा की दृष्टि से उपयोगी हिन्दी व्याकरण लिखने का आग्रह किया। मैंने ये दोनों काम प्रायः १९७५ तक पूरे कर दे दिए।

मुझे ऐसा लगता है कि कोई भी लेखक किसी भी विषय पर जो कुछ गंभीर बातें लिख देता है, वह ईश्वरीय प्रेरणा से ही। ईश्वर ही समाज की आवश्यकता की पूर्त्ति के लिए किसी को निमित्त बनाकर अपना काम करा लेता है, किन्तु 'श्रेयांसि बहु विघ्नानि'। दोनों के प्रकाशन में प्रशासनिक कठिनाइयाँ आ गईं। फलतः १९८५ तक दोनों पुस्तकें संचिकाओं में दबी रहीं। उसके बाद स्नातकोत्तर-स्तरीय ऐतिहासिक व्याकरण 'हिन्दी भाषानुशासन' नाम से मुद्रित होने लगा, और स्नातक-पूर्वस्तरीय व्याकरण 'माध्यमिक हिन्दी व्याकरण एवं रचना' के नाम से।

इसी बीच बाजार में कागज की मँहगी से यह भी ध्यान में रखना आवश्यक हो गया कि पृष्ठ संख्या अधिक न हो, जिससे मूल्य बढ़ाना पड़े। स्नातकोत्तर-स्तरीय व्याकरण में तो रचना के रखने का कभी संकल्प ही नहीं रहा, किन्तु माध्यमिक (एवं स्नातकपूर्व) स्तरीय व्याकरण में भी रचना के उतने ही अंश रखे गए, जितने इस स्तर के लिए आवश्यक थे। छन्दःशास्त्र, काव्यशास्त्र, निबन्ध आदि तो सर्वथा छोड़ ही दिए गए, क्योंकि इनसे पुस्तक का आकार बहुत बढ़ जाता। वस्तुतः इस पुस्तक में व्याकरणिक विश्लेषण ही मुख्य है, रचना-शिक्षण गौण, किन्तु इसका मनोयोग से अध्ययन करने वाले छात्र उच्चस्तरीय परीक्षाओं में भी अपेक्षित व्याकरण तथा रचना की बारीकियों से परिचित हो जाएँगे, क्योंकि इसमें सारी पद्धतियों का संक्षेप में मार्ग-दर्शन करा दिया गया है।

यदि व्याकरण शास्त्र के प्रेमी शिक्षकों में इसका स्वागत हुआ, तो अगले संस्करण में रचना खण्ड में और उपयोगी बातें जोड़ी जा सकती हैं। विश्लेषण पक्ष में विस्तृततर ज्ञान के लिए तो 'हिन्दी भाषानुशासन'[1] ("हिन्दी व्याकरण –ऐतिहासिक दृष्टि से") का अध्ययन आवश्यक होगा।

विषय के उपस्थापन में ऐसा मनोयोग, जिसमें कोई प्रमाद, स्खलन, त्रुटि न रह सके, साधारण मानव के लिए असंभव है। घर में रोज नये-नये प्रत्यवाय आकर मनको विक्षिप्त करते रहते हैं। इस पुस्तक में भी अनेक अशुद्धियाँ होंगी। प्रूफ-संशोधन की त्रुटियाँ तो बहुत रह गई हैं। विद्वानों से करबद्ध प्रार्थना है कि वे विषय के विश्लेषण, उपपादन में हुई भूलों की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट कर मुझे अनुगृहीत करेंगे, ताकि अगले संस्करण में आवश्यक सुधार कर सकूँ।

डा० युगल किशोर सुदर्शन के आर्थिक तथा श्री नगेन्द्र प्रसाद सिंह के तकनीकी सहयोग के बिना यह पुस्तक न तो इस समय तक, न इस रूप में, प्रकाशित हो पाती; अतः मैं इन दोनों के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करना आवश्यक समझता हूँ।

—रामदेव त्रिपाठी

१ बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, सैदपुर, पटना से प्रकाशित।

सिलेबस

बिहार इन्टरमिडियट शिक्षा परिषद्, पटना

आई० ए०, आई० एस-सी० एवं आई० कॉम० परीक्षाएँ

राष्ट्रभाषा हिन्दी (हिन्दी भाषियों के लिए)

१. व्यावहारिक व्याकरण—मुहावरे, श्रुतिसम भिन्नार्थक शब्द, पर्यायवाची, विपरीतार्थक शब्द से संबंधित प्रश्न
२. सामाजिक, राजनैतिक, वैज्ञानिक या प्राकृतिक कोटि का एक निबंध
३. संक्षेपण से संबद्ध एक प्रश्न १०
४. कार्यालय पत्र, व्यावसायिक पत्र, सम्पादक के नाम पत्र कोटि का एक संक्षिप्त पत्र

राष्ट्रभाषा हिन्दी (अहिन्दी भाषियों के लिए)

१. मुहावरा, लिंग निर्णय, वाक्य शुद्धि, विपरीतार्थक, पर्यायवाची, अनेक शब्दों के लिए एक शब्द संबंधी प्रश्न
२. संक्षेपण से एक प्रश्न
३. पर्व-त्योहार, उत्सव, नेता और साहित्यकार की जीवनी, प्रकृति वर्णन तथा यात्रा संबंधी एक विवरणात्मक निबन्ध

बिहार माध्यमिक विद्यालय परीक्षा समिति, पटना

माध्यमिक परीक्षा

१. भाषा—भाषा का स्वरूप, हिन्दी भाषा का संक्षिप्त परिचय, हिन्दी का क्षेत्र, महत्त्व व विशेषताएँ।

२. ध्वनि—वर्ण का स्वरूप, हिन्दी के वर्ण, स्वर और व्यंजन, अनुस्वार और अनुनासिक, पंचमाक्षर और अनुस्वार, श, स, क्ष आदि प्रायः अशुद्ध उच्चरित ध्वनियों का शुद्ध उच्चारण, अक्षर का स्वरूप और प्रकार, बलाघात, संगम, अनुतान, संधि, संधियों के सामान्य नियम, उच्चारण की विशेष अशुद्धियाँ और उनका निदान।

३. हिन्दी वर्णमाला और लिपि-विज्ञान—ध्वनि और लिपि के सम्बन्ध, हिन्दी के लिपि चिह्न, हिन्दी के एकाधिक रूप वाले चिह्न, हिन्दी वर्तनी के महत्त्वपूर्ण नियम। वर्तनी की विशेष अशुद्धियाँ (क्ष, छ, व, ब, श, ष, स आदि से संबन्धित) और उनके निदान एवं उपचार, अल्पविराम, उद्धरण-चिह्न,

समास-चिह्न, प्रश्नसूचक, विस्मयादिबोधक आदि विराम-चिह्नों के प्रयोग एवं नियम ।

४. हिन्दी की संरचना—वाक्य, उपवाक्य, पदबंध, पद, शब्द ।

५. संज्ञा—कार्य और भेद, पद-परिचय, लिंग, वचन, कारक में सम्बंध ।

६. सर्वनाम—कार्य और भेद, पद-परिचय, पुरुष, लिंग, वचन, कारक और रूप-रचना ।

७. विशेषण—कार्य और भेद, पद-परिचय, रूप-रचना, प्रविशेषण ।

८. क्रिया—कार्य और भेद, पद-परिचय, काल और पक्ष, सहायक और संयुक्त क्रियायें ।

९. अव्यय—कार्य और भेद, समुच्चयबोधक, विस्मयादिबोधक, निपात और उनके कार्य ।

१०. वाक्य-रचना—

(क) पदबंध का महत्त्व और भेद, संज्ञा-पदबंध, विशेषण-पदबंध, अव्यय-पदबंध, पद-बंधों में शब्दक्रम ।

(ख) वाक्य और उपवाक्य-संरचना और भेद, उपवाक्यों में शब्दक्रम, उपवाक्यों के संयोजक ।

(ग) वाक्य-भेद—सरल, संयुक्त और मिश्र; इनकी रचना और रूपान्तर ।

(घ) सामान्य वाक्य-अशुद्धियाँ और उनके संशोधन ।

(ङ) वाक्य-विश्लेषण—सरल, संयुक्त और मिश्र वाक्यों का विश्लेषण ।

११. शब्द रचना—शब्द भेद—तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी शब्द, रूढ़, यौगिक, योगरूढ़, मूल शब्द, उपसर्ग और प्रत्यय, मूल शब्द के साथ उपसर्ग और प्रत्यय का प्रयोग, संधि, समास और द्विरुक्ति, समास-भेद, संज्ञा समास, विशेषण समास, क्रिया समास और अव्यय समास ।

१२. अर्थ—शब्द और अर्थ में सम्बन्ध—कोशीय और व्याकरणिक शब्द, पर्याय, विलोम, ध्वन्यात्मक शब्द, द्विरुक्ति, मुहावरे और लोकोक्तियाँ ।

१३. रचना-लेखन—

(क) प्रार्थना-पत्र, निमंत्रण-पत्र, बधाई-पत्र, संवेदना-पत्र, धन्यवाद-पत्र, आदेश-पत्र, व्यावसायिक-पत्र आदि लिखना, तार लिखना ।

(ख) स्तरानुकूल उपयुक्त विषयों पर वर्णनात्मक, विवरणात्मक और कल्पनात्मक निबन्ध लिखना ।

(ग) निर्दिष्ट रूपरेखा के आधार पर निबन्ध और कहानी लिखना ।

(घ) संक्षेपण, भावार्थ और व्याख्या लिखना ।

(ङ) देखी घटनाओं का वर्णन, उन पर अपनी प्रतिक्रिया; स्वतंत्र रूप से कहानी, संवाद लेखन; या अपूर्ण का पूरण; कहानी का संवाद, संवाद का कहानी में रूपान्तरण आदि ।

—•—

विषय-सूची

सूत्रपात

मनुष्य अपने विचार या भाव को दूसरे मनुष्य तक पहुँचाने के लिए विभिन्न संकेतों का सहारा लेता है। इनमें जो मुँह से स्पष्ट **बोला** तथा कान से स्पष्ट **सुना** जा सकता है, वह ध्वनि-संकेत ही **भाषा** कहलाता है। मन में वह विचारित रूप में रहता है, उच्चारित होने पर भाषा बन जाता है। **मनन** का ही अगला सोपान है **वचन** अर्थात् बोलना और वचन का ही पहला सोपान है मनन (चिन्तन) यानी सोचना।

उच्चारण सदा दूसरों के लिए ही नहीं किया जाता। कभी-कभी अपना मनोभाव अपने लिए भी अधिक स्पष्टता के निमित्त उच्चरित हो जाता है अथवा कर दिया जाता है। जैसे, मंत्र का विना किसी ध्वनि के मन में मनन भी किया जाता है और उच्च ध्वनि से उच्चारण भी।

मानव-मन के भाव या विचार तो कभी-कभी इतने जटिल होते हैं कि उनका दूसरों तक संप्रेषण या स्वयं ग्रहण भाषा द्वारा भी शत-प्रतिशत स्पष्ट नहीं हो पाता, प्रायः कामचलाऊ या व्यवहार-साधक मात्र हो पाता है। मनुष्य से भिन्न प्राणियों की बोली तो ध्वनि मात्र रह जाती है, भाषा नहीं बन पाती, क्योंकि वह केवल सरल तथा अत्यल्प भावों को, वह भी अव्यक्त और अस्पष्ट रुप में ही प्रकट कर पाती है। मनुष्य भी भाषा जन्मतः नहीं प्राप्त करता, परम्परा से, समाज के सम्पर्क से विकसित करता है। अतः प्रत्येक समाज की अपनी पृथक् संकेत-पद्धति, पृथक् भाषा रहती है। इसीलिए भाव, विचार और अर्थ का भाषा या शब्द से कोई वैसा स्वाभाविक सम्बन्ध नहीं है, जैसा आग का गर्मी या पानी का गीलापन से। एक ही अर्थ को एक समाज दूसरे शब्द से प्रकट करता है, दूसरा दूसरे से। एक ही वस्तु एक समाज (हिन्दी) में आग कहलाती है, दूसरे समाज (अँगजी) मे फायर। इसका यह मतलब नहीं कि भाषा-जगत् में अव्यवस्था है। केवल यह तात्पर्य है कि किसी शब्द से किसी अर्थ की प्रतीति कराना कोई वैज्ञानिक नहीं, अपितु पूर्णतः सामाजिक नियम है। इसीलिए भाषा देशभेद तथा काल-भेद से परिवर्तनशील है,

इस प्रकार, **भाषा एक विशेष (क्षेत्र तथा काल के) समाज के व्यक्तियों के द्वारा परम्परा से विकसित और मर्यादित एवं उच्चारण से प्रकाशित ऐसा वर्णात्मक ध्वनि संकेत है, जिसके द्वारा मानव अपने मनोभावों को दूसरे से ग्रहण कराने अथवा स्वयम् ग्रहण करने के लिए उन्हें स्पष्ट आकार प्रदान करता है।**

"भाषा मुखोच्चारित ध्वनि-प्रतीकों की वह व्यवस्था, है जिसके सहारे एक निश्चित समुदाय के व्यक्ति आपस में विचार-विनिमय अथवा स्वयं विचार करते हैं।" यह परिभाषा ठीक नहीं। भाषा ध्वनियों की व्यवस्था को नहीं, व्यवस्थित ध्वनि-प्रतीक को कहते हैं।

---

१. हिन्दी व्याकरण और रचना—डा० भोलाशंकर व्यास डा० भोलानाथ तिवारी, डा० रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव—राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् नई दिल्ली।

भाषा मुख्यतः मुँह द्वारा बोलकर कान द्वारा ग्रहण कराई जाती है। पर आवश्यकतावश यह हाथ से अंकित कर आँख से भी ग्रहण कराई जा सकती है पहली को उच्चारित तथा दूसरी को लिपिबद्ध कहते हैं। वाचक लिपि को भी आँखों से पढ़ या ग्रहण कर पहले उसे मन-ही-मन उच्चारित ही करता है, तब उसका अर्थ-ग्रहण करता है। कोई (अविकसित) भाषा बिना लिपि की भी रह सकती है और कोई (विकसित) अनेक लिपियों में भी लिखी जा सकती है। एक ही लिपि अनेक भाषाओं को भी प्रकट कर सकती है। भाषा भाव का एक संकेत या प्रतीक है और लिपि भाषा का। लिपि की भाँति टेलिग्राम अथवा सैनिक संकेत आदि के लिए प्रयुक्त झंडा आदि भी मुख्य भाषा के ही उपस्थापक होते हैं।

हिन्दी का अर्थ है 'हिन्द की'। जैसे बिहार से बिहारी, पंजाब से पंजाबी, वैसे ही हिन्द से हिन्दी दोनों को कहते हैं, वहाँ की जनता को भी भाषा को भी पर हिन्दी हिन्द की सभी भाषाओं को नहीं, केवल उस भाषा को कहते हैं जो मूलतः केन्द्र अर्थात् मेरठ, बिजनौर, दिल्ली के आस-पास की बोली थी, पर अब सामान्य शिष्ट भाषा के रूप में पंजाब से बिहार और हिमालय से मध्यप्रदेश तक व्यवहृत हो रही है। यह भाषा थोड़ी बहुत सारे हिन्द या भारत में समझी बोली जाती है। इसी लिए इसका नाम हिन्दी पड़ा है। इसी प्रकार संस्कृत में भाषा का पर्याय 'भारती' बन गया है। अब हिन्दी भी संविधान से पूरे भारत की राष्ट्र-भाषा बन चुकी है, अतः भारती कही जा सकती है।

जो शास्त्र भाषा की शुद्धता, अशुद्धता, रचना आदि का विवेचन करे उसे व्याकरण कहते हैं। मानव-मन का कोई भाव या विचार जन-साधारण में एक बात कहलाता है। व्याकरण में इसे अर्थात् एक बात यानी एक पूर्ण-विचार को व्यक्त करनेवाले मौखिक ध्वनि-समूह को एक अनुच्छेद कहते हैं। यह भाषा का शरीर है, भाषा की पूर्णता इसी में है। अनुच्छेद चूँकि परस्पर सम्बद्ध वाक्यों से बनता है, अतः भाषा की सार्थक व्यवहार-साधक पूरी इकाई वाक्य ही माना जाता है। उदाहरणार्थ—"मनुष्य का जन्म समाज के लिए नहीं हुआ है, समाज मनुष्य के लिए बना है। जो लोग मनुष्य के अन्तःस्थ भगवान् को भूलकर समाज को ऊँचा स्थान देते हैं, वे अपदेवता की पूजा करते हैं। अयथार्थ समाज मनुष्य-जीवन की कृत्रिमता का लक्षण और स्वधर्म की विकृति है।"[1]

उद्धरण चिह्नों से घिरा उपर्युक्त अंश एक बात और अनुच्छेद है, जो तीन अनेकात्मक वाक्यों से बना है। प्रत्येक अनेकात्मक वाक्य दो एकात्मक या सरल वाक्यों से बना है। एक समापिका क्रियावाले पद-समूह को सरल वाक्य कहते हैं। वैसे, एक सरल वाक्य से भी अनेकत्र अनुच्छेद बन जाता है, जैसे, "अब गाड़ी कानपुर स्टेशन पर आ गयी थी।"

---

1. अधिकार का प्रश्न—भगवती प्रसाद वाजपेयी।

इस प्रकार यद्यपि भाषा का लघुतम अंग वाक्य है पर अध्ययन-विश्लेषण के लिए उसके प्रत्यंगों, उपांगों की कल्पना करनी पड़ती है। (क) वाक्य पदों में विभाजित किए जाते हैं। (ख) पद शब्दों में, (ग) शब्द अक्षरों में, और (घ) अक्षर वर्णों में। उदाहरणार्थ—"बच्चो, तुम्हें किसने मिठाइयाँ दीं।" यह एक वाक्य है, जिसमें पाँच पद हैं। इनमें से प्रत्येक पद किसी-न-किसी मूल शब्द का वाक्य में प्रयोग के लिए सजाया हुआ रूप है। भाषा के अध्ययनोपयोगी वर्ण या वर्णसमूह रूप सार्थक अंग ही शब्द कहलाते हैं। ये वाक्य में प्रयुक्त होने के लिए परस्पर अन्वित होकर आवश्यकतानुसार रूप परिवर्त्तन कर पद बन आते हैं। जैसे उपर्युक्त उदाहरण में :—

पद	बच्चो	किसने	तुम्हें	मिठाइयाँ	दीं
मूल शब्द	बच्चा	कौन	तू	मिठाई	दे

किसी शब्द में एक से अधिक अक्षर[1] (सिलेबल) अर्थात् एक बार में उच्चारण योग्य खण्ड भी रहते हैं। 'बच्चा' में दो अक्षर या शब्द-खण्ड हैं; क्रम से 'बच्' और 'चा' 'मिठाई में तीन खण्ड है, 'मि', 'ठा', 'ई'. किसी में एक ही, जैसे,—"दे'

प्रत्येक अक्षर में केवल एक स्वर तथा एक या एक से अधिक व्यंजन भी रह सकते हैं, जैसे 'आ' में, केवल एक स्वर है 'दे' में एक व्यंजन तथा एक स्वर है 'द् और 'ए'। 'धिक्' में एक स्वर में दो व्यंजन सटे हैं, एक पीछे एक आगे 'म्हें में दो व्यंजन पीछे ही सटे हैं। यह ध्वनि (स्वर-व्यंजन आदि) ही भाषा की मूलतम तथा लघुतम इकाई है, जो प्रायः अर्थहीन होने पर भी भाषा के अध्यापन की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है।

व्याकरण में भाषा के इन्हीं वर्ण, अक्षर, शब्द, पद तथा वाक्य पाँच अंगों पर विचार किया जाता है। विरामादि चिह्नों के विचार का क्षेत्र वाक्य से अधिक अनुच्छेद होता है, जो भाषा का छठा अंग माना जा सकता है। कविता के चरणों में छन्दविचार भी किया जाता है।

प्रश्न

(१) भाषा का क्या अर्थ है ? उसके कितने रूप हैं ।

(२) व्याकरण का क्या कार्य है ?

(३) भाषा के कितने अंग-प्रत्यंग हैं !

(४) भाषा की लघुतम इकाई क्या है ?

(५) पद किसे कहते है ?

१. संस्कृत में अक्षर का प्रयोग वर्ण के लिए भी मिलता है।

अध्याय १

वर्ण विचार

ध्वनि

सामान्यतः ध्वनि किसी प्रकार की आवाज को कहते हैं, वंशी की ध्वनि, "दादुर धुनि चहुँ ओर सुहाई" आदि । पर व्याकरणशास्त्र में ध्वनि का अर्थ भाषा-ध्वनि है, जो वर्णात्मक होती है । वर्ण मानव-भाषा की वह लघुतम इकाई है, (क) जिससे लघुतर अंग का स्पष्ट उच्चारण और ग्रहण नहीं किया जा सकता । (ख) और जो वृहत्तर अंग **शब्द** और **पद** के निर्माण के द्वारा बृहत्तम अंग **वाक्य** (तथा अनुच्छेद) के निर्माण में सहायक होती है । शिष्ट मानव अपने भाव-प्रकाशन के लिये इन्हीं ध्वनियों का वरण करते हैं । अतः ये वर्ण भी कहलाती है । वर्णों के समूह को वर्णमाला कहते हैं । हिन्दी ने अपनी वर्णमाला संस्कृत से ली है । वह यह है :—

(१) **स्वर**—मूल या ह्रस्व स्वर —अ, इ, उ, ऋ, लृ —५

दीर्घ स्वर— आ, ई, ऊ, ॠ —४

संधि स्वर— ए ओ, ऐ औ —४

———

१३

(२) **व्यंजन**—कवर्ग—क ख ग घ ङ चवर्ग —च छ ज झ ञ

टवर्ग—ट ठ ड ढ ण तवर्ग —त थ द ध न

पवर्ग—प फ ब भ म अन्तस्थ - य र ल व

ऊष्म—श ष स ह अयोगवाह—विसर्ग (:), अनुस्वार (ं) ।

उपर्युक्त ध्वनियों के अतिरिक्त हिन्दी ने ड़ और ढ़ ये दो नई ध्वनियाँ स्वयं विकसित की है ।

इस प्रकार, हिन्दी में १३ स्वर और ३५ व्यंजन तथा २ अयोगवाह हैं । पाणिनि ने आ, ई, ऊ तथा ॠ को स्वतन्त्र वर्ण नहीं, क्रमशः अ, इ, उ तथा ऋ का ही एक भेद-विशेष, दीर्घरूप माना है, इस दृष्टि से हिन्दी में कुल ४६ ही वर्ण माने जाने चाहिए । कुछ लोग ह्रस्व ए तथा ओ को भी अलग वर्ण मानते हैं, यह ठीक नहीं, पूर्ववत् वे द्विमात्रिक ए ओ के ही भेद-विशेष एकमात्रिक रूप हैं । मात्रा-भेद से वर्णभेद नहीं मानना चाहिए ।

इस प्रकार, हिन्दी में अपने कुल छियालिस वर्ण हैं । इनके अतिरिक्त हिन्दी में छह विदेशी वर्ण-ध्वनियों का भी प्रयोग होता है :—ऑ क़, ख़, ग़, ज़, तथा फ़ ।

क्ष, त्र, ज्ञ स्वतन्त्र नहीं, अपितु संयुक्त वर्ण हैं, क्रम से क्‌ष = क्ष, त्‌र = त्र तथा ज्‌ञ = ज्ञ । न्ह म्ह, रह् या ल्ह भी एक व्यंजन नहीं है, प्रत्येक में दो व्यंजनों का ऐसा दृढ़ संयोग है कि इनका पार्थक्य पूर्ण स्पष्ट नहीं हो पाता ।

अ, इ, उ के दीर्घ रूपों आ, ई, ऊ के हिन्दी में बहुत उपयोग होते हैं । ऋ के दीर्घ रूप ॠ का प्रयोग केवल संस्कृत भाषा में ही उपलब्ध होता है, जैसे मातृ + ऋण = मातॄण । दीर्घ ॡ का प्रयोग संस्कृत में भी कहीं नहीं मिलता । ऋ ङ ञ ण तथा ष संस्कृत से लिए गये हिन्दी शब्दों में बहुत मिलते हैं, ऋषि, ऋण, याच्ञा, यज्ञ, (यज्ञा) वाङ्मय परिणत, मणि, षष्ठी, भूषण आदि । 'ऌ' का एक ही शब्द में उपयोग मिलता है 'क्लृप्तकल्पना' ।

उच्चारण तथा वर्णधर्म

बाह्य प्रयत्न :

बाहर निकलनेवाली गन्दी साँस साधारणतः तो श्वास-नलिका से होकर नाक से ही बाहर आती है, पर जब अपना कोई विचार प्रकट करना होता है तब यह मुखविवर से बाहर लाई जाती है । इसके स्वच्छन्द निकलने में मुरली की भाँति श्वासनलिका के ऊपरी छिद्रों पर कृत्रिम अवरोध डालने से ही वर्ण-ध्वनियों का उच्चारण होता है । ये छिद्र या विवर तीन हैं :—(क) काकल या कण्ठ-विवर, (ख) मुखविवर तथा (ग) नासिका-विवर । कण्ठ-विवर श्वासनलिका के ऊपरी भाग में है, इसे ही आज की भाषा में स्वरयन्त्रमुख कहते हैं । स्वरयन्त्र-मुख के बीच, परस्पर सटे अनगिनत स्नायु तारों से बनी, दोनों ओठों की भाँति आमने-सामने स्थित दो मांसल झिल्लियाँ हैं, जिन्हें स्वरतन्त्री कहते हैं । जब निःश्वास वायु के पास पहुँचते ही दोनों स्वरतन्त्रियाँ तनकर-आमने सामने से आकर वायु का मार्ग प्रायः अवरुद्ध कर देती हैं, तब निःश्वास-वायु इन्हें धक्का देकर काकल-द्वार को खोलकर बाहर निकलती है । इस अवरुद्ध-प्राय वायु से उत्पन्न ध्वनियों में काकलमुख के संवार अर्थात् संवरण या अवरोध के कारण नाद और घोष (गूँज) होता है । अतः निम्नलिखित ध्वनियों को **संवार, नाद घोष** कहते हैं :—

(१) स्वर, (२) अन्तस्थ । (३) ग घ ङ, ज झ ञ, ड ड़, ढ ढ़ ण, द ध न, ब भ म । (४) ह । (५) अनुस्वार ।

जब निःश्वास वायु के निकट आ जाने पर भी ये दोनों स्वरतन्त्रियाँ तनकर मार्ग नहीं रोकतीं, शिथिल बनी रहकर संकरे मार्ग से उसे निर्बाध ऊपर जाने देती है, तब उस हवा से उत्पन्न ध्वनि में विवार अर्थात् स्वरयन्त्रमुख के खुला रहने के कारण नाद और घोष नहीं होता । वे अघोष श्वास-प्राय रह जाती हैं । अतः अधोलिखित वर्णों को **विवार श्वास अघोष** कहते हैं —

(१) क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ। (२) श ष स। (३) विसर्ग।

इनमें से जिन ध्वनियों के उच्चारण में प्राण अर्थात् निःश्वास वायु कम लगती है, उन्हें **अल्पप्राण** कहते हैं, और जिनमें अधिक लगती है, उन्हें **महाप्राण**। क ग ङ, च ज ञ, ट ड़ ण, त द न प ब म, य र ल व, अनुस्वार तथा स्वर अल्पप्राण हैं, शेष महाप्राण।

इस प्रकार, स्वरयन्त्रमुख से थोड़ा या बहुत परिवर्तित वायु जब मुखविवर में पहुँचती है, तब वहाँ की प्रक्रिया से प्रत्येक वर्ण पूरा स्पष्ट रूप ग्रहण कर लेता है। जैसे स्वरयंत्रमुख में दोनों ओर की स्वरतंत्रियाँ समीप आकर मार्ग को संकीर्ण कर भीतर से निकलती श्वास-वायु को ध्वनि में परिणत करती है; ठीक उसी प्रकार मुखविवर में नीचे की सतह (जीभ या अधर) और ऊपर की छत (तालु या होठ) पास आकर मार्ग को इतना संकरा कर देती है कि भीतर से आयी वायु-ध्वनि मुख-विवर से बाहर निकलने के पहले किसी-न-किसी पूर्ण वर्ण-ध्वनि में विकसित हो जाती है। परंतु दोनों विवरों की अवरोध-प्रक्रिया में अन्तर है। काकल में अवरोध के समय दोनों स्वरतंत्रिकायें सक्रिय होकर आमने-सामने से आती हैं, अतः किसी भी वर्ण के उच्चारण के समय एक ही स्थान में मार्ग ढकता है। परंतु मुखविवर में, सतह और छत नीचे ऊपर है, सतह ही अधिक सक्रिय हो ऊपर की ओर उठकर छत के पास पहुँच वायु मार्ग को रोकती है, और चूँकि छत और सतह दोनों में कुछ अधिक लम्बाई है, अतः किसी वर्ण के उच्चारण के समय सतह का प्रायः पिछला भाग छत के पिछले भाग के पास जाता है, दूसरे वर्ण के उच्चारण में मँझला भाग मझले भाग के पास, तीसरे वर्ण के उच्चारण में अगला भाग अगले भाग के पास। (क) ऊपरी छत अपेक्षाकृत स्थिर रहती है, इसलिये इसे स्थान कहते हैं। ऊपरी छत के जिस भाग के पास निचली सतह पहुँचकर वायु के अवरोध से जिस वर्ण को उत्पन्न करती है, उसे उस वर्ण का स्थान कहते हैं। (ख) निचली सतह ही ऊपर उठकर हवा को रोकने की चेष्टा करती है, अतः उसे करण कहते हैं। निचली सतह का जो भाग जिस वर्ण के उच्चारण के प्रयत्न में ऊपर की ओर उठता है, वह भाग उस वर्ण का करण कहलाता है, (ग) करण स्थान के पास पहुँचने के लिए जो चेष्टा करता है, उसे ही आभ्यंतर प्रयत्न कहते हैं।

आभ्यंतर प्रयत्न :

इस प्रकार, वर्णों के उच्चारण में दो स्थानों में विशेष प्रयत्न करना पड़ता है :—(क) एक तो स्वरयन्त्र मुख या काकल में, (ख) दूसरे मुखविवर में।

उनमें मुखविवर वाला **आभ्यन्तर** कहा जाता है, क्योंकि यह मुँह के भीतर होता है, और काकल या स्वरयन्त्रमुख वाला बाह्य, क्योंकि वह मुँह

के बाहर होता है। काल की दृष्टि से बाह्य प्रयत्न पूर्ववर्ती होता है। इस में स्वरयन्त्रविवर की दो में कोई एक स्थिति रहती है :—विवार या संवार, इसलिये बाह्य प्रयत्न की दृष्टि से सभी वर्ण दो श्रेणियों में ही बँट जाते हैं, अघोष या घोष। पर आभ्यन्तर प्रयत्न की दृष्टि से मुखविवर में पाँच स्थितियाँ होती हैं, अतः इस दृष्टि से वर्णों की निम्नलिखित पाँच श्रेणियाँ बन जाती हैं :—

(१) स्पृष्ट :—जिस वर्ण के उच्चारण में उसका करण जिह्वा या अधर उसके स्थान तक पहुँचकर एक क्षण के लिये उसे छूकर हवा का मार्ग प्रायः सर्वथा अवरूद्ध कर देता है, जिससे हवा थोड़ी देर प्रायः रुककर फिर झटके से बाहर निकलती है, उसका आभ्यन्तर प्रयत्न तथा स्वयं वह वर्ण भी स्पृष्ट या स्पर्श कहलाता है। निम्नलिखित वर्ण स्पर्श हैं—

क ख ग घ ङ। च छ ज झ ञ। ट ठ ड ढ ण। त थ द ध न। प फ ब भ म। =२५

इनमें ङ ञ ण न म के उच्चारण के समय मुखविवर की अर्द्धवर्त्तुल छत का पूर्वभाग, जिसे कण्ठ या कोमल तालु कहते हैं, स्थिरता छोड़कर अपनी दीवार से लटकते हुए मांस-पिंड, जिसे अलिजिह्वा(या काकलक) कहते हैं, के साथ ही कुछ नीचे की ओर झुककर वायु के कुछ भाग को नासिकाविवर से निकल जाने देता है। अतः इनके उच्चारण के समय एक क्षण के लिये भी हवा का मुखविवर में सर्वथा अवरोध नहीं होता। फलतः शेष स्पर्शों की भाँति इनके उच्चारण के समय हवा को झटका देकर नहीं निकलना पड़ता। इस प्रकार जहाँ स्पर्शों में प्रत्येक वर्ग के पहले, दूसरे, तीसरे और चौथे वर्ण स्पर्श के साथ स्फोटक भी होते हैं, वहाँ ये पंचमाक्षर केवल स्पर्श ही रहते हैं, स्पर्श स्फोटक नहीं होते।

च छ ज झ के उच्चारण के समय करण (जिह्वा का अग्रभाग) स्थान को कुछ देर तक रगड़ के साथ छूता है, अतः वायु रगड़ खाकर निकलती है, इसीलिये ये स्पर्श के साथ **ईषत् संघर्षी** भी हैं।

क़ ख़ ग़ ज़ तथा फ़ पूर्ण संघर्षी स्पर्श हैं। ड़ और ढ़ के उच्चारण में करण (जिह्वा का अग्रभाग) उलटकर अधोभाग से स्थान को कुछ दूर तक झटके के साथ छूता है, इसीलिये और स्पृष्टों की तुलना में इन दोनों को **दुःस्पृष्ट** या **द्विःस्पृष्ट** कहते हैं। उत्क्षिप्त

(२) **ईषत्स्पृष्ट** :—जिनके उच्चारण में करण (जिह्वा या ओष्ठ) स्थान को पूरा नहीं ईषत् अर्थात् थोड़ा छूता है, उन्हें **ईषत्स्पृष्ट** कहते हैं, य र ल व ईषत्स्पृष्ट हैं। इनमें भी य व की तुलना में र ल में अधिक स्पर्श है। र लुंठित ईषत्स्पृष्ट है, अर्थात् इसके उच्चारण में करण (जिह्वाग्र) स्थान (वर्त्स और मूर्द्धा के मध्यभाग) को पूरी तरह नहीं, शीघ्रता से कई बार थोड़ा छूता है। ल पार्श्विक ईषत्स्पृष्ट है अर्थात् इसके उच्चारण में करण (जिह्वाग्र) स्थान

वर्त्स) को ठीक से नहीं, इस प्रकार छूता है कि जीभ के दाएँ-बाएँ पार्श्वों में कुछ जगह छूटी रह जाती है, जिससे थोड़ी हवा दोनों पार्श्वों से निकलती रहती है, और कण्ठपिटक में कम्पन भी होता रहता है। इन ईषत्स्पृष्टों को स्पृष्टों तथा अस्पृष्टों के बीच पड़ने से **अन्तस्थ** भी कहते हैं और स्वरों तथा व्यंजनों के बीच की स्थिति में रहने से **अर्ध-स्वर** भी।

(३) **ईषद् विवृत** :—जिन वर्णों के उच्चारण में करण स्थान को बिल्कुल नहीं छूता, किन्तु स्थान के इतने निकट पहुँच जाता है कि दोनों के बीच मुख-विवर में थोड़ी ही सी जगह विवृत अर्थात् खुली रहती है, उन्हें ईषद् विवृत कहते हैं। श ष स ह ईषद् विवृत हैं । इनके उच्चारण में हवा करण और स्थान के बीच के बहुत सँकरे मार्ग से रगड़ खाती (संघर्ष करती) हुई गर्म होकर निकलती है, इसलिये इन्हें **संघर्षी** तथा **ऊष्म** भी कहते हैं। इन चारों में भी ह में न्यूनतम संघर्षण होता है।

(४) **विवृत**—जिन वर्णों के उच्चारण में करण स्थान की ओर ऊपर उठ कर वायुमार्ग को ध्वनि उत्पन्न करने योग्य संकरा बना देने पर भी स्थान से इतनी दूर रह जाता है कि मुख-विवर प्रायः खुला ही रह जाता है, उन्हें विवृत कहते हैं। स्वर सभी विवृत हैं, किन्तु सब की विवृतता एक प्रकार की नहीं । अ सबसे अधिक विवृत है और इ उ ऋ लृ सबसे कम विवृत, संवृत-प्राय। ए ओ में प्रच्छन्न अ भाग सुनाई ही नहीं पड़ता, अतः ये इ उ से थोड़ा ही अधिक विवृत, अर्ध संवृत हैं। ऐ औ में अ स्पष्ट सुनाई पड़ना है, इसलिये ये अ से थोड़ा ही कम विवृत, अर्ध विवृत हैं। अ का दीर्घरूप आ विवृततम है।

(५) ह्रस्व अ पूरब में संवृत बोला जाता है।

इस प्रकार करण के द्वारा स्थान का स्पर्श सर्वाधिक स्पर्श वर्णों में होता है, उससे कम अन्तस्थों में, उससे भी कम ऊष्मों में, और स्वरों में बिल्कुल नहीं होता, स्वर अस्पर्श हैं। इसी तरह करण और स्थान के बीच रिक्तता, विवृतता, सर्वाधिक स्वरों में, उससे कम ऊष्मों में, उससे भी कम अन्तस्थों में रहती है, स्पर्शों में बिल्कुल नहीं रहती, स्पर्श अविवृत वर्ण हैं।

(६) **उच्चारण-काल में ओठों की स्थिति**—ओष्ठ-विवर भी मुख-विवर का भाग है। यह सब से संकीर्ण तथा वर्तुल (वृत्तात्मक) उ ऊ के उच्चारण में रहता है, इससे कुछ अधिक बड़ा वर्तुल ओ के, उससे भी बड़ा वर्तुल औ के, उससे भी बड़ा प्रसृतता (फैलाव) की सीमा को छूता हुआ वर्तुल अ के उच्चारण में हो जाता है; आ के उच्चारण में वह वर्तुलता की विशालता की पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है। इसी प्रकार ओष्ठ-विवर सब से अधिक लम्बा और फैला (प्रसृत) इ ई के उच्चारण में रहता है, उससे कम लम्बा और प्रसृत ए के, उसके भी कम

लम्बा और प्रसृत ऐ के। सभी व्यंजनों के उच्चारण में ओष्ठ-विवर अवर्तुल प्रसृत स्थिति में रहता है।

करण

करण को कुछ आचार्य स्थान और प्रयत्न से भिन्न कोटि की वस्तु मानते हैं, कुछ आभ्यन्तर प्रयत्न की ही एक शाखा। मुख का जो भाग अधिक सक्रिय होकर अपेक्षाकृत अधिक स्थिर विभिन्न उच्चारण-स्थानों में विभिन्न प्रयत्न करके विभिन्न वर्णों को अभिव्यक्त करता है, उसे ही करण कहते हैं। अधिकांश वर्णों के उच्चारण में जिह्वा का ही कोई-न-कोई भाग सक्रिय होता है, अतः मुख्य करण होने से जिह्वा को ही वागिन्द्रिय कहते हैं।

(क) **जिह्वामूल**[1]—कण्ठ-स्थानीय वर्णों के उच्चारण में जीभ का मूल या पिछला भाग उठकर उच्चारण-स्थान तक पहुँचता है। अतः इनका करण जिह्वामूल है। इनके उच्चारण में जीभ का पिछला हिस्सा कुछ ऊपर उठता है। आ तथा उ के उच्चारण में कुछ अगला भाग तथा ओ औ के उच्चारण में सबसे पिछला भाग उठता है। इसलिये ये सब पश्चवर्ण हैं।

(ख) **जिह्वामध्य**—अ के उच्चारण में जिह्वा का मध्यभाग ऊपर उठता है। करणों में सबसे स्थिर जिह्वामध्य ही है। यह व्यंजनों के उच्चारण में नहीं उठता। केन्द्रीय स्वर तथा वर्ण अ ही है। इसीलिये प्राचीन शिक्षा-शास्त्रियों ने इसे सर्वमुख-स्थानीय वर्ण माना है।

(ग) **जिह्वोपाग्र**—तालव्य तथा मूर्द्धन्य ध्वनियों में जिह्वा का उपाग्र-भाग ऊपर उठता है। मूर्द्धन्य ध्वनियों में जिह्वा का उपाग्र काफी पीछे हटकर तथा उलटकर अधोभाग से मूर्द्धा को छूकर फिर आगे बढ़ जाता है, इसीलिये इनमें प्रतिवेष्टित जिह्वोपाग्र करण है। जिह्वा पीछे हटकर आगे बढ़ती है, अतः लोगों को भ्रम हो जाता है कि मूर्द्धन्य ध्वनियों का उच्चारण-स्थान तालव्य ध्वनियों से ऊपर या भीतर की ओर है।

(घ) **जिह्वाग्र**—वर्त्स्य (दन्तमूलीय) यथा दन्त्य ध्वनियों में जिह्वा का अग्रभाग ऊपर की ओर आता है। स्वरों में इ, ई, ए, ऐ के भी उच्चारण में यही भाग करण है, इसीलिये इन्हें अग्रस्वर कहते हैं।

(ङ) **अधोदन्त**—व के उच्चारण में अधर के साथ अधोदन्त भी ऊपर उठते हैं। दोनों ही ऊपर उठकर ओष्ठ के पास पहुँचते हैं, इसीलिये इसे दन्तोष्ठ्य ध्वनि कहते हैं।

---

१. जिह्वामूलीय को भी जिह्वामूलीय इसलिये कहते हैं कि उसका करण जिह्वामूल है (जैसे अन्तः करण)

(च) **अधर**—ओष्ठ्य ध्वनियों के उच्चारण में अधर अर्थात् निचला ओठ करण का कार्य करता है, और ओष्ठ अर्थात् ऊपर का ओठ स्थान का, इसीलिये इन्हें द्व्योष्ठ्य कहते हैं।

(छ **कोमलतालु और अलिजिह्वा**—स्वरयन्त्र से ऊपर आ जाने पर श्वास-वायु को दो मार्ग मिलते हैं, मुख-विवर तथा नासिका-विवर । इन दोनों के बीच काकलक पेंडुलम की भाँति लटकता रहता है। मुखविवर की छत तो अपेक्षाकृत स्थिर रहने से स्थान है, करण नहीं, परन्तु उसका पिछला भाग, जिसे कोमलतालु कहते हैं, स्थान के साथ करण का भी कार्य करता है । अनुनासिक ध्वनियों के उच्चारण में कोमलतालु तथा उससे नीचे लटकती अलिजिह्वा (कौवा) कुछ नीचे झुक जाते है, जिससे बाहर निकलनेवाली हवा का कुछ अंश मुखविवर के अतिरिक्त नासिका-विवर से गूँजता हुआ निकलने लगता है, इसीलिये इन ध्वनियों में अनुनासिकता आ जाती है। शेष ध्वनियों के उच्चारण के समय कोमलतालु और अलिजिह्वा ऊपर उठकर नासिका की ओर जाने-वाले श्वास-मार्ग को सर्वथा ढँक देते हैं, जिससे उनमें तनिक भी नासिक्यता नहीं आ पाती । इस प्रकार, सभी नासिक्य ध्वनियों में कोमलतालु और अलिजिह्वा (तथा नासिका-विवर) करण हैं।

करणों की भाँति सक्रिय होकर ध्वनि उत्पन्न तो स्वरतंत्रियाँ भी करती हैं, किन्तु वे मुखविवर से बाहर हैं, अतः उनका प्रयत्न बाह्य कहा जाता है। इस प्रकार स्वरयन्त्र-विवर तथा मुख-विवर दोनों में विवृतता-संवृतता की चर्चा से भ्रम नहीं होना चाहिये, पहला बाह्य प्रयत्न का विषय है, दूसरा आभ्यन्तर प्रयत्न का।

उच्चारण-स्थान

मुखविवर में ऊपर अर्द्धवर्तुल छत के जिस भाग के पास करण के उठ आने से वायु थोड़ा रुककर निकलने के कारण पूर्ण वर्णात्मक ध्वनि का रूप ग्रहण कर पाती है, वह भाग ही स्थान कहलाता है।

वर्णों के निम्नलिखित स्थान है : —

(क) **कण्ठ** :—यह मुखविवर की छत का, जिसे साधारणतः जनभाषा में तालु कहते हैं, सबसे पिछला भाग है। इसे कोमलतालु भी कहते हैं। अवर्ण, क ख ग घ ङ ह तथा विसर्ग और जिह्वामूलीय के उच्चारण में जिह्वामूल कण्ठ के पास जाकर हवा का मार्ग रोकता है, इसलिये ये सब कंठ्य कहलाते हैं। सूक्ष्म विचार करने पर इनमें भी तीन श्रेणियाँ हो जाती हैं। कवर्ग का उच्चारण कोमल-तालु से होता है, कुछ आचार्य इन्हें जिह्व्य भी कहते हैं। अवर्ण का उच्चारण इससे

कुछ पीछे से होता है। विसर्ग तथा ह का उच्चारण उससे भी पीछे या नीचे स्थित काकल या स्वर-यंत्रमुख के पास से होता है। इसीलिये कुछ आचार्य इन दोनों को स्वरयन्त्रमुखी; काकल्य या उरस्य भी कहते हैं, और कुछ कोमलतालु से लेकर वहाँ तक के भाग को एक ही नाम कण्ठ देकर इन्हें भी कण्ठ्य ही कहते हैं। कुछ आचार्य 'अ' को सर्वस्थानीय भी कहते हैं, क्योंकि इसका करण जिह्वामध्य है। क़ कण्ठ्य संघर्षी है।

(ख) तालु :—कण्ठ से आगे बाहर की ओर जो भाग है उसे तालु कहते हैं। आजकल कण्ठ को कोमलतालु कहने के कारण अन्तर दिखाने के लिए इसे कठोरतालु कहते हैं। इवर्ण च छ ज झ ञ य तथा श के उच्चारण में जिह्वोपाग्र तालु के पास जाकर वायुमार्ग को रोकता है, अतः इन्हें तालव्य कहते हैं। इनमें भी श का उच्चारण सबसे पीछे से होता है। य तथा इ का उसके आगे से, और चवर्ग का उनसे भी आगे से। चवर्ग का उच्चारण पहले की अपेक्षा कुछ आगे घिसका है। ज़ तालव्यसंघर्षी है।

ए ऐ में अ और इ दोनों का मिश्रण है, अतः ये दोनों कण्ठ और तालु दोनों से उच्चरित होने के कारण कण्ठतालव्य कहलाते हैं।

(ग) मूर्धा—तालु से आगे या बाहर और दाँतों से पहले के खुरदरे भाग को मूर्धा कहते हैं। ऋवर्ण ष तथा ट ठ ड ढ ण और र के उच्चारण में जिह्वोपाग्र मूर्धा के पास जाता है। अतः इन्हें मूर्धन्य कहते हैं। इनमें भी सबसे पीछे से ऋ का, तब ष और टवर्ग का और सबसे आगे अर्थात् ऊपर के दाँतों के मसूढ़े (वर्त्स) से र का उच्चारण होता है। इसीलिए कुछ आचार्य र को वर्त्स्य या दन्तमूलीय भी कहते हैं। ड़ ढ़ का उच्चारण ड तथा र के स्थानबिन्दुओं के बीच से होता है।

जनता में ये तीनों भाग तालु शब्द से ही बोधित होते हैं, अतः ये भीतर से बाहर आने की दृष्टि से क्रमशः तालुमूल, तालु-मध्य तथा तालु-शिखर भी कहे जा सकते हैं। वर्त्स (ऊपर के दाँतों के मसूढ़ों) को तालु-प्रान्त भी कह सकते हैं।

(घ) दन्त (दाँत)—मूर्धा के बाद तालु में ऊपर के दाँतों का स्थान है। लृ त थ द ध न तथा ल स के उच्चारण में जिह्वाग्र ऊपर के दाँतों के पास पहुँचकर वायु को रोकता है अतः इन्हें दन्त्य कहते हैं। इनमें भी लृ, ल, न तथा स का उच्चारण दन्तमूल के पास से होता है, अतः इन्हें दन्तमूलीय (या वर्त्स्य भी) कहते हैं। परन्तु इनका उच्चारण दन्तमूलीय र के आगे (बाहर) से होता है।

(ङ) ओष्ठ—मुखविवर की छत में सबसे भीतर या पीछे अलिजिह्वा या काकलक तथा सबसे आगे या बाहर ओष्ठ (ऊपर का ओठ) है। उवर्ण प फ ब भ म

तथा व का ओष्ठ स्थान है, अतः इन्हें ओष्ठय कहते हैं। इनमें भी सबसे पीछे, ओठ और दाँत के बीच से व का उच्चारण होता है। व के उच्चारण में नीचे का दन्त समूह भी ऊपर ओठ और दाँतों के बीच में पहुँचकर वायु को रोकता है, तथा शेष के उच्चारण में केवल अधर ही ओष्ठ के पास जाकर। इसलिये व को दन्तोष्ठ्य कहते हैं, शेष को द्व्योष्ठ्य।

ओ औ में पहले कण्ठ्य (अवर्ण) तथा बाद में ओष्ठ्य (उवर्ण या व) ध्वनि का मिश्रण है, अतः इन दोनों का उच्चारण कण्ठ और ओष्ठ दोनों से होता है, ये कण्ठोष्ठ्य कहे जाते हैं।

(च) **नासिका**—मुखविवर की छत के भी ऊपर नासिका-विवर है। ङ ञ ण न म एवं अनुनासिक अन्तस्थों (यँ वँ लँ) तथा स्वरों (अँ आँ आदि) का अपने-अपने मुखवर्ती स्थान के अतिरिक्त नासिका भी स्थान है, इसलिये ये वर्ण अनुनासिक अथवा मुख-नासिक्य कहलाते हैं। ङ ञ ण न म तो सर्वदा अनुनासिक रहते हैं, पर स्वर तथा अन्तस्थ दोनों प्रकार के होते हैं। अ आ इ ई य व आदि अननुनासिक हैं, अँ आँ इँ ईँ यँ वँ आदि अनुनासिक।

अनुस्वार शुद्ध नासिक्य ध्वनि है।

ध्वनियों में इनके अतिरिक्त भी कुछ गुण होते हैं—

(१) **मात्रा**—वर्ण-ध्वनि के उच्चारण में लगे काल को मात्रा कहते हैं। एक व्यंजन के उच्चारण में जितना समय लगता है उसे आधी मात्रा कहते हैं। व्यंजन सभी अर्धमात्रिक ही है।

इससे प्रायः दुगुनी मात्रा स्वर के उच्चारण में लगती है, जैसे, अ इ उ। इन्हें एकमात्रिक या ह्रस्व कहते हैं। ह्रस्व को लघु भी कहते हैं। स्वरों का एक दीर्घ रूप भी होता है, जिसके उच्चारण में प्रायः दो मात्राएँ लग जाती है, उन्हें द्विमात्रिक या दीर्घ कहते हैं, जैसे आ, ई, ऊ।

ए ओ प्रायः द्विमात्रिक मिलते हैं, एकमात्रिक अत्यल्प (जैसे तेलचट्टा, गोलाई आदि में)। ऐ औ सदा द्विमात्रिक ही रहते हैं।

कभी-कभी स्वरों का उच्चारण दो से अधिक मात्रा तक किया जाता है। ऐसे स्वर को बहुमात्रिक या प्लुत कहते हैं। संबोधन में प्रायः ऐसा होता है। बहुमात्रिकता आगे तीन की संख्या लिखकर प्रकट की जाती है। जैसे "देवद ३ त्त" में तीसरा अक्षर प्लुत है। एक से अधिक मात्रा वाले स्वरों को गुरु कहते हैं। जिस ह्रस्व के आगे कोई स्वररहित व्यंजन आता है वह भी गुरु हो जाता है, जैसे जन्म या राजन् में ज का अ गुरु है।

(२) **आघात**—ध्वनियों के उच्चारण में एक और विशेषता हो सकती है, उनपर अधिक या कम आघात अर्थात् जोर दिया जा सकता है। यह मुख्यतः स्वरों

का गुण है। पर सांनिध्य के कारण पूरे अक्षर अर्थात् व्यंजनयुक्त स्वर का मान लिया जाता है।

यह भी दो प्रकार का होता है।—(क) सामान्य तथा (ख) तरंगात्मक।

(क) सामान्य आघात को बलाघात कहते हैं। प्रत्येक शब्द में प्रायः एक अक्षर पर अधिक बलाघात होता है, जो प्रायः दीर्घ या गुरु रहता है। ह्रस्व पर वहीं बलाघात होता है, जहाँ उसके बाद का व्यंजन स्वर-रहित रहता या उच्चरित होता है। जैसे श्रीमन्, राजन् मन = मन्, तुरत = तुरत् आदि। जब किसी अक्षर से बलाघात आगे बढ़ जाता है, तो वह लघु हो जाता है, जैसे—देखना-दिखाना-दिखलाना। हिन्दी में इसका महत्त्व शब्द के खण्ड से अधिक वाक्य के खण्ड में मिलता है। उसमें बलाघात (अर्थात् जोर देकर बोलने) के कारण भाव (व्यावर्त्य) में अन्तर पड़ जाता है। मैं पटना जाऊँगा का अर्थ होगा मैं ही जाऊँगा, दूसरा नहीं, **मैं पटना** जाऊँगा का, मैं पटना जाऊँगा, अन्यत्र नहीं, मैं पटना **जाऊँगा** का जाऊँगा, यहाँ नहीं रहूँगा।

(ख) दूसरे प्रकार का आघात ध्वनि-तरंग के आरोह-अवरोह से होता है। संस्कृत में आरोही उच्चारण को उदात्त, अवरोही को अनुदात्त तथा मिश्रित को स्वरित कहते हैं। इसे स्वराघात भी कहते हैं। यह संगीत का क्षेत्र है। भोजपुरी में 'तूँ पढ़ब' का 'पढ़ब' दूसरी भाँति उच्चरित होता है। इसमें 'ब' (अक्षर, अ) उदात्त, 'प' अनुदात्त रहता है। 'हम पढ़ब' का 'पढ़ब' दूसरी भाँति। इसमें 'प' ही उदात्त रहता है। ब-अनुदात्त, हिन्दी में भी प्रश्न, विस्मय आदि में ध्वनि के इस प्रकार के आरोह-अवरोह का उपयोग होता है।

(ग) स्वर तथा व्यंजन एक-दूसरे के पूर्व भी आ सकते हैं, बाद भी, जैसे अक् या क (क + अ); परन्तु अनुस्वार और विसर्ग स्वर के ही, और बाद ही आ सकते हैं। इसलिये ये किसी शब्द के आरंभ में नहीं रह सकते। स्वर का उच्चारण बिना किसी व्यंजन के भी होता है। जैसे आ ए। पर व्यंजन का उच्चारण प्रायः सदा किसी न किसी स्वर की सहायता से ही होता है; क, का, कि।

वर्णों का उच्चारण करते समय सावधानी बरतनी चाहिये। ऋ का उच्चारण भूला जा चुका है, अब यह 'रि' बोला जा रहा है, ऋषि का उच्चारण रिषि हो रहा है। पूरब में गृह को ग्रिह कहते हैं, पश्चिम में ग्रह, उड़ीसा की ओर ग्रुह। ऌ तो ल्रि बोला ही जाता है, किन्तु हिन्दी में यह विरल प्रयुक्त है। अ का उच्चारण भी एकरूप नहीं है। बिहार में क ख ग घ कहते हैं, बंगाल में

को खो गो घो, उत्तरप्रदेश में का खा गा घा, राजस्थान में क ख ग घ। ए ओ को संस्कृतवाले अइ, अउ जैसा बोलते हैं, हिन्दीवाले अय्, अव् जैसा। कैलाश को

कोई कइलाश कहता है, कोई कय्लाश। ञ तथा यँ का उच्चारण-भेद दुष्कर है। व्यंजन+पूर्ववर्ती ञ् या ण् भी न् ही उच्चरित होता है, वञ्चित=वन्चित, कण्टक=कन्टक। हाँ, य या व से पूर्व ण का उच्चारण स्पष्ट होता है; पुण्य कण्व। ष को भी प्रायः लोग श ही बोल देते हैं, यद्यपि दोनों का अन्तर बतलाया जा सकता है। अनुस्वार और विसर्ग का तो अपना उच्चारण भी सर्वथा विस्मृत हो चुका है। अनुस्वार कवर्ग तथा ह के पूर्व ङ् सा, चवर्ग टवर्ग तवर्ग तथा स के पूर्व न् सा और पवर्ग तथा व के पूर्व म् सा बोला जाता है, जैसे—दंगा = दङ्गा, पंजा = पन्जा ,अंडा = अन्डा, गंदा = गन्दा, बंबई = बम्बई। संयम को कोई सञ्यम कहता है, कोई सङ्यम, कोई सन्यम। संलाप, संशय में भी अनुस्वार का उच्चारण प्रायः ङ्, न् ही होता है। विसर्ग बिल्कुल ह् की भाँति बोला जाता है पुनः = पुनह्। पश्चिम में उर्दू के प्रभाव से सभी उर्दू शब्द अपने शुद्ध रूप में व्यवहृत होते हैं, जैसे क़सूर, ख़ुश ग़म, ग़ैर, ज़िन्दगी, फ़ायदा आदि में संघर्षी स्पर्श क़, ख़, ग़, ज़, फ़ का उच्चारण होता है, किन्तु हिन्दी में इन्हें ध्वनि-परिवर्तन से संघर्षहीन स्पर्शों के समान बोलते-लिखते हैं, कसूर, खुश, गम, गैर, जिन्दगी, फायदा आदि।

क ख ग घ ङ के स्थान और आभ्यन्तर, प्रयत्न एक है, अतः ये सभी एक-जातीय वर्ण हैं; एक ही वर्ग के कहलाते हैं, कवर्ग। इसी प्रकार चवर्ग —च छ ज झ ञ। टवर्ग—ट ठ ड ढ ण। तवर्ग—त थ द ध न। पवर्ग—प फ ब भ म। अवर्ण कहने से अ तथा आ दोनों (अ की सारी जातियों) का बोध होता है। इसी प्रकार इवर्ण—इ, ई; उवर्ण—उ ऊ आदि।

लिपि

लिपि का अर्थ है लीपना। लिख् (धातु) का अर्थ है रेखा खींचना। वर्ण रंग को कहते हैं। जब ध्वनियों को नेत्रग्राह्य बनाना होता है तब उनको किसी ठोस पदार्थ पर किसी भी रंग के तरल पदार्थ से रेखा खींच कर, एक विशेष प्रकार से लीप कर, प्रकट करते हैं। जैसे 'क़लम' वस्तु को 'कलम' नाम से प्रकट करना कोई तर्क-प्रमाणित सार्वत्रिक नहीं, परम्परागत क्षेत्रीय नियम है, उसी प्रकार 'क' ध्वनि को 'क' इस लिपि से प्रकट करना भी। जिस लिपि में हिन्दी लिखी जाती है उसे देव-नागरी या नागरी कहते हैं। इस लिपि में उच्चारित ध्वनि को प्रायः उसी रूप में उपस्थित कर देने की क्षमता है, अतः यह अपेक्षाकृत अधिक वैज्ञानिक मानी जाती है। यह भारतीय ब्राह्मी लिपि का ही विकसित रूप है। नागरी लिपि में हिन्दी वर्ण इस प्रकार लिखे जाते हैं।

(१) सभी व्यंजनों के वे ही रूप बने रहते हैं, अर्थात् वे जैसे बोले जाते हैं वैसे ही लिखे जाते हैं। जैसे—क ख ग घ ङ। च छ ज झ ञ। ट ठ ड ढ ण। त थ द ध न। प फ ब भ म। य र ल व। श ष स ह। ल को ल तथा ण को रा की भाँति भी लिखते हैं।

(२) (क) स्वर जब शब्द के आरम्भ में आते हैं, तब उनके निम्नलिखित रूप रहते हैं अ, इ, उ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ। अ को अ ऐसे भी लिखते हैं।

(ख) दीर्घ अ को आ, इ को ई, उ को ऊ लिखते हैं, अर्थात् इनकी दीर्घता प्रकट करने के प्रकार एक नहीं, भिन्न हैं।

(ग) प्लुत स्वर को प्रकट करने के लिये उसके रूप में कोई परिवर्तन नहीं कर केवल उसके आगे ३ यह अंक लिख देते है, जो यह प्रकट करता है कि यह स्वर, दो से अधिक मात्रा वाला है, जैसे ओ३म् का अर्थ यह है कि यहाँ 'ओ' प्लुत अर्थात् त्रिमात्रिक है। 'मोह३न' का अर्थ हुआ कि यहाँ ह् के बाद का 'अ' त्रिमात्रिक है (या तीन से भी अधिक मात्रा वाला)। कुछ लोग भ्रम से इस ३ संख्या को इ स्वर समझकर ओ३म् का ओइम् उच्चारण कर देते हैं।

(घ) जब कोई स्वर किसी व्यंजन के बाद आता है तब उसका रूप बहुत परिवर्तित, संक्षिप्त हो जाता है, उस रूप को हिन्दी में मात्रा कहते हैं। इनमें 'अ' की कोई मात्रा नहीं होती। व्यंजन के बाद यदि कोई स्वर नहीं रहता है तो उसके नीचे दाहिनी ओर एक ् ऐसा चिह्न लगा देते है, जैसे क् ख् ग्; विद्वान्, पृथक् आदि। इस प्रकार क का अर्थ हो जाता है क्+अ, ऐसे ही ख = ख्+अ आदि। इस चिह्न को हल् कहते हैं, अतः जिस शब्द के अन्त में ऐसा चिह्न आता है उसे हलन्त कहते हैं। जैसे पृथक् हलन्त है। जो ऐसा नहीं, उसे स्वरान्त कहते हैं, जैसे बालक स्वरान्त है। पाणिनीय व्याकरण में हल् का अर्थ है व्यंजन, अतः जिस व्यंजन में कोई स्वर नहीं मिला है उस शुद्ध व्यंजन को हल् कहते हैं; पर लक्षणा से यह स्थिति प्रकट करनेवाले लिपिचिह्न को भी हल् कह देते हैं।

(ङ) शेष स्वरों की मात्राएँ निम्नलिखित हैं:—

आ = ा, क्+आ = का, इ = ि, क्+इ = कि
ई = ी, क्+ई = की, उ = ु, क्+उ = कु
ऊ = ू, क्+ऊ = कू, ऋ = ृ, क्+ऋ = कृ
ए = े, क्+ए = के, ऐ = ै, क्+ऐ = कै
ओ = ो, क्+ओ = को, औ = ौ, क्+औ = कौ

ऌ हिन्दी ही नहीं संस्कृत में भी इतना कम प्रयुक्त है कि इसकी कोई मात्रा नहीं विकसित हो सकी, क्+ऌ = क्ऌ। और स्वरों के पूर्व व्यंजन अपने पूरे रूप में लिखे जाते हैं, पर ऌ के पूर्व अधूरे, हलन्त रूप में। इस प्रकार कुल १० मात्राएँ हैं, जिनमें इ की मात्रा पहले लगाई जाती है। उ तथा ऊ की नीचे क्रमशः बाईं और दाईं ओर। ए ऐ की ऊपर तथा आ, ई और ओ की बाद में।

अनुस्वार—ं, विसर्ग = ः।

इस तरह नागरी लिपि में भी ये दो ऐसे संकेत हैं जो उर्दू, रोमन आदि लिपियों की भाँति वर्ण के नाम को नहीं, उससे व्यक्त ध्वनि को प्रकट करते हैं, जैसे डब्ल्यू = व (W), वाइ = य् (Y) आदि ।

(४) हिन्दी की बारह खड़ी निम्नलिखित हैं :—

क का कि की कु कू के कै को कौ कं कः

इसमें ये त्रुटियाँ हैं :—

क्+ऋ = कृ की चर्चा नही है

कं और कः में ं ः मात्राएँ नही स्वयं मौलिक लिपियाँ हैं । अं तथा अः अनुस्वार विसर्ग के मौलिक रूप नहीं, अ पर लगाये गये अनुस्वार तथा विसर्ग हैं ।

(५) अनुनासिक कोई स्वतन्त्र वर्ण नहीं, उदात्तता आदि की भाँति अनुनासिकता वर्ण का एक गुण है । स्वरों की अनुनासिकता प्रगट करने के लिए ऊपर अर्धचन्द्र देकर बीच में अनुस्वार लिख देते हैं । जैसे, हँसना, माँ, पिँजड़ा, कुँजड़ा, यूँ, लताएँ, मैं, भौंकना आदि । हिन्दी में ङ्, ञ्, ण् न् म् के लिए भी अनुस्वार ही लिखने की परिपाटी बढ़ रही है, यह ठीक नहीं । जहाँ इनका स्पष्ट उच्चारण हो रहा हो वहाँ इन्हें ही लिखना चाहिये, जैसे अंक = अङ्क, शंका = शङ्का, अंत = अन्त, गंध = गन्ध, कुंभ = कुम्भ, कंपन = कम्पन आदि । अन्यथा वाङ्मय, वणिङ्मण्डल, तन्मय, चिन्मय, मृन्मय, जन्म, अन्यथा, सम्राट्, नम्र, अम्ल आदि में भी अनुस्वार लिखने की प्रक्रिया आरम्भ हो सकती है, जो अशुद्ध औरअवैज्ञानिक होगी ।

वर्णयोग

किसी शब्द के अन्त में दो व्यंजन नहीं रह सकते, किन्तु परवर्ती स्वर के पूर्व अनेक व्यजनों के गुच्छ का भी उच्चारण हो जाता है; जैसे स्वप्न, सान्त्वना, स्त्री, कार्ण्य कात्स्न्र्य आदि ।

जब दो से अधिक व्यंजन निरन्तर प्रयुक्त होते हैं तब उनमें से एक की ही लिपि पूरी शेष की अधूरी या विकृत हो जाती है । साधारणतः यह नियम है कि जिस व्यंजन के बाद कोई स्वर आता है वह पूर्ण या अविकृत और जिसके बाद कोई व्यंजन आता है वह अपूर्ण या विकृत लिखा जाता है; जैसे भक्त = भक्‌त, सत्कार = सत् कार ।

(क) परन्तु र् संयोग के अन्त में आने पर भी स्वयं ही विकृत होता है, पूर्ववर्ती व्यंजन नहीं । र् जिस व्यंजन के पूर्व उच्चरित होता है उसके सिर पर ऐसा रेफ-रूप धारण कर लेता है, और जिसके बाद उच्चरित होता है उसके नीचे ऐसा या, ऐसा; जैसे तर्क (तर्‌क), तक्र (तक्‌र् अ), नम्र (नम् र् अ), उष्ट्र (उष् ट् र अ)

(ख) ङ ट ठ ड ढ द तथा ह के बाद आया व्यंजन ही अधूरा, शिरोरेखा-हीन हो जाता है; ये यथापूर्व बने रह जाते हैं; जैसे—द्वार, विह्वल आदि ।

(ग) श के बाद र, न, च, व आदि के आने पर श की आकृति ऐच्छिक रूप से बदल जाती है; जैसे—श् + र = श्र आदि ।

(घ) कुछ व्यंजनों के संयोग में दोनों की लिपियों में विकार आ जाता है; जैसे—ह् + म = ह्म, ह् + य = ह्य आदि ।

(ङ) कुछ व्यंजनों का संयोग होने पर दोनों के स्थान में एक नयी-सी लिपि बन जाती है, जिससे पहचान में ही नहीं आता कि यहाँ किन दो का संयोग है; जैसे—क् + ष = क्ष, ज् + ञ = ज्ञ, द् + य = द्य ।

(च) द + ऋ को दृ जैसा, तथा ट् + ट को ट्ट जैसा लिखकर अन्तर रखना चाहिए, अन्यथा भ्रम हो जाता है ।

(छ) त् + न = त्न ल जैसा हो जाता है, इसका भी अन्तर सावधानी से करना चाहिये ।

(ज) जहाँ भ्रम या असुविधा हो, वहाँ पूर्ववर्ती में हल् चिह्न देकर उत्तरवर्ती व्यंजन को पृथक् ही लिखना चाहिये; जैसे—आढ्य, प्रह्लाद, पद्म आदि । इसलिये यदि तर्क को तर्क और तक्र को तक्र, कर्म को कर्म, क्रम को क्रम, यत्न को यत्न तथा भक्त को भक्त लिखें, तो अधिक अच्छा रहेगा । द्वार में भी संदेह रह जाता है कि पहले द् है या व्, अतः द्वार ही लिखना ठीक है ।

(झ) जब दो व्यंजन अव्यवहित आते हैं, तो उन्हें संयुक्त व्यंजन कहते हैं; जैसे ख्याति में ख् य् संयुक्त व्यंजन हैं ।

(ञ) पक्का में क् क्, बच्चा में च् च्, खट्टा में ट् ट्, पत्ता में त् त् आदि भी संयुक्त व्यंजन हैं, इन्हें द्वित्व या दीर्घ व्यंजन नहीं कहना चाहिये, क्योंकि दीर्घ का अर्थ है द्विमात्रिक एक वर्ण, जो केवल कोई स्वर ही हो सकता है, व्यंजन नहीं । क् + क् आधी-आधी मात्रा के दो व्यंजन हैं । ये सजातीय संयोग के उदाहरण हैं । अड्डा में सजातीय संयोग है, खड्ग में विजातीय ।

जहाँ संयुक्त वर्ण में ह्रस्व इकार देना होता है, वहाँ पूरे संयोग के ही पूर्व देते हैं; जैसे—शक्ति । इसे शक्ति, अग्नि जैसा लिखना अशुद्ध है । वस्तुतः संयुक्त स्थल में ह्रस्व इकार देना हो, तो संयुक्त व्यंजनों को पृथक्-पृथक् ही लिखना ठीक होता है; जैसे—भक्ति, पङ्क्ति, अग्नि आदि ।

जहाँ दो अव्यवहित स्वर रहते हैं, वहाँ य् अथवा व् की श्रुति अवश्य होती है, पर क्रमशः इसे नहीं लिखने की प्रथा बढ़ रही है; जैसे—

नयी—नई, गयी—गई, गये—गए, नये—नए, आये—आए पाये—पाए, लीजिये—लीजिए, दीजिये—दीजिए, आयिये—आइए। कई—कयी, सुई—सुयी, भाई—भायी, लेई—लेयी, कोई—कोयी आदि में य् की तथा हुआ—हुवा कमाऊ—कमावू, आओ—आवो आदि में व् की अल्प श्रुति होती है, किन्तु हिन्दी में यह (अल्प) श्रुति लिखी नहीं जाती। आ+आ, इ+आ आदि के बीच य् की श्रुति स्पष्ट होती है, अतः अवश्य लिपि-बद्ध की जाती है, आ+आ = आया खा+आ = खाया, दि+आ = दिया, पि+आ = पिया।।

जैसे अव्यवहित दो व्यंजनों के योग को संयोग कहते हैं, वैसे अव्यवहित दो स्वरों के योग को नहीं। इन्हें केवल निरन्तरागत स्वर कहते हैं।

अक्षर (सिलेबल)

(क) एक अकेला स्वर एक अक्षर भी कहा जाता है; जैसे—आ।

(ख) यदि दो स्वर निरन्तर हैं, तो दो अक्षर होंगे; जैसे—आओ।

(ग) स्वर के बाद या पहले आया व्यंजन स्वर के साथ मिलकर एक ही अक्षर बनाता है; जैसे—क या अक्, का या आक्; वाक्, त्वक्।

(घ) जो स्वर लिखे जाने पर भी उच्चारित नहीं होता, उससे अक्षर नहीं बनता; जैसे—'अब' (अब्) एक ही अक्षर माना जाता है, 'इधर' (इधर्) या भगदड़ (भग्दड़) दो ही अक्षर। परन्तु यह ध्यान में रखना चाहिए कि चरमोत्कर्ष, मानसिकता, आवश्यकता आदि चर्मोत्कर्ष, मांसिकता, आवश्यक्ता आदि न बन जाएँ।

(ङ) संयुक्त व्यंजन का एक खण्ड पूर्ववर्ती अक्षर का अंग बन सकता है, दूसरा परवर्ती का; जैसे—स्थान में 'स्था' एक अक्षर है, किन्तु अवस्था में (अ+वस्+था) स् पूर्ववर्ती अ का और थ् परवर्ती आ का अंग है; धाष्टर्य में र् तथा ष् पूर्ववर्ती आ का, ट् तथा य् परवर्ती अ का (धार्ष्+ट्य्अ)। अर्थात् एक बार में धार्ष् का उच्चारण करना चाहिये, दूसरी बार में ट्य का। खड्ग को ख+ड्ग नहीं, खड्+ग बोलना चाहिये।

हिन्दी में विवरण (वर्त्तनी) की अशुद्धियाँ बढ़ती जा रही है, जो प्रायः दूकानों, बसों, विज्ञापनों तथा अखबारों में देखने में आती है; जैसे :—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
अत्याधिक	अत्यधिक	जंसंख्या	जनसंख्या
अध्यन	अध्ययन	जाग्रतावस्था	जागरितावस्था (या जाग्रदवस्था)
अनाधिक	अनधिक		
अनाधिकार	अनधिकार	जागृत	जाग्रत्, जागरित
अनुशाशन	अनुशासन	ज्योतिन्द्र	ज्योतिरिन्द्र
अनुसूया	अनसूया	तत्तपर	तत्पर
अवन्नति	अवनति	त्रितिया	तृतीया
अहिल्या	अहल्या	दम्पत्ति	दम्पति
आधीन	अधीन	दुरावस्था	दुरवस्था
आवृत्त	आवृत	द्वारिका	द्वारका
आर्शीवाद	आशीर्वाद	द्वीतिय	द्वितीय
इन्दिरा	इन्दिरा	नवजवान	नौजवान
उतपत्ति	उत्पत्ति	निरोग	नीरोग
उर्त्तीण	उत्तीर्ण	निवृत	निवृत्त
उदंड	उद्दंड	निश्चित् या निशचित	निश्चित
उदेश्य	उद्देश्य	सतत	निश्चित
उपरोक्त	उपर्युक्त	नौयुवक	नवयुवक
ऐसा	ऐसा	पंचम्	पंचम
कुणठित	कुण्ठित	पिछे	पीछे
क्षात्र	छात्र	पुर्णिमा	पूर्णिमा
खङ्ग	खड्ग	पूज्यनीय	पूज्य, पूजनीय
गृष्म	ग्रीष्म	पैत्रिक	पैतृक
घनिष्ट	घनिष्ठ	पौर्वात्य	पूर्वी, पौरस्त्य,
चिन्ह	चिह्न	प्रत्युत्	प्रत्युत
चुनाओ	चुनाव	प्रसन्ता	प्रसन्नता
च्युत्	च्युत	भारतीए	भारतीय
जनजाल	जंजाल	भिज्ञ	अभिज्ञ, विज्ञ
जन्ता	जनता	मदत	मदद
जंम	जन्म	मनजिल	मंजिल
जन्मानस	जनमानस	मनमथ	मन्मथ

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
मनहर	मनोहर	वृतांत	वृत्तांत
मन्मोदक	मनमोदक	शशि	शशी
मनोकामना	मनस्कामना	शारिरिक	शारीरिक
मिष्ठान्न	मिष्टान्न	शुन्य	शून्य
मुर्त्ती	मूर्त्ति	श्राप	शाप
मुसलाधार	मूसलधार	श्रृंगार	श्रृंगार
यथेष्ठ	यथेष्ट	श्रोत या स्त्रोत	स्रोत
राज्यकीय	राजकीय	षष्टम	षष्ठ
लघुत्तम	लघुतम	सन्यासी	संन्यासी
लज्या	लज्जा	सन्मान	संमान, सम्मान
लब्धप्रतिष्ठित	लब्धप्रतिष्ठ	सम्वाद	संवाद
लालाइत	लालायित	सम्वरण	संवरण
वर्दान	वरदान	साम्यता	साम्य, समता
वशम्वद	वशंवद	सुश्रुषा	शुश्रूषा
वाह्य	वाह्य (वाहरी)	सौजन्यता	सौजन्य, सुजनता
विद्यालीय	विद्यालयीय	स्त्रीयों	स्त्रियों
विद्रूप	विरूप	स्वस्थ्य	स्वस्थ या स्वास्थ्य
विद्वता	विद्वत्ता	हस्ताक्षेप	हस्तक्षेप
विधाएक	विधायक	हाँथी	हाथी
विश	विष	प्रर्दशन	प्रदर्शन
पुनरोदय	पुनरुदय	विकलाँग	विकलांग
उद्दात	उदात्त		

अभ्यास

(१) हिन्दी में अपने कुल कितने वर्ण हैं ?

(२) हिन्दी ने किन विदेशी ध्वनियों को अपना लिया है ?

(३) मात्रा से आप क्या समझते हैं ?

(४) क्क, च्च को द्विमात्रिक कहना क्यों गलत है ?

(५) क्ष, त्र, ज्ञ स्वतंत्र वर्ण नहीं, वर्ण-द्वय-संयोग है, कैसे ?

सन्धि

सन्धि का अर्थ है मेल। जब एक से अधिक वर्णों के योग, अति समीपता के कारण उनमें से एक या अनेक में कोई रूप-परिवर्त्तन (उपस्थित) होता है, तो कहते हैं, इनमें सन्धि हुई है। दो राजाओं की सन्धि में भी दोनों के अधिकार और कर्त्तव्य में कुछ अन्तर, वृद्धि या न्यूनता हो जाती है।

सन्धि स्थूलत: तीन प्रकार की होती है :—दोनों ओर स्वर के रहने से स्वर सन्धि होती है, दोनों ओर या एक ओर व्यंजन रहने से व्यंजन सन्धि, विसर्ग के बाद स्वर या व्यंजन के आने से विसर्ग सन्धि।

स्वर सन्धि

स्वर सन्धि के निम्नलिखित भेद हैं :—

(क) अर्द्धस्वर या यण् सन्धि :—यदि आगे कोई भिन्न जातीय स्वर रहता है, तो पूर्ववर्ती इवर्ण (इ या ई) के स्थान में य्, उवर्ण (उ या ऊ) के स्थान में व् तथा ऋवर्ण के स्थान में र् हो जाता है (स्वर के स्थान में अर्द्धस्वर); जैसे—

[१] इ का य्—अति + अधिक = अत्य् अधिक = अत्यधिक। अभि + अर्थी = अभ्य् अर्थी = अभ्यर्थी। अति + आधिक्य = अत्य् आधिक्य = अत्याधिक्य। अभि + आगत = अभ्य् आगत = अभ्यागत। प्रति + उत्पन्न = प्रत्य् उत्पन्न = प्रत्युत्पन्न। नि + ऊन = न्य् ऊन = न्यून। प्रति + एक = प्रत्य् एक = प्रत्येक। अति + ऐश्वर्य = अत्य् ऐश्वर्य = अत्यैश्वर्य। दधि + ओदन = दध्योदन अति + औदार्य = अत्यौदार्य।

[२] ई का य्—दासी + अर्थ = दास्यर्थ। देवी + आराधना = देव्याराधना। स्त्री + उचित = स्त्र्युचित, नदी + नद्यूर्मि, पत्नी + एषणा = पत्न्येषणा आदि।

[३] उ का व्—सु + अल्प = स्वल्प। सु + आगत = स्वागत। अनु + इति = अन्विति। अनु + ईक्षण = अन्वीक्षण। अनु + एषण = अन्वेषण।

[४] ऊ का व्—वधू + अर्थ = वध्वर्थ। वधू + आचरण = वध्वाचरण। वधू + इच्छा = वध्विच्छा आदि।

[५] ऋ का र—पितृ + आवास = पित्रावास, मातृ + अर्थ = मात्रर्थ, भ्रातृ + इच्छा = भ्रात्रिच्छा।

(ख) अयादि सन्धि—आगे किसी भी स्वर के रहने पर पूर्ववर्त्ती ए के स्थान में **अय्**, ओ **के** स्थान में **अव्**, ऐ के स्थान में आय् और औ के स्थान में **आव्** हो जाते हैं; जैसे—

ने + अन = न् अय् अन = नयन। नै + अक = न् आय् अक - नायक।
भो + इष्णु = भ् अव् इष्णु = भविष्णु। यो + अन - य् अव् अन = यवन।
पो + अन = प् अव् अन = पवन। पौ + अक = प् आव् अक = पावक।
भौ + ई = भ् आव् ई = भावी, भौ + उक = भ् आव् = भावुक।
आगे य (यकारादि) प्रत्यय रहने पर भी ओ का अव् तथा औ का आव् हो जाते हैं; गो + य = गव्य, भो + य = भव्य, नौ + य = नाव्य, भौ + य = भाव्य।

(ग) गुण सन्धि—अवर्ण के बाद यदि इवर्ण आता है, तो दोनों के स्थान में एक **ए**; उवर्ण आता है, तो दोनों के स्थान में एक **ओ** और ऋवर्ण आता है, तो दोनों के स्थान में एक **अर्** हो जाता है (ए, ओ तथा अर् को गुण स्वर कहते हैं); जैसे :-

ज्ञान + इन्द्रिय = ज्ञानेन्द्रिय। मानव + इन्द्र = मानवेन्द्र।
भुवन + ईश्वर = भुवनेश्वर। उप + ईक्षा = उपेक्षा।
यथा + इष्ट = यथेष्ट। महा + ईश्वर = महेश्वर।
पुरुष + उत्तम = पुरुषोत्तम। नव + ऊढा = नवोढा।
देव + ऋषि = देवर्षि। महा + ऋषि = महर्षि।

(घ) वृद्धि सन्धि – अवर्ण के बाद यदि ए अथवा ऐ आता है, तो दोनों के स्थान में एक ऐ और यदि ओ अथवा औ आता है, तो दोनों के स्थान में एक औ हो जाता है, (ऐ तथा औ को वृद्धिस्वर कहते हैं) जैसे—

पुत्र + एषणा पुत्रैषणा। सदा + एव = सदैव।
मत + ऐक्य = मतैक्य। महा + ऐश्वर्य = महैश्वर्य।
परम + ओषधि = परमौषधि। महा + ओषधि = महौषधि।
परम + औषध परमौषध। महा + औषध = महौषध।

(ङ) दीर्घ सन्धि—जब अ, इ, उ में से कोई भी ह्रस्व या दीर्घ, दो सजातीय स्वर, अव्यवहित आगे पीछे आते हैं, तब दोनों को हटाकर उनके स्थान में एक सजातीय दीर्घ स्वर हो जाता है (आ, ई, ऊ, ॠ को दीर्घ स्वर कहते हैं] जैसे—

स्व + अर्थ = स्वार्थ। प्राण + आयाम = प्राणायाम।
विद्या + अर्थी = विद्यार्थी। विद्या + आलय = विद्यालय।
मुनि + इन्द्र - मुनीन्द्र। परि + ईक्षा = परीक्षा।
मही + इन्द्र = महीन्द्र। सती + ईश = सतीश।
सु + उक्ति = सूक्ति। सु + ऊष्म = सूष्म।
वधू + उत्तम = वधूत्तम। वधू + ऊहित - वधूहित।

(च) प्रकृति भाव--जब दो स्वरों के अव्यवहित रहने पर भी अवश्य-प्राप्त सन्धि नहीं की जाती है, तब कहते हैं, यहाँ प्रकृतिभाव हो गया है, अर्थात् दोनों स्वरों ने अपनी प्रकृति बचा रखी हैं, परिवर्तन नहीं हुआ है, जैसे—

सु + अवसर = सुअवसर। सु + अन्न = सुअन्न। कु + अन्न = कुअन्न। मातृ + ऋण = मातृऋण। देव + ऋषि = देवऋषि। अति + उत्तम। अतिउत्तम। हरि + इच्छा = हरि इच्छा। राम + अवतार = रामावतार।

अपवाद—कुल + अटा = कुलटा, बिम्ब + ओष्ठ = बिम्बोष्ठ, स्व + ईर = स्वैर, प्र + ऊढ प्रौढ़, अक्ष + ऊहिनी = अक्षौहिणी, गो + अक्ष = गवाक्ष, गो + इन्द्र = गवेन्द्र, मार्त्त + अण्ड = मार्त्तण्ड, हल + ईषा = हलीषा। सीम + अन्त = सीमन्त (अर्थ भेद से सीमान्त भी), सार + अंग = सारंग। शुद्ध + ओदन = शुद्धोदन, प्र + एषण = प्रेषण, वन + पति = वनस्पति, हरि + चन्द्र = हरिश्चन्द्र, गो + पद = गोष्पद, विश्व + मित्र - विश्वामित्र, पर + अक्ष = परोक्ष। दुर् + उदर = दुरोदर।

व्यंजन सन्धि

१. किसी भी वर्ग का अनुनासिक-भिन्न कोई भी वर्ण यदि किसी पद के अन्त में आता है यदि आगे कोई भी घोष वर्ण आता है, तो वह अपने वर्ग के :—

(क) तीसरे वर्ण में परिणत हो जाता है; जैसे—वाक् + इन्द्रिय = वागिन्द्रिय, वाक् + जाल = वाग्जाल, सम्यक् + दृष्टि = सम्यग् दृष्टि, वाक् + बल =, वाग्बल, सत् + आनन्द = सदानन्द, सत् + गति = सद्गति, सत् + भाव = सद्भाव जगत् + ईश्वर = जगदीश्वर, स्यात् + वाद = स्याद्वाद (इसे घोषीभाव कहते हैं) बृहत् + यज्ञ = बृहद् यज्ञ, वाक् + रोध = वाग्रोध।

(ख) पहले वर्ण में परिणत हो जाता है, यदि आगे कोई अघोष अर्थात् क, ख, च, छ, ट ठ, त थ, प फ, अथवा श ष स में से कोई वर्ण आ रहा हो; (इसे अघोषीभाव कहते हैं); जैसे –

तद् + सम = तत्सम, वणिग् + कर्म = वणिक् कर्म, दिग् + पाल = दिक्पाल, उद् + खनन, उत्खनन, आपद् + काल = आपत्काल, परिषद् + पत्रिका = परिषत्पत्रिका, सुहृद् + संघ = सुहृत्संघ, संसद् + सदस्य = संसत्सदस्य, उद् + साह = उत्साह, षड् + कोण = षड्कोण, षड् + पद = षट्पद, षड् + चक्र = षट्चक्र, उद् + फुल्ल = उत्फुल्ल।

(ग) ऐच्छिक रूप से पाँचवें अथवा तीसरे वर्ण में परिणत हो जाता है, यदि आगे कोई अनुनासिक व्यंजन आ रहा हो (इसे अनुनासिकीभाव कहते हैं); जैसे— सम्यक् + नीति = सम्यङ् नीति, या सम्यग्नीति अवाक् + मुख = अवाङ्मुख या अवागमुख, सत् + मति = सन्मति या सद्मति, जगत् + नाथ = जगन्नाथ या जगद्नाथ, दिग् + मण्डल = दिङ्मण्डल या दिग्मण्डल सुहृद् + मण्डल = सुहृन्मण्डल या सुहृद्मण्डल, षड + मुख = षण्मुख या षड्मुख।

यदि वह आगेवाला अनुनासिक व्यजन किसी प्रत्यय का है तो यह अनुनासिकता नित्य रहती है; जैसे—तद् + मय = तन्मय, वाक् + मय = वाङ्मय; मृत् + मय = मृन्मय, जगत् + मात्र = जगन्मात्र।

अपवाद—तद् + कर = तस्कर, बृहत् + पति = बृहस्पति, पतत् + अंजलि = पतंजलि।

(२) आगे तालव्य वर्ण रहने पर दन्त्य वर्ण के स्थान में भी तालव्य वर्ण ही हो जाता है, जैसे—उत् + छेद = उच्छेद, सद् + जन = सज्जन, सत् + चरित्र सच्चरित्र, उद् + ज्वल = उज्ज्वल, भगवद् + ज्ञान = भगवज्ज्ञान, सदसत् + ज्ञान = सदसज्ज्ञान, दुस् + चरित्र = दुश्चरित्र, निस् + छल = निश्छल।

(३) ल् के पूर्ववर्ती द् (या त्) का भी ल् हो जाता है; जैसे—उद् या उत् + लास = उल्लास, तद् + लीन = तल्लीन, बृहत् + लाभ = बृहल्लाभ।

(४) इसी प्रकार आगे मूर्द्धन्य व्यंजन रहने पर दन्त्य का भी मूर्द्धन्य ही हो जाता है; जैसे—उद् + डयन = उड्डयन, उद् + डीन = उड्डीन, दुस् + टल = दुष्टल, दुस् + टंकित = दुष्टंकित, दुष् + त = दुष्ट, वृष् + ति = वृष्टि, षष् + थ = षष्ठ।

(५) अनुनासिक भिन्न स्पर्शों के बाद आए श् का छ् हो जाता है, यदि श् के बाद कोई स्वर या अर्द्धस्वर आ रहा हो; जैसे—उत् + श्वास = उच्छ्वास, सत् + शास्त्र = सच्छास्त्र, उत् + शृंखल = उच्छृंखल, उत् + शिष्ट = उच्छिष्ट।

(६) यदि अनुनासिक-भिन्न स्पर्श के बाद ह् आता है, तो उस ह् के स्थान में पूर्ववर्ती स्पर्श का ही सवर्गीय चौथा वर्ण हो जाता है; जैसे—उद् + हत = उद्धत, उद् + हार = उद्धार, तद् + हित = तद्धित, उद् + हरण = उद्धरण, वाक् + हानि = वाग्घानि।

(७) ह्रस्व स्वर अथवा आ उपसर्ग के बाद यदि छ आता है, तो बीच में च् का आगम हो जाता है; जैसे—स्व + छन्द = स्वच्छन्द, परि + छेद = परिच्छेद, आ + छादन = आच्छादन, एक + छत्र = एकच्छत्र, प्र + छन्न = प्रच्छन्न।

(८) किसी पद के अन्त में आए म् के बाद यदि कोई व्यंजन आता है, तो उस म् का अनुस्वार हो जाता है और उस अनुस्वार के आगे किसी स्पर्श वर्ण के रहने पर ऐच्छिक रूप से उसी वर्ग का पंचमाक्षर; जैसे—सम् + आचार = समाचार, पर सम् + वेदन = संवेदन, सम् + यम = संयम सम् + सार = संसार, सम् + कर = संकर, सङ्कर, सम् + ख्या = संख्या, या सङ्ख्या, सम् + गति = संगति या सङ्गति, सम् + चय = संचय या सञ्चय, सम् + ताप = संताप या सन्ताप, सम् + भव = संभव या सम्भव, सम् + मति = संमति या सम्मति।

अपवाद—सम् + कार = संस्कार, सम् + करण = संस्करण, सम् + कृति = संस्कृति, सम् + कृत = संस्कृत। (बीच में स् आ जाता है)।

(९) पद के अन्त में आए स् का र् हो जाता है, यदि आगे कोई भी वर्ण आ रहा हो; जैसे—निस् + आश = निराश, निस् + उक्ति = निरुक्ति, निस् + गम = निर्गम, निस् + बल = निर्बल, निस् + वंश = निर्वंश, दुस् + ऊह = दुरूह, दुस् + गम = दुर्गम, प्रादुस् + भाव = प्रादुर्भाव।

(१०) यदि सकारस्थानीय र् (अथवा उसके विसर्ग) के पूर्व अ या आ आए और बाद में अ से भिन्न कोई स्वर हो, तो र् का लोप हो जाता है; जैसे--अतस् + एव = अतर् एव = अतएव। प्रातर् + एव = प्रातरेव होता है, क्योंकि यह र् मौलिक है।

निरीह, निरिन्द्रिय, दुर्दिन, दुरूह

११. पद के अन्त में आए ह्रस्व अ के परवर्ती सकार स्थानीय र् (या उस के विसर्ग) का उ होकर अ + उ के योग से ओ हो जाता है, यदि आगे कोई घोष व्यंजन (ग घ ङ, ज झ ञ, ड ढ ण, द ध न, ब भ म, य र ल व, ह) अथवा ह्रस्व अ आ रहा हो; परवर्त्ती ह्रस्व अ का पूर्वरूप भी हो जाता है; जैसे—अधस् + गति = अधोगति, मनस् + ज = मनोज, यशस् + दा = यशोदा, पयस् + धि = पयोधि, मनस् + बल = मनोबल, मनस् + हर = मनोहर, मनस् + रम = मनोरम, मनस् + अनुकूल = मनोऽनुकूल, मनस् + अनुसार = मनोनुसार, तेजस्-अनुरूप = तेजोनुरूप आदि। परन्तु अन्तर्दृष्टि, अन्तर् + गत = अन्तर्गत, अन्तराय, प्रातर् + अटन = प्रातरटन, पुनर् + गमन = पुनर्गमन, पुनर् + अपि = पुनरपि, प्रातर् + आश = प्रातराश, प्रातःस्नान।

ध्यान रखना चाहिए कि मनस्, पयस्, यशस्, अधस्, तेजस्, शिरस्, तपस्, वयस् ओजस् आदि में मूल स् है और पुनर्, प्रातर्, अन्तर् स्वर् आदि में स् नहीं र्। इसीसे सन्धि में अन्तर पड़ जाता है।

अपवाद—अहन् के बाद रात्र या रात्रि आए, तो अहोरात्र, पर 'दिव' आवे तो अहर्दिव हो जाता है।

१२. प्रत्येक पदान्त र् का विसर्ग हो जाता है, यदि आगे कोई अघोष (क, ख, च, छ, ट, ठ, त, थ, प, फ, श, ष, स) वर्ण आ रहा हो; जैसे—निस् या निर् + सार = निःसार दुस् या दुर् + साहस = दुःसाहस दुर् + ख = दुःख, पयस् + पान = पयःपान, पुनर् + परीक्षा = पुनःपरीक्षा, पुनर् + संशोधन = पुनःसंशोधन।

र् के बाद यदि र् आता है, तो पूर्व र् का लोप हो जाता है और पूर्ववर्त्ती स्वर का दीर्घ; निर् + रस = नीरस, निर् + रव = नीरव, निर् + रोग = नीरोग। हिन्दी में अन्तर्राष्ट्रीय, पुनर्रचना, दुर्रोग आदि लिखने की प्रवृत्ति है, अन्ताराष्ट्रीय, पुनारचना, दूरोग आदि नहीं।

विसर्ग सन्धि

१. सभी विसर्गों के स्थान में आगे श, ष या स के आने पर ऐच्छिक रूप से तथा शेष किसी अघोष वर्ण के आने पर सदा स् हो जाता है। यह आगे तालव्य वर्ण रहने पर तालव्य श में और मूर्द्धन्य वर्ण रहने पर मूर्द्धन्य ष में परिणत होता है, अन्यथा दन्त्य स ही रह जाता है; जैसे निः + सार = निस्सार या निःसार, दुः + साहस = दुस्साहस या दुःसाहस, दुः + शासन = दुश्शासन, निः + छल = निश्छल, अन्तः + तल = अन्तस्तल, नभः + चर = नभश्चर। बहिः + सृत = बहिःसृत, दुः + टल = दुष्टल, बहिः + शुचि = बहिश्शुचि।

२. आगे क, ख, प या फ आने पर अकार परवर्ती विसर्ग ज्यों-का-त्यों रह जाता है; जैसे—अंतः + करण = अंतःकरण, प्रातः + खाद्य = प्रातःखाद्य पयः + पान पयःपान, अधः + पतन = अधःपतन, मनः + पूत = मनःपूत, तेजः + पुंज = तेजः पुंज, प्रातः + काल = प्रातःकाल, पुनः + खनन = पुनःखनन, उषः + पान = उषःपान।

अपवाद— तिरः + कार = तिरस्कार, नमः + कार = नमस्कार, पुरः + कार = पुरस्कार, मनः + कामना = मनस्कामना, वाचः + पति = वाचस्पति, यशः + कर = यशस्कर, भाः + कर = भास्कर।

३. समास में इकार अथवा उकार के बाद आये प्रत्यय से भिन्न विसर्ग का क, ख, प या फ के पूर्व प्रायः ष हो जाता है; जैसे—निः + कारण = निष्कारण, दुः + कर = दुष्कर, दुः + परिणाम = दुष्परिणाम, निः + फल = निष्फल, आविः + कार = आविष्कार, बहिः + कार = बहिष्कार दुः + खाद्य = दुष्खाद्य आदि।

णत्व विधान

१. ऋ, र् या ष् के अव्यवहित बाद आये एकपदस्थ न का ण हो जाता है, ऋ + न = ऋण, वर् + न = वर्ण, विष् + नु = विष्णु, वृष् + नि = वृष्णि।

२. यदि इन दोनों के बीच केवल किसी स्वर ह, य, व, र, कवर्ग तथा पवर्ग और अनुस्वार का ही व्यवधान हो, (एक भी इनसे भिन्न वर्ण न आवे) तब भी न का ण होता है; जैसे—भर् + अन = भरण, एष् + अना = एषणा। रिङ्ग् + अन = रिङ्गण, अर्प् + अन = अर्पण, (किन्तु अर्ज् + अन = अर्जन)।

३. पूर्वपदस्थ उपसर्ग के र् के बाद आए प्रायः दूसरे धातुज पद के नकार का भी णकार होता है, जैसे—प्र + मान = प्रमाण, प्र + नाम = प्रणाम, परि + नाम = परिणाम, निर् + मान = निर्माण, प्र + नति = प्रणति (पर निर्गमन)।

४. कुछ स्थलों में उपर्युक्त से भिन्न स्थिति में भी णत्व होता है; जैसे—प्र + नि + पात = प्रणिपात, प्र + नि + धान = प्रणिधान। पूर्व + अह्न = पूर्वाह्ण, राम + अयन = रामायण, उत्तर + अयन = उत्तरायण लू + अन = लवन = लवण आदि।

निपुण, कण, काण, कोण, गण, गुण पण गणना आदि में मौलिक ण है।

षत्व विधान

अ से भिन्न स्वर, अर्द्धस्वर तथा कवर्ग के बाद आए स का प्रायः ष हो जाता है—

१. उपसर्ग के बाद प्रायः धातु के सकार का; जैसे—वि + साद = विषाद, नि + सन्न = निषण्ण, अभि + सेक = अभिषेक, नि + सेचन = निषेचन, नि + सिद्ध = निषिद्ध, सु + सुप्त = सुषुप्त, अनु + स्थान = अनुष्ठान, अधि + स्थान = अधिष्ठान ।

२. धातुज से भिन्न कुछ शब्दों में भी, जैसे;—वि + सम = विषम, सु + समा = सुषमा, सु + सेन = सुषेण।

३. उपसर्ग से भिन्न शब्दों के बाद भी; जैसे--मातृ + स्वसा = मातृष्वसा, पितृ + स्वसा = पितृष्वसा, युधि + स्थिर = युधिष्ठिर, गो + स्थ = गोष्ठ, भूमि + स्थ = भूमिष्ठ आदि ।

निकष कषाय , भाषण, भाषा अभिलाष आदि के ष मौलिक हैं ।

अभ्यास

१. सन्धि की परिभाषा सोदाहरण लिखें ।

२. सन्धि के कितने भेद हैं ? प्रत्येक की परिभाषा देते हुए दो-दो उदाहरण भी दें ।

३. **सन्धि बताएँ**— निः + कलुष, निः + चल, निः + तार, निः + फेन, मनः + योग, मनः + भाव, अन्तः + भाव,प्रातः + भ्रमण, वयः + वृद्ध, निः + धन, स्वः + गत, आविः + कृति, अधः + प्रेषण, अधः + गति, अन्तः + गत, यशः + अभिलाषी, दुः + दिन परि + कार, उप + कर, तथा + अपि, निः + संदेह, उद् + लंघन, अति + आचार, वाक् + ईश, उद् + नयन, आत्म + उत्सर्ग, उपरि + उक्त, अति + अन्त, अति + अधिक, अति + आवश्यक, अति + आधुनिक, उप + ईक्षा, दुः + गत उद् + स्थान,उद् + मूलित, किम् + नर, प्रति + अक्ष, स + उत्साह, तथा + एव, सु + अच्छ दुः + कर, दुः + चरित्र, दुः + परिणाम, दुः + तर, अहः + कर, प्रति + अग्र, अधि + अक्ष, प्रति + अक्षर, लिपि + अन्तरण , स्थान + अन्तर, हेतु + अन्तर ।

४. सन्धि विच्छेद करो—

व्यर्थ, नाविक, सावधान, प्रतिच्छाया, सद्गुरु, वणिङ्मण्डल, शङ्कर, सन्मति मधुच्छन्न, उड्डीयमान, पदोन्नति, प्रत्यक्ष, निष्प्राण, उन्माद, रजोमय, अल्पाहार, लध्वशन, सुहृन्मय, दुश्शील, जगज्जाल, सञ्जीव, विच्छिन्न, ओषधीश, अब्ज, सर्वोपरि, वस्त्वन्तर, देशान्तर, जन्मान्तर, अभ्यास, तद्भव, पुरस्कृत, प्रायोवाद, पराङ्मुख, अधोमुख कृष्ण, अम्बष्ठ, कुष्ठ, प्रतिष्ठान परिनिष्ठित, प्रयाण, परिमाण निषेध, पुनरुक्ति, पवित्र, च्यवन, पुनरुत्थान किंकर ।

हिन्दी तथा भोजपुरी मैथिली साहित्य ... ५१ ...

अध्याय ३

शब्द विचार

अ, आ, इ, ई आदि में से कोई भी ध्वनि अर्थवान् हो या निरर्थक **वर्ण** कहलाती है। **अक्षर** भी केवल उस वर्ण-समूह को कहते हैं, जिसमें एक स्वर हो; वह सार्थक भी हो सकता है, जैसे, न, या, हाँ, भी, ही, माँ, आ आदि; और अर्थहीन भी; जैसे—खि, खु, खठ आदि। ये दोनों भाषा के प्रायः अर्थहीन सोपान हैं। तीसरे सोपान में अर्थ की सत्ता आवश्यक है। 'सार्थक वर्णात्मक ध्वनि' को ही **शब्द** कहते हैं। वर्ण तथा वाक्य का मध्यवर्ती होने से 'शब्द' यह नाम इतना महत्त्वपूर्ण है कि व्याकरण को शब्दानुशासन कहते हैं। शब्द एक वर्ण का भी हो सकता है; जैसे - आ (क्रिया), ए (संबोधन); एक अक्षर का भी; जैसे—न, हाँ आदि; और अनेक अक्षरों का भी। भाषा की लघुतम अर्थवान् इकाई दो प्रकार की होती है :—**प्रकृति और प्रत्यय**। 'शक्ति' में शक् प्रकृति है, 'ति' प्रत्यय; 'गुरूत्व' में गुरू प्रकृति है, त्व प्रत्यय; 'जवानी' में ज़वान प्रकृति है, ई प्रत्यय। यह सार्थक प्रकृति भी दो प्रकार की होती है। क्रिया रूप अर्थ को प्रकट करने-वाली प्रकृति को **धातु** कहते हैं और शेष किसी भी अर्थ को प्रकट करनेवाली प्रकृति को **प्रातिपदिक**। धातु का अर्थ है—धारण करनेवाला, प्रातिपदिक का, प्रत्येक पद में रहनेवाला। ये ही दोनों मौलिक या आधारभूत शब्द हैं। किन्तु व्याकरण शास्त्र में अब 'शब्द' का अर्थ प्रायः प्रातिपदिक ही रह गया है।

मूल या स्रोत की दृष्टि से हिन्दी शब्दों के ५ भेद हैं :—

१. **संस्कृत**—हिन्दी के अधिकांश शब्द शुद्ध संस्कृत के ही हैं, क्योंकि हिन्दी संस्कृत की ही तो पुत्री है; जैसे—अग्नि, जल, वायु, आकाश, आत्मा, शरीर, नदी, पर्वत, वृक्ष, चल, खेल। यही तत्सम अर्थात् संस्कृतसम कहा जाता है।

कुछ लोगों ने अर्द्ध तत्सम भी एक भेद माना है। जो संस्कृत नहीं है, पर संस्कृत की तरह दिखता है, उसे अर्द्ध तत्सम कहा जा सकता है; जैसे—अकाट्य, अपनत्व, लालिमा, जागृति, पुनीत महानता, उपरोक्त आदि। संस्कृत और संस्कृतभव के बीच के सोपान को भी अर्द्ध तत्सम कह सकते हैं; जैसे कार्य—कारज, काज; अग्नि अगिन आग; चूर्ण—चूरन, चूना दर्श से दर्शाना आदि।

२. संस्कृतभव—संस्कृत से विकसित; जैसे—आग, पानी, पहाड़, पेड़, हाथ, सिर, कह, हँस, जा, पढ़ आदि। यही तद्भव कहलाता है।

३. निजी—कुछ शब्द हिन्दी ने स्वयं गढ़े हैं; जैसे—अनुकरणार्थक, रिमझिम, छमछम, गड़बड़, छटपटाना, खटखटाना, चटपट, चमचम, झटपट, धड़ाम, चिल्लपों, चींचपड़, खँखार, रद्दी, ठंडा, बंटाधार, छीलना, ठूँसना, टकराना, ठोस, कड़ा, लेटना, बचना, झाड़ना, ढंग, ढब घुंडी, ठंड, गंडी, पुर्जा, पुर्जी, घूस, झिगुनी, टोकरी छैंटी, ठोकर, धक्का, ठेस, ठोकर। इसे ही देशज भी कहते हैं।

४. विदेशी—जैसे लीची, चाय, रिक्शा, लुंगी, रास्ता, दफ्तर, पैखाना, पेशाब, खून, रेल, स्टेशन, पेंसिल आदि।

५. अज्ञातमूल—कुछ ऐसे शब्द हैं, जिनका अभी पूरा विश्लेषण नहीं हुआ है; जैसे—झण्डा, छाती, कुत्ता, बचना, गण्डा, चुप, गुमसुम, छिप, कीचड़ झुकना झाड़ी, गोड़, ढोंढी, लोटा, जूता, पाग, तेंदुआ आदि।

विदेशी शब्दों में भी तद्भव तत्सम भेद रहते हैं, लालटेन, सिपाही, तगादा, टमटम, तकिया, अर्दली, चश्मा, हैजा, परवाह, आदि तद्भव हैं और तरफ (अ०) कीमत (अ०) तमाम (अ०), जमीन (फार०), खूब (फा०) दंगल, जवानी (फा०), दंग (फा०), परी, चर्च (अं०) रेडियो, ग्रामोफोन, टेलिफोन ट्रेन, स्कूल, कॉलेज, हॉकी, क्रिकेट, बस, सिनेमा आदि तत्सम।

रूप रचना की दृष्टि से शब्दों के निम्नलिखित भेद-प्रभेद हैं :—
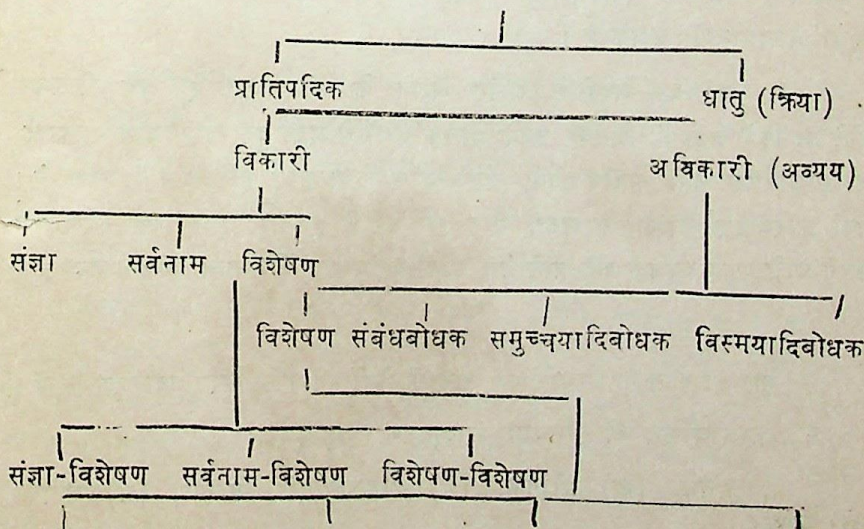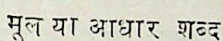
व्युत्पत्ति या बनावट की दृष्टि से शब्दों के निम्नलिखित तीन भेद हैं :—

१. रूढ़—जिसके टुकड़ों का कोई अर्थ नहीं, पूरे शब्द का ही कोई अर्थ होता है, वह शब्द रूढ़ कहा जाता है; जैसे—वह, तो, हाँ, न, मैं, पढ़, कह, वाह, लोटा, कुर्सी, चादर आदि ।

२. यौगिक—यौगिक वह शब्द है, जो अनेक सार्थक खण्डों से बना है; जैसे—विद्यालय, बुद्धिमान्, पाठक, सुखद, गमन, बचपन, पढ़ना ।

३. योगरूढ़—जो अनेक सार्थक खण्डों से बनने पर भी अब एक स्वतन्त्र समुदायार्थ प्रकट करता है; जैसे—पुरुषोत्तम का अर्थ उत्तम पुरुष मात्र नहीं, विष्णु हैं । भाण्डागार भाण्डों से भरे घर को ही नहीं, किसी भी घर को कहते हैं, जिसमें तरह-तरह का सामान रखा हो । घड़ी को अब छोटे-घड़े से कोई मतलब नहीं, यह एक समयसूचक यन्त्र का नाम हो गया है । ग्लास शीशे से ही नहीं, किसी धातु से भी बने पान-पात्र को कहते हैं । ऐसे ही पीताम्बर, पंकज आदि ।

अर्थ की दृष्टि से भी शब्दों के तीन भेद होते हैं :—

१. वाचक—जो शब्द अपने मुख्य अर्थ को प्रकट करता है, उसे वाचक कहते हैं—जैसे, मोहन, पहाड़, गाय, दूध, सभा, सुन्दर, आग आदि ।

२. लक्षक—जो मुख्य अर्थ से सम्बद्ध किसी दूसरे अर्थ को प्रकट करता है, उसे लक्षक कहते हैं; जैसे—'सोमरा' तो बिल्कुल गधा है । यहाँ 'सोमरा' मनुष्य गधा नहीं हो सकता, अतः 'गधा' का अर्थ है गधे के सदृश मूर्ख । यहाँ 'गधा' वाचक नहीं, लक्षक है ।

३. व्यंजक—शब्दों से प्रसंग आदि के कारण कुछ ऐसे अर्थ भी प्रकट होते या किये जाते हैं; जिनका उनके वाचक अर्थों से बहुत दूर का सम्बन्ध रहता है, जो साधारणतः नहीं प्रतीत होते; जैसे—आप तो साक्षात् हरिश्चन्द्र हैं, सन्त हैं । यहाँ 'हरिश्चन्द्र' का अर्थ है झूठा, 'सन्त' का अर्थ है दुष्ट । व्यंग्य अर्थ को प्रकट करने वाले शब्द व्यंजक कहे जाते हैं । यहाँ हरिश्चन्द्र और सन्त व्यंजक शब्द हैं ।

अभ्यास

१. मूल या स्रोत के आधार पर शब्द के भेदों की परिभाषा सोदाहरण लिखें ।

२. निम्नलिखित की परिभाषा सोदाहरण लिखें :—

(क) रूढ़, (ख) यौगिक, (ग) योगरूढ़ (घ) वाचक, (च) लक्षक, (छ) व्यंजक ।

संज्ञा

किसी वस्तुविशेष का सम्यक् ज्ञान (सम्+ज्ञा) करानेवाले विकारी प्रातिपदिक को संज्ञा (या नाम) कहते हैं। वह वस्तुविशेष या पदार्थ चेतन भी हो सकता है; जैसे—मनुष्य; अचेतन भी; जैसे—पेड़; स्थूल या मूर्त्त भी हो सकता है; जैसे—पहाड़; सूक्ष्म या अमूर्त्त भी; जैसे—क्रोध, दुष्टता; वास्तविक भी हो सकता है; जैसे—पूर्वोक्त सभी; काल्पनिक भी; जैसे—आकाश-कुसुम, वन्ध्यासुत आदि।

संज्ञा के निम्नलिखित भेद हैं :—

(अ) पदार्थवाचक—इससे किसी धर्मी या पदार्थ का बोध होता है। उपर्युक्त सभी उदाहरण इसके ही हैं।

इसके निम्नलिखित प्रभेद होते हैं :—

(क) व्यक्तिवाचक—जिससे किसी एक वस्तु का बोध हो, उसे व्यक्तिवाचक संज्ञा (या नाम) कहते हैं; जैसे—राम, हिमालय, गंगा, भारत, पश्चिम, अयोध्या, रामायण, आर्यावर्त्त, कातिक, रविवार, एकादशी, होली आदि। यह सदा एकवचन में रहती है।

(ख) जातिवाचक—जिससे किसी एक प्रकार, आकृति या कुल के समस्त पदार्थों का बोध होता है, उसे जातिवाचक कहते हैं; जैसे—मनुष्य, पहाड़, नदी, भाई, गाय, पुस्तक, पेड़ आदि। यह एकवचन में भी आ सकती है, बहुवचन में भी। जातिवाचक जब एक व्यक्ति के लिये प्रयुक्त होता है, तब व्यक्तिवाचक बन जाता है; जैसे—गोपाल (कृष्ण), नेहरू, गान्धी, पटेल आदि।

व्यक्तिवाचक संज्ञा भी जब किसी प्रकार के लिये प्रयुक्त होने लगती है, तब वह जातिवाचक बन जाती है, जैसे—भारत में भी **राम, जनक** या **शिवाजी** बहुत नहीं होते। कालिदास भारत के **शेक्सपियर** हैं और व्यास **होमर**। यहाँ राम, जनक, शेक्सपियर तथा होमर जातिवाचक हैं। मोची या चमार के अर्थ में रैदास का तथा अन्धे के अर्थ में सूरदास का प्रयोग होता है। वह **रैदास** है = वह चमार है। वह सूरदास (अन्धा) कहाँ गया?

इसके तीन उपभेद होते हैं :—

(१) **सामान्य जातिवाचक**—ऊपर के सभी उदाहरण इसी के हैं।

(२) **समूह जातिवाचक**—जिस शब्द से किसी समुदाय का बोध होता है, उसे समूह (जाति) वाचक कहते हैं। यह सदा एकवचन में प्रयुक्त होता है; जैसे—सभा, परिषद्, बारात, सेना, समाज आदि। इसे समुदायवाचक भी कहते हैं।

बहुवचन में व्यवहृत होते ही यह भी सामान्य जातिवाचक बन जाता है; जैसे—वहाँ मेला लगा है, लगेंगे हर बरस मेले, इसकी कई **श्रेणियाँ** हैं आदि।

(३) **द्रव्य जातिवाचक**—जो पदार्थ गिना नहीं, तौला जाता है, उसके बोधक शब्द को द्रव्यवाचक संज्ञा कहते हैं; जैसे—पानी, दूध, मांस, बालू, आटा, रूई, चावल, सोना आदि। यह भी सदा एकवचन में ही व्यवहृत होता है। '**दूधों** नहाओ पूतों फलो' में 'दूधों' जातिवाचक हो जाता है। इसी भाँति यहाँ सब तरह के **तेल** मिलते हैं में **तेल** भी है।

(आ) भाववाचक—जिस संज्ञा से किसी वस्तु का नहीं, वस्तुनिष्ठ भाव अर्थात् धर्म का बोध होता है, उसे भाववाचक कहते हैं। वैसे तत्त्वतः वस्तुनिष्ठ भाव भी एक वस्तु ही है, परन्तु व्यवहार में दोनों का अन्तर स्पष्ट है। काठ पदार्थ है; कठोरता उसका धर्म।

भाववाचक संज्ञाएँ अनेक प्रकार के शब्द-भेदों से बनती है; जैसे—

विशेषण से—पीलापन, बुढ़ापा, भलाई, मिठास, भूखंता, एकता।

जातिवाचक संज्ञा से—मानवता, पशुता, स्त्रीत्व, लड़कपन, शेखी।

द्रव्यवाचक संज्ञा से—लोहापन, सोनापन, जलत्व, दुग्धत्व।

समूहवाचक संज्ञा से—परिषत्त्व, श्रेणीत्व, सभात्व।

व्यक्तिवाचक संज्ञा से—गान्धीपन, हिमालयता, गंगात्व।

सर्वनाम से—अपनापन, आपा, अहंकार, ममता।

क्रिया से—मार, दौड़, खेल, कूद, पढ़ना, पढ़ाई, अस्तित्व, अस्मिता

अव्यय से—वृथात्व, मिथ्यात्व, सुष्ठुता, पृथक्त्व, हामी (हाँ+ई), वाहवाही (वाहवाह+ई) शाबाशी।

यह भी सदा एकवचन ही रहता है। पर इसमें निम्नलिखित **विशेषताएँ** हैं" में 'विशेषताएँ' जातिवाचक हो गया है।

प्रातिपदिकार्थ

प्रत्येक प्रातिपदिक से पाँच अर्थों की अभिव्यक्ति होती है :—

(क) जाति, (ख) व्यक्ति, (ग) लिंग, (घ) संख्या तथा (ङ) कारक।

संज्ञा भी चूँकि प्रातिपदिक है (प्रातिपदिकों में मुख्य है), अतः इससे इन पाँचों अर्थों की प्रतीति होती है। उदाहरणार्थ, गाय का अर्थ है गोत्व जाति से युक्त एक व्यक्ति; वृक्ष का अर्थ है वृक्षत्व जाति से युक्त एक व्यक्ति। केवल लिंग, वचन या कारक के कारण ही प्रातिपदिकों में रूप-परिवर्तन होता हैं; जाति या व्यक्ति के भेद के कारण नहीं।

अभ्यास

१. निम्नलिखित संज्ञा शब्दों का प्रकार बताएँ :—

नेपाल, तालाब, चालाकी, गिरोह, व्याख्याता, चाचा, वेद, मन्त्र, हवा ठण्डक, झुकाव, घड़ा, दही।

२. इनका जातिवाचक संज्ञा की भाँति प्रयोग करें :—

बाजार, मजबूरी, भीम, दाल, मान्यता।

३. इनमें शुद्ध उत्तरों के सामने ✓ ऐसा चिह्न कर दें, तथा अशुद्ध उत्तरों के सामने × ऐसा---

[क] विक्रान्त जातिवाचक संज्ञा है

[ख] उंगली समुदायवाचक संज्ञा है

[ग] खीर जातिवाचक संज्ञा है

[घ] वर्ण समूहवाचक संज्ञा है

[ङ] मिठाई भाववाचक संज्ञा है

[च] चाय द्रव्यवाचक संज्ञा है

लाक्षणिक- किसी संज्ञा शब्द से ह्रस्वार्थ का बोध कराने या अतिशय प्रेम प्रकट करने के लिए कुछ प्रत्यय जोड़े जाते हैं-

लिंग

लिंग का अर्थ है चिह्न। संज्ञाओं में जिसे पुरुष का लिंग अर्थात् चिह्न प्राप्त है, उसे पुंलिंग कहते हैं, जिसे स्त्री का लिंग प्राप्त है, उसे स्त्रीलिंग; जैसे—

पुंलिंग	स्त्रीलिंग	पुंलिंग	स्त्रीलिंग	पुंलिंग	स्त्रीलिंग
पुरुष	स्त्री	पिता	माता	भाई	बहन
ससुर	सास	बेटा	बेटी	बैल	गाय

इस दृष्टि से प्राणियों में प्रत्येक नर को पुंलिंग, मादा को स्त्रीलिंग और सभी अप्राणियों को न पुंलिंग न स्त्रीलिंग, नपुंसक होना चाहिये। परन्तु संस्कृत में क्रमश: यह नियम टूटता गया और छोटे प्राणियों में भी कोई संज्ञा शब्द सदा पुंलिंग; जैसे—कौआ, पपीहा, और कोई सदा स्त्रीलिंग; जैसे—कोयल, मक्खी, व्यवहृत होने लगा। अप्राणियों में भी भूमि के सभी पर्याय स्त्रीलिंग हो गए, आकाश के कुछ पर्याय पुंलिंग कुछ स्त्रीलिंग तथा कुछ नपुंसक। अतः हिन्दी ने नपुंसक का भेद ही हटा दिया। हिन्दी का लिंग-निर्णय केवल परंपरागत प्रयोग पर अवलंबित हो गया है; जैसे—आग स्त्रीलिंग है और पानी पुंलिंग; पेट और पैर पुंलिंग, छाती और बाँह स्त्रीलिंग। परन्तु आज भी मानव तथा पशुवाचक सभी शब्द पुरुष अथवा जाति-सामान्य वाचक रहने पर पुंलिंग तथा स्त्रीवाचक होने पर ही स्त्रीलिंग होते है। अनियम केवल निर्जीव वस्तुओं तथा छोटे जीवों के वाचक शब्दों में ही है।

अधिकांश स्थलों में (प्रायः प्राणिवाचक तथा विशेषण) पुरुष और स्त्री का बोधक एक ही शब्द होता है, केवल एक प्रत्यय जोड़कर[1] उसे स्त्रीलिंग बना लेते हैं; जैसे—

	पुंलिंग	स्त्रीलिंग	पुंलिंग	स्त्रीलिंग	पुंलिंग	स्त्रीलिंग
१. आ (क)-	क्षत्रिय	क्षत्रिया	शूद्र	शूद्रा	प्रिय	प्रिया
	अनुज	अनुजा	तनय	तनया	ज्येष्ठ	ज्येष्ठा
	प्रियतम	प्रियतमा	पूज्य	पूज्या	महोदय	महोदया
	शिष्य	शिष्या	प्राचार्य	प्राचार्या	मुग्ध	मुग्धा
	प्रथम	प्रथमा	निर्मल	निर्मला	भवदीय	भवदीया
(ख)--	बालक	बालिका	अध्यापक	अध्यापिका	विधायक	विधायिका
	नायक	नायिका	लेखक	लेखिका	साहब	साहिबा

---

१. अनेक स्थानों में स्त्री प्रत्यय होने पर प्रकृति में कुछ न कुछ परिवर्तन हो जाता है। आगे के उदाहरणों में यह स्पष्ट है!

पुंलिंग	स्त्रीलिंग	पुंलिंग	स्त्रीलिंग	पुंलिंग	स्त्रीलिंग
२. ई(क)--देव	देवी	ब्राह्मण	ब्राह्मणी	पुत्र	पुत्री
नर्तक	नर्तकी	गौर	गौरी	सुन्दर	सुन्दरी
कुमार	कुमारी	मामा	मामी	हरिण	हरिणी
नगर	नगरी	नद	नदी	मेरा	मेरी
पंचम	पंचमी	अच्छा	अच्छी	सखा	सखी
साधु	साध्वी	मुर्गा	मुर्गी	कुत्ता	कुत्ती बबुआ
'ख'--वक्ता	वक्त्री	अभिनेता	अभिनेत्री	रचयिता	रचयित्री
'ग';-श्रीमान्	श्रीमती	महान्	महती	रूपवान्	रूपवती
'घ'--विद्वान्	विदुषी	गरीयान्	गरीयसी	प्रेयान्	प्रेयसी
'ङ'--राजा	राज्ञी	योगी	योगिनी	पार्वति	पार्वती
'च'--नर	नारी	पति	पत्नी	सूर्य	सूरी
३. आनी--भव	भवानी	आचार्य	आचार्यानी	क्षत्रिय	क्षत्रियाणी
जेठ	जिठानी	मेहतर	मेहतरानी	चौधरी	चौधरानी
४. आइन- पण्डित	पण्डिताइन	पाँड़े	पंड़ाइन	साहू	सहुआइन
५. इन---माली	मालिन	धोबी	धोबिन	हजाम	हजामिन
६. नी—साधु	सधुनी	बाबू	बबुनी	सिंह	सिंहनी
ऊँट	ऊँटनी	जादूगर	जादूगरनी	साँड़	साँड़नी
७. इया--बुढ़वा[1] (बूढ़ा)	बुढिया	कुतवा	कुतिया	घोड़वा	घोड़िया
८. अपवाद-युवा	युवति	मनुष्य	मनुषी	श्वशुर	श्वश्रू

कुछ स्त्रीलिंग ईकारान्त शब्दों के अन्तिम ई को हटा देने या उस की जगह आ जोड़ देने से पुंस्त्व या वृहदाकार का बोध होता है---फूफी-फूफा, जीजी-जीजा, पोथी-पोथा, चिट्ठी-चिट्ठा, चींटी-चींटा, मक्खी-मक्खा, छुरी-छुरा, पिटारी-पिटारा, टोपी-टोपा, रस्सी-रस्सा, पुतली-पुतला, रोटी-रोट, लाठी लट्ठ आदि।

---

१. वस्तुतः बुढ़िया बुढ़वा से नहीं, बूढ़ा के स्त्रीलिंग रूप बूढ़ी से तद्धित "इया" प्रत्यय के योग से बनता है, यह तद्धित प्रकरण में स्पष्ट होगा। यह कोई स्त्रीप्रत्यय नहीं। इकारान्त या ईकारान्त शब्द के बाद अल्पार्थक तद्धित आ से बना रूप है; जैसे—हरि से हरिया, धोबी से धोबिया, वैसे ही बच्ची से बचिआ, कुत्ती से कुतिया, बूढ़ी से बुढ़िया, बेटी से बिटिया, लोटा-लोटी-लुटिया आदि।

यदि स्वयं किसी संज्ञा शब्द का प्रयोग करना है, तब तो उसके लिंग-निर्णय के लिये कुछ साधारण नियमों अथवा प्रामाणिक प्रयोगों को याद रखना चाहिये और शब्द-कोश से संदेह दूर कर लेना चाहिये, क्योंकि उस संज्ञा को कहनेवाले सर्वनाम, विशेषण तथा क्रिया पद भी उसी के लिंग में रखने पड़ते हैं। इनमें सर्वनामों में तो लिंग-भेद से रूप-भेद नहीं होता, किन्तु विशेषणों तथा क्रियाओं में बहुधा होता है। यदि दूसरे का प्रयोग देख-सुनकर केवल पता लगाना है कि इस संज्ञा शब्द का क्या लिंग है, तो (क) उस शब्द के निर्विभक्तिक बहुवचन रूप (ख) और उस शब्द से अन्वित विशेषण तथा (ग) क्रिया पद के रूप से अनुमान लगाया जा सकता है। जैसे—

पुंलिंग	स्त्रीलिंग
अकारान्त—वहाँ मोहन के ग्रन्थ रखे हैं ?	वहाँ मोहन की पुस्तकें रखी हैं ?
आकारान्त—वहाँ कितने तारे उगे थे ?	वहाँ कितनी उल्काएँ गिरीं थीं ?
इकारान्त—वहाँ अनेक जलधि दिखते हैं।	अनेक विधियाँ दिखती हैं।
ईकारान्त—वहाँ अनेक हाथी दौड़ते हैं।	नदियाँ बहती हैं।
उकारान्त—वहाँ अनेक हेतु मिले।	वहाँ अनेक वस्तुएँ मिलीं।

यह मेरी पीली धोती सूख रही है, वह किसका उजला कुर्त्ता सूख रहा है में 'धोती' स्त्रीलिंग है, 'कुर्त्ता' पुंलिंग यह स्पष्ट हो जाता है। रोटी अच्छी लगती है, भात अच्छा लगता है, रोटी खानी चाहिए, भात खाना है, मोहन के कुर्त्ते में तुम्हारी पुस्तकों से आदि।

परन्तु यदि कुछ शब्दों को देकर कहा जाय कि इनसे ऐसे वाक्य बनावें, जिनसे इन शब्दों का लिंग स्पष्ट हो जाय, तो केवल शब्दों को देखकर ही निर्णय करना पड़ता है कि इन शब्दों में पुंलिंग की भाँति रूपान्तर होगा और इनमें स्त्रीलिंग की भाँति; अर्थात् जहाँ किसी वाक्य में प्रयुक्त नहीं, एकाकी शब्द को देकर उसका लिंग पूछा जाय, वहाँ कठिनाई है, जैसे निम्नलिखित शब्दों का लिंग-निर्देश करो—

शरण, वरण, हार, प्रहार, जलधि, विधि, अवलेह, देह इत्यादि।

ऐसी स्थिति में निम्नलिखित नियम मार्ग-दर्शक मात्र हो सकते हैं :—

१. हिन्दी में संस्कृत, संस्कृत भव (तत्सम, तद्भव) देशज और विदेशी प्रायः सभी प्रकार के अकारान्त शब्द साधारणतः पुंलिंग होते हैं; जैसे—तट, गुण, यश, खेत, नाच, हाथ, कान, थन, दूध, फूल, अनार, रुमाल, मेड़, मोड़, लालटेन, थूक, खँखार, ढंग, ढोंग, तौर, मुकाम, मोम आदि।

पर इसके अपवाद भी अनेक हैं; जैसे—जय, आय, संतान, हार, शरण, किरण, गन्ध, इन्द्रिय, पुस्तक, उड़ान, लौंग, खाद, चील, कोयल चाह, झील, ट्रेन, तातील आदि।

२. हिन्दी में जो संस्कृत के स्त्रीलिंग हलन्त, आकारान्त, इकारान्त ईकारान्त, उकारान्त शब्द आए हैं, वे प्रायः स्त्रीलिंग ही रह गए हैं; जैसे—

(क) परिषद्, संसद्, विपद्, आपद् आदि। सुहृद्, दिनकृत् यकृत्, आदि मूलतः ही पुंलिंग हैं।

(ख) लता, माला, दया, सभा, प्रार्थना, घटना, प्रभा, पूजा, झंझा, त्रिफला, सुन्दरता जनता आदि। इनमें कुछ पुंलिंग भी हो गए हैं; जैसे—देवता, तारा सहारा (सहायता) आदि।

(ख) इकारान्त—ख्याति, स्थिति, बुद्धि, सिद्धि, ग्लानि, शान्ति, रूढ़ि, यति, मणि, छवि, धमनि, अवनि, भूमि, नाभि आदि।

(ग) ईकारान्त—नदी, वाणी, मसी, लेखनी, कर्त्तरी, पेटी आदि।

(घ) उकारान्त रेणु, चंचु, रज्जु, स्नायु आदि।

(ङ) ऊकारान्त—भू, भ्रू आदि।

(च) ऐसे शब्दों के तद्भव भी प्रायः अपना पूर्व लिंग नहीं छोड़ते; जैसे—

खट्वा—खाट, रात्रि—रात, वार्त्ता—बात, खनि—खान, चंचु—चोंच, दूर्वा—दूब, छदि—छत, वटी—बरी, चतुर्थी—चौथ, हरिद्रा—हलदी, पंक्ति—पाँत, आढ़की—अरहर, शुण्ठी—सोंठ, मक्षिका—मक्खी, धूलि—धूल, कर्कटी—ककड़ी, वर्त्तिका—बटेर, अंगुलि—उँगली, शाटी—साड़ी, अमावस्या—अमावस, स्थाली—थाली।

(छ) संस्कृत के कुछ अप्राणिवाचक या क्षुद्रजन्तुवाचक आकारान्त या उकारान्त पुंलिंग या नपुंसक भी हिन्दी में स्त्रीलिंग हो जाते हैं; जैसे—

अन्त में अन् वाले आकारान्त—आत्मा, महिमा, गरिमा, लघिमा।

इकारान्त—निधि, विधि, संधि, व्याधि, अग्नि, रश्मि, कृमि राशि।

उकारान्त—आयु, ऋतु, मृत्यु, वस्तु, वायु, बाहु, स्नायु, धातु।

अपवाद—

चन्द्रमा, यक्ष्मा गिरि इन तीनों के पर्याय, तालु, अणु, बिन्दु, जन्तु, तन्तु, सेतु हेतु, अंशु आदि।

हिन्दी के भाववाचक कृत् अ या शून्य प्रत्यय, अन, आवट तथा आहट जिनके अन्त में रहते हैं, वे प्रायः स्त्रीलिंग होते हैं; जैसे—

अ—पुकार, सूझ, मार लूट दौड़ जीत पूछ पकड़ तौल समझ, रोक, जीत आदि। अपवाद—खेल, बोल आदि।

अन—जलन कुढ़न सूजन रहन लगन आदि; पर चलन, सहन आदि संस्कृत अन प्रत्ययान्त पुंलिंग हैं।

आवट—लिखावट गिरावट दिखावट सजावट।

आहट—घबराहट चिल्लाहट बुलाहट खुजलाहट।

किन्तु जिनके अन्त में भाववाचक कृत् ना, आव या आवा और तद्धित पन या पा रहता है वे पुंलिंग होते है; जैसे—

ना—कहना खाना, गाना। आव—बहाव घटाव, बनाव, लगाव।

आवा—दिखावा बढ़ावा पहरावा बहकावा चढ़ावा बधावा बुलावा भुलावा।

पन—लड़कपन बचपन अपनापन सूनापन। पा—बुढ़ापा रँड़ापा मोटापा।

३. संस्कृत के जो पुंलिंग या नपुंसक हिन्दी में तद्भव आकारान्त बने हैं या जो अन्य संस्कृत भिन्न आकारान्त शब्द हैं; वे भी प्रायः पुंलिंग ही रहते हैं; जैसे—

तद्भव :—कूप—कुआँ, कीट—कीड़ा, अपूप—पूआ, चिपिट—चिउड़ा, चणक—चना, पत्र—पत्ता, शल्क—छिलका, चूर्ण—चूना, क्षुर—छुरा, स्वर्ण—सोना, परशु—फरसा, कुभास—कुहासा, केतक—केवड़ा, कूट—कूड़ा, घट-घड़ा।

अन्य—आटा, इकतारा, इनारा, इलाका, इस्तीफा, एक्का कटोरा, कच्छा, कत्था, करौंदा, कुहरा, कूड़ा, काढ़ा, कोठा, केवड़ा, कौआ, खटका, खपड़ा, खरबूजा, खर्राटा, खाँचा, खीरा, खुलासा, खूँटा, खेमा, खेवा, खोंचा, खोंता, गँड़ासा, गमला, गलियारा, गलीचा, गाँजा, गिरजा, गड्ढा, गूदा, घराना, घाँघरा, घाटा, घुटना, घूरा, घेधा, घोंघा, घोटाला, घोंसला, चन्द्रमा, चंदोबा, चकमा, चकला, चकवा, चर्खा, चाँटा, चूजा, चूड़ा, छज्जा, छल्ला, छाता, छींटा, छोआ जत्था, जनवासा, जाँता, ज्वारभाटा, जुआ, जूड़ा, झटका, टंटा, टकुआ, ठप्पा, ठर्रा, ठीकरा, डंडा, डब्बा, तरीका, तम्बूरा, तकिया, तबला, तमंचा, तानपूरा, ताला, तिनका, दंगा, दर्जा, दिवाला, दियारा, दीया, दुशाला, दौरा, धन्धा, धक्का, नजराना, पगहा, पना, पन्ना, पपीहा, परकोटा, पर्दा, पलड़ा, पहिया, पाला, पुलिन्दा, पाजामा, फेफड़ा, फेरा, बखिया, बाजा, बेला, ब्योरा, भत्ता, भुट्टा, भेड़िया, मकबरा, मक्का, मजमा, मजा, मजीरा, मनसूबा, मलीदा, महुआ, माजरा, मुकदमा, मुरब्बा, मूँगा, मेवा, मौका, रुतबा, रोंगटा, राँगा, शामियाना, शिकंजा, शिकवा, संखिया, समाँ, सलमा, सवैया, सहारा, साया, सिरका, सिरा, सोड़ा, सोफा, सोरठा, स्यापा, हमला, हल्ला, हवाला, हाशिया, हीरा, हीला, हैजा, हौआ।

किसी भी भाषा के ईकारान्त निर्जीव या क्षुद्र जन्तुवाचक शब्द स्त्रीलिंग होते है; जैसे—अँतड़ी आँधी, इकाई, इमली, इलायची, एड़ी, कमाई, कंठी, कसौटी, कस्तूरी,

कुंजी, कुल्हाड़ी, कैंची, खाई, खुदाई, ख़ुशी, खेती, खेसारी, गली, गाली, गिलहरी, गुड्डी, घाटी, चमेली, चलनी, चाँदी, चारपाई, चिट्ठी, चिनगारी, चिमनी, चिप्पी, चीनी, चुनौटी, चुनौती, चुस्की, छावनी, छाती, छाली, छेनी जँभाई, झाड़ी, टोपी, तरकारी, तरोई, थाली, दरी, दुहाई, देरी, धोती, नहरनी, नापी नारंगी, पेटी, फेरी, बाती, बेड़ी, भलाई मलाई, युनिवर्सिटी, रेती, रोटी, लीची, लीटी, लाठी, लड़ाई, सब्जी, सर्दी, सुपारी, सुथनी हल्दी सुँघनी।

अपवाद (प्रायः सभी संस्कृतभव शब्द है) जैसे :—घी (घृत), जी (जीव) पक्षी (पक्षिन्) पंछी, मोती (मौक्तिक) पानी. (पानीय), दही (दधि) मवेशी।

ऊकारान्त ओकारान्त तथा औकारान्त प्रायः पुंलिंग होते हैं—आलू आँसू उल्लू कचालू कोल्हू घुँघरू गेहूँ, जनेऊ, चंपू चाकू, चुल्लू टापू डमरू तंबाकू तराजू नीबू पहलू पिल्लू बालू [स्त्री० भी] सत्तू। कोदो, रासो, भादो, पोलो।

निर्जीव वस्तुओं में भी निम्नलिखित (क) वस्तुओं के सभी पर्याय पुंलिग ही होते हैं :—

[क] देवता, सूर्य, चन्द्रमा, तारा, बादल, आकाश, पाताल, समुद्र, पानी, पेड़ नवग्रह, मुँह हाथ पाँव बाल दाँत ओठ गाल माथा ललाट, नख दिन आदि।

(ख) दिनों तथा महीनों के नाम।

ये सदा स्त्रीलिंग होते हैं :-

(क) धरती, नदी, रात के पर्याय

(ख) तिथियों के नाम—परिवा, दूज, छठ आदि।

इस प्रकार हिन्दी में लिंग निर्धारण के ५ आधार हैं :—

१. अर्थ; जैसे—नारी, नदी, निशा आदि के सभी पर्याय स्त्रीलिंग होते हैं; सूरज समुद्र, चाँद, बादल आदि के सभी पर्याय पुंलिंग।

२. प्रत्यय; जैसे—त्व प्रत्ययान्त सभी पुंलिंग हैं, ता प्रत्यान्त सभी स्त्रीलिंग जैसे; गुरुत्व गुरुता। इ (कि) प्रत्ययान्त सभी स्त्रीलिंग होते हैं, जैसे—निधि, विधि, संधि, परन्तु जलधि [समुद्र] पुंलिंग है।

३. शब्द का अन्तिम खण्ड; जैसे—ईकारान्त प्रायः स्त्रीलिंग होते हैं। मार्च पुंलिग है पर जनवरी स्त्रीलिंग। किन्तु मोती, दही, घी, जी आदि पुंलिग हैं।

४. मूल शब्द (तत्सम) का प्रभाव; जैसे—खट्वा—खाट स्त्रीलिंग है और घट—घड़ा पुंलिंग।

५. **दूसरी भाषा के पर्याय का प्रभाव**; जैसे आय [सं]---आमदनी [उर्दू], वायु [सं०]---हवा [उर्दू]। ये दोनों संस्कृत के पुंलिंग शब्द उर्दू के पर्याय के प्रभाव से स्त्रीलिंग बन गए। अरबी का पुंलिंग **अक्ल** संस्कृत की **बुद्धि** के प्रभाव से हिन्दी में स्त्रीलिंग बन गया।

हिन्दी में प्रयुक्त निर्जीव पदार्थ अथवा क्षुद्र जंतुवाचक कुछ मुख्य स्त्रीलिंग शब्दों की सूची :—

अकारान्त—अकड़, अक्ल, अचकन, अड़चन, अदालत, अदावत, अनबन, अपील, अफवाह, अफीम, अरहर, आग, आँच, आड़, आँत, आदत, आन, आपद, आफत, आमद, आय, आवाज, आशीष, आस्तीन, आह, आहट, आँख इंच इन्द्रिय, इजाजत इज्जत इमारत, ईख, ईंट, ईद, उड़ान, उथलपुथल, उधेड़बुन, उपज, उपनिषद्, उमंग, उम्र, उलझन, ऊमस, ऊब, ऐंठ, ऐंठन, ऐनक, ओट, ओस, औलाद, कटार, कड़क कतरन, कतार, कद, कदर, कन्दील, कब्र, कमर, कमान, कमीज, कयामत, करवट, कवायद, कलम, कसक, कसम, कसरत, कसावट, कपास, कशमकश, करतूत, कालिख, काँग्रेस, काश्त, किताब, किलक, किशमिश, किश्त, किस्मत, कीमत, कील, कुशल, कूक, कैद, कोख, कोमल, कोर, कसर, कोशिश, कौम, खटपट, खटास, खनक, खपत, खपरैल, खबर, खराद, खरीद, खरोंच, खाँड, खाज, खाट, खातिर, खाद, खान, खाल, खिदमत, खींच, खीझ, खीर, खील, खुराक, खुशामद, खैर, खैरात, खोंच, खोट, खोज, खोह, गजल, गड़बड़, गंध, गनीमत, गप, गफलत, गरज, गर्दन, गाँठ, गर्ज, गर्दिश, गाँठ, गाजर, गाज, गाद, गिटपिट, गिरफ्त गिरह, गुंजाइश, गुलेल, गूँज, गैस, गोद गोट, घात, घास, घिचपिच, घिन, घुड़साल, घूस, चटक, चट्टान, चपत, चमक, चसक, चहक, चहलपहल, चाँप या चाप, चाट, चादर, चाल, चाह, चाय, चाहत, चितवन, चालढाल, चिक चिट, चिल्लाहट, चिकनाहट, चिढ़, चिलम, चींचपड, ची, चील, चीख, चुहल, चूक, चेचक, चोंच, चोट, चौपड़, चौखट, छत, छड़, छमछम छलांग, छाछ, छानबीन, छाप, छाल, छाँह, छींक, छींट, छीछालेदर, छूट, छूत, छुआछूत, जंग, जंजीर, जकड़, जगह, जड़, जन्नत, जमात, जमानत, जमावट, जमीन, जयमाल, जरूरत, जलन, जाँच, जाँघ, जागीर, जान, जायदाद, जिद, जिरह, जिल्द, जिल्लत, जीत, जीभ जूठन, जेब, जेवनार, जोंक, जोत, झंकार, झंझट, झिझक, झड़प, झपक, झलक, झाँझर, झाड़पोंछ, झाड़फूँक, झाड़बुहार, झालर झिड़क, झील, झूल, टकसाल, टक्कर, टमटम, टहल, टाँग टाँयटाँय, टाप, टालमटोल, टिपटिप, टीपटाप, टीमटाम, टीस, टूट, टेक, टेंट, टेर, टोह, टोक, ट्रेन, ठसक, ठंडक, ठकठक, ठनक, ठूँठ, ठेस, ठोकर, डकार, डगर, डपट,

डाँक, डाक, डाट, डाढ़, डाल, डींग, डीठ, डोर, ढाल(शस्त्र) ढोलक, तकदीर, तकरार, तकरीर, तड़कभड़क, तड़प, तवीअत, तरंग, तरकीब, तरफ, तरह, तरावट, तराश, तलब, तलवार, तलाश, तशरीफ, तसवीर, तह, तह्जीब, तहसील, ताक, ताकझाँक, ताकत, ताकीद, तातील तादाद तान, तारीफ़, तारीख, तालीम, तासीर, तिजारत, तीज तुक, तोंद, तोप, तोहमत, तोशक, तौल, थकान, थकावट, थाप, थाह, दमक, दरखास्त, दरगाह, दरार, दलदल, दलील, दस्तक, दस्तावेज, दुकान, दहाड़, दाद, दाल, दावत, दीठ, दीमक, दीवार, दूकान, दुत्कार, दुम, दहशत, दूब, दूरबीन, दूर, देखभाल, देखरेख, देन, देर देह, धड़कन, धमक, धरपकड़, धरोहर, धाक, धार, धुन्ध, धुन, धूप, धूम, धौंस, नकल, नकाब, नकेल, नजर, नहर, नजाकत, नजात, नफरत, नफासत, नब्ज, नमाज, नस, नसीहत, नाँद, नाक, निगाह, नींद, नीयत, नींव नुमाइश, नोक-झोंक, नौबत, नालिश, पकड़, पंगत, पकड़-धकड़, पखावज, पंचायत, पछाड़, पतवार, पतझड़, पत्तल, पनाह, परख, पसन्द, परवाह, परत, परात, परिषद्, पलक, पलटन, पहचान, पहुँच, पुलिस, पायल, पाँत, पाजेब, पिस्तौल, पीक, पीठ, पीव, पीर, पुश्त, पुकार, पूँछ, पूछ, पूछताछ, पेचिश, पेन्सिल, पेन्शन, पैदावार, पोर, पोशाक, पौध, प्यास, फजीहत, फटकार, फटकन, फतह, फरियाद, फसल, फाँक, फाँस, फिक्र, फिसलन फीस, फुरसत, फुहार, फूँक, फूट, फौज, बंदूक, बकबक, बकवास बखशीश, बगल, बचत, बटेर, बदौलत, बनावट, बयार, बरकत, बरसात, बर्दाश्त, बर्फ, बहार, बाँह, बागडोर, बात, बातचीत, बाढ़, बाबत, बारात, बार बारिश, बारूद, बुनावट, बुलबुल, बुलाहट, बूँद, बैठक, बोतल, बोल-चाल, बौखलाहट, बौछार, भगदड़, भटक भनक, भभून, भरमार, भाँग, भाप, भीख, भीड़, भूख, भूल, भेंट, भेड़, भैंस, भौंह, मखमल, मंजिल, मजलिस, मजाल, मदद, मसनद, मरम्मत, मलमल, मशाल, मशीन, मस्जिद, मँझधार, मसल महक, महफिल, माँग, मात, माप, मार, मारपीट, मिसाल मिठास, मिन्नत, मिर्च, मिलावट, मीनार, मुराद, मुलाकात, मुठभेड़, मुश्किल, मुसकान, मुसीबत, मुस्कुराहट, मुहब्बत, मुद्दत, मुहर, मूँग, मूँछ, मूत, मेहनत, मेहराब मैल, मोच, मोटर, मोहर, मौज, मौत, यादगार, याद, रंगत, रकम, रग, रगड़, रज, रफ्तार, रसद, रसीद रस्म राख, रात रामायण (उभयलिंग) राय, राल, रास, राह, राहत, रिपोर्ट, रियासत, रियायत, रिशवत, रिमझिम, रीझ, रीढ़, रुकावट, रुनझुन, रूह रेत, रेल, रोक, रोकटोक, रोकड़, रोर, रौनक, लकीर, लगन, लगाम, लताड़, लचक, लट, लत, लपक, लपट, लपेट, ललक, ललकार, लहर, लाग, लागत, लाज, लात, लानत, लार, लालटेन, लाश, लग्न, लियाकत, लीक, लीख,

लोच, लोटपोट, वकालत, वसीयत, विजय, विनय, शपथ, शरण, शक्कर, शक्ल शमशेर, शरबत, शर्त, शर्म, शराफत, शबनम, शराब, शरारत, शहादत, शान, शाम, शामत, शिकायत, शौकत, सजधज, सजावट, सड़क, सतह, सनक, सनद, समझ, संतान, संपद्, सँभाल, संसद, संस्कृत, सरकार सराय, सलामत, सलतनत, ससुराल, साजिश, साख, साइत, साँझ, साध, साँस, साँसत, सिगरेट, सिफारिश, सींक, सीड़, सीध, सुध, सुनगुन, सुरंग, सुबह, सुलह, सूजन, सूझ, सूँड़, सूरत, सेज, सेंध, सेहत, सैर, सोंठ, सौगन्ध, सौगात, सौंफ, हकीकत, हजामत, हड़ताल, हड़बड़ हद, हरकत, हलचल हाँक, हाजत, हाट, हाय हार, हालत, हिकमत, हिचक, हिदायत, हिफाजत, हिमायत, हिम्मत, हींग, हूक, हूर, हैसियत, होड़।

आकारान्त—आत्मा, इत्तिला, उषा, काया, कुटिया, खटिया, खिजाँ, खुरमा, गठिया, गदा, गरिमा, गुझिया, गौरैया, गुड़िया, चिड़िया, चुटिया, टिकिया, डिबिया तमन्ना, दगा, दफा, दवा, दुआ, दुविधा दुनिया, पुड़िया, बगिया, बतिया, बला, बुँदिया, मंशा, मैना, लालिमा, सजा, सीमा सुविधा, हवा, हाला।

ऊकारान्त—खड़ाऊँ जूँ दारू बालू लू। ओकारान्त सरसों। औकारान्त पौली।

अभ्यास

प्रश्न—इनका स्त्रीलिंग बनाओ—

(क) निरीक्षक, महाशय, प्रार्थी, मैथिल कोकिल, रजक, गोप, मंत्री, निवेदक, निवेदित, निवेदयिता, मृदु, भगवान्, फूफा, स्यार, बाघ, मेढ़क, नाई।

(ख) इनका पुंलिंग बनाओ—

कवयित्री शोभना रमणी पृथ्वी मातुलानी अर्याणी जनयित्री मत्सी दिनकरी अबला बल्लभा धात्री निर्मात्री ब्रह्मवादिनी औरत।

१. इन शब्दों का ऐसा प्रयोग करें कि इनका लिंग स्पष्ट हो जाए –
रूमाल, मोड़, किरण, तारा, धूल, झुकाव, हेतु, ऋतु, पूछ, टापू।

२. अवधि, वारिधि, बाट, हाट, स्वाद, रहन, चलन।

वचन

वचन का अर्थ है–संख्या। हिन्दी में दो वचन होते हैं। एक वस्तु के लिए एकवचन तथा अनेक अर्थात् एक से अधिक के लिये बहुवचन रूप का प्रयोग होता है। प्रातिपदिकों में लिंग की भाँति संख्या के कारण भी रूपान्तर होता है। साधारणतः सभी प्रातिपदिक एकवचन का ही बोध कराते हैं। बहुवचन का बोध कराने के लिये निम्नलिखित उपाय अपनाए जाते हैं :–

१. कर्त्ता और कर्म में पुंलिंग शब्दों का शून्य विभक्तिक बहुवचन भी साधारणतः शून्य प्रत्यय से ही जताया जाता है. इसके लिये रूपान्तर नहीं किया जाता। ऐसी स्थिति में उनके एकत्व अथवा बहुत्व का ज्ञान उनके विशेषण तथा क्रिया के रूपान्तरों से ही होता है; जैसे–

कैसा बालक	आया या देखा है।			कैसे बालक	आये	या देखे हैं।	
,,	अतिथि	,,	,,	,,	अतिथि	,,	,,
,,	हाथी	,,	,,	,,	हाथी	,,	,,
,,	साधु	,,	,,	,,	साधु	,,	,,
,,	भालू	,,	,,	,,	भालू	,,	,,

२. किन्तु ऐसा [कर्त्ता और कर्म में शून्य विभक्तिक पुंलिंग] शब्द यदि आकारान्त है, तो उसके बहुवचन में अन्त के 'आ' को 'ए' कर देते हैं; जैसे :–

एकवचन	बहुवचन
मोहन का भतीजा आया है।	मोहन के भतीजे आये हैं।
कैसा लड़का आया या देखा है।	कैसे लड़के आये या देखे हैं।
गन्दा कपड़ा धोता या देखता हूँ।	गन्दे कपड़े धोता या देखता हूँ।

३. परन्तु ऐसे शून्य विभक्तिक पुंलिंग शुद्ध संस्कृत, फारसी, अरबी और दो समान खण्डवाले जैसे चाचा नाना तथा भैया आदि कुछ अन्य आकारान्त हिन्दी शब्दों के बहुवचन में रूपान्तर नहीं होता; जैसे—

एकवचन	बहुवचन
वह अच्छा योद्धा महात्मा या सूरमा था।	वे सब अच्छे योद्धा, महात्मा या सूरमा थे।
मैंने ऐसा योद्धा या महात्मा नहीं देखा था।	मैंने ऐसे योद्धा या महात्मा नहीं देखे थे।

एकवचन	बहुवचन
वह साक्षात् देवता है।	वे सब साक्षात् देवता हैं।
ऐसा देवता नहीं देखा था।	ऐसे देवता नहीं देखे थे।
वह किसका पिता या भैया है।	वहाँ सब के पिता या भैया पधारे थे।
वह किसका मामा या काका है।	वहाँ सबके मामा या काका पधारे थे।
यहाँ कौन मुखिया या दरोगा है।	यहाँ कई मुखिया या दरोगा हैं।
वह उसका आका है।	वे उसके आका हैं।
वहाँ एक दरिया है।	वहाँ कई दरिया हैं।

तारा में सर्वदा और बापदादा, छुटभैया मुखिया अगुआ पुरखा तथा पंडा (कभी-कभी दादा भी) शब्द में ऐच्छिक रूप से निर्विभक्तिक बहुवचन विकारी रूप होते हैं; जैसे—तारे, बापदादे पंडे और छुटभैये कहाँ गए ?

४. शून्य विभक्तिक सभी स्त्रीलिंग शब्दों का बहुवचन 'एँ' प्रत्यय के योग से प्रकट किया जाता है। एँ का योग होने पर पूर्ववर्ती दीर्घ ऊ ह्रस्व उ में बदल जाता है और अ लुप्त हो जाता है; जैसे—

एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
बात है या देखी है।	बातें हैं या देखी हैं।	कथा है या देखी है।	कथाएँ हैं या देखी हैं।
धनु ,,	धेनुएँ ,,	वस्तु ,,	वस्तुएँ ,,
बहू ,,	बहुएँ ,,	गौ ,,	गौएँ ,,

५. इवर्णान्त स्त्रीलिंग शब्दों के शून्य विभक्तिक बहुवचन में 'आँ' जुटता है और ई का ह्रस्व हो जाता है, तथा इवर्ण और आँ के बीच य् का आगम हो जाता है; जैसे—

एकवचन	बहुवचन
रीति है या देखी है।	रीतियाँ हैं या देखी हैं।
लड़की ,,	लड़कियाँ ,,

६. जिन स्त्रीलिंग शब्दों के अन्त में य् के बाद अ अथवा आ आता है, उनके शून्य विभक्तिक बहुवचन में अ या आ के स्थान में ही 'आँ' हो जाता है; जैसे—

एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
इन्द्रिय है या देखी है।	इन्द्रियाँ है या देखी हैं।	चिड़िया है या देखी है।	चिड़ियाँ हैं या देखी हैं।
अँखिया है या देखी है।	अँखियाँ हैं या देखी हैं।		

टोपियाँ इन्द्रियाँ आदि की जगह टोपिएँ इन्द्रिएँ आदि प्रयोग आजकल नहीं चल रहे हैं।

७. अनिश्चित अधिक बहुत्व प्रकट करने के लिये अकारान्त आकारान्त परिमाणवाचक शब्दों के शून्य विभक्तिक बहुवचन में सर्वत्र ए एँ और आँ की जगह 'ओं' जुटता है, शेष वर्ण-विकार पूर्ववत् ही होते हैं; जैसे—

मूल	कर्त्ता	कर्म	मूल	कर्त्ता	कर्म
बरस—	बरसों बीत गये।	बरसों गुजार दिये।	घण्टा--	घण्टों बीते।	घण्टों गुजारे।
हजार—	हजारों मरे।	हजारों मारे।	सैकड़ा--	सैकड़ों आए।	सैकड़ों देखे।
मील--	मीलों बीत गये।	मीलों गुजार दिये।	मन--	मनों धान पड़ा रहता है।	मनों धान बेचा है।

८. संबोधन प्रथमा के बहुवचन में सर्वत्र ओ जुटता है, शेष वर्ण विकार यथापूर्व होते हैं; जैसे—

पुंलिंग	स्त्रीलिंग
हे बालको, हे विद्वानो	हे इन्द्रियो, हे कोयलो
हे लड़को, घोड़ो मुखियो	हे चिड़ियो, बुढ़ियो
हे देवताओ, राजाओ, चाचाओ	हे बाधाओ, माताओ, हवाओ
हे मुनियो, विद्यार्थियो	हे देवियो, बीमारियो
हे साधुओ, भालुओ	हे धेनुओ, बहुओ
हे जौओ	हे गौओ

९. सब सविभक्तक बहुवचनों में सब प्रकार के शब्दों के अन्त में अनुनासिक 'ओं' जुट जाता है और सभी सन्धि-विकार पूर्ववत् होते हैं; जैसे—

पुंलिंग	स्त्रीलिंग
विद्वानों, सम्राटों, पण्डों, बालकों, लड़कों	परिषदों, बहनों, इन्द्रियों, महिलाओं,
देवताओं, चाचाओं बापदादों या बापदादाओं	हवाओं, चिड़ियों, बुढ़ियों,
मुखियों ने; मुनियों, विद्यार्थियों हाथियों ने;	सिद्धियों, देवियों, लड़कियों ने;
साधुओं, भालुओं को	वस्तुओं, बहुओं, गौओं को

१०. द्रव्यवाचक, भाववाचक तथा समुदायवाचक संज्ञाओं का निर्विभक्तिक या सविभक्तिक बहुवचन प्रयोग प्रायः नहीं होता; जैसे :—

थोड़े दूध से—बहुत दूध से। थोड़े ही लोभ से—बहुत लोभ से।
हजारों की सभा में। लाखों के मेले में।

वह चार घंटे से प्रतीक्षा कर रहा है। मोहन दस दिन से बीमार है। वह तीन महीने तक वहीं रहेगा आदि में कालवाचक शब्दों को बहुत्व अर्थ में भी एकवचन में रखने की प्रवृत्ति देखी जा रही है। यह व्याकरण-संमत नहीं हैं।

११. हिन्दी में प्रयुक्त अंग्रेजी, उर्दू शब्दों के भी बहुवचन हिन्दी के ही नियमों से बनाने चाहिये; जैसे–'कंपनी' से 'कंपनियाँ', 'कमरा' से 'कमरे'। 'साहब', 'हाकिम', 'कागज' किताब आदि से 'बहुत से साहब', 'हाकिम, कागज' किताबें आदि, (कागजात, किताबात आदि नहीं)।

१२. बहुत से शब्दों का प्रयोग सदा बहुवचन में ही होता है; जैसे–प्राण लोग, आँसू अक्षत, ओठ, पितर, दम्पति, होश। हस्ताक्षर और दर्शन का भी अधिक प्रयोग बहुवचन में ही मिलता है।

१३. एक के लिए भी आदर में प्रथमा में शून्य विभक्तिके साथ बहुवचन का ही प्रयोग होता है; जैसे– भैया आते हैं। मेरे पिता कहते हैं। मिश्रजी क्या चाहते हैं? देवीजी कब आएँगी? मोहन जी अभी बच्चे हैं, श्याम मुझ से बड़े हैं।

१४. बहुत्व प्रकट करने के लिए वर्ग, समाज, समूह, समुदाय, वृन्द, गण, जन, लोग तथा सब का भी व्यवहार होता है। प्रथम पाँच सदा एकवचन में रहकर एकवचन पुंलिंग क्रिया ही लेते हैं; जैसे–स्त्रीसमाज क्या चाहता है। स्त्री समाज के लिए।

गण और जन बहुवचन रूप लेते हैं और स्त्रीलिंग संज्ञा के लिए कभी-कभी स्त्रीलिंग क्रिया भी; जैसे—नारीगण क्या चाहते हैं या चाहती हैं, नारी जनों केलिए या नारीजन के लिए।

ये सातों केवल संज्ञा शब्दों और वह भी संस्कृत शब्दों के बाद ही समास-घटक बनकर रहते हैं; जैसे—छात्रगण या छात्रजन क्या चाहते हैं।

'लोग' और 'सब' तद्भवों के साथ भी जुटते हैं और सदा बहुवचन रहते हैं; जैसे—लड़के लोग या लड़के सब क्या चाहते हैं। 'लोग' में आदर का भाव रहता है, 'सब' में नहीं; वे लोग, वे सब। "पंडित लोग क्या चाहते हैं", "पंडित सब" नहीं।

अकारान्त पुंलिंग तथा स्त्रीलिंग और आकारान्त पुंलिंग शब्दों के बाद बहुवचनबोधक ए एँ, ओ या ओं प्रत्यय आने पर पूर्ववर्त्ती अ तथा आ का पररूप हो जाता है। यह हिन्दी संधि है; जैसे :—बात—बातें, बातो, बातों में। बालक—बालको, बालकों ने।

लड़का—लड़के, लड़को, लड़कों ने। परन्तु लताएँ, लताओ लताओं में आदि।

एकवचन में सविभक्तिक तथा शून्य-विभक्तिक दोनों स्थितियों में संज्ञा शब्दों के रूप में कोई परिवर्तन नहीं होता, केवल वे शब्द जो शून्य-विभक्तिक बहुवचन में परिवर्तनीय होते हैं सविभक्तिक तथा संबोधन एकवचन में भी वही रूप ग्रहण कर लेते हैं जो शून्यविभक्तिक बहुवचन में; जैसे—लड़का + ने = लड़के ने, घोड़ा + को = घोड़े को, मेला + में = मेले में, संबोधन में—बच्चे, अबे लड़के। इसी भाँति सोना + का = सोने का, आटे से, बुढ़ापे में आदि।

भोलेपन से, पिछड़ेपन ने, सीधेपन का आदि प्रयोग वर्जनीय हैं, भोलापन से पिछड़ापन ने, सीधापन का आदि ही प्रामाणिक प्रयोग हैं।

इसी प्रकार पटना से कलकत्ता में आदि ही शुद्ध प्रयोग हैं, क्योंकि व्यक्ति-वाचक नाम के रूप में विकृति नहीं लानी चाहिए।

अभ्यास

१. इनके बहुवचन बनाएँ—विद्यार्थी, प्रतिनिधि, देवता, जनता, तिथि, मोती, नदी, साधु, ऋतु, हेतु, रात, गात।

२. इन्हें शुद्ध करें—

वहाँ तीन हाथियाँ खड़ी हैं। देवियों और सज्जनों, मै तीन बात कहना चाहता हूँ। तुम सबको मैं पहले ही कह दिया था। थोड़े बालू यहाँ भी हैं। मोहन के तो तीन तीन मामे हैं। आप लड़का लोग से बोला था। दो लड़के का काम दस जलेबी से नहीं चलेगा? यहाँ इस पूजा के दो विधि प्रचलित हैं। आँसू बरस रहा था उसके नयन से झर-झर। ताराएँ टिमटिमाती रहेंगी।

कारक एवं विभक्तियाँ

पाँचवाँ प्रातिपदिकार्थ है—'कारक'। कारक का अर्थ है करनेवाला, क्रिया का जनक। जाति, व्यक्ति, लिंग और संख्या तो प्रत्येक प्रातिपदिक का अपना स्वतंत्र अर्थ है, किन्तु कारकता उसमें क्रिया के संबंध से आती है। वाक्य में प्रयुक्त प्रत्येक शब्द का किसी न-किसी दूसरे शब्द से संबंध रहता है। इनमें क्रिया-पद से जो **संबन्ध** है, उसी को कारक कहते हैं। **संबद्ध** शब्द भी कारक ही कहा जाता है।

कोई भी प्रातिपदिक छह प्रकारों से क्रिया से संबद्ध रह सकता है। अतः कारक भी छह ही माने जाते हैं :—

कर्त्ता—जो क्रिया को करता है और क्रिया का आश्रय है उसे कर्त्ता कहते हैं; जैसे–मोहन मक्खन खाता है। यहाँ खाने का काम मोहन करता है, खाना क्रिया मोहन में है, अतः 'मोहन' कर्त्ता है।

कर्म--जो किया जाता है (क्रिया के फल का आश्रय होता है) और जिसे कर्त्ता क्रिया के द्वारा सर्वाधिक चाहता है, उसे कर्म कहते हैं; जैसे—मोहन मक्खन खाता है। यहाँ मक्खन खाया जाता है, मोहन मक्खन को ही खाना चाहता है, अतः 'मक्खन' कर्म है।

इसी प्रकार 'राम मोहन को देखता है' में राम देखता है, अतः वह कर्त्ता है, मोहन देखा जाता है, अतः वह कर्म है। 'बढ़ई पेड़ काटता है' में बढ़ई काटता है, अतः वह कर्त्ता है, और पेड़ काटा जाता है, इसलिये वह कर्म है। मूल क्रिया को प्रेरणार्थक बनाने पर सभी अकर्मक क्रियाओं के तथा कुछ परिगणित सकर्मक क्रियाओं के मूल कर्त्ता भी कर्म बन जाते हैं; जैसे—बच्चा सोता है–माँ **बच्चे को** सुलाती है। बच्चा दूध पीता है—माँ **बच्चे को** दूध पिलाती है, मोहन संस्कृत पढ़ता है—श्याम **मोहन** को **संस्कृत** पढ़ाते हैं। शीला आटा नहीं पीसती है—सरिता **शीला** से आटा नहीं पिसवाती।

जिस (मूल या प्रेरणार्थक) क्रिया में दो कर्म होते हैं उसे द्विकर्मक कहते हैं; **जैसे–वह बच्चे को घर** ले गया; माँ ने **बच्चे** को दूध पिलाया। किसी-किसी क्रिया में एक भी कर्म नहीं होता! वह सोता है, बच्चा रोता है। ऐसी ही क्रिया को

यह आज्ञापित में आज्ञा कैसा कर्म है?

अकर्मक कहते हैं। तीन कर्म किसी क्रिया के नहीं होते। जहाँ दो कर्म होते हैं, वहाँ (प्रायः) एक अचेतन रहता है, जो मुख्य होता है; दूसरा चेतन, जो गौण कहलाता है।

करण—जिसकी सहायता से क्रिया की जाती है, अर्थात् क्रिया में जो सबसे प्रबल साधक होता है, उसे करण कहते हैं; जैसे—'बढ़ई आरे से पेड़ काटता है', या 'पेड़ आरे से काटा जाता' है। यहाँ 'काटना' क्रिया का सबसे प्रबल साधक आरा है, अतः वह करण है।

संप्रदान—जिसे कोई वस्तु प्रदान की जाती है, कर्त्ता का कर्म के द्वारा जो अभिप्रेत होता है, उसे संप्रदान कारक कहते हैं। राजा भिखमंगों को अन्न देता है, यहाँ दान क्रिया राजा करता है, अतः वह कर्त्ता है। अन्न दिया जाता है, अतः वह कर्म है। यह अन्न भिखमंगों को दिया जाता है, अतः 'भिखमंगे' संप्रदान है। जिस प्रकार राजा अथवा अन्न के अभाव में प्रदान क्रिया निष्पन्न नहीं होती, उसी प्रकार भिखमंगों के अभाव में भी; इसलिये वह भी प्रदान क्रिया का जनक है। वस्तुतः यह कर्म का ही एक रूप, परोक्ष या पारंपरिक कर्म है। राजा देता है, क्या देता है, किसको देता है ? इसीलिए इसे अंग्रेजी में इनडाइरेक्ट औब्जेक्ट कहते हैं।

अपादान—विश्लेषार्थक क्रिया के प्रयोग में जिससे विश्लेष, पृथक् हटना होता है, उसे अपादान (अप+आदान) कहते हैं; जैसे—'पेड़ से पत्ते गिरते हैं' में पत्ते गिरने का काम करते हैं, अतः कर्त्ता हैं। किन्तु पेड़ नहीं रहने पर ये किससे गिरते ? गिरने की क्रिया की सिद्धि के लिये जहाँ से विश्लेष होता है उसका रहना आवश्यक है। 'गिरते हैं' कहते ही जानने की इच्छा होती है, किससे, कहाँ से गिरते हैं ? इसी भाँति मोहन गाँव से आता है में गाँव अपादान है।

अधिकरण—जो कर्त्ता अथवा कर्म के द्वारा क्रिया का आधार होता है, उसे अधिकरण कारक कहते हैं; जैसे मोहन छात्रावास में रहता है, खाट पर सोता है। यहाँ रहना तथा सोना क्रिया का आश्रय अर्थात् आधार मोहन है; पर स्वयं मोहन के आधार छात्रावास तथा खाट है। इस प्रकार मोहन की परंपरा से छात्रावास तथा खाट भी रहना तथा सोना क्रिया के आश्रय हो जाते हैं। इसलिये ये भी रहना तथा सोना क्रिया के जनक हैं। इसी प्रकार श्यामकिशोर पतीली में चावल पकाता है, में पकाना क्रिया के कर्म चावल का आधार पतीली है। पतीली नहीं होती तो पाकक्रिया नहीं संपन्न हो पाती, इसलिये पाकक्रिया की जनक पतीली भी हो जाती है।

किसी प्रातिपदिक का क्रिया से नहीं, किसी दूसरे प्रातिपदिक से जो किसी प्रकार का संबन्ध होता है, उसे संबन्ध ही कहते हैं; जैसे-मोहन का रूप, लड़का या घर। इस भाँति, संबन्ध कोई कारक नहीं, एक प्रातिपदिक का दूसरे से संबन्ध मात्र है।

संबोधन भी कोई कारक नहीं। यह एक प्रातिपदिक का दूसरे प्रातिपदिक से संबन्ध भी नहीं, केवल प्रथमा विभक्ति का एक अर्थ है। संबोधन पद का वाक्यस्थ अन्य पदों से कोई भी साक्षात् संबन्ध नहीं होता। वह स्वतंत्र रूप से वाक्य का एक अंग होता है। अतः अपने वास्तविक तथा यौगिक अर्थ के अनुसार कारक छह ही हैं, आठ नहीं। पर कुछ आचार्य इन दोनों की भी गणना कर हिन्दी में आठ कारक मानते हैं।

विभक्तियाँ

कोई भी प्रातिपदिक जब वाक्य में प्रयुक्त होता है तब वह उस वाक्य की मुख्य या सहायक क्रिया अथवा दूसरे प्रातिपदिक से संबद्ध हो जाता है। क्रिया के अथवा दूसरे प्रातिपदिक के साथ किसी प्रातिपदिक के संबंध को प्रकट करनेवाले प्रत्यय को विभक्ति कहते हैं और इस विभक्ति से युक्त शब्द को पद। पद से भिन्न अर्थात् इस विभक्ति से रहित शब्द का वाक्य में प्रयोग ही नहीं होता। ये विभक्तियाँ निम्नलिखित हैं :—

१. प्रथमा—प्रथमा विभक्ति में केवल एक चिह्न है, शून्य। यह निम्न-लिखित शब्दों से आता है : —

[क] कर्तृवाच्य क्रिया के कर्त्ता या पूरक कर्त्ता से—मोहन मुझको जानता है। यहाँ मोहन कर्तृवाच्य की जानना क्रिया का कर्त्ता है, अत. उसमें शून्य विभक्ति है। "मोहन चतुर है" में चतुर पूरक कर्त्ता है।

[ख] कर्मवाच्य क्रिया के कर्म से—मुझसे गालियाँ नहीं सही जाती। यहाँ सहना क्रिया कर्मवाच्य में है, जिसका कर्म है गालियाँ। अतः उसमें प्रथमा की शून्य विभक्ति है। इसी प्रकार 'वहाँ एक विद्यालय खोला गया इस कर्मवाच्य के वाक्य में विद्यालय रूप (उक्त कर्म में प्रथमा विभक्ति है।

[ग] जहाँ केवल सामान्य प्रातिपदिकार्थ ही प्रकट करना है, कोई कारक-विशेष नहीं, वहाँ भी प्रथमा की शून्य विभक्ति ही आती है। कोषों में बिना किसी वाक्य के ही शब्द गिनाये रहते हैं, वहाँ शब्दों में प्रथमा की शून्य विभक्ति ही रहती है।

[घ] संबोधन—संबोधन के लिये प्रयुक्त शब्द में भी प्रथमा ही होती है; जैसे हे मोहन, तुम कहाँ हो ? यहाँ 'मोहन' में संबोधनार्थक प्रथमा की शून्य विभक्ति है। हे, अरे आदि कोई विभक्ति नहीं। विभक्ति पीछे नहीं, आगे जुटती है। इनका योग आवश्यक भी नहीं। ये केवल संबोधन [विस्मयादि] व्यंजक अव्यय हैं।

२. [क] द्वितीया—द्वितीया में दो चिह्न हैं, ० शून्य तथा को। कर्तृ-वाच्य के अचेतन तथा मानवेतर प्राणी रूप कर्म में शून्य विभक्ति आती है और मानव कर्म में को विभक्ति; जैसे–सोहन **रोटी** खाता है, **दूध** पीता है। **मैं कुत्ता** नहीं पालता। हाथी देखोगे ? जरा **सरोज को** देखो। **भाई को** बुलाओ।

[ख] जब किसी अपूर्ण सकर्मक क्रिया का मुख्य कर्म किसी पूरक कर्म के साथ आता है, तब मुख्य कर्म के अचेतन रहने पर भी उसमें 'को' जुटता है, और पूरक कर्म के मानव रहने पर भी उसमें 'को' नहीं जुटता; जैसे-**आलस्य को** अपना सबसे बड़ा शत्रु समझो, **शत्रु को** भी **मित्र** बना लो, **मैं** तो **आपको** अपना **भाई** मानता हूँ, उसने पेड़ को ही मोहन समझ लिया आदि।

[ग] अधिक बलाघात के लिये यों भी अचेतन कर्म में 'को' जुटता है; जैसे–इस बात को तो (अथवा यह बात तो) अब हर आदमी जान गया है।

[घ] मानव व्यक्ति के साथ भी अनिश्चय की स्थिति में को की जगह शून्य विभक्ति का प्रयोग मिलता है; जैसे—नौकर को बुलाओ, किन्तु **मेरे** लिए एक **नौकर** खोज दो, **मैं लड़का** ढूँढ़ने निकला हूँ आदि।

पर व्यक्तिवाचक विशेषतः मानववाची संज्ञा-रूप तथा कौन मैं, तू, आदि सर्वनाम-रूप कर्मों की द्वितीया विभक्ति में को लाना अनिवार्य है; जैसे-तुम किसे या 'किसको' ढूँढ़ते थे, **मोहन को** या **मुझको** ?

३. तृतीया—तृतीया के दो मुख्य चिह्न हैं, 'ने' तथा 'से'। 'ने' चिह्न प्रायः सकर्मक क्रियाओं के अप्रधान [अनुक्त] कर्त्ता में ही निम्नलिखित कालों में जुटता है

[क] सामान्यभूत–मैंने पढ़ा। लड़ाई लड़ी।

[ख] आसन्नभूत [या पूर्ण वर्तमान]–मैंने पढ़ा है। लड़ाई लड़ी है।

[ग] पूर्णभूत–मैंने पढ़ा था। लड़ाई लड़ी थी।

[घ] संदिग्धभूत—मैंने पढ़ा होगा। लड़ाई लड़ी होगी।

[ङ] संभाव्यभूत—संभव है मैंने पढ़ा हो। लड़ाई लड़ी हो।

[च] हेतुहेतुमदभूत–यदि मैंने पढ़ा होता। लड़ाई लड़ी होती।

बोलना, बकना भूलना, आदि कतिपय सकर्मक क्रियाओं के भी कर्त्ता में ने चिह्न नहीं आता जैसे—वह क्या बोला या बका ? वह अपनी बात नहीं भूला है ।

किसी-किसी शरीर व्यापार-सूचक अकर्मक क्रिया के भी कर्त्ता से इन कालों में 'ने' चिह्न आ जाता है; जैसे—किसने खाँसा था, छींका था, थूका था ? तुमने नहाया ?

कहीं-कहीं यह वैकल्पिक भी रहता है, जैसे—मैं समझा, मैंने समझा; मेरी गाय एक बाछा जनी है, या मेरी गाय ने एक बाछा जना है । जानना, सोचना, पुकारना आदि के साथ ने' का प्रयोग नहीं करना ठीक नहीं ।

संयुक्त क्रियाओं के प्रयोग में प्राय: अंतिम खण्ड की मुख्यता के अनुसार कार्य होता है; जैसे, वह पढ़ चुका, कह सका; पर, उसने रो दिया सो लिया । वह सन्तरा, सन्तरे, नारंगी या नारंगियाँ लाया आदि में लाना के साथ ने' चिह्न नहीं जुटता क्योंकि 'ला' धातु 'ले आ' का ही संधि-निष्पन्न रूप है, जिसमें दूसरा खण्ड अकर्मक है [ले + आ = ल्या = ला] । 'पाना' क्रिया यदि संयुक्त क्रिया के अन्तिम खण्ड के रूप में प्रयुक्त होती है तो ने चिह्न प्रायः नहीं आता; तुमने यह कहाँ पाया ? किन्तु मैं कुछ भी नहीं दे या ले पाया, वह सो भी नहीं पाया । "मोहन ने या तुमने कहाँ जाना है" जैसे प्रयोग अभी शिष्ट हिन्दी में स्वीकृत नहीं हुए हैं, पंजाबी या पहाड़ी से हिन्दी में आ गए हैं । किन्तु ध्यातव्य है कि यहाँ का मोहन या मैं अप्रधान कर्त्ता ही है, जिस में भाव वाचक कृत् ना प्रत्ययान्त क्रिया 'जाना' के योग में षष्ठी की भाँति तृतीया भी, दोनों, ऐच्छिक रूप से शास्त्र[1] संमत हैं, चाहे, षष्ठी की 'को' विभक्ति लगे, 'मोहन को जाना है' चाहे तृतीया की 'ने', मोहन ने जाना है । अतः यह अशुद्ध नहीं ।

'से' अप्रधान (कर्म या भाव वाच्य के) कर्त्ता तथा करण दोनों में आता है; जैसे—मैंने रोटी नहीं खाई पर मुझ से रोटी नहीं खाई गई । हाथ से खाओ, चम्मच से क्यों खाते हो ?

इसके अतिरिक्त निम्नलिखित अर्थों में भी तृतीया की 'से' विभक्ति आती है :—

[क] कुछ प्रेरणार्थक क्रियाओं के (प्रयोज्य या) प्रेरित कर्त्ता—सुरेश पत्र लिखता है—मोहन **सुरेश से** पत्र लिखवाता है । धोबी कपड़ा धोता है—नरेश **धोबी से** कपड़ा धुलवाता है । उपर्युक्त वाक्यों में सुरेश तथा धोबी प्रेरित

१. "उभय प्राप्तौ कर्मणि" २-३-६६, पाणिनीय अष्टाध्यायी ।

अर्थात् मूल क्रिया के कर्त्ता हैं। इन में मोहन तथा नरेश को प्रयोजक कर्त्ता तथा सुरेश और धोबी को प्रयोज्य कर्त्ता कहते हैं।

[ख] कर्म–मैं उनसे कहूँगा' में 'से' का अर्थ 'को' ही लगता है, अतः यहाँ कर्म में तृतीया माननी चाहिये, अथवा 'से' को द्वितीया विभक्ति में भी परिगणित करना चाहिये। इसीलिए "मैं मोहन को, उसे या उसको कहूँगा" भी चलता है।

[ग] साथ–मुन्ना आराम से [के साथ] रहता है किसी साथी से नहीं झगड़ता। 'तुम नरेश से मिले? उससे बातें क्यों नहीं करते? 'क्या तुम उससे नहीं बोलते, साँप से मत खेलो आदि में भी साथ अर्थ में ही तृतीया है।

[घ] कारण (हेतु)— भाग्य से तुम मेरे मित्र हो। संयोग से वह निद्रामग्न है। वह शोक से मूक हो गया है। उसकी आँखें क्रोध से लाल थीं।

[ङ] चिह्न–कपड़े से तो वह धनी लगता है, किताबों से वह छात्र प्रतीत होता है। बालों से तो वह सिक्ख मालूम होता है।

[च] विकृत अंग—वह आँख से काना है, पाँव से लंगड़ा है, कान से बहरा है।

[छ] अभेद—हरीश जाति से [का] क्षत्रिय है, पर वह प्रकृति से [प्रकृति का] कोमल है। (उसकी जाति क्षत्रिय है, प्रकृति कोमल है, रंग गोरा है)

करण (या अप्रधान कर्त्ता) में 'से' के अतिरिक्त व्यस्त या समस्त 'द्वारा' का भी प्रयोग होता है; जैसे—वह ~~अपनी गाड़ी~~ विमान से या ~~गाड़ी~~ विमान द्वारा गया। उसने इनसे या इनके द्वारा खबर भेजी है। मैंने मोहन द्वारा आपको कहला दिया था।

४. चतुर्थी–[क] चतुर्थी में दो विभक्ति-चिह्न हैं, 'को' तथा 'के' लिये। संप्रदान कारक में प्रायः 'को' का प्रयोग होता है, 'के लिये का विरल; जैसे—भिखमंगे को भीख दे दो। बच्चों को मिठाई दो।

[ख] 'के लिए' मुख्यतः तादर्थ्य [उसके लिये] में आता है; जैसे—जीभ के सुख के लिए मांस खाना पाप है। यह दूध बच्चे के लिए है, यह सब कहने के लिये हैं। इस अर्थ में 'के वास्ते' 'के हेतु', 'के निमित्त' 'के अर्थ' भी आते हैं और 'को' भी चलता है; जैसे—खाने को भंग नहाने को गंग। यह सबको सुलभ है।

[ग] प्रणाम, शपथ आदि के योग में भी चतुर्थी की 'को' का प्रयोग होता है; जैसे—गुरुजनों को मेरा प्रणाम, नमस्कार, नमस्ते है। तुम को मेरी कसम, शपथ है आदि।

[घ] निवारण अर्थ में भी चतुर्थी की 'के लिये' विभक्ति आती है; जैसे—जाड़े के लिए कंबल है, आग है। मजदूरों के लिए कुआँ दिया गया है, [illegible]

(ङ) सूचित करने के अर्थ में भी— [illegible]

[ङ] ना प्रत्ययान्त क्रिया के कर्त्ता में भी चतुर्थी की 'के लिए' विभक्ति आती है; जैसे—मेरे लिए (मेरा) वहाँ जाना उचित या संभव नहीं।

५. पंचमी—पंचमी का एक ही चिह्न है 'से', जो तृतीया का भी है। पंचमी निम्नलिखित अर्थों में आती है :—

[क] अपादान कारक—वे घर से कब आये? कौशल्या से राम हुए। कैकयी से भरत।

[ख] मानसिक विश्लेष—वह अन्धकार से डरता है, बचता है। पाप से घृणा करो। शिक्षक से पूछो। मोहन संसार से विरत या विरक्त हो गया है। नरेश को जाने से रोको।

[ग] तुलना—बलराम से कृष्ण चतुर थे। [घ] भिन्नता—चीता बाघ से भिन्न प्राणी है। [ङ] दूरता—दिल्ली पटना से दूर है।

ये तीनों मानसिक विश्लेष के ही अर्थ-विस्तार हैं।

६. षष्ठी—षष्ठी की 'का' विभक्ति निम्नलिखित अर्थों में आती है। यह 'का' ही अगले संबंधी के बहुवचन अथवा विभक्त्यन्त रहने पर 'के' तथा स्त्रीलिंग रहने पर 'की' बन जाती है, क्योंकि यह तद्भव आकारान्त विशेषण का काम करती है।

[क] कृदन्त क्रिया के कर्त्ता में—तुम्हारा या सुरेश का उनसे डरना ठीक नहीं। उनके वाक्य सुन्दर हैं किसके कहने से गए? ईश्वर की सृष्टि विचित्र है।

[ख] कृदन्त क्रिया के कर्म में—संस्कृत का अध्ययन बहुत लाभप्रद है। आप के दर्शन से मैं कृतकृत्य हो गया। विष्णु की पूजा करनी चाहिये।

[ग] करण में—कान का सुना नहीं, आँख का देखा कहता हूँ। उनके हाथ का लिखा है। दूध का जला छाँछ भी फूँक कर पीता है।

[घ] अधिकरण कारक में—घर की लड़ाई अच्छी नहीं। घर का पका भोजन स्वास्थ्यप्रद होता है। घड़े का पानी शीतल है। कुतुबमीनार की चढ़ाई बूढ़ों के लिये ठीक नहीं।

[ङ] अपादान कारक में—पटना का चला वाराणसी ही आकर रुका। आकाश का गिरा धरती पर ही आकर रुकेगा। मुझे [illegible] नहीं।

[च] संप्रदान में—भूखे का दिया अन्न अमृत बनकर वापस मिलता है।

[छ] प्रातिपदिकों के परस्पर सभी संबंधों में; जैसे—

[अ] स्व-स्वामी :—मोहन के कपड़े। सुरेश की पुस्तकें।

[आ] सेव्य–सेवक :—राजा की सेना, गाँव का चौकीदार, सुशील के नौकर-मोहन की दासी, देश का सेनापति आदि।

[इ] आत्मा-आत्मीय :—मेरा भाई, मेरा मित्र या छात्र।

[ई] समवाय :—तिल का तेल, तुम्हारी आँख, मेरी बाँह।

[उ] जन्य–जनक :—तुलसीदास की रामायण। इस कारखाने के कपड़े।

[ऊ] तादर्थ्य :—कुत्ते का कपड़ा, सोने का (के लिए) घर, चिउड़े का धान

[ऋ] परिमाण—छह फुटों का आदमी, पाँच रुपयों का चावल।

[ए] वीप्सा :—गाँव का गाँव, शहर का शहर।

[ऐ] अभेद :—आँख का अन्धा, गाँठ का पूरा, राहु का सिर।

[ओ] तदवस्थता—ज्यों का त्यों, वैसा का वैसा। दूध का दूध, पानी का पानी।

षष्ठी का एक चिह्न 'को' भी है। 'मुझको लोभ नहीं है' में समवाय संबन्ध में षष्ठी है। अब तुमको जाना चाहिये, मोहन को वहाँ नहीं जाना है यहाँ 'तुमको' तथा 'मोहन को' में अप्रधान कर्त्ता में षष्ठी है। राजा को एक लड़का हुआ है में जन्य-जनक भाव है। "संस्कृत के ग्रन्थकारों को अपना परिचय छिपाने[1] की विचित्र आदत है" में भी 'को' समवाय संबन्ध ही बता रहा है।

परिनिष्ठित हिन्दी में 'दशरथ को चार लड़के थे नहीं, 'दशरथ के चार लड़के थे' ही चलता है; पर व्याकरण की दृष्टि से पहला प्रयोग भी ठीक[2] है। 'तुम्हें कितने लड़के हैं, चलता ही है। 'तुम्हें कौन-सा रोग है, तो खूब ही प्रयुक्त होता है और तुम्हें, तुमको, मोहन को, लड़की हुई या सर्दी हुई है, दोनों रचनाओं में कोई अन्तर नहीं है। 'मोहन के लड़की हुई है' पश्चिम में अधिक चलता है।

७. सप्तमी—सप्तमी की दो मुख्य विभक्तियाँ हैं—में और पर। 'में' का अर्थ है 'के भीतर'; 'पर' का 'के ऊपर'। सप्तमी निम्नलिखित अर्थों में होती है—

(क) अधिकरण कारक; जैसे—'कपड़ा पेटी में रखा है, 'कपड़ा पेटी पर रखा है'। इसके अतिरिक्त 'के भीतर' 'के अन्दर' 'के ऊपर' आदि भी चलते हैं। में और 'पर' का विपरीत प्रयोग भी यत्र तत्र मिलता है; जैसे—वह घर पर है। उस नदी में जहाज भी चलता है। छोटानागपुर में कहते हैं सुरेश कुर्सी में बैठे हैं।

---

१. हजारीप्रसाद द्विवेदी संस्कृत साहित्य (अशोक के फूल)।

२. किशोरी दास वाजपेयी आदि का ऐसे प्रयोगों को अशुद्ध बताना निर्मूल है।

(ख) **निर्धारण** में 'में' का प्रयोग होता है; जैसे—इन **छात्रों** में नरेन्द्र सबसे तेज है।

(ग) किसी क्रिया का बीतना दिखाने के लिए पर' का प्रयोग होता है; जैसे सूरज उगने पर; महेश के जाने पर सुरेश आया।

ये विभक्तियाँ अनेक जगह लुप्त भी मिलती हैं, जैसे :—

(क) तृतीया – सीधी अंगुली (से) घी नहीं निकलता।

(ख) सप्तमी—उस समय (में) तुम कहाँ थे? नगरी-नगरी (में) द्वारे द्वारे ढूँढ़ूँ रे साँवरिया। अब तो यह मेरे सिर (पर) आ पड़ा है। तुम्हारे पास (में) कुछ न होंगे?

ध्यातव्य है कि (क) विभक्तियाँ सात ही होती हैं, आठ नहीं, (ख) संबोधन विभक्ति का नहीं, अर्थ का नाम है, (ग) संबोधन में प्रथमा विभक्ति होती है। (घ) कारक किसी प्रत्यय या रूप (या आकृति) को नहीं, अर्थ, क्रिया के साथ प्रातिपदिक के जनकत्व रूप संबन्ध, शक्ति को कहते हैं।

संज्ञा की रूप-रचना

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा (प्रातिपदिकार्थ)	बालक, लड़का, बालिका, लड़की	बालक, लड़के, बालिकाएँ, लड़कियाँ
प्रथमा (संबोधन)	बालक, लड़के, लड़की	बालको, लड़को, लड़कियो
द्वितीया	बालक, लड़का, लड़की, बालक को, लड़के को, राजा को, लड़की को	बालक, लड़के, लड़कियाँ बालकों को, लड़कों को, राजाओं को, बालिकाओं को, लड़कियों को
तृतीया	बालक से (या ने) लड़के से, राजा से, लड़की से	बालकों से (या ने), लड़कों से, लड़कियों से
चतुर्थी	बालक को या के लिये, लड़कों को या के लिये, लड़की को या के लिये	बालकों को या के लिये; लड़कों को; लड़कियों को या के लिये।
पंचमी	बालक से, लड़के से, लड़की से	बालकों से; लड़कों से, लड़कियों से
षष्ठी	बालक का (के, की) लड़के का (के, की) लड़की का, (के, की)	बालकों का (के, की, लड़कों का (के, की,) लड़कियों का (के, की)
सप्तमी	बालक में, पर; लड़के में, पर; लड़की में पर	बालकों में, पर; लड़कों में, पर; लड़कियों में, पर

हिन्दी में भी अनेक संस्कृत (तत्सम) शब्दों के संबोधनान्त रूप ज्यों-के-त्यों प्रयुक्त होते हैं; जैसे, हे भगवन्, श्रीमन्, राजन, परमात्मन्, महात्मन्, हे देवि, हरे, साधो, प्रभो, पितः, शंभो, दुर्गे, आर्ये, राधे, सीते, प्रिये, प्रियतमे, प्राणेश्वरि, प्राणवल्लभे आदि। "माँ शारदे की जय" वाक्य अशुद्ध है, दुर्गे, राधे, शारदे आदि संबन्धनार्थक प्रथमा के रूप हैं, संबोधार्थक षष्ठी में दुर्गा की, राधा की, शारदा की 'जय'. कहना चाहिए। "अम्बे" और "जगदम्बे" तो संस्कृत के संबोधन में भी नहीं होता। ये अशुद्ध प्रयोग हैं, दुर्गे के मिथ्या सादृश्य से गढ़े। शुद्ध प्रयोग हैं—हे अम्ब, हे जगदम्ब।

अभ्यास

१. कारक से आप क्या समझते हैं, कारक और विभक्ति में क्या अन्तर है, स्पष्ट करें।
२. 'मोहन को ज्वर है' में मोहन कारक है ? कौन कारक ? यह कौन विभक्ति है ?
३. 'शीला मोहन से लजाती है' में मोहन कौन कारक है ? और 'मैं तुम से नहीं बोलूँगा' में तुम से कौन कारक है ?
४. 'श्याम पाँच दिन से अस्वस्थ है' यह वाक्य क्या अशुद्ध है ? क्यों ?
५. 'यह छाता मनोज के लिए है' में मनोज क्या संप्रदान है ?

(१) विचारणीय - यदि वह थोड़ी भी [illegible] होता?
२- [illegible] हुए, [illegible] हुए हैं, [illegible] शरीर लगता है, [illegible] देर लगती है।
(३) मोहन [illegible] किया, मोहन ने [illegible] किया। उसने नाचना, गाना [illegible] किया, [illegible] किया, अतिक्रमण किया, [illegible] आरम्भ किया, समाप्त किया, [illegible] गया।
(४) घर घर की [illegible], [illegible] घर। घर घर [illegible] दिशा दिशा में, फूल खिले हुए, घर घरों के [illegible]। दिशा दिशा में [illegible] दिखता है, रोम रोम [illegible] रोम रोम फूले कदम्ब से [illegible] खिल उठा, या खिल उठे; [illegible] चार [illegible], [illegible] चार [illegible]।

सर्वनाम

सर्वनाम का अर्थ है—सब का नाम। संज्ञा अर्थात् नाम सब का नहीं, किसी एक का नाम होता है, पर **सर्वनाम वह विकारी शब्द है, जो सब वस्तुओं का नाम हो सकता है;** उदाहरणार्थ—राम, श्याम, मोहन, पहाड़, नदी, पेड़, गाय, आदमी सब को 'यह' कह सकते हैं। यह कौन है? या 'यह' क्या है? पूर्वचर्चित संज्ञा की पुनः चर्चा के लिए प्रायः किसी सर्वनाम का ही सहारा लिया जाता है, संज्ञा का पुनः पुनः उल्लेख पुनरुक्ति दोष बन जाता है; जैसे—दशरथ अयोध्या के राजा थे। वे बड़े वीर थे। उन्होंने देवराज की सहायता की थी। उनके तीन रानियाँ थीं। राम उनके बड़े पुत्र थे। राम ने कहा कि मैं कल आऊँगा। प्रत्येक सर्वनाम किसी-न-किसी नाम का ही उपस्थापक या प्रतिनिधि होता है। किन्तु यह सोचना भ्रम है कि प्रत्येक सर्वनाम शब्द किसी संज्ञा शब्द के ही बदले आता है; जैसे- कौन, क्या, जो, सो, आदि के अर्थ किसी संज्ञा शब्द से प्रकट नहीं किए जा सकते।

शब्द की दृष्टि से भी संज्ञा से सर्वनाम में ये अन्तर हैं :-

(क) सर्वनाम परिगणित हैं, वे नये नहीं बनाये जा सकते।

(ख) सर्वनाम से दूसरे प्रकार के शब्द बनते हैं, पर दूसरे प्रकार के शब्दों से सर्वनाम नहीं बनता।

(ग) सर्वनाम में लिंग-भेद से रूपान्तर नहीं होता; लड़का जाता है, लड़की जाती है; पर वह जाता है, वह जाती है।

(घ) सर्वनाम का संबोधन नहीं होता।

(ङ) पुरुष-भेद भी केवल सर्वनामों (तथा क्रियाओं) में होता है, संज्ञाएँ सभी अन्य पुरुष की ही होती हैं।

(च) सर्वनामों में आज भी संश्लिष्ट (विभक्त्यन्त) रूप प्राप्त होते हैं; जैसे—उसको = उसे, उनको = उन्हें, तू (एकवचन) + षष्ठी...तेरा, मैं + को = मुझे आदि।

(छ) सर्वनाम का रूप सविभक्तिक एकवचन में भी बदलता है। इसमें बहुत रूपान्तर होते हैं; जैसे- वह (एकवचन) + को = उसको, कौन (एकवचन) + से = किससे, मैं + पर = मुझपर आदि।

इन सातों में से केवल अन्तिम लक्षण (छ) आकारान्त तद्भव संज्ञा या विशेषण शब्दों में भी मिलता है, शेष केवल सर्वनामों के लक्षण हैं। सर्वनाम के व्यावर्त्तक लक्षण हैं (च) और (छ)। 'आप' और 'सब' इन दोनों में ये लक्षण नहीं पाए जाते। पर संस्कृत में 'सर्व' (जिसका विकसित रूप ही 'सब' शब्द है) ही सर्वनाम-शिरोमणि है, जिसके नाम पर ही इस श्रेणी का वर्गीकरण किया गया है (सर्वादीनि सर्वनामानि)।

सर्वनाम के निम्नलिखित भेद हैं :—

१. निश्चयसूचक—जो किसी निश्चित व्यक्ति या पदार्थ को सूचित करता है, उसे निश्चयसूचक सर्वनाम कहते हैं; जैसे—मैं, तुम, आप, यह, वह = ५।

२. अनिश्चयसूचक—अनिश्चित व्यक्ति या वस्तु को सूचित करनेवाले सर्वनाम को अनिश्चयसूचक सर्वनाम कहते हैं; जैसे—कोई, कुछ, सब = ३।

३. आकाङ्क्षासूचक—परस्पर नित्य साकाङ्क्ष सर्वनाम को साकाङ्क्ष या संबंध सूचक सर्वनाम कहते हैं; जैसे—'जो' (आकांक्षाजनक), 'सो' (आकांक्षा पूरक) = २। ये दोनों अनिश्चय सूचक के ही प्रभेद-विशेष हैं।

४. प्रश्नसूचक—प्रश्न सूचित करनेवाले सर्वनामों को प्रश्नसूचक सर्वनाम कहते हैं; जैसे--कौन, क्या (अचेतन) = २। ये दोनों भी अनिश्चयसूचक के ही प्रभेद हैं।

इनमें 'मैं' उत्तमपुरुष तथा 'तू' मध्यम पुरुषवाचक सर्वनाम हैं, शेष सभी अन्यपुरुषवाचक। जो बोलता है, वह अपने को 'मैं' तथा जिससे बोलता है उसे 'तू' और जिसके बारे में कहता है उसे, तीसरे को, 'यह' 'वह' आदि कहता है। इस प्रकार बोलनेवाला उत्तमपुरुष, सुननेवाला मध्यम पुरुष तथा शेष सब अन्यपुरुष कहे जाते हैं। पुरुषवाचक सर्वनाम का कोई स्वतन्त्र भेद नहीं, चूँकि प्रत्येक सर्वनाम किसी 'न' किसी पुरुष का वाचक है। उत्तम तथा मध्यम, पुरुषों का क्षेत्र अत्यन्त सीमित है, अन्यपुरुष का बोध्य समस्त विश्व है।

'मैं' के रूप

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा—	मैं	हम, हमलोग, हम सब
द्वितीया—	मुझे, मुझ को,	हमें, हम को, हम लोगों, सबों को
तृतीया—	मैंने मुझ से, मेरे द्वारा	हम ने, हम से, हमारे द्वारा, हम लोगों के द्वारा
चतुर्थी—	मुझे, मुझ को, मेरे लिये	हमें हम को, हमारे लिये, हम लोगों के लिये,
पंचमी—	मुझ से	हम से, हम लोगों, सबों से
षष्ठी—	मेरा, (मेरे, मेरी), मुझ को	हमारा (हमारे, हमारी), हम लोगों का (के, की); हमें, हम को। हमलोगों को
सप्तमी—	मुझ में मुझ पर	हम में, हम पर. हम लोगों में, हम लोगों पर

तू के रूप

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा—	तू	तुम, तुम लोग, तुम सब
द्वितीया—	तुझे, तुझ को	तुम्हें, तुम को, तुम लोगों को, तुम सबों को
तृतीया—	तूने, तुझ से, तेरे द्वारा	तुमने, तुम से, तुम लोगों (सबों) ने, तुम लोगों से, तुम लोगों के द्वारा, तुम्हारे द्वारा
चतुर्थी—	तुझे, तुझ को, तेरे लिये	तुम्हें, तुम को, तुम लोगों (सबों) को, तुम्हारे लिये, तुम लोगों के लिये
पंचमी—	तुझ से	तुम से, तुम लोगों (सबों) से
षष्ठी—	तेरा (तेरे, तेरी), तुझे, तुझ को	तुम्हारा, तुम्हारे, तुम्हारी, तुम लोगों (सबों) का, [के, की]; तुम्हें, तुम को
सप्तमी—	तुझ में, तुझ पर	तुम में, तुम पर, तुम लोगों, सबों में, तुम लोगों पर

'मेरे को' 'तेरे को' आदि पंजाबी भाषा के प्रयोग हैं, उसके ही प्रभाव से दिल्ली की हिन्दी में प्रयुक्त हो रहे हैं।

मध्यमपुरुष में एकवचन में भी साधारणतः बहुवचन रूप का ही प्रयोग होता है; एक को भी कहते हैं तुम कहाँ हो? विशेष मनोभाव; जैसे—अत्यधिक महत्ता (ईश्वर), प्यार (माँ), आत्मीयता, (मित्र) और लघुता (नौकर) आदि प्रकट करने के लिये ही एकवचन 'तू' का प्रयोग होता है; जैसे-तू कहाँ है? इसी प्रकार उत्तमपुरुष में भी एकवचन के स्थान में बहुवचन का प्रयोग खूब चलता है, विशेषतः बोलचाल की भाषा में, खासकर पूरबी क्षेत्र में। साहित्यिक हिन्दी में 'मैं' ही अधिक चलता है। अतः 'तुम' तथा 'हम, में एकवचन का भ्रम दूर करने के लिये बहुवचन में तुम हम की जगह प्रायः 'तुमलोग' 'हमलोग' का ही प्रयोग करते हैं। मध्यमपुरुष का अधिक आदर करने के लिये आप, श्रीमान् महाशय, हुजूर आदि अन्यपुरुष के शब्दों का प्रयोग करते हैं, इनकी क्रिया सदा अन्य पुरुष बहुवचन की रहती है। "आप कहाँ जाते हो" प्रयोग अर्थात् आपके साथ मध्यम पुरुष क्रिया का प्रयोग व्याकरण-संमत नहीं है, क्षेत्रीय बोलियों में आता है। 'सब' की भाँति 'आप' शब्द के रूप में भी सर्वनाम-सदृश कोई विकार नहीं होता। इसका रूप श्रीमान् आदि शेष प्रातिपदिकों की भाँति ही चलता है।

"आप भला तो जग भला" 'वह आप ही [या अपने ही] चला गया" आदि वाक्यों का 'आप' ऊपर वाले "आप" से सर्वथा भिन्न कोटि का है। इसका अर्थ तो भिन्न है ही, जाति भी भिन्न है। यह पूर्णतः 'स्वयं' तथा 'खुद' का पर्याय

अत एव क्रियाविशेषण है। 'निज' तो स्पष्ट ही विशेषण शब्द है। 'अपना' भी संस्कृत के षष्ठ्यन्त 'आत्मनः' से विकसित विशेषण शब्द ही है। परन्तु वह आप को, निज को, अपने को, अपने आप को कोसता है; अपने से ही परामर्श करता है, अपने ही लिए चिन्तित रहता है, अपने से बड़ों का सम्मान करता है, अपने में मस्त रहता है आदि में इन [आप तथा अपना] का प्रयोग सर्वनामवत् हो रहा है; जैसे 'यहाँ' इस अव्यय का भी 'यहाँ का' 'यहाँ से' 'यहाँ पर' 'राम के यहाँ' आदि में नामवत् प्रयोग हो जाता है। 'परस्पर' के अर्थ में षष्ठी तथा सप्तमी में 'आपस का' तथा 'आपस में' का भी प्रयोग होता है। अपना = आपस का विशेषण है, अपने में = आपस में, क्रियाविशेषण। बहुत से वैयाकरण इन सबों को निजवाचक सर्वनाम कहते हैं। जिस शब्द का वचनान्तर नहीं हो सके तथा जिससे सभी विभक्तियाँ नहीं आ सकें, वह अव्यय ही कहा जाता है। यह 'आप 'अपने आप' 'आपस' भी सार्वनामिक अव्यय, क्रियाविशेषण ही हैं। 'स्वयं' अव्यय से भी 'स्वयं को' 'स्वयं से' स्वयं में आदि प्रयोग बना लिए जाते हैं।

यह के रूप

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा---	यह	ये, ये लोग, ये सब
द्वितीया-	-यह, इसे, इस को	ये, इन्हें, इन को, इन लोगो, सबों को
तृतीया-	इस ने, इस से, इस के द्वारा	इन्हों ने, इन ने, इन लोगों, सबों ने, इन से, इन लोगों से, इन के द्वारा, इन लोगों के द्वारा
चतुर्थी—	इसे, इस को, इस के लिये	इन्हें, इनको, इनके लिये, इनलोगों, सबों के लिये
पंचमी—	इससे	इन से, इन लोगों, सबों से
षष्ठी—	इसका (के, की), इस को, इसे	इनका, के, की, इनलोगों, सबों का, के, की इनको, इन्हें
सातमी—	इस में, इस पर	इन में. इन पर, इन लोगों, सबों में, इन लोगों, पर

वह के रूप

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा—	वह	वे, वे लोग, वे सब।
द्वितीया—	वह, उसे, उस को	वे, उन्हें, उन को, उन लोगों को, उन सबों को
तृतीया—	उस ने, उस से, उस के द्वारा	उन्होंने, उनने, उनलोगों (सबों) ने उन से, उन लोगों से, उन के द्वारा उन लोगों, सबों के द्वारा

	एकवचन	बहुवचन
चतुर्थी—	उसे, उस को, उस के लिये	उन्हें, उन को, उन लोगों, सवों को, उन के लिये, उन लोगों, सवों के लिये
पंचमी—	उस से	उनसे, उन लोगों से, उन सवों से
षष्ठी—	उस का, के, की, उसे उस को	उन का, के, की, उन लोगों, का, के, की उन्हें उन लोगों, सबों को,
सप्तमी—	उस में, पर	उन में, पर; उन लोगों, सवों में, पर

जो का रूप

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा—	जो	जो
द्वितीया—	जो, जिसे, जिस को	जो, जिन्हें, जिनको, जिनलोगों, सबों को
तृतीया—	जिस ने, जिस से, जिस के द्वारा	जिन्हों ने, जिन ने, जिन लोगों, सबों ने, जिन से, जिन लोगों से, जिन के द्वारा, जिन लोगों के, द्वारा
चतुर्थी—	जिसे, जिस को, जिसके लिये	जिन्हें, जिन को, जिन लोगों को, जिन के लिये, जिन लोगों के लिये
पंचमी—	जिस से	जिन से, जिन लोगों, सवों से
षष्ठी—	जिस का, (के, की), जिसे, जिसको	जिन का (के, की), जिन्हें, जिनको, जिन लोगों को।
सप्तमी—	जिस में, पर	जिन में, पर, जिनलोगों, सबों में, पर

सो का प्रयोग कम होता जा रहा है, उसकी जगह आकांक्षापूरक नित्य **संबंधी** या सवन्धसूचक के रूप **में** भी 'वह' का ही प्रयोग हो रहा है। 'सो' के रूप विलकुल जो के अनुसार ही चलते हैं। जहाँ-जहाँ जो के स्थान में जो, जिस, जिन जिन्ह होता है वहाँ-वहाँ सो के स्थान में सो, तिस, तिन, तिन्ह होता है।

कौन

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा—	कौन	कौन, कौन लोग (सब)
द्वितीया—	कौन, किसे, किस को,	कौन, किन्हें, किन को, किन लोगों, सबों को
तृतीया—	किस ने, किस से	किनने, किन्होंने, किन लोगों ने, किनसे, किन लोगों से
चतुर्थी—	किसे, किस को, किस के लिये	किन्हें, किनको, किनलोगों सबों को, किन के लिये, किन लोगों, सवों के लिये
पंचमी—	किस से	किन से, किन लोगों, सबों से
षष्ठी—	किस का, **के**, की; किसे, किसको	किन का, के, की, किन लोगों, सबों का, किन्हें, किन को, किन लोगों को
सप्तमी—	किस में पर	किन **में**, पर, किन लोगों, सबों **में**, पर

'कौन' सर्वनाम रूप में केवल मनुष्य के लिये आता है, सार्वनामिक विशेषण रूप में सब पदार्थों के लिये। 'कौन' के बाद 'सा' के जुट जाने पर 'कौन-सा' सब पदार्थों के लिये प्रथमा तथा द्वितीया के एकवचन और बहुवचन दोनों में शून्य-विभक्तिक रूप में आता है; एकवचन में 'कौन सा' बहुवचन में 'कौन से'। 'क्या' प्रायः निर्जीव पदार्थ के लिये सदा शून्य-विभक्तिक प्रथमा एवं द्वितीया में प्रयुक्त होता है। इसकी अनेकता प्रायः द्वित्व द्वारा प्रकट की जाती है। शेष विभक्तियों में 'क्या' के स्थान में भी 'कौन' के ही विभिन्न रूप प्रयोग में आते हैं; क्या है? ये सब क्या है? क्या-क्या है? "क्या से काटूँ" नहीं, "किससे काटूँ", 'किस चीज से काटूँ'? 'काहे से' ब्रजभाषा का प्रयोग है, पर क्षेत्रीय हिन्दी में भी सुनने में आ जाता है।

'कोई' भी सर्वनाम रूप में केवल मनुष्य के लिये तथा सार्वनामिक विशेषण रूप में सब पदार्थों के लिये प्रयुक्त होता है। यह भी प्रथमा एकवचन तथा बहुवचन दोनों में 'कोई' ही बना रहता है। विभक्ति जुड़ने पर एकवचन में 'किसी' तथा 'बहुवचन' में 'किन्ही' रूप हो जाते हैं। 'कोई' की अनेकता प्रायः द्वित्व से प्रकट की जाती है; 'कोई-कोई' 'किसी किसी को' आदि।

'कुछ' के रूप में सर्वनाम का कहीं कोई लक्षण नहीं रहता। यह एकवचन, तथा बहुवचन दोनों में एक-रूप ही बना रहता है तथा सर्वथा अनिश्चित परिमाण या संख्या वाचक विशेषण की भाँति, पर विशेष्य के बिना भी, प्रयुक्त होता है; जैसे, 'सब', 'अन्य', 'और' आदि सर्वनामार्थक शब्द—'कुछ दूध तो यहाँ भी मिल जायगा' 'कुछ लोग' वहाँ भी गए होंगे, 'वहाँ कुछ नहीं मिलता'।

कई विभक्तियों की भाँति सर्वनामों के बाद प्रयुक्त 'ही' भी संश्लिष्ट हो जाता है; जैसे--मुझ ही को = मुझी को, हम ही = हमी, तुम ही = तुम्ही, तुझ ही = तुझी, उस ही = उसी, उन ही = उन्हीं, इस ही = इसी, इन ही = इन्हीं, जिस ही = जिसी, जिन ही = जिन्ही।

जो जो, जो कोई, जो कुछ, सब कोई, हर कोई, सब कुछ, और कोई, कोई और, और कुछ, कुछ और, कोई-कोई, कोई-न-कोई, कुछ-कुछ, कुछ-न-कुछ आदि संयुक्त सर्वनाम की भाँति प्रयुक्त होते हैं।

अभ्यास

१. जो के आधार पर सो की रूपावली दें।

२. इन्हें शुद्ध करें—[क] कौन बात का डर? [ख] सब्जी क्या का बनी है?
[ग] वह क्या बोले? [घ] क्या चीज से खाएँ?

अध्याय—९

विशेषण

जिस शब्द के द्वारा किसी की विशेषता बताई जाती है, उसे **विशेषण कहते हैं**। विशेषण शब्द दूसरे किसी भी शब्द के साधारण अर्थ को विशेषित कर उसकी व्यापकता को सीमित कर देता है। जिसकी विशेषता बताई जाती है, उसे **विशेष्य** कहते हैं। विशेषण-विशेष्य में धर्म-धर्मिभाव होता है। **विशेषण** अपने विशेष्य का शेष सजातीय सदस्यों से व्यावर्त्तन करता है, भेद दिखाता है। अतः विशेषण को व्यावर्त्तक तथा भेदक और विशेष्य को व्यावर्त्य तथा भेद्य कहते हैं; जैसे, किसी बुद्धिमान् मनुष्य को बुलाओ, इस वाक्य में '**बुद्धिमान्**' विशेषण प्रस्तुत विशेष्य '**मनुष्य**' को शेष 'अबुद्धिमान्' मनुष्यों से पृथक् (व्यावृत्त) कर रहा है। इसी भाँति 'छोटा बच्चा' में 'छोटा' विशेषण तथा 'बच्चा' विशेष्य है।

अर्थ की दृष्टि से विशेषण के मूलतः दो भेद होते हैं :—

१. प्रकारवाचक २. मात्रावाचक।

प्रकारवाचक

यह विशेष्य के प्रकार को बताता है कि वह कैसा, किस प्रकार का है। व्याकरण ग्रन्थों में यही **गुणवाचक** कहा गया है, परन्तु गुण में तो (दर्शन की दृष्टि से) केवल प्रकार ही नहीं, संख्या तथा परिभाण भी समाविष्ट हो जाते हैं, अतः समस्त विशेषण शब्द गुणवाचक (गौण) कहे जा सकते हैं। प्रकार के बहुत से भेद हैं, जिनमें मुख्य ये हैं :-

(क) आकार—बड़ा हाथी, लम्बा पेड़, चौड़ी छाती।
(ख) दशा—दुबला आदमी, मोटा हाथी, स्वस्थ मनुष्य, दौड़ता आदमी।
(ग) रूप (रंग)—सफेद कपड़ा, पीला फूल, लाल होठ।
(घ) रस—मीठा आम, खट्टा दही, कड़वी सब्जी।
(ङ) गन्ध—सुगन्धित फूल, दुर्गन्धित वायु, सुरभित पवन।
(च) स्पर्श—कोमल पत्ते, सूखा हाथ, कड़ा चमड़ा।
(छ) स्थान—भारतीय, चीनी, अगला, पिछला, मँझला, शहरू।

(ज) दिशा—पश्चिमी, उत्तरी, ऊपरी, दायाँ।

(झ) काल—पहला, पिछला, आगामी।

(ञ) अच्छाई-बुराई—भला आदमी, पापी मनुष्य, सीधी गाय, दृढ़ संकल्प।

मात्रावाचक

मात्रावाचक के पुनः दो प्रभेद होते हैं :—१. संख्यावाचक, २. परिमाणवाचक

(१) संख्यावाचक—विशेष्य की संख्या बतानेवाले विशेषण को संख्या-वाचक कहते हैं :— इसके दो भेद होते हैं :—

निश्चितसंख्यावाचक तथा अनिश्चितसंख्यावाचक।

१. निश्चितसंख्यावाचक के इतने प्रभेद होते हैं :—

(क) गणनावाचक :—गणनावाचक विशेषण विशेष्य की साधारण संख्या सूचित करता है, गिनती बताता है। इसके भी दो उपभेद हैं—

(अ) पूर्णांक या पूर्णसंख्यावाचक; जैसे :—एक आदमी, दो विद्यार्थी, तीन पुस्तकें।

(आ) अपूर्णांक या अपूर्णसंख्यावाचक—सवा दो रुपये, पौने पाँच वर्ष, साढ़े तीन दिन।

[ख] क्रमवाचक :—यह विशेष्य की क्रमात्मक संख्या बताता है; जैसे-पाँचवाँ छात्र, दूसरा वर्ष, पहली कक्षा, तीसरी दिशा।

क्रमात्मक संख्या सदा एक को प्रकट करती है, अतः एकवचन रहती है।

[ग] आवृत्तिबोधक—यह विशेष्य में किसी इकाई की आवृत्ति की संख्या बताता है; इसे गुणात्मक संख्याबोधक भी कहते हैं ; जैसे—दुगुने छात्र, तिगुना दूध, दुहरा जाड़ा, चौगुनी गर्मी, पाँच गुना बल, डेढ़ गुना लाभ।

(घ) संग्रहार्थक—यह अपने विशेष्य की सब इकाइयों का संग्रह प्रकट करता है; जैसे—चारो आदमी, पाँचो कपड़े, सातो पुस्तकें, आठ के आठो लड़के आ गये। पाँच के पाँचों काम समाप्त हुए।

(ङ) समुदायबोधक या संघातमक :—यह वस्तुओं की सामुदायिक संख्या को प्रकट करता है; जैसे जोड़ा—२, गंडा—४, गाही—५, दर्जन—१२, कोड़ी—२०, जिस्ता—२४ ताव आदि; चार दर्जन पेंसिल पाँच रीम कागज।

(च) वीप्सार्थक :—व्यापकता का बोध कराने वाली संख्या को वीप्सार्थक कहते हैं। यह दो प्रकार से बनती है संख्या के पूर्व प्रति, हर, फी, प्रत्येक इनमें से किसी के पूर्व-प्रयोग से अथवा संख्या के द्वित्व से; जैसे—प्रत्येक दो घंटों पर गाड़ी खुलती है, या दो दो घण्टों पर गाड़ी छूटती है, प्रत्येक पाँच छात्रों के लिये एक कमरा है, या पाँच-पाँच छात्रों के लिये एक कमरा है। प्रत्येक को पाँच-लड्डू दो। प्रति कक्षा ३० छात्र पढ़ते हैं। हर घर में कोई रोगी है।

२. अनिश्चित संख्यावाचक—अनिश्चित संख्या बतानेवाले शब्द अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण कहलाते हैं; जैसे—बहुत आदमी, कुछ लोग, कम विद्यार्थी, कितने कपड़े, अनगिनत पुस्तकें।

निश्चित संख्यावाचक भी अनिश्चयसूचक विशेषण के योग से अनिश्चित संख्यावाचक बन जाते हैं; जैसे—प्रायः बीस आदमी, लगभग तीस विद्यार्थी, कोई तीस लड़के।

आसपास की दो निश्चित संख्याओं का सह प्रयोग भी दोनों के आसपास की अनिश्चित संख्या को प्रकट करता है; दो चार लड़के, दस-बीस-छात्र, हजार-दो हजार रुपये।

कुछ संख्याओं में ओं जोड़ने से उनके बहुत्व अतएव अनिश्चित संख्या की प्रतीति होती है; जैसे—'सालों बाद' का अर्थ होता है अनेक अनिश्चित वर्षों के बाद। उसी प्रकार पचासों, सैकड़ों, हजारों आदमी का अर्थ होता है अनेक अनिश्चित पचास, सौ या हजार आदमी। इसी प्रकार लाखों आदमी, करोड़ों जीव। दस तथा बीस के बाद ओं की जगह इयों जुटता है; जैसे--दसियों, बीसियों।

२. परिमाणवाचक—जो विशेष्य की संख्या नहीं परिमाण बताता है, उसे परिमाणवाचक विशेषण कहते हैं। जातिवाचक वस्तुओं की मात्रा संख्या में तथा द्रव्यवाचक वस्तुओं की मात्रा परिमाण में सूचित की जाती है। जातिवाचक और द्रव्यवाचक संज्ञाओं का यही अन्तर है। इनके भी दो प्रभेद हैं :—

(क) अनिश्चित परिमाणवाचक :—जो जातिवाचकों के साथ प्रयुक्त होकर उनकी अनिश्चित संख्या प्रकट करते हैं, वे शब्द ही द्रव्यवाचको के साथ आकर उनका अनिश्चित परिमाण बताते हैं; जैसे—बहुत, थोड़ा, कुछ, सब चावल या दूध, मिट्टी, जमीन आदि। इनमें भी दो शब्दों का सह प्रयोग या एक शब्द का द्वित्व मिलता है, जैसे—थोड़ा-बहुत, थोड़ा या बहुत, थोड़ा-थोड़ा, कुछ-कुछ, कुछ-न-कुछ, ।

(ख) निश्चित परिमाणवाचक :– ये निश्चित परिमाण को सूचित करते हैं; जैसे–दो मीटर कपड़ा, तीन मन चावल, दो हाथ लकड़ी।

परिमाणवाचक से भिन्न संज्ञा शब्द भी परिमाणवाचक की भाँति प्रयुक्त होते हैं; जैसे–चुल्लू भर, छाती भर पानी, एक कुल्ला दूध, दो बाल्टी शरबत, चार बोरा चीनी, तीन टीन तेल आदि।

संख्यावाचक की भाँति परिमाणवाचक में भी ओं' प्रत्यय का योग अनिश्चित बहुत्व प्रकट करता है जैसे घड़ों पानी अर्थात् कई घड़ा पानी, मनों चावल अर्थात् कई मन चावल।

व्युत्पत्ति की दृष्टि के विशेषणों के निम्नलिखित भेद हैं :—

१. मौलिक :—लाल, मोटा, थोड़ा, आदि तथा ऊपर के सभी।

२. [नामिक, नामज] संज्ञा निर्मित या संज्ञा से बने :—

(क) शुद्ध—हिमालय पहाड़, गंगा नदी, पटना शहर, ब्राह्मण जाति।

(ख) यौगिक या प्रत्यय-निष्पन्न—बेनीपुरी, हाथरसी, मद्रासी, बंगाली, बनारसी, मैथिल, माथुर, बंबई वाला, पटनिया, मुख्य, वायव्य आदि।

३ सर्वनामज अर्थात् सर्वनाम से बने, सार्वनामिक—

[क] शुद्ध :—वह आदमी, यह घड़ा, जो छात्र।

[ख] प्रत्यय-निष्पन्न :—

[अ] प्रकारवाचक :—कैसा, जैसा, वैसा, ऐसा, आदमी।

[आ] अनिश्चित संख्यावाचक—कितने, जितने, उतने, इतने विद्यार्थी।

[इ] अनिश्चित परिमाणवाचक—कितना, जितना, इतना, उतना, दूध।

४ धातुज, क्रिया-निर्मित (किसी प्रत्यय की सहायता से बने); जैसे—नहाया शरीर, बीता समय, पका फल, दौड़ते लोग, चलता-फिरता आदमी, खाऊ आदमी, बिकाऊ सामान, खाने वाला।

५ अव्ययज या अव्यय से बने प्रत्यय की सहायता से); जैसे—ऊपरी दिखावा भीतरी बात, बाहरी तड़क-भड़क, अन्दरूनी बात, ऊपरवाला।

६ सामासिक या समास से बने :—सबल सांकल, अचल-भक्ति, वनवासी राम, तत्सम शब्द, महाबाहु भीम भरत-सा या भरत-जैसा भाई, उस-जैसा नौकर।

अन्वय की दृष्टि से विशेषण दो प्रकार के होते हैं :—

[क] समानाधिकरण अर्थात् विशेष्य की ही विभक्ति वाले; जैसे—लाल साड़ी, भारतीय साड़ी, बुद्धिमान् आदमी।

[ख] व्यधिकरण—अर्थात् विशेष्य से भिन्न विभक्ति वाले। ऐसे विशेषणों में प्रायः सदा षष्ठी विभक्ति रहती है; जैसे—लाल रंग की साड़ी, भारत की साड़ी, तेज बुद्धि का आदमी। वास्तव में सभी षष्ठ्यन्त व्यधिकरण विशेषण का काम करते हैं; जैसे—मोहन का घर मोहन के लड़के, मेरा विद्यार्थी, अपना काम, गरीबों की दुनिया।

विशेषणों का रूपान्तर

लिंग--विशेषण भी उसी लिंग वचन तथा विभक्ति को अपना लेता है जिसमें विशेष्य रहता है, । उसका अपना कोई लिंग, वचन, कारक नहीं होता। हिन्दी के सभी विशेषण पुंलिग तथा स्त्रीलिंग में समानरूप बने रहते हैं, केवल आकारान्त विशेषण स्त्रीलिंग में ईकारान्त बन जाते हैं; जैसे--

अपरिवर्तित		परिवर्तित	
बहुत या सब लड़के।	बहुत या सब लड़कियाँ।	अच्छा लड़का।	अच्छी लड़की।
बिहारी लड़के।	बिहारी लड़कियाँ।	भोला बच्चा।	भोली बच्ची।
भीतरी कलह।	भीतरी बात।	सीधा जानवर।	सीधी गाय।
उड़ाऊ पति।	उड़ाऊ पत्नी।	मोहन का पेड़।	श्याम की खेती।
अधिक बात।	अधिक सब्जी।	मेरा वेद।	तुम्हारी गीता।

सँस्कृत के बहुत से विशेषण शब्द हिन्दी में भी लिंग-परिवर्तन से स्त्रीलिंग बन जाते हैं; जैसे :—महान् आयोजन—महती सभा, विद्वान् पुरुष--- विदुषी स्त्री, बुद्धिमान्, रूपवान् पुरुष--बुद्धिमती, रूपवती स्त्री, मानी पुरुष—मानिनी महिला, मायावी पुरुष--मायाविनी स्त्री।

परन्तु अधिकांश ज्यों के त्यों रह जाते हैं, जैसे :—एक बालक--एक बालिका, चतुर बालक--चतुर बालिका, धनी, गुणी लड़का--धनी, गुणी लड़की। बहुत जगह ऐच्छिक प्रयोग चल रहे हैं, पर झुकाव क्रमशः संस्कृत शब्दों को भी ज्यों-का-त्यों छोड़ देने की ओर है; जैसे—सुन्दर बालक---सुन्दरी या सुन्दर बालिका, रोगिणी पत्नी या रोगी पत्नी।

वचन तथा विभक्ति--वचन तथा विभक्ति के कारण रूपपरिवर्तन केवल संस्कृतभव आकारान्त शब्दों में ही देखा जाता है; (क) विशेष्य के पुंलिग शून्य-विभक्तिक बहुवचन रहने पर आकारान्त विशेषण एकारान्त बहुवचन बन जाता है; जैसे---अच्छा लड़का---अच्छे लड़के; बुरा आदमी---बुरे लोग; टेढ़ा सीधा पेड़---टेढ़े-सीधे पेड़।

(ख) विशेष्य के पुंलिग सविभक्तिक अथवा संबोधनार्थक रहने पर वह एकवचन हो या बहुवचन, आकारान्त विशेषण सदा एकारान्त ही बना रहता है; जैसे-भले लड़के को---भले लड़कों को सीधे पेड़ को---सीधे पेड़ों को; अबे, खोटे, झूठे लड़के, या बालक--खोटे, झूठे लड़को या बालको; राजा का लड़का,

राजा के लड़के, राजा के लड़के ने, राजा के लड़कों ने, राजा के लड़के, राजा के लड़को !

विशेष्य यदि स्त्रीलिंग है, तो वह शून्य-विभक्तिक रहे या सविभक्तिक, एकवचन रहे या बहुवचन, आकारान्त संस्कृत-भव विशेषण सदा ईकारान्त ही बना रहता है; जैसे--अच्छी लड़की, अच्छी लड़कियाँ, अच्छी लड़की को, अच्छी लड़कियों को, अरी अच्छी लड़की, अरी अच्छी लड़कियो !

जिन विशेषण शब्दों के अंत में 'इया' रहता है, उनमें लिंग के कारण रूप-परिवर्तन नहीं होता; जैसे--मुखिया, दुखिया, बढ़िया, घटिया, छलिया, रसिया आदि। दुखिया मर्द या औरत। इनमें वचन या विभक्ति के कारण भी रूपान्तर नहीं होता; जैसे-बढ़िया या बंबइया कपड़ा, बढ़िया या बंबइया साड़ियाँ, या कलकतिया कपड़े से, कपड़ों से आदि।

उर्दू के उम्दा, ताजा, जरा आदि आकारांतों में भी लिंग, वचन, विभक्ति से रूप-परिवर्तन नहीं होता जैसे-ताजा फल, ताजा हवा, ताजा संतरे आदि। पर हिन्दी इनमें भी विकार करना चाहती है ताजी हवा, ताजे संतरे।

विशेषणों में तुलना

गुण या दोष की अधिकता की तुलना के लिये प्रकारवाचक[1] विशेषण शब्दों में निम्नलिखित विधियाँ अपनाई जाती हैं :--

[क] दो में से किसी एक में अथवा एक की अपेक्षा दूसरे में किसी विशेषता की अधिकता बताने में 'तर' प्रत्यय का अथवा अधिकार्थक विशेषण का योग होता है; जैसे-सुरेश और नरेश में सुरेश सुंदरतर या अधिक सुंदर है। नरेश से सुरेश सुंदरतर अथवा ज्यादा सुंदर है। इसी प्रकार प्रियतर, अधिक प्रिय; कोमलतर अधिक कोमल; तीव्रतर, अधिक तीव्र आदि।

[ख] एक की अपेक्षा दूसरे को उत्कृष्ट बताने में केवल **से** [विभक्ति या उसके पर्याय) से भी काम चल जाता है; जैसे-सुरेश नरेश **से** [की अपेक्षा, की तुलना में] सुंदर है।

[ग] दो से अधिक संख्या वाले किसी समुदाय में से किसी एक को उत्कृष्ट बताने में विशेषण में 'तम' प्रत्यय जोड़ देते हैं या सबसे' [सर्वाधिक] का प्रयोग करते हैं; जैसे--इनमें या अपनी कक्षा में सुरेश तीव्रतम या सबसे [सर्वाधिक] तीव्र है।

---

१. परिमाण अथवा गुणवाचक विशेषण चूँकि एक सुनिश्चित स्थिति को छूते हैं, जिसमें अधिक या कम नहीं होता, अतः उनमें तुलना का अवकाश ही नहीं है; 'अधिक पाँच 'या' अधिक पाँच किलो' अकल्पनीय है।

(घ) तर, तम संस्कृत प्रत्यय हैं अतः केवल संस्कृत शब्दों से ही जुट सकते हैं। शेष उपाय सब प्रकार के शब्दों के लिये हैं;

स्थूल, मोटा--स्थूलतर, अधिक मोटा--स्थूलतम, सब से मोटा।
दुर्बल, दुबला--दुर्बलतर, अधिक दुबला--दुर्बलतम, सब से दुबला।

विशेषण का प्रयोग दो प्रकारों से होता है—(क) उद्देश्य की भाँति, (ख) :- विधेय की भाँति। जब यह उद्देश्य की भाँति आता है, तब अपनी विशेष्य संज्ञा के पूर्व आता है, अन्यथा बाद में; जैसे--दुष्ट अनिल कहाँ है—अनिल दुष्ट है। छोटा लड़का खेल रहा है – लड़का छोटा है; छोटे लड़के को मत कहो—लड़के को छोटा मत कहो; अच्छे लड़के माता-पिता का कहना मानते हैं—लड़का अच्छा है। सामान्यतः विशेषण का प्रयोग सर्वदा विशेष्य संज्ञा के पूर्व होता है किन्तु सर्वनाम का विशेषण प्रायः सदा विधेय रूप में ही आता है; जैसे--वह चतुर है, तुम मूर्ख हो। हाँ, बलाघात के लिये विशेषण विधेय रहता हुआ भी पहले आ सकता है; चतुर मोहन है, चतुर तुम हो, वह नहीं। विशेषण के भी विशेषण होते हैं, उन्हें प्रविशेषण कह सकते हैं; जैसे--बहुत सुंदर दृश्य। अत्यन्त बुद्धिमान् आदमी। बड़ी बुद्धिमती बालिका। इतनी अधिक प्रगति। इतनी अधिक चतुर बालिका।

बिना विशेष्य के भी विशेषण का प्रयोग होता है। वहाँ विशेष्य संज्ञा आक्षिप्त रहती है। जैसे--सर्वत्र निर्धन ही सताए जाते हैं। मूर्खों को कौन समझा सकता है ? सब न मिलता हो तो आधा ही ले लेना चाहिए। दस बीस या थोड़े से मेरा काम नहीं चलने का

विशेषण जब क्रिया तथा क्रिया-विशेषण एवं संबंध-बोधक आदि अव्ययों को विशेषित करता है, तब वह अव्यय कोटि में चला जाता है, विकारी कोटि में नहीं रहता। उसका वर्णन अव्यय प्रकरण में किया जायगा।

अभ्यास

१. रेखांकित सर्वनामों का परिचय दो।

तुम्हें किसने बताया कि जो निबन्धित पत्र आया था वह मेरा ही था ?

२. इनमें सर्वनाम प्रयोग की अशुद्धियों का संशोधन करें :-

१. आखिर वह क्या बोले ?
२. यह सब मुझे तंग कर रहे हैं।
३. मेरे को कल दिल्ली जाना है।
४. उन्हें यह कभी ध्यान में नहीं आएगा।
५. तुम्हें शीघ्र ही यह समझ में आ जाएगा।
६. मैं क्या से लिखूँ ?
७. कौन बात का मुझको भय है ?

अध्याय १०

धातु और क्रिया

क्रिया का अर्थ है—करना। 'करना', 'चेष्टा' और 'विधान' समानार्थक हैं। अतः प्रत्येक वाक्य में क्रिया का रहना अनिवार्य है, चाहे वह उच्चरित हो, चाहे आक्षिप्त। उसी के सम्बन्ध से वाक्य के शेष अंग कर्ता, कर्म आदि बनते हैं।

यह चेष्टा 'खाता है', 'चलता है' में स्थूल तथा 'सोता है' आदि में सूक्ष्म है। यहाँ तक कि 'होता है' और 'है' में भी आत्मधारण क्रिया हो रही है। 'राम है' अर्थात् वह बने रहने की क्रिया को कर रहा है। वह रोता है, चलता है, बैठता है, पढ़ता है, सोचता है, सोता है में चेष्टा की क्रमशः न्यूनता मात्र है। जैसे--संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण के मूल रूप को 'प्रातिपदिक' कहते हैं; वैसे ही क्रिया के मूल रूप को 'धातु'। खाया, खाए, खाता है, खाएगा आदि में 'खा' धातु है। धातु में 'ना' प्रत्यय करने से क्रिया का बोध होता है, जैसे उपर्युक्त स्थलों में 'खाना' क्रिया के ही विभिन्न रूप हैं।

चूँकि क्रिया और कर्म पर्याय हैं, अतः कर्म की दृष्टि से क्रिया तथा धातु दो श्रेणियों में बाँटे जाते हैं। जिस क्रिया में कर्म कारक रहता है, उसे सकर्मक कहते हैं; जैसे—बच्चा मिठाई खाता है। यहाँ 'मिठाई' 'खाना' क्रिया का कर्म है, अतः 'खाना' क्रिया तथा 'खा' धातु सकर्मक हैं। ''बच्चा सोता है' में; 'सोना' क्रिया का कोई कर्म नहीं, अतः ''सोना' क्रिया तथा 'सो' धातु अकर्मक हैं। सकर्मक क्रिया में कर्त्ता के अतिरिक्त प्रायः चेतन कर्म के लिए 'किसको' तथा अचेतन कर्म के लिए 'क्या' की एक आकांक्षा होती है। ऐसी जगह कर्म का प्रयोग हो या नहीं, क्रिया सकर्मक मानी जाती है; जैसे–'मोहन खा रहा है' में खाना सकर्मक ही है, अकर्मक नहीं, क्योंकि यहाँ प्रश्न और उत्तर दोनों छिपे हैं, क्या? भात, रोटी? मोहन बनारस में पढ़ता है, यहाँ भी क्या पढ़ता है? अंग्रेजी? विज्ञान? यह छिपा है। 'बच्चा सोता है', 'रोता है', 'हँसता है' में 'क्या' प्रश्न नहीं होता।

कुछ क्रियाओं के प्रयोग दोनों प्रकार के दिखते हैं; सकर्मक भी और अकर्मक भी; जैसे—

सकर्मक	अकर्मक
मैं अपनी बात नहीं **भूलता**।	मुझे अपनी बात नहीं **भूलती**।
तुम ने अभी अपना घड़ा नहीं **भरा**।	तुम्हारा घड़ा अभी नहीं **भरा**।
वह अपनी पीठ **खुजलाता** है।	उसकी पीठ **खुजलाती** है।
युग को महापुरुष **बदलते** हैं।	युग महापुरुष से **बदलता** है।

कुछ क्रियाएँ द्विकर्मक भी होती हैं; जैसे—चन्द्रेश्वर ने **दिनेश को** क्या बतलाया ? कुछ अकर्मक क्रियाएँ भी सजातीय कर्म लेकर सकर्मक बन जाती हैं; जैसे—उसने बहुत-सी **लड़ाइयाँ** लड़ीं; वह सूखी **हँसी** हँसता है; गन्दी **चाल** चलता है; बहुत से **खेल** खेलता है आदि।

सकर्मक क्रिया भी कभी कहीं कर्म की विवक्षा छोड़कर अकर्मक बन जाती है; जैसे—सन्तों की कृपा से अन्धा भी देखने लगता है, बहरा भी सुनने लगता है। वह रात में नहीं पढ़ता, रविवार को नहीं खाता आदि।

पूर्णता की दृष्टि से क्रियाएँ चार प्रकार की होती हैं :—

१. अपूर्ण सकर्मक—जिस सकर्मक क्रिया से आशय पूरा नहीं होता, वाक्य साकांक्ष रह जाता है, वह अपूर्ण सकर्मक क्रिया है, उस आकांक्षा या अपूर्णता की पूर्त्ति करनेवाला कर्मपूर्त्ति या कर्मपूरक कहलाता है; क्योंकि वह कर्म का ही समानाधिकरण होता है; जैसे—राम ने रावण को मारकर विभीषण को...वना दिया, यहाँ क्या इस आकांक्षा की पूर्त्ति 'लंका का राजा' से होती है, जो विभीषण का समानाधिकरण है, अतः यह कर्मपूरक कहलाता है। इसी भाँति, तुम ने मोहन को······कर दिया में "निरुत्तर" पूरक कर्म या कर्मपूरक है। इसी तरह मैं, तुम्ह मूर्ख समझता हूँ आदि।

२. पूर्ण सकर्मक—'मैं फल खाता हूँ' में खाना क्रिया पूर्ण है, इसका काम केवल फल कर्म से पूरी तरह चल जाता है। इसे पूर्ण सकर्मक कहते हैं।

३. अपूर्ण अकर्मक—'जब वह......होता है' में अकर्मक 'होना' क्रिया साकांक्ष एवं अपूर्ण है, केवल 'वह' कर्त्ता से उस का काम नहीं चलता। अतः कहना पड़ता है क्रुद्ध'। यह क्रुद्ध उद्देश्य "वह" का समानाधिकरण और पूरक है, अतः उद्देश्य-'पूर्त्ति करता है और उद्देश्यपूरक कहलाता है। इसी भाँति 'नाटक में सुरेश...... बनेगा' में 'राम' उद्देश्यपूरक है, जब 'रमेश......रहता है' में प्रसन्न या स्वस्थ 'आज तुम कुछ...दिख रहे हो में 'खिन्न' आदि।

४. पूर्ण अकर्मक—'वह शाम में ९ बजे सोता या सो जाता है' में अकर्मक क्रिया 'सोना' या 'सो जाना' पूर्ण है, उसे किसी उद्देश्यपूरक की आवश्यकता नहीं।

ये क्रियाएँ भी स्थान-विशेष में अपूर्ण रहती हैं, सर्वत्र नहीं; जैसे—मोहन मिठाई बनाता है, मैं हवन करूँगा, मैं तुम्हारी कठिनाई समझता हूँ, यहां अष्टयाम होगा, चमड़े से जूता बनता है, मोहन सर्वदा घर में रहता है आदि में 'बनाना', 'करना', 'समझना' 'होना', 'बनना' 'रहना' भी अपूर्ण नहीं, पूर्ण ही हैं।

मुख्यता की दृष्टि से क्रियाएँ तीन प्रकार की होती हैं :—

१. सदा सहायक रूप में प्रयुक्त होनेवाली; जैसे—वह नहीं **पढ़ सका**। यहाँ 'सकना' क्रिया सहायक है, पढ़ना मुख्य क्रिया है। सकना कभी मुख्य क्रिया के रूप में नहीं प्रयुक्त होता।

२. सदा **मुख्य** रूप में प्रयुक्त होनेवाली; जैसे—वह पढ़े, तुम पढ़ो, आदि में **पढ़ना** मुख्य क्रिया है। यह कभी सहायक रूप में प्रयुक्त नहीं होती।

३. कुछ क्रियाएँ सहायक रूप में प्रयुक्त होती हैं, किन्तु मुख्य रूप में भी उनका प्रयोग पर्याप्त मिलता है; जैसे—

सहायक	मुख्य
नरेन्द्र पढ़ता **है**।	नरेन्द्र कहाँ है।
सुरेन्द्र पढ़ रहा है।	सुरेन्द्र कहाँ **रहता** है।
शैलेश सो **चुका**।	तुम्हारे पैसे **चुक गये**, तेल **चुक गया**।
वह रोने **लगा**।	तुम्हें यह धूल कहाँ **लगी**।
उसने खा **लिया** है।	उसने कम्बल **लिया** है।

व्युत्पत्ति की दृष्टि से क्रिया अथवा धातु के निम्नलिखित भेद हैं :—

१. मौलिक या रूढ़ धातु या क्रिया वह है, जो मुख्यतः और मूलतः उसी रूप में भाषा मे गृहीत हैं; उसमें कोई खण्ड नहीं; जैसे—पढ़, खा, सो, हो आदि।

२. यौगिक--जो धातु मूल प्रकृति में किसी प्रत्यय के बढ़ाने, घटाने, जोड़ने से तैयार होता है, उसे यौगिक धातु कहते हैं। इसके तीन अवान्तर भेद हैं :—

[अ] प्रेरणार्थक :—इनमें मूल प्रकृति कोई धातु रहता है और उसमें कोई प्रत्यय जोड़कर एक बृहत्तर धातु बना लिया जाता है। अकर्मक मूल से भी बनी सभी प्रेरणार्थक क्रियाएँ सकर्मक हो जाती हैं। प्रेरणा में भी दो स्तर होते हैं। पहली प्रेरणा में धातु से आ प्रत्यय होता है और धातु में विविध विकार होते हैं। जैसे—क. पढ़ना-पढ़ाना, हँसना-हँसाना, समझना-समझाना, लिखना-लिखाना, कुढ़ना-कुढ़ाना।

ख. जागना-जगाना, बीतना-बिताना, लूटना-लुटाना, देखना-दिखाना, ड़ोलना-डुलाना, बैठना-बैठाना, बिठाना, बिठलाना, दौड़ना-दौड़ाना।

ग. खाना-खिलाना, पीना-पिलाना या पियाना, चूना—चुलाना या चुवाना, देना-दिलाना, धोना-धुलाना, कहना-कहलाना, कहवाना,

घ. मरना-मारना, टलना-टालना, तरना-तारना।

ङ. छूटना-छोड़ना, छुड़ाना, फूटना-फोड़ना, घिरना-घेरना, खुलना-खोलना, सूखना-सोखना या सुखाना, टूटना-तोड़ना या तुड़ाना।

च. पसरना-पसारना, उखड़ना-उखाड़ना, उतरना-उतारना, बिगड़ना-बिगाड़ना, उछलना-उछालना, बिसरना-बिसारना, निकलना-निकालना, बिखरना-बिखेरना, लिपटना-लपेटना, सिमटना-समेटना।

छ. भीगना-भिगोना, भिगाना; डूबना, डुबोना-डुबाना।

ज. चलना-चलाना, चालना; लूटना-लुटाना, लुटवाना; घुलना-घोलना-घुलाना।

झ. कहीं प्रथम प्रेरणा में पूरा धातु ही बदल जाता है, जैसे—जाना-भेजना, होना-करना, खोना-गँवाना, आना-बुलाना।

दूसरी प्रेरणा में प्रेरणार्थक धातु से वा प्रत्यय कर उसके अन्तिम आ का ह्रस्व कर देते हैं; जैसे—पढ़ाना-पढ़वाना, दिखाना-दिखवाना, दिलाना-दिलवाना, खिलाना-खिलवाना—मोहन के पिता उसको संस्कृत स्वयं पढ़ाते हैं अंग्रेजी एक पादरी से पढ़वाते हैं। सुशीला ने पति को स्वयं खिलाया, बच्चे को आया से खिलवा दिया।

मौलिक धातु से भी प्रथम प्रेरणा में ही वा प्रत्यय हो जाता है—गाना-गवाना, छाना-छवाना, लजाना-लजवाना, छूना-छुवाना, सीना-सिवाना, बोना-बोवाना, कसना-कसवाना।

पहली प्रेरणा में मूल क्रिया का कर्त्ता कहीं कर्म बनकर को विभक्ति लेता है, कहीं गौण कर्त्ता रहकर तृतीया की से आदि। दूसरा नया कर्त्ता बन जाता है। दूसरी प्रेरणा में सर्वत्र तीसरा कर्त्ता मुख्य रहता है, दूसरे कर्त्ता में सर्वत्र तृतीया की से विभक्ति जुड़ती हैं; जैसे—मोहन सोता है, नौकरानी **मोहन** को सुलाती है; माँ मोहन को नौकरानी से सुलवाती है; मोहन **कहानी** सुनता है, श्याम **मोहन** को **कहानी** सुनाता है, सुरेश मोहन को **श्याम** से कहानी सुनवाता है।

(आ) **नामधातु**—इसमें मूल प्रकृति नाम अर्थात् प्रातिपदिक रहती है। उसमें ही विभिन्न अर्थों में प्रत्यय जोड़कर धातु तैयार किया जाता है; जैसे—

क. शून्य प्रत्यय—डर से डरना, त्याग से त्यागना, लालच से ललचना, दुःख से दुखना, रँग से रँगना, अपना से अपनाना।

ख. आ प्रत्यय—झन-झन से झनझनाना, चक्र से चकराना, लाज से लजाना, तेल से तलना या तेलाना। झूठ से झुठलाना, घिन से घिनाना, लोभ से लुभाना।

ग. इया प्रत्यय—हाथ से हथियाना, बात से बतियाना, लात से लतियाना।

नामधातु संज्ञा शब्द से तो बनता ही है; जैसे डर से डरना; सर्वनाम से भी बनता है; जैसे-अपना से अपनाना और अव्यय से भी जैसे-पीछे से पिछड़ना।

नामधातु से भी प्रेरणार्थक धातु बनता है; जैसे-डरना - डराना, लजाना, लजवाना।

(इ) कर्मकर्तृक - इसमें धातु की मूल प्रेरणा भी हट जाती है, जिससे मूल प्रेरणा का आश्रय मूल कर्त्ता भी हट जाता है। क्रिया कर्म की चेष्टा को कहने लगती है। अतः कर्म ही कर्त्ता बन जाता है। इस प्रकार सकर्मक क्रिया भी अकर्मक बन जाती है और शून्य प्रत्यय के योग से धातु का रूप लघुतर हो जाता है। जैसे–

देख—मोहन ने श्याम को आज नहीं देखा—श्याम आज नहीं दिखा—दिख।
पूज—तुम शिव (देवता) को पूजते हो—वहाँ शिव घर-घर पुजते हैं—पुज।
मना—कार्त्तिक अमावस्या को दीवाली मनाई जाती है—वहाँ घर-घर दीवाली मनती है-मन।इसी भाँति पटा-पट, सधा-सध, धोल-धुल, खोद-खुद पोत-पुत, रोक-रुक सेंक-सिंक, बेंच-बिक, बेध-बिंध, ठोक-ठुंक, खींच-खिच, पाल-पल, डाल-डल, काढ़-कढ़, काट-कठ, जाँच-जँच, ढाल-ढल, फाड़-फट भाँज-भँज, लूट-लुट आदि। पी- पिय, सी- सिय

जैसे प्रातिपदिकों में लिंग, संख्या कारक के भेद से रूपान्तर होता है, वैसे ही धातुओं में भी लिंग वचन संख्या पुरुष काल और वाच्य के भेद से—

लिंग-भेद—राम जाता है— सीता जाती है।
वचन (संख्या)-भेद—लड़का जाता है— लड़के जाते हैं।
पुरुष-भेद—वह जाता है— मैं जाता हूँ, तुम जाते हो।
काल-भेद—लड़का जाता है— लड़का जाएगा।
वाच्य-भेद—लड़का नहीं खाता है—लड़के से नहीं खाया जाता है।

लिंग तथा वचन भेद से रूपान्तर के नियम क्रियाओं में भी प्रायः वे ही हैं जो प्रातिपदिकों में, अर्थात् आकारान्त क्रिया स्त्रीलिंग में ईकारान्त और बहुवचन में एकारान्त हो जाती है—

पुंलिंग एकवचन	पुंलिंग बहुवचन	स्त्रीलिंग
था	थे	थी
आता	आते	आती
आया	आये, आए	आयी, आई
आयेगा, आएगा	आयेंगे, आएँगे	आयेगी, आएगी

ईकारान्त, एकारान्त ऐकारान्त एकवचन के बहुवचन में केवल अनुनासिकता हो जाती है, जैसे—

एकवचन	बहुवचन
थी	थीं
आये, आए	आयें, आएँ
आयेगा आएगा	आयेंगे आएँगे
है	हैं।

काल-कारक-वाचक प्रत्यय

जैसे प्रातिपदिकों से विभिन्न कारकों वचनों को प्रकट करने के लिए विभिन्न-विभक्ति-प्रत्यय किये जाते हैं और उनके योग से उन (प्रातिपदिकों) में विभिन्न रूप-विकार, ठीक वैसे ही धातुओं से भी विभिन्न कालों पुरुषों वचनों तथा कारकों को प्रकट करने के लिए। ये प्रत्यय निम्नलिखित हैं :—

१. शून्य—धातु से किया गया शून्य प्रत्यय भविष्यत् काल में आज्ञा (प्रत्यक्ष विधि) के मध्यम पुरुष एकवचन कर्त्ता को प्रकट करता है, तथा लिंग-भेद से नहीं बदलता—तू पढ़, खा, जा आदि।

२. आ—यह भूतकाल को प्रकट करता है तथा यथावसर कर्त्ता एवं कर्म कारकों और भाव तीनों को कहता है—वह हँसा (कर्त्ता); उस से पढ़ा नहीं गया (कर्म), उससे चला नहीं गया (भाव)। 'आ' प्रत्ययान्त क्रिया लिंग अथवा वचन किसी के बदलने से बदल जाती है; वह चली, वे चले।

३. इये या इए—यह विधि भविष्यत् तथा आदरार्थ कर्त्ता 'आप' को प्रकट करता है, और लिंग-भेद से नहीं बदलता; आप आइये।

४. ऊँ—यह विधि भविष्यत् तथा उत्तम पुरुष एकवचन कर्त्ता को प्रकट करता है; जैसे—मैं पढ़ूँ, चलूँ।

५. ए—यह विधि भविष्यत् में अन्य पुरुष एकवचन तथा संभावना भविष्यत् में अन्य पुरुष और मध्यम पुरुष दोनों के एकवचन कर्त्ताओं को कहता है; वह पढ़े, यदि वह या तू पढ़े।

६. एँ—यह इसी रूप में विधि भविष्यत् में अन्य पुरुष तथा उत्तम पुरुष दोनों के बहुवचन कर्त्ताओं को जताता है—जैसे, वे या हम पढ़ें वे या हम चलें।

७. ओ—यह प्रत्यय विधि भविष्यत् के मध्यम पुरुष बहुवचन कर्त्ता का बोधक है; जैसे-तुम पढ़ो, चलो।

८. ता—यह कर्त्ता मात्र को प्रकट करता है, किसी पुरुष को नहीं, और लिंग वचन भेद से बदलता है। शुद्ध असंयुक्त रूप में यह हेतु-हेतुमद् भूतकाल का बोध कराता है और होना' क्रिया के वर्तमान कालिक रूप से संयुक्त होकर सामान्य वर्तमान तथा भूतकालिक रूप से संयुक्त होकर सामान्य भूत का—जैसे-वह पढ़ता, वे पढ़ते, वह पढ़ती; वह पढ़ता है, वे पढ़ते हैं, वह पढ़ती है; वह पढ़ता था, वे पढ़ते थे, वह पढ़ती थी।

९. गा—यह विधि भविष्यत् के रूपों के बाद जुड़कर सामान्य भविष्यत् का बोधक होता है तथा लिंगवचन-भेद से परिवर्तित होता है। जैसे, वह चलेगा, वह चलेगी, वे चलेंगे आदि।

१०. ना—यह भविष्यत् काल या परोक्ष विधि प्रकट करने वाला प्रत्यय है तथा आवश्यकतानुसार अपना रूप-परिवर्तन करता है; जैसे-वहाँ तुम जाना; वहाँ तुम को जाना है; तुमको सन्तरा खाना है, सन्तरे खाने हैं रोटी खानी है। इससे भाववाचक संज्ञा भी बनती है; जैसे—वहाँ तुम्हारा ही जाना ठीक रहेगा।

स्वरादि प्रत्ययों के योग में धातुओं में कुछ रूप विकार होते हैं; जैसे—

	मूलधातु	आ	स्त्रीप्रत्यय ई	इये	ऊँ	ए	ओ
१.	पढ़	पढ़ा	पढ़ी	पढ़िये	पढ़ूँ	पढ़े	पढ़ो
२.	कर	किया	की	कीजिए	करूँ	करे	करो
३.	खा	खाया	खाई	खाइये	खाऊँ	खाए	खाओ
४.	जा	गया	गई	जाइये	जाऊँ	जाए	जाओ
५.	पी	पिया	पी	पीजिये	पिऊँ	पिये	पियो
					पीऊँ	पीए	पीओ
६.	से	सेया	सेई	सेइये	सेऊँ	सेए	सेओ
७.	दे	दिया	दी	दीजिए	दूँ	दे	दो
८.	ले	लिया	ली	लीजिए	लूँ	ले	लो
९.	सो	सोया	सोई	सोइये	सोऊँ	सोए	सोओ
१०.	हो	हुआ	हुई	होइये	होऊँ	होए	होओ, हो

इन प्रत्ययों के अतिरिक्त 'हो' धातु के कुछ कालों के रूप भी सह प्रयुक्त होकर अन्य धातुओं के काल विशेष के रूप बनाने में सहायक होते हैं।

हो

१ वर्तमान काल

	एकवचन	बहुवचन
अन्य या प्रथम पुरुष	(वह) है	(वे) हैं
मध्यम पुरुष	(तू) है	(तुम) हो
उत्तम पुरुष	(मैं) हूँ	(हम) हैं

२. भूतकाल

अन्य या प्रथम पुरुष	था	थे
मध्यम पुरुष	था	थे
उत्तम पुरुष	था	थे

३. सामान्य भविष्यत्

अन्य या प्रथम पुरुष	होगा	होंगे
मध्यम पुरुष	होगा	होगे, होओगे
उत्तम पुरुष	होऊँगा, हूँगा	होंगे

४. संभावना भविष्यत् या विधि

अन्य या प्रथम पुरुष	हो	हों
मध्यम पुरुष	हो	हो
उत्तम पुरुष	होऊँ	हों

५. हेतुहेतुमद् भविष्यत्

अन्य या प्रथम पुरुष	होता	होते
मध्यम पुरुष	होता	होते
उत्तम पुरुष	होता	होते

काल का अर्थ है समय। क्रिया की दृष्टि से काल यह बताता है कि क्रिया के घटित होने का समय क्या है। जिस काल में प्रस्तुत क्रिया हो रही है उसे वर्तमान, जिसमें हो चुकी है उसे भूत तथा जिसमें अभी होगी उसे भविष्य या भविष्यत् कहते हैं। वक्ता की दृष्टि से उसके कथन का समय वर्तमान, बीता समय भूत तथा आनेवाला समय भविष्य कहा जाता है। इनके निम्नलिखित भेद, प्रभेद हैं :

१. निश्चित सामान्य वर्तमान— यह मुख्य क्रिया के वर्तमानकालिक 'ता' प्रत्ययान्त रूप से बनता है, साथ ही इसमें 'हो' धातु के वर्तमान कालिक रूप का योग भी रहता है।

	पुं०	स्त्री०	पुं०	स्त्री०
प्रथमपुरुष	वह आता है।	वह आती है।	वे आते हैं।	वे आती हैं।
मध्यम पुरुष	तू आता है।	तू आती है।	तुम आते हो।	तुम आती हो।
उत्तम पुरुष	मैं आता हूँ।	मैं आती हूँ।	हम आते हैं।	हम आती हैं।

यह क्रिया-रूप प्रस्तुत क्रिया का वक्ता के कथन के समय घटित होना अथवा कर्त्ता का यह क्रिया करने का स्वभाव, क्षमता आदि प्रकट करता है। जैसे— राम घर जाता है। सूर्य भी अपनी धुरी पर घूमता है। राम अच्छा खेलता है। निषेधार्थक अव्यय 'नहीं' के जुड़ने पर हो' धातु का प्रयोग छोड़ देना अधिक सुन्दर माना जाता है; ऐसी स्थिति में स्त्रीलिंग बहुवचन चिन्ह् अन्तिम स्वर की अनुनासिकता 'हैं' के हट जाने से 'आती' पर आ जाती है। वे यहाँ नहीं आती हैं। वे यहाँ नहीं आतीं।

२. निश्चित तात्कालिक वर्तमान— यह मुख्य क्रिया के शून्य प्रत्ययान्त रूप में 'रह' धातु के भूत कालिक 'आ' प्रत्ययान्त रूप के योग से बनता है। इसके बाद 'हो' धातु के वर्तमान कालिक रूप का प्रयोग अनिवार्य रहता है। इससे वर्तमान की अपूर्णता अर्थात् क्रिया की तात्कालिकता व्यक्त होती है :—

	एकवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वह आ रहा है	वे आ रहे हैं
मध्यम पुरुष	तू आ रहा है	तुम आ रहे हो
उत्तम पुरुष	मैं आ रहा हूँ	हम आ रहे हैं।

३ संदिग्ध सामान्य वर्तमान —जब वर्तमान काल की क्रिया वक्ता के सामने नहीं, कहीं परोक्ष में घट रही होती है, जिसे वह देख नहीं रहा, केवल उसके घटित होने का अटकल लगा रहा है, तब संदिग्ध सामान्य वर्तमान काल होता है। इसमें मुख्य धातु तो सामान्य वर्तमान कालिक रूप में (ता' प्रत्ययान्त) रहता है पर सहायक 'हो' धातु सामान्य भविष्यत् में चला जाता है, जैसे—

	एकबचन	बहुवचन
प्रथम या अन्य	वह आता होगा।	वे आते होंगे।
मध्यम पुरुष	तू आता होगा।	तुम आते होगे (होओगे)।
उत्तम पुरुष	मैं आता हूँगा (होऊँगा)।	हम आते होंगे।

४. संदिग्ध तात्कालिक वर्तमान—इसमें मुख्य क्रिया तात्कालिक वर्तमान रूप (शून्य प्रत्ययान्त मुख्य धातु के बाद प्रयुक्त रह धातु के भूतकालिक 'आ' प्रत्ययान्त रूप) में रहती है, और 'हो' धातु सामान्य भविष्यत् में। इसमें भी पूर्ववत् क्रिया की वर्तमानता का संदेह व्यक्त किया जाता है।

	एकवचन	वहुवचन
प्रथम पुरुष	वह आ रहा होगा।	वे आ रहे होंगे।
मध्यम पुरुष	तू आ रहा होगा।	तुम आ रहे होगे (होओगे)।
उत्तम पुरुष	मैं आ रहा हूँगा (होऊँगा)।	हम आ रहे होंगे।

ये दोनों क्रियाएँ संदिग्ध सामान्य तथा तात्कालिक भूत में भी आती है। वह जरूर रात में भी पढ़ता या पढ़ रहा होगा, तभी तो प्रथम आया।

५. संभाव्य सामान्य वर्तमान—इसमें मुख्य क्रिया सामान्य वर्तमान की और सहायक 'हो' क्रिया संभाव्य भविष्यत् की आकृति में रहती है। इससे सामान्य वर्तमान की संभावना प्रकट की जाती है, जैसे, संभव है (अथवा यदि) 'वह आता हो'। संदिग्ध से संभाव्य रूप कुछ अधिक निषेधात्मक या कम निश्चयात्मक होता है।

६. संभाव्य तात्कालिक वर्तमान—इसमें मुख्य क्रिया तात्कालिक वर्तमान के रूप में और सहायक 'होना' क्रिया संभाव्य भविष्यत् के रूप में आती है। यह क्रिया की तात्कालिक वर्तमानता की संभावना सूचित करता है; जैसे, संभव हैं (अथवा यदि) 'वह आ रहा हो'।

७. सामान्य भूत से प्रस्तुत किया की सामान्य अतीतता, समाप्ति सूचित होती है। यह मुख्य क्रिया में भूतकालिक 'आ' के योग से वनता है, जैसे

	एकवचन	वहुवचन
प्रथम पुरुष	वह आया	वे आये
मध्यम पुरुष	तू आया	तुम आये
उत्तम पुरुष	मैं आया	हम आये

८. आसन्न भूत—यह सूचित करता है कि प्रस्तुत क्रिया निकट अतीत में ही समाप्त हुई है, पर उसका प्रभाव अभी सर्वथा समाप्त नहीं हुआ है, वर्तमान है। सामान्य भूत के रूप में 'होना' क्रिया के वर्त्तमानकालिक रूप के योग से इसकी निष्पत्ति होती है; जैसे—वह आया है। इसे कुछ लोग पूर्ण वर्तमान भी कहते हैं।

९. पूर्णभूत—यह प्रस्तुत क्रिया की ऐसी समाप्ति दिखाता है, जिसका प्रभाव अब शेष नहीं रहा है। प्रस्तुत क्रिया के सामान्य भूत के ही रूप में 'होना' के भी भूतकालिक रूप के योग से यह काल वनता है; जैसे—'वह आया था'।

१०. संभाव्य भूत—यह मुख्य क्रिया के सामान्य भूत के रूप में सहायक 'होना' क्रिया के संभाव्य भविष्यत् के रूप के योग से तैयार होता है और प्रस्तुत क्रिया के अतीत में ही घटित हो जाने की संभावना व्यक्त करता है; जैसे—संभव है (या यदि) वह आया हो।

११. संदिग्ध भूत- यह मुख्य क्रिया के सामान्य भूत के रूप में सहायक 'होना' क्रिया के सामान्य भविष्यत् के रूप के योग से सिद्ध होता है; जैसे—वह आया होगा।

१२. हेतुहेतुमत् पूर्णभूत—यह मुख्य क्रिया के सामान्यभूतकालिक रूप के साथ 'होना' के हेतुहेतुमद् भविष्यत् वाले रूप के योग से बनता है और प्रकट करता है कि इस क्रिया के नहीं घटित हो पाने के कारण, उस पर अवलम्बित एक दूसरी क्रिया भी नहीं घटित हो पाई; जैसे :—यदि वह आया होता।

इसके साथ सदा एक दूसरा वाक्य जुटा रहता है, जो 'तो' से आरम्भ होता है। 'यदि' से युक्त वाक्य हेतु प्रकट करता है और 'तो' से युक्त वाक्य उसका हेतुमान् अर्थात फल; जैसे—यदि वह आया होता, तो मुझ से अवश्य मिला होता। यदि उसने परिश्रम किया होता, तो (वह) अवश्य उत्तीर्ण हुआ होता। इसे लोग पूर्ण संकेतार्थ भी कहते हैं।

१३. अपूर्ण सामान्य भूत—यह मुख्य क्रिया के सामान्य वर्तमानकालिक रूप में सहायक क्रिया के भूतकालिक रूप के योग से बनता है और भूतकाल में क्रिया की अपूर्णता अथवा कर्त्ता का स्वभाव व्यक्त करता है; जैसे—वह आता था।

१४ अपूर्ण तात्कालिक भूत—इसमें प्रस्तुत क्रिया के तात्कालिक वर्तमान के रूप से 'होना' के सामान्य भूतकालिक रूप का योग रहता है। यह प्रस्तुत क्रिया की अतीत में तात्कालिकता सूचित करता है; जैसे—वह आ रहा था।

१५. हेतुहेतुमद् अपूर्ण भूत—मुख्य तथा सहायक दोनों क्रियाओं के सामान्य वर्तमानकालिक ('ता' प्रत्ययान्त) रूप में रहने पर इसकी अभिव्यक्ति होती है। इससे यह प्रकट होता है कि अतीत में यह क्रिया नहीं होती थी, अतः उस पर अवलम्बित दूसरी क्रिया भी नहीं होती थी; जैसे—यदि वह आता होता, तो जरूर कुछ आवाज सुनाई पड़ती होती। यदि वह पढ़ता रहता, तो (वह) अवश्य उत्तीर्ण होता रहता। इसे ही कोई-कोई अपूर्ण संकेतार्थ कहते हैं। यहाँ 'यदि वह आ रहा होता', 'आता रहता' भी प्रायः इसके समानार्थक ही हैं।

१३. विधि या संभावना भविष्यत्—जिस रूप से प्रस्तुत क्रिया की आज्ञा (विधि, प्रार्थना आदि) दी जाय, उसे विधि भविष्यत् कहते हैं। इसके दो

भेद किये जाते हैं, 'तू आ' को प्रत्यक्ष विधि कहते हैं, 'तू आना' को परोक्ष। पर यह अन्तर केवल मध्यम पुरूष एकवचन के लिये ही है, शेष ८ स्थानों में दोनों के लिये एक ही रूप है। बल्कि संभावना भविष्यत् में भी बिलकुल ये ही रूप हैं, इसमें भी केवल मध्यम पुरूष एकवचन में ही रूप-भेद होता है। विधि का रूप है 'तू चल', संभावना का 'तू चले'; जैसे—

प्रथम पुरुष - वह जाए (जाये, जावे, जाय)। वे जाएँ (जायें, जावें, जायँ)।
मध्यम पुरूष—तू जा (जाए, जाये, जावे, जाय)। तुम जाओ।
उत्तम पुरुष—मैं जाऊँ। हम जाएँ (जायें, जावें, जायँ)।

विधि में उपर्युक्त दो के अतिरिक्त और भी दो भेद हैं, इस प्रकार विधि के निम्नलिखित चार भेद हो जाते हैं :—

१. सामान्य प्रत्यक्ष विधि—तू चल।
२. आदरार्थक प्रत्यक्ष विधि—आप चलिये।
३. सामान्य परोक्ष विधि—तू चलना।
४. आदरार्थक परोक्ष विधि—आप चलियेगा।

सामान्य भविष्यत् काल का प्रयोग परोक्ष विधि के रूप में प्रत्येक पुरुष तथा वचन में होता है; जैसे—जरा एक गिलास पानी पिलाओगे, मोहन को कह दो कि वह आज कार्यालय एक घण्टा पहले आ जायेगा। शेष भेद केवल मध्यम पुरुष एकवचन के लिए हैं।

१७. हेतुहेतुमद् भविष्यत्—जहाँ भविष्य में एक क्रिया के नहीं होने से दूसरी क्रिया का भी नहीं होना सूचित किया जाता है, वहाँ उन दोनों में हेतुहेतु-मद् भविष्यत् काल का प्रयोग होता है। ऐसी स्थिति में क्रिया वर्तमानकालिक 'ता' प्रत्ययान्त रहती है, और किसी सहायक क्रिया का अनुप्रयोग नहीं होता है; जैसे—यदि वह पढ़ता तो उत्तीर्ण होता। यह प्रयोग हेतुहेतुमद् भविष्यत् की भाँति हेतुहेतुमत् सामान्य भूत में भी ज्यों-का-त्यों होता है। इस प्रकार, यह एक ही रूप में प्रसंगवश निम्नलिखित दो अर्थों (कालों) का बोधक होता है; जैसे:— (१) यदि वह पढ़ेगा तो उत्तीर्ण होगा, पर वह पढ़ेगा नहीं। (२) उसने नहीं पढ़ा अतः (वह) उत्तीर्ण नहीं हुआ। हेतुहेतुमद् भविष्यत् की क्रिया दो क्रियाओं की अतीत में पुनः पुनः समकालिकता मात्र भी सूचित करती हैं; जैसे—"जब मैं रात में घर लौटता तब वह" (१) सोता, (२) सो रहा होता, (३) सोता होता, (४) सोता रहता, (५) सोया होता, (६) सोया रहता।

(१८) सामान्य भविष्यत्—इससे क्रिया का भविष्यत् में होना बताया जाता है। संभाव्य भविष्यत् के रूप में 'गा' प्रत्यय का योग कर यह काल प्रकट किया जाता है; जैसे—

	एकवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	वह पढ़ेगा	वे पढ़ेंगे
मध्यम पुरुष	तू पढ़ेगा	तुम पढ़ोगे
उत्तम पुरुष	मैं पढ़ूँगा	हम पढ़ेंगे

आसन्न भविष्यत् काल में क्रिया की शीघ्रता प्रकट करने के लिये तीन रूपों का प्रयोग होता है—

मोहन, 'एक गिलास पानी लाओ। उत्तर—

	प्रयोग	अर्थ
आसन्न भविष्यत् में सामान्य वर्तमान—	लाता हूँ =	शीघ्र लाऊँगा।
आसन्नतर भविष्यत् में तात्कालिक वर्तमान—	ला रहा हूँ =	शीघ्रतर लाऊँगा।
आसन्नतम भविष्यत् में सामान्य भूत—	लाया =	शीघ्रतम लाऊँगा।

मुख्य धातु से 'ना' प्रत्यय कर सामान्य क्रिया 'होना' के योग से भी निम्नलिखित क्रियाएँ बनाई जाती हैं; जैसे :—

मोहन को पढ़ना है	आवश्यक आसन्न भविष्यत्
,, ,, हो	,, संभाव्य ,,
,, ,, होता	, भविष्यार्थक हेतुहेतुमद्भूत
,, ,, होगा	,, सामान्य भविष्यत्
,, ,, था	,, भविष्यार्थक सामान्य भूत
,, ,, चाहिये	औचित्यार्थक भविष्यत्
,, ,, चाहिये था	,, भूत

विभिन्न सहायक क्रियाओं के सहयोग से मुख्य क्रिया में और भी कई अर्थों की अभिव्यंजना होती है; जैसे—

सातत्य—वह पढ़ता होता है; पढ़ता रहता है, पढ़ता आ रहा है, पढ़ा करता है।

पूर्णता—वह पढ़ चुका है, पढ़ गया है, उसने पढ़ डाला है।

सहायक क्रियाओं की समृद्धि में हिन्दी, संस्कृत ही नहीं, अँगरेजी आदि

अन्य अनेक भाषाओं से भी आगे बढ़ी है। एक-एक संयुक्त क्रियापद में चार-चार

क्रियाएँ गुथीं रहती हैं, जैसे—सभी पुस्तिकाएँ अब तक **जाँची जा चुकी होंगी।** अब तक उनको यहाँ **आ जाना चाहिये था,** प्रतिदिन सब यथास्थान **रख देना पड़ता है** आदि। पढ़ गया, पढ़ डाला, पढ़ लिया, पढ़ दिया, पढ़ उठा आदि का अन्तर प्रयोग-प्रवाह से ही सीखा जा सकता है।

अर्थ, अवस्था, प्रकार या दशा

कथन-प्रकार की दृष्टि से क्रिया की तीन श्रेणियाँ हो सकती हैं।

१. सूचनार्थक—सूचनार्थक क्रिया किसी घटना का कालविशेष में होना या न होना सूचित करती है। इसे साधारण या निश्चयार्थक भी कह सकते हैं। यह विधानार्थक भी हो सकती है; जैसे वह जाता है; निषेधार्थक भी; जैसे—वह नहीं जाता है; प्रश्नार्थक भी; जैसे—क्या वह जाता है? ऐसी क्रियाएँ तीनों कालों में होती हैं।

२. आज्ञार्थक—इससे आज्ञा, अनुमति, उपदेश, प्रार्थना, विनती, इच्छा, निमन्त्रण आदि प्रकट होते हैं; जैसे—तुम जाओ, प्रतिदिन प्रातःकाल भ्रमण करो, कृपा कर एक सहायता करो, हे भगवान मुझे बचाओ, आप इस समारोह में अवश्य पधारें आदि। यह क्रिया केवल आज्ञार्थक या विध्यर्थक भविष्यत् में रहती है। यह भी विधानार्थक की भाँति निषेधार्थक हो सकती है; जैसे—कृपया मेरे यहाँ न आएँ। यह प्रश्नार्थक नहीं हो सकती।

३. संभावनार्थक—हेतुहेतुमद्भाव, संभावना तथा संदेह प्रकट करने-वाली क्रियाएँ इसी कोटि की होती हैं। इन्हें संकेतार्थ, संभावनार्थ तथा संदेहार्थ तीन भिन्न श्रेणियाँ भी मान सकते हैं।

वाच्य

प्रस्तुत क्रिया का वाच्य कौन है, क्रिया किसकी चेष्टा को कह रही है, इस दृष्टि से क्रिया के निम्नलिखित छह विभाग होते हैं :—

१. कर्तृप्रधान कर्तृवाच्य—ऐसी क्रिया के कर्त्ता में प्रथमा की शून्य विभक्ति होती है; जैसे—वह पढ़ता है, तुम पढ़ती हो, मैं पढ़ता हूँ आदि। ऐसे वाक्य में क्रिया कर्त्ता की ही चेष्टा को कहती है, क्रिया का वाच्य भी कर्त्ता रहता है और वाक्य में प्रधानता भी कर्त्ता की ही रहती है। यह क्रिया सदा कर्त्ता के लिंग, पुरुष, वचन में रहती है। यह तीनों कालों में होती है।

२. कर्मप्रधान कर्तृवाच्य—ऐसी क्रिया के कर्त्ता के साथ तृतीया का ने चिह्न रहता है तथा कर्म के साथ प्रथमा का शून्य। यह क्रिया मुख्य धातु में भूत-

कालिक 'आ' प्रत्यय के योग से बनती है; जैसे—उसने, तुमने, आपने इतिहास पढ़ा, गीता पढ़ी, तीन बाघ देखे आदि। ऐसा केवल तब होता है, जब कोई सकर्मक क्रिया केवल भूतकाल के ही सामान्य भूत, पूर्ण भूत, आसन्न भूत, संदिग्ध भूत, संभाव्यभूत और हेतुहेतुमद्भूत इन भेदों में से किसी एक में रहती है, और उसका कर्म कोई निर्जीव अथवा अमानव प्राणी रहता है। ऐसी क्रिया कर्म के लिंग, पुरुष, वचन का अनुसरण करती है। ऐसे वाक्य में क्रिया तो कर्त्ता की ही चेष्टा को कहती है, पर वाक्य में प्रधानता कर्म की हो जाती है।

३. भावप्रधान कर्तृवाच्य—इस क्रिया के कर्त्ता के साथ 'ने' चिह्न तो रहता है, किन्तु कर्म के साथ भी 'को' चिह्न लगा रहता है। पूर्वोक्त स्थलों में ही जब कर्म उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष अथवा कोई मानव प्राणी रहता है, विशेषतः कोई व्यक्तिवाचक या संबन्धवाचक, तब यह स्थिति होती है; जैसे—तुमने या मैंने मुझको, तुमको, सीता को, भैया को, या प्राचार्य को वहाँ नहीं देखा। भाव का अर्थ है क्रिया। चूँकि यह क्रिया आत्मप्रधान होती है और क्रिया का अपना कोई लिंग. पुरुष, वचन नहीं होता, (वह वाक्य में प्रधान संज्ञा या सर्वनाम ही के लिंग, पुरुष, वचन का अनुसरण मात्र करती है), अतः यह सदा सामान्य लिंग, पुरुष, वचन अर्थात् पुलिंग अन्यपुरुष एकवचन में रहती है।

ऐसे वाक्य में भी क्रिया कर्त्ता की ही चेष्टा को कहती है, किन्तु वाक्य में प्रधानता न कर्त्ता की हो पाती है, न कर्म की, भाव अर्थात् क्रिया की अपनी ही रह जाती है।

४. कर्मप्रधान कर्मवाच्य—जो क्रिया कर्म की चेष्टा को कहती है, अर्थात् जिस क्रिया का वाच्य कर्म रहता है और वाक्य में प्रधानता भी कर्म की ही रहती है, वह कर्मप्रधान कर्मवाच्य कही जाती है। ऐसी क्रिया सदा भूतकालिक 'आ' प्रत्ययान्त बनी रहती है और उस के सभी कालों का बोधन अनुप्रयुक्त सहायक क्रिया 'जाना' से किया जाता है। ऐसी स्थिति में कर्म में प्रथमा की शून्य विभक्ति जुटती है तथा कर्त्ता में तृतीया की 'से' या 'के द्वारा'। जहाँ क्रिया से कर्म की ही चेष्टा प्रकट करनी होती है, कर्त्ता की चेष्टा की चर्चा ही नहीं करनी होती या वह गौण रहती है, वहाँ इस क्रिया का प्रयोग किया जाता है; जैसे—यहाँ हिरण भी देखे गये हैं, यह नहीं खाया जाएगा, सुशीला से यह कैसे देखा जाएगा? मुझ से वह अप्रतिष्ठा नहीं देखी जाती, उससे यह नहीं सुना गया, आदि।

५. भावप्रधान कर्मवाच्य—उपर्युक्त स्थिति में ही जब कर्म कोई व्यक्ति-वाचक अथवा संबन्धवाचक संज्ञा अथवा उत्तम पुरुष या मध्यम पुरुष सर्वनाम रहता

है, तब कर्म के साथ 'को' का प्रयोग ऐच्छिक रूप से किया जाता है। ऐसी स्थिति में (कर्म के साथ 'को' का प्रयोग रहने पर) कर्त्ता का प्रयोग प्रायः नहीं होता है। यहाँ भी चूँकि क्रिया प्रधान हो जाती है, अतः वह सदा पुंलिग अन्यपुरुष एक वचन में स्थिर रहती है; जैसे—वहाँ न **तुम को** बुलाया गया, न **मुझ को**, **सावित्री को** बुलाया गया, सब लड़कों को बुलाया गया (वहाँ न तुम बुलाये गये, न मैं, सावित्री बुलाई गई, सब लड़के बुलाये गये)।

६. भावप्रधान भाववाच्य—जब क्रिया को कोई कर्म नहीं रहता और वह कर्त्ता की चेष्टा को भी नहीं कहती है, तब वह आत्मप्रधान होकर सदा पुंलिग अन्यपुरुष एकवचन हो जाती है। इसका निर्माण भी कर्मवाच्य की क्रिया की भांति ही होता है; जैसे—ऐसे अवसर पर हँसा नहीं, चुप रहा जाता है, विचारे से सोया भी नहीं जाता था, स्टेशन पर तो विशेष रूप से सावधान रहा जाता है, दस बजे के बाद सोया जायगा, कब चला जायगा? आया जाय। यहाँ कर्म तो रहता ही नहीं, कर्त्ता यदि रहता है, तो उससे तृतीया की 'से' विभक्ति जुटती है; जैसे मुझ से चुप नहीं रहा गया। उस से न हँसा जाता था, न रोया।

असमापिका क्रियाएँ

उपर्युक्त सारी क्रियाएँ समापिका कहलाती हैं, अर्थात् इनसे एक वाक्य समाप्त हो जाता है। क्रियाओं की इनसे भिन्न भी तीन श्रेणियाँ होती हैं, जो असमापिका कहलाती हैं। इनसे कोई वाक्य समाप्त नहीं होता। उनमें से दो की विशेषता यह होती है कि ये भावप्रधान या आत्मप्रधान तथा काल, पुरुष, लिंग, वचन, कारक के बन्धन से सर्वथा मुक्त सदा एकरूप अव्यय बनी रहती हैं, इनके ये भेद हैं—

१. पूर्वकालिक—पूर्वकालिक क्रिया यह प्रकट करती है कि इसके बाद एक क्रिया और है, प्रस्तुत क्रिया उस समापिका मुख्य क्रिया के पूर्व घटित होती है। पूर्वकालिकता प्रकट करने के लिये धातु से (क) ० शून्य (ख) 'के' (ग) 'कर' या (घ) 'करके' इन चारों में से एक प्रत्यय करते हैं, जैसे—

देख—मोहन यह **देख** हँसने लगा, देखकर (या **देखके**)।

कर—तुम यह काम **करके** आओ, वह अपना काम कर (**करके**) चला गया।

ले—वह अपने पैसे ले (**लेकर या ले करके**) चला गया।

२. निमित्तवाचक—यह क्रिया मुख्य क्रिया का निमित्त या प्रयोजन बताती है, अतः उत्तरकालिक कही जा सकती है। इसमें 'ना' प्रत्यय जुड़ता है। यह इतने रूपों में मिलती है :—

(क) शुद्ध 'ना' प्रत्ययान्त रूप में; जैसे—वह **पढ़ना** जानता है, चाहता है, शुरू करता है, आदि।

(ख) 'को' तथा 'के लिए' के योग से 'ना' के विकृत होने के कारण 'ने' इस रूप में :—वह **जाने को** कहता है, **रहने के लिए** उद्यत है, गाड़ी **छूटने को** है।

(ग) 'को' तथा 'के लिए' के गुप्त रहने पर भी विकृत 'ने' के रूप में :—वह **खेलने** जाता है, **रोने** लगता है, **जाने** देता है आदि।

(घ) लुप्त 'ना' प्रत्ययान्त रूप में :—**पढ़** सकता है, **कह** पाता है।

३. तीसरी क्रिया धातु के वर्तमानकालिक 'ता' प्रत्ययान्त रूप में 'हुआ' के अनुप्रयोग से बनती हैं। यह समापिका की समकालिक होती है तथा लिंग और वचन से बदलती है; जैसे—सुरेन्द्र **रोता हुआ** क्यों जा रहा है, सुनीता **रोती हुई** क्यों जा रही थी, तुम **रोते हुए** मत जाओ।

किन्तु यह अव्ययरूप में भी मिलती है; जैसे—मोहन, या गीता या लड़कों ने **रोते हुए** कहा।

क्रियार्थक संज्ञा

इसी 'ना' प्रत्यय के योग से क्रियाबोधक शब्द भी बनते हैं; जैसे—'पढ़' धातु और पढ़ना क्रिया, लिख धातु और लिखना क्रिया और इसी से क्रियार्थक संज्ञा भी बनती है, जिससे आकारान्त तद्भव संज्ञा की भाँति सभी विभक्तियाँ जुड़ती हैं; किन्तु यह भाववाचक संज्ञा कभी बहुवचन में नहीं रहती; जैसे—नकुल—नेवला, शुक—सूगा, वाद्य—बाजा, वैसे ही पठन—पढ़ना, खेलन—खेलना आदि।

प्रथमा—**खेलना** अच्छा लगता है—प्रातः **टहलना** आवश्यक है।

द्वितीया—मैंने नरेन्द्र का **खेलना** कभी नहीं देखा, **रोना** नहीं सुना।

तृतीया—**दौड़ने से** अच्छा व्यायाम हो जाता है। **लिखने से** बात स्पष्ट होगी।

चतुर्थी—वे वहाँ **ठहरने के लिए** एक घर ढूँढ़ रहे हैं। मच्छड़ को **भगाने के लिए** सब से अच्छा उपाय धुँआ करना है।

पंचमी—तुम वहाँ **जाने से** क्यों भागते हो या डरते हो ?

षष्ठी—मोहन के यह **कहने का** कुछ विशेष तात्पर्य है।

सप्तमी—वहाँ **जाने में** क्या रखा है। **पहुँचने पर** क्या होगा ?

यौगिक या संयुक्त क्रियाएँ

बनावट की दृष्टि से जिस प्रकार धातु के दो भेद होते है, रूढ़ (जैसे—**पढ़ना, खाना**) और यौगिक (जैसे **पढ़ाना, खिलाना**) (प्रेरणार्थक) तथा **त्यागना** (नामधातु); उसी प्रकार क्रिया के भी तीन भेद होते हैं :—(क) मौलिक या एकात्मक (जैसे **पढ़े, पढ़ो, पढ़ूँ** या यदि वह **पढ़ता, पढ़ा** आदि) (ख) यौगिक तथा (ग संयुक्त ।

जो क्रिया मूल क्रिया के साथ केवल 'होना' क्रिया के योग से बनाई जाती है, उसे यौगिक कहते हैं, जैसे—पढ़ता है, पढ़ा है, पढ़ता था आदि । यहाँ 'होना' को सहयोगी या अंगीभूत क्रिया कह सकते हैं ।

संयुक्त क्रियाएँ वे हैं, जिनमें मूल क्रिया के साथ होना (है) क्रिया के अतिरिक्त किसी और भी क्रिया का संयोग रहता है; जैसे—'पढ़ता रहता है' । ये क्रियाएँ होना से इस दृष्टि से भिन्न हैं कि (क) 'होना' शुद्ध सत्ता अर्थवाला है, जो प्रत्येक वस्तु तथा क्रिया का धर्म है, और (ख) सहायक 'होना' क्रिया के योग से मुख्य क्रिया के अर्थ में कोई वृद्धि नहीं होती, (ग) इससे केवल काल-भेद विशेष का बोध होता है। शेष क्रियाएँ मुख्य क्रिया के अर्थ में कुछ वृद्धि कर देती हैं और काल-निर्माण में इनसे कोई सहायता नहीं मिलती । ये सहायक या संयोगी क्रियाएँ प्रायः ये हैं—सकना, होना (होता है), रहना, चुकना, जाना, चलना, आना, देना, लेना, पाना, लगना, चाहना, करना, बनना, उठना, बैठना, पड़ना, डालना ।

एकात्मक क्रिया मूल शब्द की भाँति होती है, यौगिक क्रिया प्रत्ययान्त शब्द की भाँति और संयुक्त क्रिया सामासिक शब्द की भाँति । पूर्वपद की रचना की दृष्टि से संयुक्त क्रियाएँ निम्नलिखित प्रकार की होती हैं :—

१. वर्त्तमानकालिक कृत् ता प्रत्ययान्त विकारी (विशेषणात्मक) क्रिया पूर्वपद वाली—विभाकर संस्कृत **पढ़ता रहेगा**, अमृता संस्कृत **पढ़ती आई है**, संजीव और राजीव संस्कृत **पढ़ते जाएँगे** (नित्यार्थक), प्रेम कुमार यह कहकर **चलता हुआ** या **चलता बना** (निश्चयार्थक) ।

२. ता प्रत्ययान्त अविकारी (अव्ययात्मक) क्रिया पूर्वपद वाली— इस पर तो मुझे न कुछ **कहते बनता है**, न चुप रहते (पराधीनता), सुशीला से न **हँसते बनता** था, न रोते (शक्ति), वह भीड़ **देखते ही बनती** थी (आश्चर्य) ।

३. भूतकालिक कृत् आ प्रत्ययान्त विकारी क्रिया पूर्वपद वाली—प्रभाकर हिन्दी **पढ़ा करता है** (अभ्यासार्थक), दुर्गन्ध से नाक **फटी जा रही थी**, तुम दुबले क्यों **हुए जा रहे हो** (तत्परता), सुधाकर **चला गया** (निश्चय) ।

४. अविकारी आ प्रत्ययान्त क्रिया पूर्वपद वाली—**गालियाँ दिए जाती थी, सब खाए जा रहा है, कहे जाओ** (निरन्तरता)। **चेताये देता हूँ**, चिन्ता **मारे डाल रही** है।

५. शून्य प्रत्ययान्त मुख्य क्रिया वाली—वह **हँस उठा**, वे **चढ़ बैठे** (आकस्मिकता), जूही **खिल गई**, बिल्ली दूध **पी गई**, बाद में **सुन लोगे**, मैंने **छोड़ दिया**, तुम्हें क्या **जान पड़ा**? यह क्या कर **डाला**, वे **सो** रहे **हैं**, मैं उसे **रोक रखूँगा**, आँसू वह **निकले**, तुम **जा सकती हो**, वे सब खा **चुके**?

६. ना प्रत्ययान्त विकारी क्रिया पूर्वपद वाली—सन्तरा **खाना पड़ता है**, सन्तरे **खाने पड़ते** हैं, नारंगियाँ खानी पड़ती हैं। रोटियाँ खानी हैं या **चाहिए**।

७. ना प्रत्ययान्त अविकारी क्रिया पूर्वपद वाली—निर्मला **जाने** लगी, लड़के **रोने** लगे, उनको अभी **सोने दें**, **मैं** कुछ **खाने पाऊँगा** (या खा पाऊँगा) या नहीं?

८. प्रातिपदिक पूर्वपद वाली—मैं यह **स्वीकार करता** हूँ, आपको क्षमा करता हूँ, अब नाटक **आरम्भ होगा**, वह स्मरण है? वह **दिखाई नहीं देगा**, **सुनाई पड़ेगा**।

९. सजातीय क्रिया पूर्वपद वाली—कहाँ **खाते-पीते** हो, इस से कुछ नहीं **होता-हवाता**, क्यों **रो-धो** रहे हो?

अभ्यास

१. धातु और क्रिया का अन्तर बतावें। 'राजीव पढ़ता है'—इस वाक्य में क्रिया क्या है और धातु क्या?

२. सकर्मक-अकर्मक की पहचान क्या है? निम्नलिखित क्रियाओं में सकर्मक-अकर्मक पहचानें :—
तुम क्यों रोते हो? वह क्या गाता है? कौन खाँसता है? संजीव कब जगेगा? क्या सोचेगा?

३. मुख्य और सहायक क्रियाओं का अन्तर बता कर प्रत्येक के दो-दो उदाहरण दें।

४. इन के प्रेरणार्थक रूपों से वाक्य बनावें :—
खीझना, पीटना, सकना, झुकना, रोना, होना, बोना।

५. कर्मकर्तृक क्रिया से आप क्या समझते हैं? 'बाँटना' के कर्मकर्तृक रूप का अपने वाच्य में प्रयोग करें।

६. उदाहरण द्वारा संदिग्ध तात्कालिक वर्त्तमान और संभाव्य तात्कालिक वर्त्तमान का अन्तर बतावें।

अध्याय ११

अव्यय

अव्यय उसे कहते हैं जिसमें कोई व्यय अर्थात् विकार नहीं होता हो। अव्यय शब्दों में वचन अथवा लिंग के कारण कोई रूपान्तर नहीं होता। सारी विभक्तियाँ भी नहीं आतीं, कुछ शब्दों से कुछ विभक्तियाँ भले ही आ जाएँ; जैसे—यहाँ से, जहाँ का, कहाँ पर, वहाँ के लिये, बाहर की ओर, साथ के लिए, साथ में। वाक्य में संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया और विशेषण ही मुख्य शब्द होते हैं; अव्यय केवल सहायक शब्दों का कार्य करते हैं। इनके चार मुख्य भेद किये जा सकते हैं—

(१) क्रिया-विशेषण, (२) संबन्धबोधक, (३) समुच्चयादिबोधक, (४) विस्मयादिबोधक।

क्रिया-विशेषण

शब्द के अनुसार तो क्रिया विशेषण केवल उन्हीं को कहना चाहिए जो क्रिया की विशेषता बताते हैं, पर व्यवहार में संज्ञा और सर्वनाम से भिन्न सभी शब्दों अर्थात् विशेषण, क्रिया-विशेषण, संबन्धबोधक, समुच्चयादिबोधक सबके विशेषण को क्रिया-विशेषण कह देते हैं। अंग्रेजी में इन्हें 'ऐडभर्ब' कहते हैं। वास्तव में विशेषण के विशेषण को प्रविशेषण, क्रिया के विशेषण को क्रिया-विशेषण तथा शेष को अव्यय विशेषण कहना चाहिये।

अर्थ की दृष्टि से इसके मुख्यतः चार प्रभेद होते हैं :—

(क) स्थानबोधक : यहाँ, वहाँ, इधर, दाएँ आदि।
(ख) कालबोधक : अब, कल, तुरंत, आज, सदा आदि।
(ग) परिमाणबोधक : बहुत, कुछ, काफी, इतना आदि।
(घ) रीतिबोधक : हाँ, नहीं, ही, कैसे, धीरे-धीरे, अचानक, अवश्य, वस्तुतः, संभवतः, धुआँधार, अतः आदि।

सूक्ष्म विश्लेषण करने पर रीतिबोधक के बहुत से अवान्तर प्रभेद किये जा सकते हैं।

जो क्रिया-विशेषण दो वाक्यों का संयोजन भी करते हैं, उन्हें संयोजक क्रिया-विशेषण कहते हैं, जैसे —तुम नहीं आओगे तो मैं नहीं जाऊँगा। जो किसी शब्दविशेष से अन्वित रहता है, पूरे वाक्य से नहीं, उसे अनुबद्ध कहते हैं, जैसे

भी साथ चलेगा। अनेक शब्दात्मक क्रिया विशेषण-यौगिक कहलाते हैं; जैसे :— **जहाँ-तहाँ**, **धीरे-धीरे**, सायं प्रातः। 'वह क्या पत्थर समझेगा' वाक्य में 'पत्थर' आदि स्थानीय क्रिया विशेषण कहलाते हैं।

बहुत से शब्द ऐसे हैं जो संज्ञा के भी विशेषण हो सकते हैं, विशेषण के भी, सर्वनाम के भी, क्रिया के भी, और क्रिया-विशेषण के भी; जैसे—वहाँ बहुत या कम **लड़के** हैं; **वे** बहुत (या कम) हैं, वह बहुत (या कम) सुन्दर दृश्य है, वह बहुत (या कम) **हँसता है**, वह बहुत (या कम) तेज **दौड़ता** है। 'वह बहुत हँसता है', या 'धीरे-धीरे' हँसता है आदि में 'बहुत' या 'धीरे-धीरे' क्रिया की ही विशेषता (रीति) को प्रकट करता है। इस प्रकार अनेक विशेषणों का क्रिया-विशेषणवत् प्रयोग हो सकता है।

संबन्धबोधक

जो शब्द एक संज्ञा (या सर्वनाम) का संबंध दूसरी संज्ञा (या सर्वनाम) से बताते हैं, उन्हें संबन्धबोधक अव्यय कहते हैं। संस्कृत में इन्हें 'कर्मप्रवचनीय' कहते हैं, अंग्रेजी में 'प्रीपोजिशन'। ये भी कई प्रकार के होते हैं; जैसे :—

(क) स्थानवाचक : मोहन सोहन के **पास** था। पेड़ के **नीचे** चीटियाँ हैं। घर के **बाहर** कौन खड़ा है? उसकी **तरफ** एक पेड़ है।

(ख) कालवाचक : राणा प्रताप पृथ्वीराज के **अनन्तर** हुए थे। राम कृष्ण के **पूर्व** या **पहले** हो चुके हैं। बुद्ध तो बहुत **बाद** आए।

(ग) सहार्थक : राम के **साथ** या संग श्याम भी आया है।

(घ) समानार्थक : मोहन बिलकुल सुरेन्द्र के **समान** या की **भाँति** है।

(ङ) व्यतिरेकबोधक : भगवान् के **बिना** चारा नहीं, ईश्वर के **सिवा** कौन है?

इन्हें संबद्ध संबन्धबोधक कहते हैं। अनुबद्ध उन्हें कहते हैं, जो संज्ञा के विकृत रूप के बाद जुड़ते हैं, किसी विभक्ति (विशेषतः षष्ठी) के बाद नहीं; जैसे— गाँवों **तक**, छात्रों **समेत**। जो संबन्धबोधक मूलतः किसी संज्ञा, विशेषण आदि से बनते हैं, उन्हें यौगिक कहते हैं, जैसे :—मोहन की **अपेक्षा**, मोहन के **योग्य**, मोहन के **ऊपर** मोहन के **मारे** आदि।

योजक

योजक का अर्थ है जोड़नेवाला। जो अव्यय एकात्मक अथवा अनेकात्मक वाक्य के दो (अथवा अधिक) खण्डों का योग करता है, उसे योजक कहते हैं।

इसे ही **समुच्चयबोधक** भी कहते हैं। ये दो (अथवा अनेक) खण्ड दो **पद** भी हो सकते हैं, दो **वाक्यांश** भी और दो **वाक्य** भी; जैसे :—

(क) पिता **एवं** पुत्र साथ आए। तुम **और** मैं मित्र हैं। भारत के पूरब, पश्चिम **तथा** दक्षिण में समुद्र है।

(ख) सूरज के डूब जाने **और** तारों के भी निकल आने पर वे मुझे गली मे दिखे थे।

(ग) मैं जब उन की स्थिति देखता हूँ **और** ईश्वर की सृष्टि पर विचार करता हूँ **तो** विस्मित रह जाता हूँ।

अर्थ की दृष्टि से इस के दो भेद होते हैं :—

(१) समानाधिकरण—इन से दो स्वतन्त्र अथवा तुल्यजातीय खण्ड जोड़े जाते हैं। इसके भी चार प्रभेद होते हैं :—

(क) सर्वसंग्रहार्थक (या संयोजक)—यह एक बार में सभी खण्डों का संग्रह या संयोजन करता है। इसे संयोजक भी कहते हैं; जैसे :—सुरेश **तथा**, **एवं**, **और** नरेश की पुस्तिकाएँ ला दो।

(ख) विकल्पार्थक या विभाजक—विकल्पार्थक योजक एक बार में सभी खण्डों में से किसी एक का ही ग्रहण करता है। इस रूप में निम्नलिखित योजकों का प्रयोग हो सकता है—**अथवा**, वा, किंवा, या, कि, या-या, चाहे-चाहे, नहीं तो। जैसे :—मुझे सुरेश **अथवा**, **वा**, **किंवा**, **या** नरेश की पुस्तिका चाहिये। यह पुस्तिका सुशील की है **कि** नरेश की। मुझे सुरेश की पुस्तिका दिखा दो, नहीं तो (चाहे) नरेश की।

(ग) प्रतिषेधार्थक—जिस योजक से जुड़े हुए अंशों में से एक का प्रतिषेध प्रकट होता है, उसे प्रतिषेधार्थक योजक कहते हैं, जैसे—मैंने सुरेश की नहीं **परन्तु किन्तु**, **पर**, **लेकिन** नरेश की पुस्तिका देखी है। ये सब अव्यय पूर्व खण्ड का केवल **निषेध** व्यक्त करते हैं; जैसे—मैंने सुरेश की नहीं **प्रत्युत**, **बल्कि**, **वरन्** नरेश की पुस्तिका माँगी थी। ये अव्यय पूर्व खण्ड के प्रतिषेध के साथ दोनों खण्डों में कुछ विरोध, विपरीतता भी व्यक्त करते हैं; जैसे—मैं सब जानता था, **तब भी**, **तथापि**, **तो भी**, **तदपि**, **फिर भी**, **पर**, **परन्तु**, **किन्तु**, **लेकिन**, **मगर** इस मामले में चुप ही रहना ठीक समझा। साधारणतः इन दोनों प्रकारों को विरोधार्थक कहते हैं अथवा इसको एक पृथक भेद मानकर विपरीतार्थक योजक कहते हैं। ये योजक समापिका क्रिया के बाद ही जुड़ते हैं।

(घ) परिणामार्थक—यह योजक दो पूर्ण वाक्यों का ही संयोजन करता है, दो वाक्यांशों अथवा पदों का नहीं; साथ ही अपने उत्तर खण्ड से पूर्व खण्ड का परिणाम सूचित करता है; जैसे—रावण ने सती शिरोमणि सीता का बलात् अपहरण किया, **इसलिये** (इसीलिये), **अतः**, **अतएव**, **इस कारण**, **इस वास्ते**, **फलतः**, **परिणामतः**, **लिहाजा** उसकी महिमा नष्ट हो गई।

जिन योजकों के द्वारा पूर्ववर्ती एक मुख्य या प्रधान के साथ परवर्ती एक या अनेक गौण या अप्रधान वाक्य जोड़े जाते हैं (पद या वाक्यांश नहीं), उन्हें व्यधिकरण योजक कहते हैं। इनके निम्नलिखित भेद हैं :—

१. कारणबोधक—जो योजक अपने पूर्ववर्त्ती वाक्य में वर्णित परिणाम का उत्तरवर्त्ती वाक्य से कारण बताता है, उसे कारणबोधक कहते हैं, जैसे—भीष्म, द्रोण, कर्ण जैसे महारथियों की पराजय हो गई, क्योंकि उन्होंने अधर्मी दुर्योधन का साथ दिया था। 'क्योंकि' की जगह 'इसलिये कि', 'कारण कि' 'चूँकि' भी प्रयुक्त होते हैं।

२. प्रयोजनबोधक—इस योजक से आरम्भ होनेवाला वाक्य, प्रायः बाद में आकर पहले आए वाक्य का प्रयोजन या उद्देश्य सूचित करता है। यह उद्देश्यवाचक भी कहा जाता है; जैसे—सद्ग्रंथों का अध्ययन करो, ताकि दूषित वातावरण का मैल धुलता रहे। अल्पाहारी बनो, **जिससे** [**जो**, **कि**] तन-मन में स्फूर्त्ति बनी रहे।

३. नित्यसंबन्धबोधक : जिस योजक से प्रथम वाक्य का दूसरे वाक्य के प्रति नित्यसंबन्ध या साकांक्षता प्रकट होती है, उसे नित्यसंबन्धबोधक योजक कहते हैं। इसे आकांक्षाबोधक भी कह सकते हैं। इनसे यथास्थान संभावना, आशंका, हेतुहेतुमद्भाव, शर्त्त, क्रिया की असिद्धि आदि अर्थ अभिव्यक्त होते हैं। यही संकेतबोधक कहा जाता है। इनकी औरों से यह विशेषता है कि (क) ये सदा युग्म (जोड़ा) रूप में रहते हैं। (ख) एक (जो, यदि, यद्यपि, अगर, चाहे) पूर्व वाक्य के आरम्भ में जुड़ता है, दूसरा (तो, तथापि, परन्तु) उत्तर वाक्य के आरम्भ में; जैसे—**यदि** दुर्योधन ने पाण्डवों को पाँच गाँव भी हिस्से में दे दिये होते, **तो** महाभारत नहीं होता। **यद्यपि** उसका अपराध महान् है, **तथापि** (तो भी, फिर भी, लेकिन) इस बार उसे क्षमा दे दी गई। **जब** वे नहीं मानें, **तब** मुझे बुला लेना।

कभी-कभी इस युग्म का कोई खण्ड छोड़ भी दिया जाता है, गतार्थ हो जाता है; जैसे—(यदि) मैं ऐसा जानता, तो तुम्हें नहीं बुलाता। **जो मैं जनितेऊँ बन्धु बिछोहू, पिता-बचन मनितेऊँ नहि ओहू।**

४. स्वरूपबोधक—यह योजक अपने उत्तरवर्त्ती वाक्य से पूर्ववर्ती वाक्य के ही सामान्य कथन की विशिष्ट व्याख्या करता है; जैसे—सद्ग्रंथ कहते हैं कि (जो) विश्व के कण-कण में भगवान् का वास है। यहाँ 'कि या जो' लुप्त भी रह सकता है।

विस्मयादिबोधक

जिस अव्यय शब्द से विस्मय, हर्ष, शोक, घृणा आदि का बोध होता है, उसे विस्मयादिबोधक कहते हैं। ये आगे या पीछे के किसी वाक्य, वाक्यांश या पद से संबद्ध नहीं रहते, किसी वाक्य का अंग नहीं बनते; स्वतंत्र लघु वाक्य की भाँति प्रयुक्त होते हैं। अर्थ-भेद से इनके भी बहुत से भेद होते हैं; जैसे—

१. मनोवेगबोधक—

(क) विस्मयबोधक—अरे, हैं (ऐं) तुम कहाँ से आ पहुँचे ? क्या गाड़ी छूट गई। सच ?

(ख) हर्षबोधक —अहा ! कैसा सुन्दर प्रभात है, वाह ! आनन्द आ गया !

(ग) शोकबोधक —हाय ! उफ, आह, कहीं भी प्रकाश की एक किरण नहीं दिखती !

(घ) तिरस्कारबोधक—तुमने चुराया है ! छिः, धत्, धिक् !

(ङ) प्रशंसाबोधक —यह कविता तुमने लिखी है ? सुन्दर, शाबाश, बधाई !

२. संबोधनबोधक—

(क) आदरसूचक—हे भगवन् ! कहाँ हो ?

(ख) अनादरसूचक—अरे, रे, दुष्ट, कहाँ भागता है ?

(ग) प्रेमसूचक—अरी, री सखि, कहाँ गई ?

३. अनुभूतिसूचक—

(क) स्वीकार सूचक—जी, हाँ, जी हाँ, मैं ही था। अच्छा, ठीक, मैं आजाऊँगा।

(ख) निषेधसूचक—उहुँ, न।

(ग) अनुमोदनसूचक—ठीक, अस्तु, ऐसा ही करो। वाह, खूब कहा।

४. कृतज्ञतासूचक—धन्यवाद, शुक्रिया।

५. चेतावनीसूचक—सावधान ! खबरदार ! फिर ऐसा मत करना।

पूरा वाक्य भी विस्मयादिबोधक का काम कर सकता है; जैसे—सर्वनाश हो गया। बलिहारी है। क्या कहना है। क्या बात है। धत् तेरे की।

वर्गीकरण तालिका
१. क्रिया विशेषण
प्रयोग
रूप
अर्थ
साधारण (अब, यहाँ, नहीं),
संयोजक (जब- तो जहाँ-वहाँ, चूँकि,-अत:)
अनुबद्ध (ही, भी, तक)
मूल (फिर, नहीं)
यौगिक (क्रमश:, दिन भर)
स्थानीय (खाक, यह, इतना)
स्थानवाचक (यहाँ, इधर, नीचे, आगे)
कालवाचक (आज, पहले, आगे)
परिमाणवाचक (बहुत, कुछ, केवल,इतना
रीतिवाचक (कैसे, स्वयं)
२. संबन्धबोधक
प्रयोग
अर्थ
व्युत्पत्ति
संबद्ध (पुत्र के बिना)
अनुबद्ध (पुत्रतक)
मूल (बिना)
यौगिक (अपेक्षा, योग्य,ऊपर, मारे)
काल-वाचक
संग्रह-वाचक
स्थान-वाचक
दिशा-वाचक
साधन-वाचक
हेतु-वाचक
विनिमय-वाचक
तुलना-वाचक
व्यतिरेक-वाचक
विनिमय-वाचक
सादृश्य-वाचक
विरोध-वाचक
सहचार-वाचक
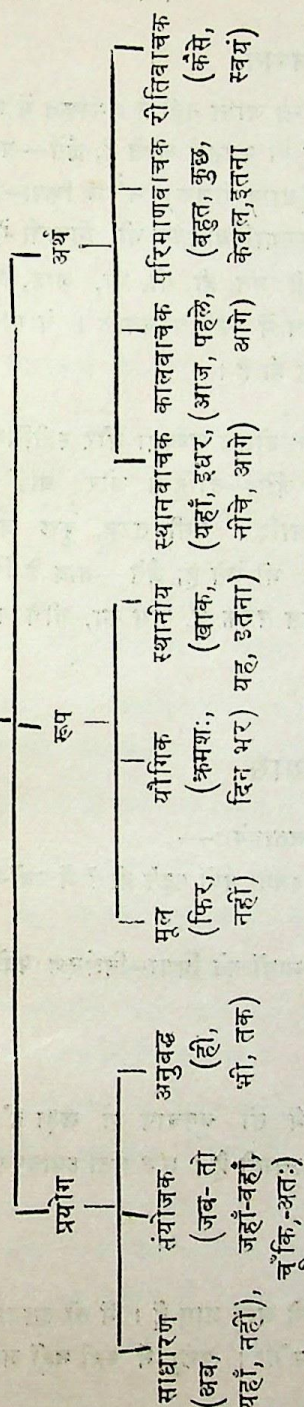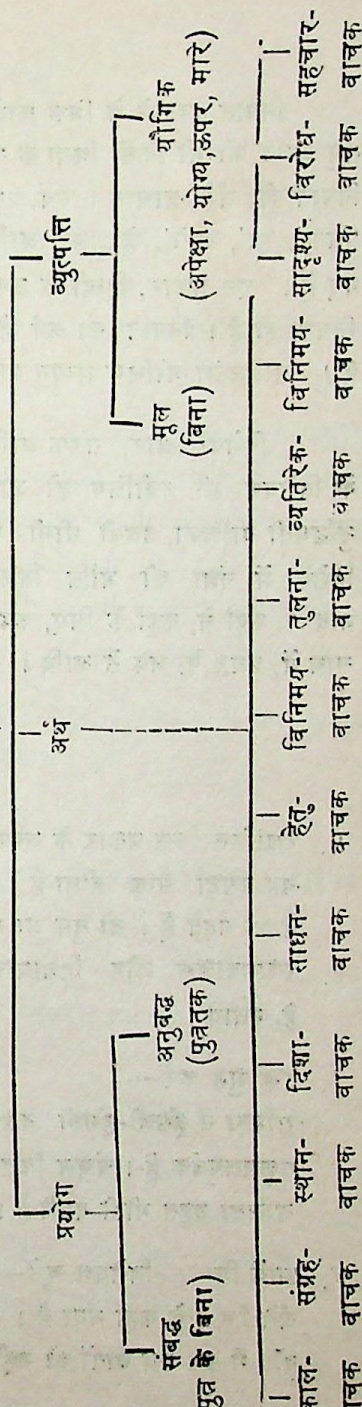
निपात

निपात अव्ययों से भिन्न कोई स्वतन्त्र जाति नहीं है। संस्कृत में प्र, परा, अप, सम् आदि को भी किसी क्रिया के योग में ही उपसर्ग कहते हैं; जैसे--प्रहार; अन्यथा निपात ही; जैसे–प्राचार्य। 'एवं, अथवा' (आदि योजक) 'न' यह क्रिया–विशेषण तथा 'धिक्', 'हा', 'अहो', 'हे', 'अरे' आदि विस्मयादिबोधक भी निपातों में ही गिनाये गए हैं। इस प्रकार, हिन्दी के ऊपर, नहीं, मत, ही, तो, भी, आह, अरे आदि भी निपात ही हैं। निपात का अर्थ है—बीच में टपक पड़नेवाले। ये गौण शब्द होते हैं। अधिकांश मौलिक अव्यय प्राय: ऐसे ही हैं।

विशेष—ओर, तरफ आदि संबन्धबोधक अव्ययों और स्त्रीलिंग विशेषणों के विशेषण भी स्त्रीलिंग हो जाते हैं; जैसे—दाहिनी ओर, बाईं तरफ, बड़ी बुद्धिमती बालिका, इतनी धीमी गति आदि। इसी तरह, कुछ अव्यय स्थान-विशेष में संज्ञा की भाँति विभक्तियाँ भी लेते हैं; जैसे—बाद के लिए, बाद से, बाद में, कहाँ से, कहाँ के लिए, कब से, उस तरफ से, पास का, नीचे का, पहले से, साथ में, इधर से, अब से आदि।

अभ्यास

१. रेखांकित किस प्रकार के अव्यय हैं, बताइये :—
वह कपड़ा **साफ** होता है। तुम **इतना** क्यों पढ़ते हो ? मैं **ज्यों-त्यों** पहुँचा। वे **भी** पढ़ते हैं। **तो** तुम आ गए ?

२. स्थानवाचक और दिशावाचक अव्ययों को क्रिया–विशेषण क्यों कहा जाता है, बतायें।

३. इन्हें शुद्ध करें—
सरिता ने हँसती-हँसती कहा। मैं तो चुपचाप से खड़ा हूँ। हमलोग सकुशलपूर्वक हैं। चंचल कितनी चिल्लाती है। एक घंटा ध्यानपूर्वक से पढ़ो। ललिता बहुत मीठी गाती है।

४. इनमें क्रिया—विशेषण चुनें—
जैसे कि पीछे कहा गया है। वे अपने आप आए हैं। मैं तो इतना भर जानता हूँ। मैं उन सब बातों को नहीं बताऊँगा। परंतु मैं वहाँ नहीं जाऊँगा।

नव-शब्द-निर्माण

मूल शब्दों से निम्नलिखित विधियों के द्वारा अनन्त नए यौगिक शब्द बनाए जाते और जा सकते हैं—

(क) तद्भव बनाकर; जैसे संस्कृत के वश से बस, वृद्ध से बूढ़ा, पश्चात् से पीछे, दक्षिण से दक्खिन, भ्राता से भाई, सुवर्ण से सोना, सुवर्णकार से सोनार, पितृ-गृह से पीहर; अरबी के अल्लाह से अल्ला, काइदः से कायदा; फारसी के परवा से परवाह, दुकाँ से दुकान; तुर्की तमगा से तगमा; पुर्त्तगाली टोबैको से तंबाकू, आलमीरा से आलमारी; अंग्रेजी एंजिन से इंजन, कैप्टेन से कप्तान, होस्पिटल से अस्पताल आदि। ये तद्भव शब्द कहलाते हैं।

(ख) प्रत्यय, (ग) समास अथवा (घ) द्वित्व से। इन प्रक्रियाओं के कारण भी मूल शब्दों में ध्वनि-परिवर्त्तन (ह्रास-विकास) होता है।

धातुओं से ५ प्रकार के प्रत्यय होते हैं :—

(अ) कालवाचक, पुरुषवाचक, वचनवाचक (तिङ् प्रत्यय); जैसे—पढ़ धातु से वह पढ़े, वे पढ़ें, तुम पढ़ोगे, मैं पढ़ूँ आदि।

(आ) यौगिक धातु बनानेवाले प्रत्यय; जैसे—पढ़ धातु (या पढ़ना क्रिया) से प्रेरणार्थक पढ़ा धातु (या पढ़ाना क्रिया), वह पढ़ाता है, पढ़ावे, तुम पढ़ाते थे, पढ़ाओ, मैं पढ़ाऊँगा।

(इ) पुरुष और वचन से मुक्त केवल काल सूचित करनेवाले कृत् प्रत्यय; जैसे पढ़ से वर्त्तमान में पढ़ता (है), भूत में पढ़ा (है)।

(ई) अव्ययात्मक क्रिया बनाने वाले कृत् प्रत्यय; जैसे—(क) पूर्वकालिक, यह देख, देख कर या देख करके मैं स्तब्ध रह गया; तथा (ख) निमित्तवाचक; जैसे—मैं देख सकता हूँ, देखना चाहता हूँ या देखने जाऊँगा।

इन प्रत्ययों का वर्णन पीछे क्रिया के अध्याय में विस्तार से हो चुका है।

(उ) धातु से विशेषण तथा संज्ञा रूप प्रातिपदिक बनानेवाले कृत् प्रत्यय।

इनकी सूची लम्बी है। ये प्रायः कर्त्ता, कर्म, करण, अधिकरण, संप्रदान, अपादान तथा भाव में होते हैं।

कृत् प्रत्यय

(अ) कृत् प्रत्यय उन प्रत्ययों को कहते हैं, जो धातु के अनन्तर आकर पूरे शब्द को न तो पुनः धातु ही रहने देते हैं, न उसे क्रिया बनने देते हैं। उसे एक ऐसा यौगिक (क) अव्ययात्मक, (ख) विशेषणात्मक या (ग) संज्ञात्मक प्रातिपदिक बना देते हैं, जिसमें क्रियात्व गौण हो जाता है, वह क्रिया पद का मुख्य स्तम्भ बना रह सकता है, किन्तु प्रातिपदिक विभक्तियाँ भी ले सकता है। इनमें से अव्ययात्मक कृदन्तों से तो प्रथमा एकवचन मात्र लाकर उसका लोप कर देते हैं; शेष से और भी विभक्तियाँ आ सकती हैं।

कर्त्ता—संस्कृत में जो दे वह **दाता** दा+ता (तृ); हिन्दी में जो खाए वह खाऊ=**खा**+ऊ; जो चले वह चल+ता चलता, चल+ऊ=**चालू**, जो निद्राग्रस्त है वह सो+आ=**सोया**। वह पढ़ता है का 'ता' और **बैठा** है का आ भी कर्त्ता में ही हुए हैं।

कर्म—जो पढ़ा जाय वह पठ्+अनीय=**पठनीय**, पठ्+तव्य=**पठितव्य**, पठ्+य (ण्यत्)=**पाठ्य**। जो देखा जा रहा है वह दृश्+य+आन=**दृश्यमान** (संसार); जो खाया जाय वह खा+ना=**खाना**। जो देखा जा चुका है वह देख+आ=देखा (स्थान)। उसने देखा है का भी 'आ' कर्म में ही हुआ है।

करण–(१) इत्र—जिससे खना जाय वह खन्+इत्र=खनित्र, जिस से ढोया जाय वह **वहित्र**। (२) अन–वह्+अन=वहन, परिवहन; वाहि (वह् प्रेरणार्थक)+अन=वाहन, (३) अनीय—जिस से स्नान करें वह स्ना+अनीय= **स्नानीय** (जल), जिससे कुल्ला करें वह आ+चम्+अनीय=आचमनीय। (४) आनी–जिस से मथें वह मथ+आनी=**मथानी** (५) ई–रेती, (६) ऊ—झाड़ू, (७) न, ना, नी–झाड़न, ढक्कन–बेलन, बेलना, छनना, बेलनी। (८) शास्+त्र=**शास्त्र**, पा+त्र=**पात्र**।

अधिकरण—जिस में रमण करें वह रम्+अ (घञ्)=**राम**, जिस में जल धारित हो वह=जल+धा+इ (कि)=**जलधि**, जिस पर झूलें वह **झूला**, जहाँ बैठें वह **बैठका**, जिस पर बैठें वह आस्+अन=**आसन**, जिस पर पालें वह पाल्+अना= **पालना**।

संप्रदान—जिसे दिया जाय वह सम् + प्र + दा + अन = **संप्रदान**, सम् + प्र + दा + अनीय = **संप्रदानीय** (विप्र)।

अपादान—जिससे दूर ले (हटा) लिया जाय वह अप + आ + दा + अन = **अपादान**। जिससे लोग भीत हों (डरें) वह भी + म = **भीम**, भी + (ष्) म = **भीष्म**।

भाव---गम् + अन = **गमन**, गम् + ति (क्तिन्) = **गति**, जा + ना = **जाना** रह + न = **रहन**। "मुझसे बैठा नहीं जाता" का भी 'आ' प्रत्यय भाव में ही है।

कृत् प्रत्यय तीनों कालों में होते हैं; जैसे :—

वर्त्तमान— जो पढ़ता है वह पाठक (पठ् + अक), जो सोता है वह सोता (सो + ता) (मनुष्य); जो है वह वर्त्तमान (वृत् + आन); कुम्भ करनेवाला कुम्भकार; जो किया जा रहा है वह क्रियमाण (कार्य)।

भविष्यत्—आनेवाला आगामी (आ + गम् + इन्), होनेवाला = भावी (भू + इन्), कृ + तव्य = कर्त्तव्य, करणीय (कृ + अनीय) करने योग्य। जो किया जानेवाला है = करिष्यमाण (कृ + स्य + आन)। जो होनेवाला है = भू + स्य + शतृ = भविष्यत्।

भूत—गम् + त (क्त) = गत (दिवस), बीत + आ = **बीता** दिन)।

प्रातिपदिकों अर्थात् संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण तथा अव्यय शब्दों से भी पाँच ही प्रकार के प्रत्यय होते हैं--

[क] पदकारक (पद बनानेवाला) संबन्धबोधक **विभक्ति प्रत्यय**; जैसे—एकवचन बालक + द्वितीया = बालक को, एकवचन वह + द्वितीया = **उसे**, यहाँ + पंचमी = **यहाँ से** आदि।

[ख] **स्त्री प्रत्यय**; जैसे— महोदय से महोदया, श्रीमान् से श्रीमती, **सुन्दर** से सुन्दरी, पंडित से पंडिताइन, मोर से मोरनी।

[ग] धातु कारक **नामधातु प्रत्यय**. जैसे; हाथ से हथियाना, डर से डरना, लाज से लजाना, झूठ से झुठलाना।

तद्धित प्रत्यय

तद्धित उन प्रत्ययों को कहते हैं जो प्रातिपदिक से जुटकर फिर इस नए शब्द को भी नया प्रातिपदिक ही बना देते हैं। इस के भी दो भेद किए जा सकते हैं, (घ) अविकारी अव्यय (क्रियाविशेषण) बनानेवाले प्रत्यय तथा (ङ) विकारी प्रातिपदिक बनानेवाले प्रत्यय। इनमें (घ) अव्ययकारक प्रत्यय निम्नलिखित हैं--

१. तः—साधारण + तः = साधारणतः, जन्म + तः = जन्मतः, स्वतः, पूर्वतः, अतः, इतः, ततः ।
२. त्र—एकत्र, सर्वत्र, अन्यत्र, परत्र ।
३. था—सर्वथा, अन्यथा, यथा, तथा ।
४. दा—सर्वदा, सदा, यदा कदा ।
५. धा—बहुधा, शतधा, सहस्रधा, द्विधा ।
६. वत्—पूर्ववत्, मातृवत्, पितृवत्, आत्मवत् पुत्रवत्, लोष्टवत् ।
७. शः—कोटिशः, शतशः, अनेकशः, क्रमशः, प्रायशः, अक्षरशः ।
८. सात्—भस्मसात्, अग्निसात् ।

२. (ङ)विकारी प्रातिपदिक बनानेवाले प्रत्यय; जैसे :—

१. अ— (संतान) —कश्यप से काश्यप, कुरु से कौरव, पाण्डु से पाण्डव, यदु से यादव, रघु से राघव, मधु से माधव, पृथा से पार्थ, मनु से मानव, पुत्र से पौत्र, सुमित्रा से सौमित्र ।
२. इ— (संतान) —दशरथ से दाशरथि, सुमित्रा से सौमित्रि । जनक का पुत्र ,, जानकि, पुत्री जानकी; विदेह से वैदेहि; वैदेही, पर्वत से पार्वति, पार्वती ।
३. आयन— ,, शकट-शाकटायन, बदरी-बादरायण, शंख-शांखायन, द्वीप-द्वैपायन ।
४. एय— ,, गाधि से गाधेय, राधा से राधेय, कुन्ती से कौन्तेय, इतरा से ऐतरेय ।
५. य— ,, गर्ग से गार्ग्य, शकल से शाकल्य, बभ्रु से बाभ्रव्य, दिति से दैत्य, अदिति से आदित्य, चणक से चाणक्य, पुलस्ति से पौलस्त्य, जमदग्नि से जामदग्न्य, कुरु से कौरव्य, वेन से वैन्य, कोसल से कौसल्य कुटिल से कौटिल्य, अगस्ति से अगस्त्य, कुन्डिन से कौण्डिन्य, यज्ञवल्क से याज्ञवल्क्य ।
६. यायन (य + आयन)— कत-कात्यायन, संकृति—सांकृत्यायन, कोसल—कौसल्यायन ।
७. इय— क्षत्र से क्षत्रिय, स्वसृ से स्वस्रिय, श्रोत्र से श्रोत्रिय ।
८. इष्ठ (सबसे अधिक)—स्वाद से स्वादिष्ठ, बली से बलिष्ठ, गुरु से गरिष्ठ, युवा से यविष्ठ या कनिष्ठ, प्रशस्य से श्रेष्ठ या ज्येष्ठ, वृद्ध से ज्येष्ठ, उरु से वरिष्ठ प्रिय से प्रेष्ठ, दूर से दविष्ठ ।

९. ईयस्—गुरु से गरीय (गरीयस्), युवा से यवीय या कनीय, प्रशस्य से श्रेय, उरु से वरीय, प्रिय से प्रेय, दूर से दवीय।

१०. उल—माता का भाई मातृ + उल = मातुल।

११. क (अ) स्वार्थ--बाल से बालक, युवा (युवन्) से युवक, गोल से गोलक।
(आ) समूह – शत से शतक, दश से दशक, पञ्च से पञ्चक, सप्तक, त्रिक।

१२. तर (दो में से अधिक)—लघु से लघुतर, गुरु से गुरुतर, महत् (महान्) से महत्तर, सुन्दर से सुन्दरतर, स्थूल से स्थूलतर।

१३. तम (सर्वाधिक)--लघु से लघुतम, गुरु से गुरुतम, महत् (महान्) से महत्तम, अल्पतम, निम्नतम, अधिकतम, न्यूनतम, स्थूलतम।

१४. ता (समूह)--जनता, देवता।

१५. व्य—भ्राता का पुत्र = भ्रातृ + व्य = भ्रातृव्य।

कृत् तथा तद्धित प्रत्ययों से बने भाववाचक संज्ञा शब्द

(अ) कृत्

(क) संस्कृत

१. अ—(अच्) इ से अय, उदय चि से चय, परिचय, संचय; जि से जय, पराजय, विजय; क्षि से क्षय, क्री से क्रय, नी से नय, परिणय, अनुनय; विनय; भी से भय, ली से लय, निलय।

अ—(अप्) भू—भव, अनुभव, उद्भव; दृ—दर, आदर; कृ—कर, संकर; ग्रह्—ग्रह, संग्रह, निग्रह; यम् —यम, संयम; हन्— वध। गम्—गम, आगम, संगम, निर्गम, उद्गम; शम, दम, क्रम, भ्रम।

अ— (घञ्) पठ्-पाठ, मन्—मान, संमान, अपमान, अवमान, अभिमान; नश नाश, विनाश; रम्—राम, विराम; कम्— काम; स्तु—स्ताव, प्रस्ताव; कृ— कार, संस्कार, उपकार, अंगीकार, स्वीकार, तिरस्कार, आविष्कार, चमत्कार; तृ—तार, अवतार; भू— भाव, प्रभाव, प्रादुर्भाव, आविर्भाव, तिरोभाव; त्यज्— त्याग, परित्याग; हन्—घात, आघात, सृ – सार; स्मृ—स्मार, अनुस्मार; भिद्— भेद, विभेद; मिल्-- मेल; रुध्-- रोध, विरोध; सिध्— सेध, निषेध, श्लिष्—श्लेष, विश्लेष; बुध— बोध, प्रबोध; क्रुध— क्रोध; मुह्— मोह, कुप—कोप, रुह—रोह, आरोह; हृ— हार, उद्धार, संहार, उपहार; शिष--- शेष, विशेष; तुष्---- तोष, संतोष, कुच—कोच, संकोच; क्षिप्—क्षेप, संक्षेप, प्रक्षेप, लभ् ---- लाभ; पच्----पाक,

परिपाक, रभ से रम्भ, आरम्भ; लभ् से लाभ; रञ्ज् से रंग, राग, अनुराग, विराग; स्तृ से स्तार, विस्तार; हस् से हास, परिहास; श्वस् से श्वास, विश्वास; बन्ध् से बन्ध।

२. अन–अर्ज से अर्जन, उपार्जन; गुञ्ज् से गुञ्जन; मस्ज् से मज्जन; रक्ष् से रक्षण, आरक्षण; गम् से गमन, आगमन; पालि से पालन, प्रतिपालन; वारि से वारण, निवारण; ईक्ष् से ईक्षण, परीक्षण; ज्ञा से ज्ञान, विज्ञान, अभिज्ञान; अधि+इ से अध्ययन, दा से दान, प्रदान, अनुदान, आदान; धा से धान, परिधान, संनिधान, विधान; शुष् से शोषण, विद् से वेदन, निवेदन; युज् से योजन, प्रयोजन; तृ से तरण, उत्तरण; मन् से मनन; मा से मान, अनुमान, प्रमाण, परिमाण, निर्माण; घट् से घटन, संघटन; कृष् से कर्षण, आकर्षण; नी से नयन, आनयन, मनोनयन।

३. अना—सूचि से सूचना; अर्थि से अर्थना, प्रार्थना; गवेषि से गवेषणा; घोषि से घोषणा; रचि से रचना; याचि से याचना; स्थापि से स्थापना; साधि से साधना; भावि से भावना, संभावना; अञ्जि से अञ्जना; व्यंजना, तारि से तारणा, प्रतारणा; रञ्जि से रञ्जना, अतिरञ्जना।

४. आ—बाध् से बाधा, चिन्त् से चिन्ता, पूज् से पूजा, चेष्ट् से चेष्टा, चर्च् से चर्चा, पीड् से पीडा, इष् से इच्छा, शंस् से शंसा, प्रशंसा, रक्ष् से रक्षा, सुरक्षा, शिक्ष् से शिक्षा; दीक्ष् से दीक्षा, क्षम् से क्षमा, कृप् से कृपा, सम्+ख्या से संख्या, वि+अवस्था से व्यवस्था, श्रद्+धा से श्रद्धा, जुगुप्स से से जुगुप्सा, बुभुक्ष से बुभुक्षा, जिज्ञास से जिज्ञासा, वाञ्छ् से वाञ्छा, लज्ज से लज्जा, प्रति+स्था से प्रतिष्ठा, निन्द् से निन्दा, सेव् से सेवा, ईक्ष् से ईक्षा, उपेक्षा, समीक्षा, कुण्ठ् से कुण्ठा, आ+काङ्क्ष् से आकाङ्क्षा, प्रति+भा से प्रतिभा, उप+मा से उपमा, नि वि दा से निविदा।

५. इ—वि+धा से विधि; सम्+नि+धा से संनिधि, सम्+धा से संधि,

६. ति—भज् से भक्ति, शक् से शक्ति, सञ्ज् से सक्ति, आसक्ति, रञ्ज् से रक्ति, विरक्ति, नम् से नति, उन्नति, सिध से सिद्धि, प्रसिद्धि, मूर्च्छ् से मूर्त्ति, रम् से रति, विरति यम् से यति, नियति, गम् से गति, संगति, मन् से मति, मा से मिति, स्था से स्थिति, उपस्थिति, रुह् से रूढ़ि, लभ् से लब्धि, उपलब्धि, कृ से कृति, विकृति, कृ से कीर्त्ति, प्री से प्रीति, भी से भीति, वच से उक्ति, शुध से शुद्धि, बुध् से बुद्धि, सृज् से सृष्टि, सृज् से

सृष्टि, म्ला से म्लानि, हा से हानि; आप् से आप्ति, समाप्ति, दीप् से दीप्ति युज् से युक्ति, मुच् से मुक्ति ।

७. न्—यज् से यज्ञ, प्रच्छ् से प्रश्न, स्वप् से स्वप्न, तृष् से तृष्णा ।

८. य—विद् से विद्या, कृ से क्रिया, प्र-व्रज् से प्रव्रज्या; यज् से इज्या, परि-चर् से परिचर्या ।

९. म—कृ से कर्म, जन् से जन्म, छद् से छद्म, मृ से मर्म ।

(ख) हिन्दी

१. शून्य —लूट, समझ, चमक, मार, पहुँच, चाह, माँग, रोक, हार, जीत ।

२, अन्त---भिड़ से भिड़न्त ।

३. आ—घेरा, फेरा, झगड़ा, छापा, झटका, दौरा ।

४, आई—लड़ाई, झड़ाई, चढ़ाई, पिटाई, खुदाई, पढ़ाई, लिखाई, सिलाई, कमाई, धुलाई, बुनाई, रुलाई, हँसाई, पिसाई, कढ़ाई ।

५. आन लगान, मिलान, थकान, दौरान, उड़ान । "उठान" "उत्थान" का तद्भव है ।

६. आप—मिल से मिलाप ।

७. आपा—पूज से पुजापा ।

८. आव—बहाव, बचाव, छिड़काव, घुमाव, जमाव, लगाव, छिपाव, दुराव, ठहराव खिंचाव, सुझाव, कसाव, तनाव ।

९. आवट—लिखावट, सजावट, थकावट, मिलावट, रुकावट, बनावट ।

१०. आवत--कह से कहावत ।

११. आवना—पा से पावना ।

१२. आवा—भुलावा, बुलावा, बहकावा, पहिरावा, छलावा, दिखावा, बढ़ावा ।

१३. आहट—बुलाहट, खुजलाहट, चिल्लाहट, घबराहट, जगमगाहट, कुलबुलाहट ।

१४. ई—हँसी, बोली, नापी, घुड़की, धमकी ।

१५. आरा—निपट से निपटारा ।

१६. एरा—बस से बसेरा ।

१७. ऐया—बाँट से बँटैया ।

१८. औती—चुनौती, मनौती ।

१७. औनी—ओसा-ओसौनी, पीस-पिसौनी, मीच—मिचौनी (आँखमिचौनी) कूट से कुटौनी, ।

१८. औवल—मनौवल, नुकौवल, बुझौवल, भुलौवल ।

१९. क, की—बैठ से बैठक, बैठकी ।

२०. त—बचत, खपत, रंगत।

२१. ती—बढ़ती; बढ़ंती, चलती, गिनती, भरती, फबती, चुकती, बोलती।

२२. न—चलन, रहन, लेन, देन, मुसकान, सूजन, कुढ़न, घुटन, लगन।

२३. ना—पढ़ना, लिखना, देना, सोना, छूना, जीना, कहना।

२४. नी—करनी, कटनी, सोहनी, नोचनी, रोपनी, छँटनी।

देनगी में देन कोई धातु नहीं अतः गी कृत् प्रत्यय नहीं।

(आ) तद्धित

(क) संस्कृत

१. अ—वीर-वैर, पुरुष-पौरुष, मुनि-मौन, शुचि-शौच, सुहृद्-सौहार्द, सुष्ठु-सौष्ठव, पटु-पाटव, गुरु-गौरव, लघु-लाघव, मृदु-मार्दव, युवा-यौवन।

२. अक—वृद्ध-वार्द्धक, रमणीय-रामणीयक, बहुल-बाहुलक।

३. इमा—गुरु-गरिमा, लघु-लघिमा, महान्-महिमा, हरित-हरितिमा, पीत-पीतिमा, अरुण-अरुणिमा, प्रिय-प्रेम, (मा) मृदु-म्रदिमा।

४. ई (य+ई)—चतुर-चातुरी, मधुर-माधुरी मित्र-मैत्री, आर्हन्ती (= अर्हत्) । वैदुषी, औचिती।

५. एय—कपि-कापेय।

६. ता—प्रभु-प्रभुता, कवि-कविता, आवश्यक-आवश्यकता, विशेष-विशेषता, विद्वान्-विद्वत्ता, महान्-महत्ता, बुद्धिमान्-बुद्धिमत्ता; विद्यमान-विद्यमानता, सत्-सत्ता, उपयोगी-उपयोगिता, स्थायी-स्थायिता, सहाय-सहायता, बन्धु-बन्धुता, हानिकारी-हानिकारिता, हानिकर-हानिकरता, पत्रकार-पत्रकारता (पत्राकारिता नहीं)।

७. त्व- प्रभु-प्रभुत्व, सत्-सत्त्व, महान्-महत्त्व, विद्वान्-विद्वत्व, नृप-नृपत्व, स्थायी-स्थायित्व, राजा-राजत्व, मन्त्री-मन्त्रित्व, सती-सतीत्व, माता-मातृत्व, नेता-नेतृत्व, स्व-स्वत्व।

८. य—सखा-सख्य, स्तेन-स्तेय, पण्डित-पाण्डित्य, सुन्दर-सौन्दर्य, दूत-दौत्य, चेतन-चैतन्य, विद्वान्-वैदुष्य, वणिक्-वाणिज्य, युवराज-यौवराज्य, सम्राट्-साम्राज्य, राजा-राज्य, पतिव्रता-पातिव्रत्य, पुरोहित-पौरोहित्य, सेनापति-सैनापत्य, अधिपति-आधिपत्य, स्वस्थ-स्वास्थ्य धीर-धैर्य, स्थिर-स्थैर्य, वत्सल-वात्सल्य, विचित्र-वैचित्र्य, विभिन्न-वैभिन्न्य, इतिह-ऐतिह्य, पुनः पुनः-पौनः पुन्य।

(ख) हिन्दी

१. आ—सूखा, साझा।

२. आई अच्छाई, बुराई, भलाई, सचाई, पंडिताई, ओझाई, ढिठाई, चतुराई, लंबाई, चौड़ाई, सफाई।

३. आयत—अपनायत, पंचायत।

४. आया—साफ—सफाया।

५. आरा—छूट—छुटकारा।

६. आस—मिठास, खटास।

७. आहट—कड़वाहट, चिकनाहट।

८. इयाली—हरा-हरियाली, खुश-खुशियाली।

९. ई--गृहस्थी, सावधानी, बुद्धिमानी, मास्टरी, दलाली, चोरी, महाजनी, खेती, किसानी, डाक्टरी, तेजी, डकैती, विदाई, जुदाई, गुण्डई।

१०. औती—बपौती, बुढ़ौती।

११. नी—चाँदनी।

१२. पन—पागलपन, बचपन, लड़कपन, कालापन, पिछड़ापन, छुटपन, बड़प्पन, अपनापन, सीधापन, भोलापन, खोटापन।

१३. पा—बुढ़ापा, मुटापा, रँड़ापा, अपनापा।

(ग) उर्दू

१. आना - मिहनत-मिहनताना, नजर-नजराना, जुर्माना, हर्जाना।

२. इयत—इन्सानियत, आदमियत, मालिक-मिलकियत, खासियत।

३. ई—खुशी, नेकी, बदी, गरीबी, हाजिरी, चालाकी, सफेदी, नवाबी, फकीरी, दूकानदारी, दुश्मनी, दोस्ती, शेखी, शोखी, यादगारी, दलाली, मंजूरी, बिदाई, नादानी, वेईमानी, गुलामी।

४. गी—जिंदा-जिंदगी, मौजूद-मौजूदगी, रवाना-रवानगी, बन्दा-बन्दगी, सादा-सादगी, गंदा-गंदगी, ताजा-ताजगी।

५. त—रईस-रियासत, मुखालिफ-मुखालफत, सुलतान-सलतनत, खादिम-खिदमत, शहीद-शहादत, बादशाह-बादशाहत, वजीर-वजारत, सदर-सदारत, हकीम-हिकमत, हाकिम-हुकूमत, हजाम-हजामत, नफीस-नफासत, अहमक-हिमाकत, [illegible], शरीर-शरारत, जाहिल-जहालत।

६. ती—ज्यादा-ज्यादती ।

कृत् तथा तद्धित प्रत्ययों से बने विशेषण शब्द

(अ) कृत्

(क) संस्कृत

१. अ—उद् + ज्वल् + अ(अच्) = उज्ज्वल, चल + अ = चल्, सु + कृ + अ (खल्) = सुकर, दुष्कर, सुलभ, दुर्लभ, सुगम, दुर्गम; कृश् + अ (क) = कृश, प्र + ज्ञा + अ (क) = प्रज्ञ, भूमि + स्था + अ(क) = भूमिष्ठ, तेजस् + हृ + अ(अच्) = तेजोहर, पूजा + अर्ह् + अ = पूजार्ह, वन + चर् + अ(ट) = वनचर अग्रे + सृ + अ = अग्रेसर, सुख + कृ + अ = सुखकर, स्तन + धे + अ (खश्) = स्तनधय, वश + वद् + अ = वशंवद, ग्राम + गम् + अ (ड) = ग्रामग, मध्य + स्था से मध्यस्थ, लोलुप् से लोलुप, समान + दृश् से सदृश, भाष्य + कृ से माष्यकार (अण्), अ + जन् से अज (ड) ।

२. अक—पठ्—पाठक, लिख्—लेखक, रुध् - रोधक, आ + लोच् - आलोचक, चल् - चालक, नी - नायक, तॄ - तारक, मृ - मारक, हिंस्—हिंसक, निन्द् - निन्दक, वञ्च्—वञ्चक, नृत्—नर्त्तक, घट् - घटक ।

३. अन—नन्द्—नन्दन, भीषि—भीषण, मुह्—मोहन, पावि—पावन, क्रुध्—क्रोधन, वृध् - वर्धन (हर्षवर्धन), मधु + सूद्—मधुसूदन ।

४. अनीय :—पठ् - पठनीय, दय्—दयनीय, रम्—रमणीय, चि चयनीय, स्मृ—स्मरणीय, उद् + लिख्—उल्लेखनीय, शुच्—शोचनीय, दृश् - दर्शनीय, मन्—मननीय, मानि—माननीय, वि + चारि—विचारणीय, दा—दानीय ।

५. आक—भिक्ष्—भिक्षाक, वृ—वराक, लुण्ट्—लुण्टाक, जल्प्—जल्पाक ।

६. आलु—दय्—दयालु, श्रद् + धा -श्रद्धालु, निद्रा—निद्रालु, कृप्—कृपालु, शी—शयालु. संशयालु ।

७. इन्—स्था - स्थायी, अनु + जीव् = अनुजीवी, अनु + या = अनुयायी, सुख + दा = सुखदायी, आ + गम् = आगामी, भू—भावी, ब्रह्म + चर् = ब्रह्मचारी, पयस् + आ + हृ—पयआहारी ।

८. इष्णु—भू—भविष्णु, सह्—सहिष्णु, वर्ध्—वर्धिष्णु ।

९. उ—इष् - इच्छु, भिक्ष—भिक्षु, जिज्ञास—जिज्ञासु, पिपास—पिपासु ।

१०. उक—कम् से कामुक, भू से भावुक, लष् से लाषुक, अभिलाषुक।

११. उर—भञ्ज् से भङ्गुर, भास् से भासुर।

१२. ऊक—जागृ से जागरूक।

१३. त (क्त)--गम् से गत, नम् से नत, रम् से रत, हन् से हत, मन् से मत, ज्ञा से ज्ञात, स्था से स्थित, दा से दत्त, मा से मित, गा से गीत, पा से पीत, हा से हीन, छिद् से छिन्न, भिद् से भिन्न, क्री से क्रीत, कृ से कृत, कॄ से कीर्ण, विकीर्ण, दॄ से दीर्ण, विदीर्ण, स्तॄ से स्तीर्ण, विस्तीर्ण, जॄ से जीर्ण, शॄ से शीर्ण, लिख् से लिखित, रुज् से रुग्ण, मुच् से मुक्त, लग् से लग्न, उद्+विज्=उद्विग्न, पच् से पक्व, गुह् से गूढ़, युज् से युक्त, मुह् से मूढ़, स्वप् से सुप्त, वच् से उक्त, उच् से उचित, व्यध् से विद्ध, मूर्च्छ् से मूर्त्त, प्रच्छ् से पृष्ट, भ्रस्ज् से भृष्ट सृज् से सृष्ट, दृश् से दृष्ट, जन् से जात, ग्रह् से गृहीत, लभ् से, लब्ध, बन्ध् से बद्ध, रभ् से रब्ध, प्रारब्ध, ली से लीन, प्याय् से पीन क्षि से क्षीण, भञ्ज् से भग्न, मस्ज् से मग्न, शुष् से शुष्क, पूर् से पूर्ण, अधि+इ से अधीत।

१४. ता (तृ)—वच् से वक्ता, श्रु से श्रोता, जि से जेता, नी से नेता, प्रणेता, कृ से कर्त्ता, स्था से स्थाता, अधिष्ठाता, हन् से हन्ता, प्रच्छ् से प्रष्टा, दृश् से द्रष्टा, सृज् से स्रष्टा, बुध् से बोद्धा, युध् से योद्धा, अभि+युज् से अभियोक्ता, उप+दिश् से उपदेष्टा, प्र+स्तु से प्रस्तोता, भुज् से भोक्ता, विद् से वेत्ता, अधि+इ से अध्येता।

१५. तव्य---पठ् से पठितव्य, विद् से वेदितव्य, क्री से क्रेतव्य, कृ से कर्त्तव्य, ज्ञा से ज्ञातव्य, श्रु से श्रोतव्य, मन् से मन्तव्य, वच् से वक्तव्य, जिज्ञास से जिज्ञासितव्य, जि से जेतव्य, लिख् से लेखितव्य, गम् से गन्तव्य, हन् से हन्तव्य, वस् से वास्तव्य।

१६. त्रिम—कृ से कृत्रिम।

१७. मान(म्+आन) - विद् से विद्यमान, वृत् से वर्त्तमान, वि+राज् से विराजमान, देदीप्य से देदीप्यमान, जाज्वल्य से जाज्वल्यमान।

१८. य—पठ् से पाठ्य, त्यज् से त्याज्य, लिख् से लेख्य, विद्वेद्य, बुध् से बोध्य, वच् से वाच्य (या वाक्य), खाद् से खाद्य, लभ् से लभ्य, रम् से रम्य, गम् से गम्य, सह् से सह्य, शक् से शक्य, नि+यम् से नियम्य, हन् से वध्य, श्रम्

क्षम्य, गुह्—गुह्य, शास्—शिष्य, स्तु—स्तुत्य, पा—पेय, गा—गेय, धा—धेय, ध्या—ध्येय, नी—नेय, जि—जेय, भू—भव्य, दृश्—दृश्य, भृ—भृत्य।

१९. र—नम्—नम्र, हिंस्—हिंस्र।

२०. वर—स्था—स्थावर, भास्—भास्वर, नश्—नश्वर, गम्—गत्वर, जि—जित्वर।

(ख) हिन्दी

१. ० या अ—पाकेट + मार + ० = पाकेटमार, चिड़िया + मार + ० = चिड़ीमार, दिल + फेंक + ० = दिलफेंक।

२. अक्कड़—भूल + अक्कड़ = भुलक्कड़, बूझ + अक्कड़ = बुझक्कड़, पी—पियक्कड़।

३. अन—बुझा + अन = बुझावन, बसावन, खदेड़न, सुहावन, लुभावन।

४. अन्तू—उड़ + अन्तू = उड़न्तू, घूम + अन्तू = घुमन्तू।

५. अंकू—उड़ + अंकू = उड़ंकू।

६. आ—(क) मीठ + बोल + आ = मिठबोला, नाम + ले—नामलेवा, भाड़ + भूँज—भड़भूँजा, सिर + चढ़—सिरचढ़ा।
(ख) बैठ—बैठा, सो—सोया, पढ़—पढ़ा, खा—खाया, नहा—नहाया, जान—जाना; देख—देखा, धो—धोया, पढ़ा—पढ़ाया।

७. आऊ—बिक + आऊ = बिकाऊ, टिक—टिकाऊ, दिखा—दिखाऊ, उड़ा—उड़ाऊ, चला—चलाऊ, कामचलाऊ, कमा—कमाऊ, धर—धराऊ।

८. आक, आका, आकू—तैर—तैराक, लड़—लड़ाका, उड़—उड़ाक, उड़ाकू।

९. आव—सजा + आव = सजाव (दही)।

१०. आवना—सुहा—सुहावना, लुभा—लुभावना, डरा—डरावना, (सुहा + अना = सुहाना)।

११. इयल—मर—मरियल, अड़—अड़ियल, सड़—सड़ियल।

१२. इया—बढ़—बढ़िया, घट—घटिया।

१३. ई—चमक—चमकी।

१४. उआ—छाँट—छँटुआ, ठोक—ठोकुआ (ठेकुआ), फेंक—फेंकुआ, पोस—पोसुआ।

१५. ऊ—खा—खाऊ, रट—रट्टू, चल—चालू, लग—लागू, (पिछलग्गू), घोंट—घोंटू, (दमघोंटू) उतर—उतारु, बिगाड़—बिगाड़ू, (दूध + काट—दुधकट्टू)।

१६. एरा—कमा—कमेरा (हा), लूट—लुटेरा।

१७. ऐया—बच-बचैया, रच—रचैया।

१८. ओड़,ओड़ा—हँस—हँसोड़, भाग—भगोड़ा।

१९. ना—लदना (बैल), कुढ़ना (आदमी), रोनी या सुहानी (सूरत)।

२०. वैया—गवैया, खेवैया, रखवैया पुछवैया, सुनवैया।

वाला, सार, हार और हारा कृत् प्रत्यय नहीं, क्योंकि पढ़नेवाला, मिलनसार, राखनहार, रोवनहारा आदि में प्रकृति भाग धातु नहीं, कृत् प्रत्ययान्त है।

(आ) तद्धित

(क) संस्कृत

१. अ—चन्द्र—चान्द्र, सूर्य—सौर, पृथिवी—पार्थिव, भूमि—भौम, ऋषि—आर्ष, निशा—नैश, शरद्—शारद, रजस्—राजस, तमस्—तामस, विष्णु—वैष्णव, शक्ति—शाक्त, मथुरा—माथुर, मिथिला—मैथिल, चक्षुष्—चाक्षुष, विवस्वत्—वैवस्वत, व्याकरण—वैयाकरण, पाण्डु—पाण्डव, भरत—भारत, सर्वभूमि—सार्वभौम।

२. आयन (य+आयन=यायन —बदरी—बादरायण, शकट—शाकटायन, संकृति—सांकृत्यायन, वत्स—वात्स्यायन, कोसल—कौसल्यायन।

३. आल, आट—वाक्—वाचाल, वाचाट।

४. इ—दशरथ—दाशरथि, सुमित्रा—सौमित्रि, मरुत्—मारुति।

५. इक—वेद—वैदिक, हृदय—हार्दिक, पिता—पैतृक, तार्किक, आर्थिक, दैनिक, मासिक, वार्षिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, नैष्ठिक, नैतिक, भौतिक, लौकिक, धार्मिक, सात्त्विक, नाविक, तात्कालिक, सामयिक, आध्यात्मिक, दैहिक, सैनिक, धनिक, वधिक, वैतनिक, यौगिक, औद्योगिक, सार्वलौकिक, मानसिक, सार्वजनिक, आधुनिक, सांप्रतिक, ऐहिक, सार्वत्रिक, पारत्रिक, पारस्परिक, पुरातात्त्विक।

६. इत—पुष्पित, पल्लवित, कुसुमित, अंकुरित, प्रतिबिम्बित, द्विगुणित।

७. इन्—गुणी (गुणिन्), धनी, क्रोधी, कामी, सुखी, दुःखी, रोगी।

८. इन—मल+इन=मलिन।

९. इम—अग्र—अग्रिम, पश्चात्—पश्चिम।

१०. इय—यज्ञ+इय=यज्ञिय, राष्ट्र+इय=राष्ट्रिय, श्रोत्र+इय=श्रोत्रिय।

११. इल—पंक+इल=पंकिल, फेनिल, जटिल, [illegible], धूमिल।

१२. ईन—ग्राम + ईन = ग्रामीण, सर्वजन-सर्वजनीन, विश्वजन—विश्वजनीन, कुलीन ।

१३. ईय—भारतीय, स्वर्गीय, भवत्—भवदीय, राजन्—राजकीय, स्व—स्वकीय, पर—परकीय ।

१४. एय—कुन्ती—कौन्तेय, अग्नि—आग्नेय, पथिन्—पाथेय, पुरुष—पौरुषेय ।

१५. ठ—कर्म—कर्मठ, जरा—जरठ ।

१६. तन—पुरा—पुरातन, अद्यतन, चिरंतन, सनातन, सदातन ।

१७. त्य—दक्षिण—दाक्षिणात्य, पश्चात्—पाश्चात्य, पुरस्—पौरस्त्य ।

१८. म—मध्य + म = मध्यम, आदिम, अधम, परम ।

१९. मत् (मान् या वान्)—बुद्धिमान्, श्रीमान्, आयुष्मान्, विद्यावान्, गुणवान्, यशस्वान् ।

२०. मय-जलमय, मृद् + मय = मृन्मय, तेजोमय, विष्णुमय, दुःखमय ।

२१. मिन् (मी)—वाच् + मिन् (ग्मिन्) = वाग्मी ।

२२. य—ग्राम—ग्राम्य, धन—धन्य, वध—वध्य, सभा—सभ्य, मुख—मुख्य, अन्त—अन्त्य, वन—वन्य, सोम—सोम्य, तुला—तुल्य, न्याय—न्याय्य, धर्म—धर्म्य, पथिन्—पथ्य, सदस्—सदस्य, मूर्धा (मूर्धन्)—मूर्धन्य, शरण—शरण्य, गर्ग—गार्ग्य, शक—शाक्य, अगस्ति—अगस्त्य, कुण्डिन—कौण्डिन्य ।

२३. र—मुख—मुखर, मधु—मधुर, नग—नगर, कुन्ज—कुन्जर ।

२४. ल—मांस—मांसल, वत्स—वत्सल ।

२५. विन् (वी)—मेधा—मेधावी, माया—मायावी, तपस्—तपस्वी, यशस्—यशस्वी ।

२६. श—लोम + श = लोमश ।

चित् तद्धित प्रत्यय नहीं, अव्यय है, कदाचित् (कुत्रचित्) किंचित् ।

(ख) हिन्दी

१. आ—भूखा, प्यासा, मैला, प्यासा, ठंडा, साठा । चीपर = चिपरा
मँउप - मंडपा,

२. आऊ—पंडिताऊ ।

३. आया—पर—पराया (माल) ।

४. आर—गाँव—गंवार, दूध—दुधार ।

५. आलू—झगड़ालू ।

६. इम—स्वर्ण—स्वर्णिम (अवसर), बंक—बंकिम, रक्त—रक्तिम ।

७. इयल—दाढ़ी—दढ़ियल ।

८. इया—दुखिया, छलिया, सुखिया, लखिया, बखेड़िया, अढ़तिया, कलकतिया, मथुरिया, बंबइया (आम), झंझटिया (आदमी), मखनिया (कुआँ), मटिया (तेल), पनिया (साँप)।

९. इल—बोझ—बोझिल।

१०. ई—देशी, बिहारी, बंगाली, हिन्दी, भारी, ऊनी, ऊपरी, भीतरी, पहाड़ी, माली (हालत), बाहरी, लखनवी, हवाई, एशियाई, चंपा-चंपई।

११. ईला—रंगीला, रसीला, छबीला, ज़हरीला, पनीला, भड़कीला, शर्मीला, लजीला, कँटीला, नुकीला, रोबीला, बर्फीला, चमकीला, चटकीला।

१२ उआ—गेरुआ, मछुआ।

१३. ऊ—पेटू, बाजारु, नक्कू, गरजू।

१४. ऊनी—बात—बातूनी।

१५. एरा—काँसा कसेरा, मौसा—मौसेरा, ममेरा, फुफेरा चचेरा।

१६. एला—सौत—सौतेला।

१७. एड़ी—गाँजा—गँजेड़ी, भाँग—भँगेड़ी।

१८. ऐत—लाठी—लठैत, डाका—डकैत, नाता—नतैत।

१९. ऐल—खपरा—खपरैल (मकान), तोंद से तोंदैल, गुस्सा से गुस्सैल।

२०. ऐला—बन—बनैला, मूँछ—मुँछैला, विष—विषैला, कषाय—कसैला।

२१. आवन, आवना या औना—भयावना (दृश्य), घिनौना (रूप)।

२२. ला—अगला, पिछला, लाड़ला, धुँधला, सुनहला, रुपहला।

२३. वन्त (वन्ती)—दयावन्त, गुनवन्त, धनवन्त, लाजवन्ती, बेलवन्ती, फुलवन्ती।

२४. वाल, वाला—गयावाल, प्रयागवाल, रिक्शावाला, पैसावाला, लाजवाला, दयावाला, आमवाला, पढ़नेवाला, जानेवाला।

२५. वाँ—पांचवाँ, छवाँ, सातवाँ, आठवाँ, नवाँ।

२६. हा—कबीर—कबिरहा, भूत—भूतहा (घर), सांप—सँपहा (आम), गाली—गरिहा (औरत)।

२७. हर—खेती—खेतिहर,

२८. हर वा हारा—रोअन (न) निहार, देखनहार, बोलनहार।

(ग) उर्दू

१. आना मस्ताना, दोस्ताना सालाना (जलसा), औरताना (तौर-तरीका), बचकाना (स्वभाव)।

२. आनी—मर्दानी (ताकत), जिस्मानी, रूहानी।

३. आवर—दस्तावर, पेशावर, जोरावर,

४. इन्दा—शर्मिन्दा।

५. ई—फारसी, पाकिस्तानी, देहाती, कानूनी, खाकी, खूनी, इल्मी, जिगरी, खुदाई।

६. ईन—नमकीन, शौकीन, रंगीन।

६. ईना—कर्मीना (आदमी)।

७. मन्द—अक्लमन्द, जरूरतमन्द, दौलतमन्द।

८. वर—नामवर, जानवर,ताकतवर, हिम्मतवर।

९. वार—उम्मीदवार, माहवार।

१०. दार—ईमानदार, दूकानदार, फौजदार, तहसीलदार, खरीदार, ठीकेदार।

११. नाक—दर्दनाक, खौफनाक।

शब्द-निर्माण के लिए निर्देश

यदि किसी शब्द से संज्ञाशब्द (भाववाचक संज्ञा) बनाना है, तो निम्नलिखित उपायों में से यथावसर यथास्थान कोई उपयुक्ततम सरलतम उपाय करना चाहिए।

१. यदि किसी धातु से भाववाचक संज्ञा शब्द बनाना है, तो उसमें कोई भाववाचक प्रत्यय जोड़ देना चाहिए; जैसे—पठ् से पठन या पाठ, पढ़ से पढ़ाई, रुक से रुकावट, रह से रहन, झुक से झुकाव, खा से खान या खाना।

२. यदि किसी कृदन्त विशेषण से कृदन्त ही संज्ञा शब्द बनाना है, तो विशेषणकारक प्रत्यय को हटाकर उस की जगह कोई संज्ञाकारक प्रत्यय जोड़ देना चाहिए; जैसे—विचारित से विचार, उद्घृत से उद्धरण, श्रद्धेय से श्रद्धा, परित्यक्त से परित्याग, प्रसिद्ध से प्रसिद्धि, उपलब्ध से उपलब्धि, कमाऊ से कमाई, चालू से चलती आदि।

३. पर इससे तद्धित भाववाचक प्रत्यय भी जोड़ा जा सकता है; जैसे:—श्रद्धेय से श्रद्धेयता या श्रद्धा, प्रसिद्ध से प्रसिद्धता या प्रसिद्धि, दयालु से दयालुता या दया नम्र से नम्रता या नमन, नश्वर से नश्वरता या नाश, शासक से शासकता या शासन, संयुक्त से संयुक्तता या संयोग।

४. यदि किसी प्रातिपदिक से तद्धित प्रत्यय के द्वारा संज्ञा शब्द बनाना है, तो उसमें संज्ञाबोधक प्रत्यय जोड़ देना चाहिए ; जैसे—गुरु से गुरुत्व, महान् से महत्ता या महिमा या महत्त्व, शुचि से शुचिता या शौच, युवा से यौवन, चतुर से चातुरी, कुशल से कौशल, लघु से लाघव, महात्मा से माहात्म्य, सुन्दर से सौन्दर्य, सुन्दरता, सुष्ठु से सौष्ठव आदि।

यदि विशेषणबोधक प्रत्ययान्त से संज्ञा शब्द बनाना है, तो दो उपाय हैं—आगे एक संज्ञाबोधक प्रत्यय जोड़ देना; जैसे :—बुद्धिमान् से बुद्धिमत्ता, अथवा विशेषणबोधक प्रत्यय को हटा लेना; जैसे :—बुद्धिमान् से बुद्धि। इसी प्रकार दयालु से दयालुता या दया, प्रार्थी से प्रार्थिता या प्रार्थना, गुणवान् से गुणवत्ता या गुण, धार्मिक से धार्मिकता या धर्म, ऐच्छिक से ऐच्छिकता या इच्छा, आग्नेय से आग्नेयता या अग्नि, ऐतिहासिक से ऐतिहासिकता या इतिहास, भौगोलिक से भौगोलिकता या भूगोल, नैतिक से नैतिकता या नीति, तपस्वी से तपस्विता या तप, शौर्यवान् से शौर्यवत्ता या शौर्य, सुखी से सुखित्व या सुख, सुखमय से सुखमयता या सुख, गन्धवान् से गन्धवत्व या गन्ध, विलासी से विलासिता या विलास। किन्तु दूसरा प्रकार अधिक अच्छा है।

विशेषण बनाने के लिए भी प्रायः वे ही विधियाँ हैं, जैसे :—

१. धातु में विशेषण शब्द बनाने के लिए विशेषणकारक कृत् प्रत्यय का योग; जैसे :—दा से देय, ज्ञा से ज्ञात, सह् से सहिष्णु, त्यज् से त्याज्य, पठ् से पाठक, भूल से भुलक्कड़, उड़ से उड़न्तू, लूट से लुटेरा आदि।

२. यदि कृत् प्रत्ययान्त संज्ञा शब्द से कृत् प्रत्ययान्त ही विशेषण बनाना है, तो संज्ञा प्रत्यय हटा कर विशेषण प्रत्यय जोड़ देना चाहिए; जैसे :—प्रदान से प्रदेय या प्रदत्त, बंधन से बद्ध, दर्शन से दर्शनीय दृश्य या दृष्ट, विधान से विहित शिक्षा से शिक्षित, उद्दीपन से उद्दीप्त या उद्दीपित प्रार्थना से प्रार्थी, प्रार्थित, या प्रार्थनीय, शासन से शासक, या शिष्य, निषेध से निषिद्ध विजय से विजेता, विजित या विजेय, हँसी से हँसोड़, कुढ़न से कुढ़ना, चलन से चालू, थकान से थका।

३. किन्तु इससे तद्धित विशेषण प्रत्यय भी जोड़ा जा सकता है; जैसे :—विजय से विजेय, विजित या विजयी, क्षमा से क्षम्य क्षमी या क्षमावान्, बुद्धि से बुद्ध या बुद्धिमान्, आरोह से आरूढ़ या आरोही, शम से शान्त या शमी, दया से दयालु या दयावान्, ज्ञान से ज्ञात या ज्ञानी, उपकार से उपकृत या उपकारी, प्रज्ञा से प्रज्ञ, प्रज्ञावान् या प्राज्ञ, अनुराग से अनुरक्त या अनुरागी, समास से समस्त या सामासिक, आलोक से आलोकित या आलोकमय।

४. सामान्य सभी प्रतिपदिकों से विशेषण बनाने के लिए किसी भी विहित तद्धित, प्रत्यय का योग करना चाहिए; जैसे—सुख से सुखी, धन से धनिक या धनवान्, दन्त से दन्त्य या दन्तुर या दन्तावल, यश से यशस्वी, दिन से दैनिक, पश्चात् से पश्चिम या पाश्चात्य, इह से ऐहिक, अधुना से अधुनातन या आधुनिक, प्रागितिहास से प्रागैतिहासिक, आसमुद्र से आसमुद्रीय।

५. तद्धितान्त संज्ञा शब्द से ही विशेषण बनाना हो, तो तद्धित संज्ञा प्रत्यय हटा लेना अथवा तद्धित विशेषण प्रत्यय जोड़ देना दोनों में से—विवक्षा के अनुकूल कोई किया जा सकता है; जैसे :—सामर्थ्य से समर्थ या सामर्थ्यवान्, शौर्य से शूर या शौर्यवान्, सौहार्द से सुहृद् या सौहार्दपूर्ण।

६. समास की सहायता से भी प्रसंग के अनुसार विशेषण बनाए जा सकते हैं; जैसे :—अध्ययन से अध्ययनशील, अध्ययनपरायण नीति से नैतिक या नीतियुक्त, नीतिसंगत, सौहार्द से सौहार्दपूर्ण, तर्क से तार्किक, तर्कपरायण या तर्कसंगत, कुशल से कुशली या सकुशल, बल से बलवान् या सबल, अवकाश से सावकाश, श्रद्धा से श्रद्धालु या श्रद्धान्वित, मुक्ति से मुक्त या मुक्ति-प्राप्त, परिवार से सपरिवार, विनय से विनीत, विनयी, विनयशील या विनयशाली, आनन्द से आनन्दित या सानंद, गौरव से गौरवित या गौरवान्वित, रोग से रोगी या रोगग्रस्त, तेज से तेजस्वी या तेजोदीप्त, सादगी से सादा या सादगीपसंद, कण्ठ से कण्ठ्य या कण्ठस्थ, चाँद से चाँद-सा या चाँदनुमा संमुख से संमुखीन या संमुखस्थ, नमन से नत, नम्र या नमनशील, प्रसंग से प्रासंगिक या प्रसंगागत, प्रसंगप्राप्त, उद्देश्य से सोद्देश्य, लक्ष्य से लक्ष्यभ्रष्ट, संतान से निःसन्तान या संतानवान्, ग्रीवा से उद्ग्रीव या ग्रैवेयक, मुख से उन्मुख या मुख्य।

समास

दो शब्दों का मिलकर एक नया शब्द बनाना अथवा दो शब्दों के योग से बना एक नया शब्द समास कहलाता है। समास होने पर दोनों की विभक्तियाँ तथा संबन्धबोधक शब्द लुप्त हो जाते हैं और दोनों का समुदाय एक नया शब्द बन जाता है, जिसमें प्राप्त संधि अनिवार्य हो जाती है। इस से नये सिरे से एक नई विभक्ति आती है। समास को तोड़ कर समझानेवाला वाक्यांश या पद-समूह विग्रह कहलाता है; जैसे---पाठशाला समास है, पाठ के लिए शाला विग्रह। संधि और समास में निम्नलिखित अन्तर हैं :---(क) संधि एक से अधिक वर्णों का मेल है, समास एक से अधिक पदों (शब्दों) का। (ख) संधि को अर्थ-विशेष की नहीं, केवल ध्वनि-विशेष की अपेक्षा रहती है, समास को अर्थ-विशेष की ही मुख्य अपेक्षा रहती है, ध्वनि-विशेष की अपेक्षा गौण। (ग) संधि में वर्ण-विकार होता है, समास में शब्द-विकार, वह भी अनिवार्य रूप से नहीं; जैसे :---'यद्यपि' में इ का य् हुआ है, 'सजातीय' में समान का स, 'महाविदुषी' में 'महती' का 'महा' आदि। 'विद्यामन्दिर' में समास होने पर भी कोई विकार नहीं हुआ। (घ) सन्धिस्थल में

समास आवश्यक नहीं; जैसे अतएव, यद्यपि में संधि है, समास नहीं पर समासस्थल में प्राप्त संधि आवश्यक है; जैसे :--सुर + ईश = सुरेश। (ङ) संधि एक शब्द में भी होती है; जैसे :---पवन, गव्य; समास सदा अनेक पदों में ही होता है। संधि का तोड़ना विच्छेद कहा जाता है, समास का विग्रह। अर्थ की दृष्टि से समास में प्रायः चार परिस्थितियाँ हो सकती हैं; उन के ही अनुसार समास के चार प्रकार होते हैं :—

अव्ययीभाव

(क) इस समास में प्रायः पहला पद प्रधान होता है। (ख) पहला पद प्रायः अव्यय भी होता है। (ग) समास से बना अर्थात् समस्त पद भी अव्यय, क्रियाविशेषण ही होता है, अतः वह सदा लिंग, वचन और विभक्ति से हीन रहता है। (च) इस का विग्रह, अर्थात् इस के दोनों पदों का स्वतन्त्र रूप से पृथक् प्रयोग प्रायः नहीं होता, क्योंकि यह प्रायः नित्य समास होता है। यह अनेक अर्थों में विहित है, जैसे :—

(१) 'से ले कर' या तक :—आजन्म (जन्म से लेकर) आपाद, आमरण (मरण पर्यन्त) आजीवन, यावज्जीवन, आजानु, आदि।

(२) क्रम—ज्येष्ठ के क्रम से = अनुज्येष्ठ।

(३) 'के अनुकूल—यथाशक्ति (शक्ति के अनुकूल), यथासमय, यथोचित।

(४) वीप्सा—प्रतिदिन (दिन दिन), प्रतिव्यक्ति, प्रतिविद्यालय।

(५) के योग्य—रूप के योग्य = अनुरूप, गुण के योग्य = अनुगुण।

(६) अभाव—मक्षिकाओं का अभाव = निर्मक्षिक, जनों का अभाव = निर्जन।

तत्पुरुष

तत्पुरुष में प्रायः दूसरा पद प्रधान होता है। इसमें प्रथमतः दो श्रेणियाँ होती हैं :—(क) जिसमें दोनों पद दो वस्तुओं को कहते हैं और भिन्न-भिन्न विभक्तियों में रहते हैं, उसे व्यधिकरण तत्पुरुष कहते हैं (ख) जिसमें दोनों पद एक ही वस्तु को कहते तथा एक ही विभक्ति में रहते हैं, उसे समानाधिकरण।

व्यधिकरण तत्पुरुष

व्यधिकरण तत्पुरुष के निम्नलिखित मुख्य भेद होते हैं :—

१. द्वितीयातत्पुरुष :—अवकाश को प्राप्त = अवकाश प्राप्त, आशा को अतीत = आशातीत, संकट को आपन्न = संकटापन्न, सत्ता को आरूढ़ = सत्तारूढ़, मन को पसन्द = मनपसन्द।

२. तृतीयातत्पुरुष :—कालिदास से रचित = कालिदास-रचित, कष्ट से प्राप्त = कष्टप्राप्त, हस्त से लिखित = हस्तलिखित, संकट से ग्रस्त = संकटग्रस्त, क्रोध से अन्धा = क्रोधान्ध, मद से माता = मदमाता।

३. चतुर्थीतत्पुरुष :—ईश्वर के लिये अर्पण = ईश्वरार्पण, बालकों के लिए उचित = बालकोचित, विद्या के लिए आलय = विद्यालय, गृह के लिए मन्त्री = गृहमन्त्री, छात्र के लिए उपयोगी = छात्रोपयोगी, राह के लिए खर्च = राहखर्च, गाय के लिए ग्रास = गोग्रास।

विशेष—देश के लिए = देशार्थ, न्याय के लिए = न्यायार्थ आदि।

४. पञ्चमीतत्पुरुष :—लोक से भय = लोकभय, भय से भीत = भयभीत, मार्ग से भ्रष्ट = मार्गभ्रष्ट; सेवानिवृत्त, दूरागत, देश से निकाला = देशनिकाला।

५. षष्ठीतत्पुरुष :—लोक का नायक = लोकनायक, अवध के नरेश = अवधनरेश, देश का रत्न = देशरत्न, भाग्य के विधाता = भाग्य-विधाता, राजा का दरबार = राजदरबार।

६. सप्तमीतत्पुरुष : वन में वास = वनवास, रण में कुशल = रणकुशल, सभा में पटु = सभापटु, शिला पर लेख = शिलालेख, आप पर बीती = आपबीती, घोड़े पर सवार = घुड़सवार।

७. जिस व्यधिकरण तत्पुरुष में दूसरा पद किसी धातु से कृत् प्रत्यय कर बनाया गया होता है, उसे उपपद तत्पुरुष कहते हैं, वह नित्य समास होता है। उस के दोनों पद बिना समास के (पृथक् पृथक्) नहीं रहते; जैसे—जलद = जल को देनेवाला, उरग = उर से जानेवाला, अण्डज = अण्डों से उत्पन्न, गृहस्थ = घर में रहनेवाला, दिनकर = दिन करनेवाला, क्षणस्थायी, सत्यवादी, संपत्तिशाली भस्मीभूत, समीकरण, ग्रन्थकार, भुखमरा, चिड़ीमार, कठफोड़वा।

८. एकदेशि-समास—इसमें पहला खण्ड अवयव और दूसरा समुदाय का बोधक रहता है, जो प्रायः षष्ठ्यन्त रहता है, जैसे :—अहन् (दिन) का मध्य (भाग) = मध्याह्न, अपरभाग = अपराह्ण, पूर्वभाग = पूर्वाह्ण, रात्रि का अपर भाग = अपररात्र, काय का पूर्व (भाग) = पूर्वकाय।

समानाधिकरण तत्पुरुष

इसे ही कर्मधारय कहते हैं। इस में निम्नलिखित स्थितियाँ रह सकती हैं—

१. पहला पद विशेषण रह सकता है—महान् पुरुष = महापुरुष, शुभ आगमन = शुभागमन, कटु उक्ति = कटूक्ति, पक्व अन्न = पक्वान्न।

२. दोनों पद विशेषण रह सकते हैं—श्वेत और रक्त = श्वेतरक्त, पहले सुप्त फिर उत्थित = सुप्तोत्थित, कृष्ण और लोहित = कृष्णलोहित, देखा और सुना = देखासुना, खाया और पीया = खायापीया, खटमिट्ठी।

३. पहले उपमान रह सकता है, बाद में साधारण धर्म—घन की भाँति श्याम = घनश्याम, कमल के समान कोमल = कमलकोमल, दुग्धोज्ज्वल, वज्रकठोर, माटी की तरह मैला = मटमैला।

४. पहले उपमेय और बाद में उपमान भी रह सकता है—सिंह के समान नर = नरसिंह, कमल के समान चरण = चरणकमल, चन्द्र के समान मुख = मुखचन्द्र।

५. उपमान के बाद भी उपमेय रह सकता है---चन्द्र के समान मुख = चन्द्रमुख, कमल के समान नयन = कमलनयन।

६. रूपक कर्मधारय—इसमें भी पहले उपमेय रहता है, पर उपमेय को उपमान के समान नहीं, उपमान रूप समझा जाता है, इसे ही रूपक कर्मधारय कहते हैं, जैसे :---मुखरूपी चन्द्र = मुखचन्द्र। इसी भाँति भवसागर, जगज्जाल, विद्याधन, शोकानल, दुःखसागर, वचनामृत, आशालता।

७. पहले 'कु' अव्यय रह सकता है। यह नित्य समास होता है; जैसे :—कु + पुत्र = कुपुत्र, कु + मार्ग = कुमार्ग, कु + पुरुष = कापुरुष (कु = का), कु + राह = कुराह।

८. पहले 'न' अव्यय रह सकता है। इसे नञ् तत्पुरुष कहते हैं। ऐसी स्थिति में 'न' के स्थान में आगे व्यंजन रहने पर 'अ' तथा स्वर रहने पर 'अन्' हो जाता है; जैसे—न + ज्ञान = अज्ञान, न + योग्य = अयोग्य, न अवसर = अनवसर, न आस्था = अनास्था, न + इष्ट = अनिष्ट, न + उचित = अनुचित, न + टूट = अटूट। हिन्दी में न का व्यंजन के पूर्व अन आदेश भी मिलता है, न + जाना = अनजाना, न + देखा = अनदेखा, न + भला = अनभल, न + बन = अनबन। ऐसे ही अनपढ़ आदि।

कहीं-कहीं 'न' यथावस्थ रह जाता है; जैसे :—न + गण्य = नगण्य (अगण्य भी होता है, दूसरे अर्थ में)। ऐसे ही नकुल, नख, नपुंसक, नक्षत्र, नास्तिक आदि।

९. कोई संख्या भी रह सकती है। संख्यापूर्वपद कर्मधारय को ही द्विगु कहते हैं; जैसे :---तीन भुवनों का समूह = त्रिभुवन, सात ऋषियों का समूह = सप्तर्षि, नौ रत्नों का समूह = नवरत्न। इसके अन्त में कोई स्त्रीप्रत्यय भी आ सकता है; जैसे—तीन लोकों का समुदाय = त्रिलोकी, सौ अब्दों (वर्षों) का समूह = शताब्दी; और तद्धित भी; जैसे :—तीन-तीन मासों पर होनेवाला = त्रैमासिक, छह-छह माहों पर होनेवाला = छमाही।

१०. मध्यमपदलोपी तत्पुरुष भी इसी का भेद है, इसमें मध्य का एक पद लुप्त रहता है, जैसे—मर्यादारक्षक पुरुष = मर्यादापुरुष, छायाप्रद तरु = छायातरु आनन्दप्रद भवन = आनन्दभवन, चन्द्र सदृश मुख = चन्द्रमुख, सिंहासन, भिक्षान्न, पर्णकुटी, स्वर्णाक्षर, यमयातना।

११. मयूर व्यसकादि—भिन्न देश = देशान्तर, दूसरा काल = कालान्तर, अन्य विषय = विषयान्तर, केवल लेश = लेशमात्र, केवल एक = एकमात्र ।

१२. प्रादि–इसमें पूर्व खंड कोई उपसर्ग रह सकता है। यह नित्य समास होता है, जैसे :—प्रकृष्ट आचार्य = प्राचार्य, उपनिर्देशक, प्रचार, पराजय, अपमान, संसार, अनुभव, अत्याचार, अतीन्द्रिय आदि ।

१३. कोई दूसरा अव्यय भी रह सकता है, जैसे :–तिरस्कार, अन्तर्धान प्रादुर्भाव, आविष्कार, नमस्कार, सहशिक्षक आदि ।

बहुव्रीहि

जिस समास में न पूर्वपद प्रधान रहता है, न उत्तरपद, किसी अन्य पद का अर्थ प्रधान रहता है, उसे बहुव्रीहि कहते हैं। जिन दोनों पदों में समास होनेवाला है, वे चाहे परस्पर समानाधिकरण (एक-विभक्तिक = प्रथमान्त) रह सकते हैं, चाहे व्यधिकरण (भिन्न-विभक्तिक)। साथ ही जिस अन्य पद के अर्थ में समास हो रहा है, वह द्वितीया से सप्तमी तक किसी भी विभक्ति में रह सकता है। अर्थात् विग्रह करने पर (समास को तोड़ने पर) निम्नलिखितों में से कोई भी अर्थ हो सकता है :–ऐसा है (क) जिसको, (ख) जिसके द्वारा, (ग) जिसके लिए, (घ) जिस से, (ङ) जिसका तथा (च) जिसमें। इस प्रकार बहुव्रीहि के निम्नलिखित भेद हो सकते हैं :—

समानाधिकरण बहुव्रीहि

१. समानाधिकरण द्वितीया बहुव्रीहि—प्राप्त है राज्य जिसको वह प्राप्तराज्य; अवाप्त है सकल काम जिसको वह अवाप्तसकलकाम ।

२. समानाधिकरण तृतीया बहुव्रीहि—जित हैं इन्द्रियाँ जिसके द्वारा वह जितेन्द्रिय, दत्त है चित्त जिसके द्वारा वह दत्तचित्त; कृत है कृत्य जिसके द्वारा वह कृतकृत्य ।

३. समानाधिकरण चतुर्थी बहुव्रीहि—समर्पित है कृति जिसके लिए वह समर्पितकृति (गुरु, पिता, माता आदि)। इसके उदाहरण अत्यल्प मिलते हैं।

४. समानाधिकरण पंचमी बहुव्रीहि–लुप्त है विभक्ति जिससे वह लुप्त-विभक्तिक पद, विगत है श्री जिससे वह विगतश्री या विश्री (नगरी); नहीं है उत्तम जिससे वह अनुत्तम (सुख), निकल गया है भय जिससे वह निर्भय ।

५. समानाधिकरण षष्ठी बहुव्रीहि सर्वाधिक उदाहरण इसीके मिलते हैं; जैसे—मधुर है प्रिय जिसका वह मधुरप्रिय, बद्ध है मूल जिसका वह बद्धमूल, स्वार्थ है परायण (परम लक्ष्य) जिसका वह स्वार्थपरायण, [illegible]

है शील जिसका वह उन्नतिशील, कटा है सिर जिसका वह सिरकटा, कटी है नाक जिसकी वह नकटा, चल है मन जिसका वह मनचला।

६. समानाधिकरण सप्तमी बहुव्रीहि—व्यक्ति है प्रधान जिसमें वह व्यक्तिप्रधान, नहीं है कण्टक जिसमें वह अकण्टक, लगा है तार जिसमें वह लगातार, जमा है घट जहाँ वह जमघट, आधा है जल जिसमें वह अधजल (गगरी), पत्ते झड़ते हैं जिसमें वह मौसम पतझड़।

प्राय: विद्वानों को भी समानाधिकरण तत्पुरुष के साथ समानाधिकरण बहुव्रीहि का भ्रम हो जाता है। यह याद रखना चाहिये कि तत्पुरुष में उत्तर पद की प्रधानता रहती है, बहुव्रीहि में अन्य पदार्थ (जिसका, जिसमें) की। इसी की तुलना से भ्रम का निवारण कर लेना चाहिये, जैसे---

१. विशेषण पूर्णपद :—महान् पुरुष = महापुरुष यह कर्मधारय है और महान् है आशय जिसका वह महाशय यह बहुव्रीहि। महाबाहु आदि भी ऐसे ही हैं।

२. उपमार्थक—चन्द्र के समान वदन चन्द्रवदन। राम का चन्द्रवदन देखकर आँखें जुड़ा गईं [कर्मधारय]। चन्द्र के समान वदन है जिसका = चन्द्रवदन; चन्द्रवदन राम को देखकर आँखें जुड़ा गईं। इसी प्रकार कुशाग्रबुद्धि, चन्द्रमुखी, शूर्पणखा, कमलनयन, राजीवलोचन, मूसलधार (मुसलाधार) वृष्टि आदि।

३. मध्यम-पद-लोपी—मेघ के गर्जन के समान गर्जन = मेघगर्जन (कर्मधारय), मेघ के नाद (गर्जन) के समान नाद है जिसका वह = मेघनाद (बहुव्रीहि)। इसी प्रकार, मृगनयना, कोकिलकण्ठी, गजानन, वकोदर, पिकबैनी, बंदरमुँहा आदि।

४. निषेधार्थक—न + ज्ञान = अज्ञान---नञ् तत्पुरुष। नहीं है बल जिसमें वह = अबल—बहुव्रीहि। इसी प्रकार, नहीं है सार जिसमें वह = असार, अनादि, अनन्त, अनर्थक, अनाथ, अबला, अनायास, अनन्तर, अनधिकार, अनुपम आदि सभी नञ् बहुव्रीहि हैं (नञ् तत्पुरुष या नञ् समास नहीं)।

५. अव्ययपूर्वपद---प्रकृष्ट है बल जिसमें वह प्रबल, निर्गत है भय जिससे वह निर्भय, निर्जीव, निर्धन, निर्बल, विगत हैं धव (पति) जिसके वह विधवा आदि।

६. सख्यापूर्वपद---तीन लोक = त्रिलोकी, पाँच पात्र = पञ्चपात्र तत्पुरुष (द्विगु) है। किन्तु पाँच नद हैं जिस प्रदेश में, अथवा पाँच नद वाला प्रदेश = पंचनद (पंजाब, दश हैं आनन जिसके वह दशानन (रावण) बहुव्रीहि है। इसी प्रकार द्विभुज, चतुर्भुज, त्रिभुज, त्रिकोण, चतुष्पथ, चतुष्पद, चौपाया, चौपाई, तिरंगा, सतखण्डा, दुनली आदि बहुव्रीहि हैं (द्विगु नहीं)।

७. कु पूर्वपद वाला—कुत्सित पात्र = कुपात्र, कुत्सित बुद्धि = कुबुद्धि, तत्पुरुष (कर्मधारय) है। उसकी कुबुद्धि से ही यह हुआ है। कुत्सित है बुद्धि जिसकी वह कुबुद्धि (बहुव्रीहि) है। वह कुबुद्धि है। कुचैला, कुढंगा में भी बहुव्रीहि ही है।

बहुव्रीहि में कहीं-कहीं अवधारण अर्थ भी छिपा रहता है; जैसे :—प्रज्ञा ही है चक्षु जिसका वह = प्रज्ञाचक्षु (नेत्रहीन विद्वान्)। तप ही है धन जिसका वह = तपोधन, नाम या कीर्त्ति ही है शेष जिसका वह = नामशेष, कीर्तिशेष।

व्यधिकरण बहुव्रीहि

इसमें एक पद प्रथमान्त रहता है, दूसरा अन्य विभक्त्यन्त; जैसे :—पद्म है नाभि में जिसके वह = पद्मनाभ। चन्द्र है शेखर पर जिसके वह = चन्द्रशेखर, नाभि से जन्म है जिसका वह = नाभिजन्मा इत्यादि।

बहुव्रीहि के कुछ और भेद—

१. सहार्थक तथा समानार्थक—कुशल के साथ = सकुशल, आनन्द के साथ = सानन्द, परिवार के साथ = सपरिवार; सजीव; समान है उदर जिसका वह = सोदर या सहोदर; समान, सगोत्र, सवर्ण, सजातीय।

२. दिगन्तरालवाचक—जिस बहुव्रीहि से दो दिशाओं की मध्यवर्ती या समीपवर्ती दिशा सूचित होती है, उसे दिगन्तरालवाचक बहुव्रीहि कहते हैं, जैसे—उत्तर और पूर्व के बीच की दिशा—उत्तरपूर्व दिशा, दक्षिण और पश्चिम के बीच की दिशा - दक्षिणपश्चिम।

३. संख्यान्तरालवाचक—उपर्युक्त प्रकार से बहुव्रीहि द्वारा दो संख्याओं के पास की संख्या भी सूचित की जाती है; जैसे:—दो और तीन के पास की संख्या = दोतीन, हजार और दो हजार के पास की संख्या = हजार-दो-हजार।

हिन्दी में दिशा और संख्या से भिन्न अन्तराल भी इस समास से सूचित किये जाते हैं, जैसे :—आज और कल के बीच या पास का काल—आजकल; पूस और माघ के बीच या पास का काल—पूस-माघ। इन से काल का अन्तराल सूचित होता है। इसी प्रकार 'थोड़ा-बहुत' में मात्रा का अन्तराल।

४. कर्मव्यतिहारवाचक—जहाँ यह भाव प्रकट करना होता है कि परस्पर कोई एक ही कार्य कर दो आदमी आपस में लड़ रहे हैं, वहाँ भी बहुव्रीहि होती है; जैसे :—केशों में पकड़ कर किया गया झगड़ा—केशाकेशि, दण्ड (लाठी) से मार मार कर किया गया झगड़ा—दण्डादण्डि। हिन्दी के मुक्कामुकी, लाठालाठी, बाताबाती, कहाकही आदि इस के ही उदाहरण हैं। हिन्दी में कहीं दूसरे खण्ड में

थोड़ा या बहुत परिवर्तन भी हो जाता है; जैसे :—धक्काधुक्की, काटाकूटी, आपाधापी, गालीगलौज। कहीं दूसरा शब्द सर्वथा भिन्न, सदृशार्थक भी रहता है; जैसे— छीना-झपटी, कहा-सुनी, खींचा-तानी, लिखा-पढ़ी, तू-तू-मैं-मैं आदि।

बल्कि हिन्दी में झगड़े से भिन्न अर्थ में भी यह समास होता है; जैसे— लुक्का-चोरी, लीपापोती।

जहाँ परस्पर करने का भी भाव नहीं है, वहाँ भी यह देखा जाता है; जैसे :—बूँदाबाँदी, मोटामोटी, आनाकानी आदि।

द्वन्द्व

जिस समास में सभी पदों की प्रधानता बनी रहती है उसे द्वन्द्व कहते हैं। इस के निम्नलिखित दो भेद होते हैं :—

१. इतरेतरयोग—इसमें प्रत्येक पद की पृथक् पृथक् प्रधानता रहती है, इसीलिये यह अनेकवचन रहता है; जैसे:—राम और लक्ष्मण—रामलक्ष्मण। यह तीन चार पदों वाला भी होता है; जैसे :—राम-लक्ष्मण-भरत-शत्रुघ्न कहाँ खेल रहे होंगे? यहाँ नून-तेल-धनियाँ-मिर्च-अदरख नहीं बिकते हैं। वे आँख-कान-नाक-गला विशेषज्ञ हैं।

२. समाहार द्वन्द्व—इस में सभी पदों की प्रधानता सुरक्षित रहने पर भी वास्तविक प्रधानता समाहार अर्थात् समुदाय की होती है। इसीलिये यह सदा एकवचन रहता है; जैसे :—अन्न और जल—अन्नजल, मैंने उन का अन्न-जल खाया है। पान और फूल—वहाँ पान-फूल मिल जाता है। आहार-निद्रा-भय-मैथुन सब पशुओं का एक सा है। स्टेशन के पास दही-चूड़ा-चीनी भी मिल जाती है। हिन्दी का आवागमन, हवापानी आबहवा आदि इसी के उदाहरण हैं।

३. विकल्पार्थक—हिन्दी में विकल्प अर्थ में भी द्वन्द्व देखा जाता है; जैसे :—गुण-दोष—(गुण या दोष), सुख-दुःख, हाँ-ना आदि।

हिन्दी के सभी युग्मात्मक शब्द द्वन्द्व के ही प्रकार-भेद हैं, जिन के निम्नलिखित प्रकार हैं :—

१. दो परस्पर विरुद्धार्थक—नरनारी, लेन-देन, जीवन-मरण, जोड़तोड़, उतार-चढ़ाव, उधेड़-बुन।

२. दो सदृशार्थक—बोलचाल, उछल-कूद, लेखा-जोखा, मोल-तोल।

३. दो पर्याय (अभिन्नार्थक)—नन्हा-मुन्ना, बाल-बच्चा, सेवा-शुश्रूषा, मार-पीट, रुपया-पैसा।

४. पहले सार्थक शब्द फिर उसका अनुरणन मात्र—धूम-धाम, देखरेख, भीड़-भाड़, देख-दाख, बचा-खुचा, कभी-कभार।

५. पहले निरर्थक तब सार्थक—आमने-सामने, आस-पास, अड़ोस-पड़ोस।

६. दोनों निरर्थक, केवल समूह सार्थक—ऊल-जलूल, ऊटपटांग, अनाप-शनाप, लगभग।

टिप्पणी—कुछ ऐसे भी स्थल होते हैं, जहाँ समास तो है, पर वे अव्ययीभाव, तत्पुरुष, बहुव्रीहि और द्वन्द्व चारो से बहिर्भूत है। इन्हें सुविधा के लिए **केवल समास** ही कह देते हैं; जैसे–जो पूर्व में भूत है वह भूतपूर्व। इसके स्थल विरल हैं।

अलुक् समास

साधारणतः समास होने पर सभी पदों की मूल विभक्तियाँ लुप्त हो जाती हैं और समुदाय से एक विभक्ति आती है, क्योंकि समुदाय ही एक प्रातिपदिक बन जाता है। परन्तु कभी कहीं बीच की विभक्ति जमी रह जाती है, नहीं हटती। इसे ही अलुक् (लुक् हटना) समास कहते हैं। ऐसा कई समासों में होता है, जैसे—

तत्पुरुष—वनेचर, युधिष्ठिर, मनसिज, सरसिज, दिवोदास, अन्तेवासी, पश्यतोहर।

बहुव्रीहि—कण्ठेकाल, उरसिलोमा।

अव्ययीभाव—पारेगंग, मध्येगंग।

हिन्दी में भी बलात्कार में पंचमी का अलुक है।

प्र आदि (उपसर्ग निपात तथा) अव्यय

संस्कृत में प्र आदि २२ उपसर्ग (निपात) तथा कुछ और ऐसे अव्यय हैं, जिनका स्वतन्त्र पृथक् प्रयोग नहीं होता। प्रादि सदा किसी दूसरे शब्द (प्रायः क्रिया); के साथ ही जुड़े रहते हैं। इन सबों को निपात भी कहते हैं। इनके योग से शब्दों का अर्थ बहुत बदल जाता है, परन्तु ठीक-ठीक यह बता देना कठिन है कि किस उपसर्ग का क्या अर्थ है।

उपसर्ग

प्र, परा, अप, सम्, अनु, अव, निस् (निर्), दुस् (दुर्), वि, आ, नि, अधि, अपि, अति, सु, उद्, अभि, प्रति, परि, उप।

एक ही मूल शब्द विभिन्न उपसर्गों के योग से विभिन्न अर्थ प्रकट करता है। इसके कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं—

हार—प्रहार, आहार, संहार, विहार, परिहार, उपहार, उद्धार, नीहार।

कार प्रकार, आकार, विकार, उपकार, अपकार, अधिकार, प्रतिकार, संस्कार।

भव—प्रभव, विभव, परिभव, उद्भव, सम्भव, पराभव, अनुभव, अभिभव।

ये प्रादि निपात जहाँ भी कहीं किसी संज्ञा या विशेषण से जुड़ते हैं, वहाँ कोई-न-कोई समास अवश्य रहता है। यह सोचना भ्रम है कि उपसर्ग का योग समास से स्वतंत्र रूप में नए शब्द के निर्माण का साधन है; जैसे—

अव्ययीभाव : आजीवन, प्रतिदिन, सम्मुख, अभिमुख, अधिगृह, उपगृह।

तत्पुरुष : प्राचार्य, प्रज्ञ, संख्या निधि, सुलभ, निष्ठा, संदेश, आवास, प्रतिज्ञा, अतीन्द्रिय, निर्वासन।

बहुव्रीहि : प्रवल (प्रकृष्ट है बल जिस में), निर्बल (नहीं है बल जिस में) उन्मुख (ऊपर है मुख जिस का), विमुख (विपरीत है मुख जिसका)। कुपुत्र, अज्ञान, सकुशल, आविष्कार, प्रादुर्भाव आदि के कु, अ, स आविस् और प्रादुस् आदि संस्कृत के तथा अनजान, निडर आदि के अन, नि आदि हिन्दी के उपसर्ग की भाँति ही प्रयुक्त होते हैं। खुशबू, बेईमान, लापरवाह, नासमझ, बदनाम आदि के खुश, बे, ला, ना, बद आदि उर्दू के उपसर्ग हैं।

उपसर्ग, अव्यय पूर्वसर्ग योग

प्र—प्रलाप, प्रयत्न, प्रदत्त, प्रलोभन, प्रदर्शन, प्रदान, प्रकोप, प्रचलित, प्रफुल्लित।

परा—पराजय, पराभव, पराक्रम, परामर्श।

अप—अपहरण, अपकार, अपसरण, अपादान, अपमान, अपराध, अपकर्ष।

सम्—संस्कार, समालोचना, संयुक्त, संभव, संख्या, संगति, संघ, संचय।

अनु—अनुराग, अनुशीलन, अनुकरण, अनुसरण, अनुचर, अनुमान, अनुभव।

अव—अवमान, अवसर, अवतार, अवगत, अवधि, अवनत, अवस्था, अवज्ञा।

निस्—निर्वाह, निष्कृति, निर्गम, निश्चय, निर्णय, निर्यात, निष्पन्न, निर्देश।

दुस्—दुस्तर, दुष्कर, दुर्गम, दुर्दम, दुर्जय, दुर्लभ, दुःसह।

वि—विन्यास, व्यापक, व्याधि, व्यवहार, विकल्प, व्यवस्थित, विभव।

आ—आकार, आहार, आगम, आधार, आदान, आयत, आराम, आदेश।

नि—निवारण, निवास, निगम, निदान, निधि, निपात, निलय, निदेश।

अधि—अधिकार, अधिगत, अध्ययन, अध्यास, अधीक्षक, अध्यवसाय ।

अति—अतिशय, अतिक्रमण; अतिचार, अतिपात, अतिरिक्त, अतिवाहन ।

अपि—अपिगलन (पिघलना), अपिधान, अपिशलन, (फिसलना) ।

सु—सुकर, सुगम, सुलभ, सुपच, सुपठ, सुरम्य ।

उद्—उद्भावना, उत्कृष्ट, उत्पात, उद्गम, उद्धार, उच्चारण, उज्ज्वल ।

अभि—अभिकरण, अभिगम, अभिजन, अभिधान, अभिभव, अभिमान, अभिसरण ।

प्रति—प्रतिकार, प्रतिज्ञा, प्रतिष्ठा, प्रतिदान, प्रतिपत्ति, प्रतिभा, प्रतिमा ।

परि—परिश्रम, पर्याप्त, परित्यक्त, परिवर्तन, परिभव, परिष्कार, परिचय ।

उप—उपार्जन, उपकार, उपचय, उपेक्षा, उपाय, उपधा, उपपत्ति, उपादान ।

अव्यय— संस्कृत :—तिरस्—तिरस्कार, तिरोभाव, तिरोधान ।

अन्तर्—अंतर्भाव, अंतर्धान, अन्तर्गत ।

आविस्—आविष्कार, आविर्भाव, प्रादुर्भाव, नमस्कार, पुरस्कार, साक्षात्कार आदि में भू या कृ के साथ विभिन्न अव्ययों का का योग ।

हिन्दी—नि—निरोग, निडर, निड़धक, निहत्था ।

सु—सुघड़, सुडौल, सपूत ।

कु—कुकाठ, कुघड़ी, कुढंग, कपूत ।

अन—अनगिनत, अनमोल, अनजान, अनदेखा, अनसुना, अनदेखी, अनकहा

अ—अपढ़, अथाह, अलग । अधूरा,

उर्दू

गैर—गैरहाजिर, गैरवाजिब, गैरकानूनी, गैरमुनासिब, गैरसरकारी ।

ना—नापसन्द, नापाक, नालायक, नासमझ, नादान ।

ला—लापता, लाजवाब, लापरवाह, लावारिस ।

बे—बेवजह, बेवकूफ, बेरहम, बेईमान, बेइन्साफ, बेकसूर, बेइन्तजाम ।

कम—कमजोर, कमबख्त ।

खुश—खुशबू खुशदिल, खुशनसीब ।

बद—बदमाश, बदनाम, बदकिस्मत, बदबू ।

हम—हमदर्द, हमउम्र, हमराही ।

शब्द–द्वित्व

कभी-कभी वाक्य में किसी अर्थ-विशेष को प्रकट करने के लिये कोई शब्द दो (या दो से अधिक) बार भी कहा जाता है; इसे द्वित्व या द्विवचन (या पुनरुक्ति) कहते हैं। यह सब प्रकार के शब्द-भेदों का होता है। यह द्वित्व समासवत् ही समझा जाता है। प्रकरण-भेद तथा शब्द-भेद से पुनरुक्ति द्वारा निम्नलिखित अर्थ प्रकट किये जाते हैं :—

१. व्यापकता (वीप्सा, प्रत्येकता)—**बच्चा-बच्चा** जानता है (संज्ञाद्वित्व)।

२. विभिन्नता—**देश-देश** के लोग आये हैं, **कौन-कौन** आया है (सर्वनाम द्वित्व)।

३. क्रम—वह दिन-दिन दुबला होता गया।

४. आधिक्य—**टुकड़ा-टुकड़ा** कर दिया।

५. सजातीयता—पीले-पीले फूल हैं (विशेषण द्वित्व)।

६. पारस्परिकता—भाई-भाई का प्रेम दुर्लभ है। **चोर-चोर** मौसेरे भाई।

७. सादृश्य—वह आजकल **खोया-खोया** (या **पीला-पीला**) दिखता है।

८ प्रकार, रीति—वह भागा-भागा मेरे पास पहुँचा। **धीरे-धीरे** बोलो (क्रियाविशेषण द्वित्व)।

९. मनोवेगों का आधिक्य—

भय —साँप-साँप !
शोक—हाय-हाय !
घृणा—छिः छिः ! राम राम !
क्रोध—मारो-मारो (क्रिया द्वित्व) !
हर्ष—माँ माँ ! गाड़ी गाड़ी !
आदर—आइये आइये।
प्रशंसा—वाह वाह !
प्रार्थना—कृष्ण कृष्ण !

शीघ्रता, आतुरता—बचाओ बचाओ। त्राहि त्राहि। पानी पानी !

अनादर—बस बस, हटो हटो !

क्रिया-द्वित्व से कुछ भिन्न प्रकार के भी अर्थ निकलते हैं—

१. पौनः पुन्य (बार-बार)—**जय जय जय** गिरिराज किशोरी; **पूछ पूछ कर** दो। चिट्ठी देते देते हार गया।

२. निरंतरता—रोता रोता घर पहुँचा अँसुवन जल **सींच सींच**।

३. आधिक्य—पढ़ते पढ़ते सिर में दर्द होने लगा।

४. अवधि—चढ़ते चढ़ते ही गाड़ी खुल गई। पहले पहले।

५. सन्देह—क्या ठिकाना; दें दें न दें।

६. हठ—करूँगा, करूँगा, सौ बार करूँगा ।

पुनरुक्त शब्दों के बीच कोई अव्यय भी प्रविष्ट हो जाता है अथवा 'ओं' का आगमन हो जाता है; जैसे – वहाँ कुछ-न-कुछ होगा, जीवन में दुःख-ही-दुःख है, वहाँ हजारों-हजार आदमी थे। कहीं-कहीं यह शब्द-समूह अव्ययीभाव समास-सा एक शब्द बन जाता है, जिससे अक्सर सप्तमी या तृतीया विभक्ति आ कर लुप्त हो जाती है; जैसे--वह मन-ही-मन दुःखी हुआ, बात-ही-बात झगड़ा शुरू हो गया; दिनों दिन बढ़ता गया, हाथों हाथ वहाँ पहुँच गया।

दोनों के बीच आई 'का' विभक्ति (क) कहीं वस्तु की यथावस्थता व्यक्त करती है; जैसे--वह मूर्ख का मूर्ख रह गया; (ख) कहीं प्रचुरता; जैसे--घर का घर जल कर खाक हो गया; ग) कहीं शीघ्रता; जैसे बात की बात में वह आ पहुँचा। "कहाँ का कहाँ" दोनों स्थानों की दूरी बताता है। और "कहाँ से कहाँ" कही दूरी, कहीं अनुताप; जैसे–अब तक वह कहाँ का कहाँ, या कहाँ से कहाँ पहुँचा होगा। मैंने कहाँ से कहाँ यह बताया। "क्या से क्या" भी दो स्थितियों का अंतर ही बताता है। "कम से कम" में निर्धारण सूचित होता है। गरम गरम का गरमा गरम भी हो जाता है। ऐसे ही धड़-धड़ – धड़ाधड़।

समासवत् हो जाने के कारण इस द्विरुक्त प्रातिपदिक से तद्धित प्रत्यय भी जुड़ते हैं, पुनः पुनः से पौनःपुन्य, वाह वाह से वाहवाही, गरमागरम से 'गरमागरमी' धड़ाधड़ से धड़ाधड़ी, भागो भागो से भागाभागी।

संज्ञा विशेषण सूची

संज्ञा	विशेषण	संज्ञा	विशेषण
अंश	अंशी	अंचल	आंचलिक, अंचलीय
आंशिकता	आंशिक	अंजन	अक्त, निरंजन
अंक	अंकित	अंजना	आंजनेय
अंकन	अंकनीय	अच्छाई	अच्छा
अंकुर	अंकुरित	अणु	आणविक
अंकुरण	अंकुरणीय	अधिकार	अधिकारी, अधिकृत
अंकुश	निरंकुश	अतिरंजना	अतिरंजित
अंग	अंगी, आंगिक	अतिरेक	अतिरिक्त

संज्ञा	विशेषण
अध्ययन	अधीत, अध्येतव्य, अध्येता
अध्यात्म	आध्यात्मिक
अनय	अनयी, अनयपूर्ण
अनीति	अनीतिपूर्ण
अनुकम्पा	अनुकम्पनीय, अनुकम्पित
अनुज्ञा	अनुज्ञात, अनुज्ञेय
अनुभव	अनुभवी
अनुभूति	अनुभूत
अनुभवन	अनुभवनीय
अनुमान	अनुमेय, अनमानित
अनुमिति	अनुमित
अनुमोदन	अनुमोदित, अनुमोदनीय
अनुराग	अनुरागी
अनुरक्ति	अनुरक्त
अनुवाद	अनुवादित अनुवाद्य
अनुवदन	अमुवदनीय, अनुवादार्ह
अनुष्ठान	अनुष्ठित, अनुष्ठेय
अनुस्मार	अनुस्मारित
अनुस्मारण	अनुस्मारणीय
अन्तर	अन्तरित, निरन्तर
अन्तराय	सान्तराय, निरन्तराय
अन्तर्धान	अन्तर्हित, अन्तर्धेय
अन्धता, अन्धापन	अन्ध
अन्न	अन्नमय, अन्नपूर्ण
अन्वय, अन्वयन, अन्विति	अन्वित
अपनापन, अपनायत	अपना
अपमान	अपमानित
अपाय	अपेत, अपेय
अपिधान	अपिहित, अपिधेय
अपेक्षा	अपेक्षित, सापेक्ष, अपेक्षणीय

संज्ञा	विशेषण
अपोह	अपोहित, अपोहनीय
अपोहन	अपोह्य
अभिधा, अभिधान	अभिधेय, अभिहित
अभिलाष	अभिलषित, अभिलाषी,
अभिलाषा	अभिलषणीय
अभिषेक	अभिषिक्त, अभिषेचनीय
अभ्यास	अभ्यासी, अभ्यस्त,
अभ्यसन	अभ्यसनीय
अरण्य	आरण्यक
अर्गला	अर्गलित, निरर्गल
अर्ध	अर्ध्य
अर्चन, अर्चना	अर्चित, अर्चनीय,
अर्चा	अर्च्य
अर्जन	अर्जित, अर्जनीय
अर्थ	आर्थिक, अर्थवान्, अर्थी, सार्थक
अर्थन, अर्थना	अर्थित, अर्थनीय, अर्थ्य
अर्पण	अर्पित, अर्पणीय, अर्प्य
अलंकरण	अलंकरणीय
अलंकृति	अलंकृत
अलंकार	सालंकार, आलंकारिक
अवतरण	अवतरणीय
अवतार	अवतीर्ण
अवसाद	अवसन्न
अवधान	अवहित, सावधान
अवनति	अवनत, अवनमनीय,
अवनमन	अवनम्य
अवरोध	अवरुद्ध, अवरोधी,
अवरोधन	अवरोद्धव्य, अवरोध्य
अवलम्ब,	अवलंबित,
अवलम्बन	अवलंबनीय, अवलंबी

संज्ञा	विशेषण
अवसान	अवसित
आकलन	आकलित, आकलनीय
आकर्षण	आकृष्ट, आकर्षित
आकाश	आकाशीय, आकाशस्थ
आकांक्षा	आकांक्षित, साकांक्ष
आख्यान, आख्या	आख्यात, आख्येय
आग	अगिया
आगम,	आगत, आगामी,
आगमन	आगन्तुक
आघात	आहत
आचमन	आचमनीय
आचरण	आचरणीय, आचार्य,
आचार	आचरित, आचारी
आडम्बर	आडम्बरी, आडम्बरपूर्ण
आततायिता	आततायी
आतंक	आतंकित, सातंक
आत्मा	आत्मीय, आत्मनीन
आदर	आदरणीय, आदृत
आदि	आदिम, आद्य
आधिक्य, अधिकता	अधिक
आधान	आधेय, आहित
आधार	आधारित, आधृत
आयु	आयुष्मान्, आयुष्य
आरम्भ	आरब्ध, आरम्भक, आरम्भणीय, आरम्भिक
आराधना	आराध्य, आराधित
आरोप, आरोपण	आरोपित, आरोपणीय
आरोहण,	आरुढ़, आरोहणीय,
आरोह	आरोही
आलस्य	आलसी, अलस

संज्ञा	विशेषण
आलोक,	आलोकित,
आलोकन	आलोकनीय
आलोचन	आलोचित,
आलोचना	आलोच्य, आलोचनीय
आवरण, आवृति	आवृत, आवरणीय
आवर्त्तन	आवृत्त, आवर्त्ती
आवृत्ति	आवर्त्तनीय, आवर्त्तित
आविष्कार	आविष्कृत
आवेश	आविष्ट
आशा	आशावान्, आशामय
आश्चर्य	आश्चर्यित, आश्चर्यान्वित
आश्रय, आश्रयण	आश्रित, आश्रयणीय
आसक्ति	आसक्त
आसत्ति	आसन्न
आसन	आसीन
आहुति	आहुत, आहवनीय
आह्वान, आहूति	आहूत, आह्वातव्य
इच्छा	इच्छित, इच्छु, इष्ट, ऐच्छिक
इज्जत	इज्जतदार, इज्जती
इतिहास	ऐतिहासिक
इन्दु	ऐन्दव
इन्द्र	ऐन्द्र, इन्द्रिय
इन्द्रजाल	ऐन्द्रजालिक
इन्द्रिय	ऐन्द्रियिक
इनाम	इनामदार
इल्जाम	मुलाजिम
इल्म	आलिम
इहलोक	ऐहलौकिक
ईक्षण,	ईक्षित, ईक्ष्य, ईक्षितव्य
ईक्षा	ईक्षणीय
ईप्सा	ईप्सित, ईप्सु, ईप्सितव्य

संज्ञा	विशेषण
ईमान	ईमानदार
ईर्ष्या	ईर्ष्यालु, ईर्ष्यी, ईर्ष्यित
ईश्वर	ईश्वरीय
ईसा	ईसवी, ईसाई
ईहा	ईहित, ईहनीय
उक्ति	उक्त
उच्चारण	उच्चारित, उच्चारणीय,
उच्चार	उच्चार्य
उड्डयन	उड्डीन
उड़ान	उड़ंतू, उड़ाका
उत्तर	उत्तरी, उत्तरित
उत्तरण, उत्तीर्णता	उत्तीर्ण
उतावली	उतावला
उत्कर्ष	उत्कृष्ट
उत्कण्ठा	उत्कण्ठित
उत्तेजना	उत्तेजित
उत्पत्ति, उत्पाद,	उत्पन्न,
उत्पादन	उत्पादक, उत्पादित
उत्साह	उत्साहित, उत्साही
उद्गम, उद्गति	उद्गत
उदय, उदयन	उदित, उदीयमान
उदीची	उदीच्य
उद्धार,	उद्धृत, उद्धारक,
उद्धरण	उद्धरणीय
उद्बोधन	उद्बुद्ध, उद्बोधक,
उद्बोध	उद्बोधनीय
उद्भव	उद्भूत, उद्भावक
उद्योग	उद्योगी, औद्योगिक
उद्वेग	उद्विग्न, उद्वेजक
उपकार,	उपकारी, उपकारक,
उपकृति	उपकार्य, उपकृत

संज्ञा	विशेषण
उपचार	उपचरित, उपचारक, औपचारिक
उपज	उपजाऊ
उपदेश,	उपदेष्टा, उपदिष्ट,
उपदेशन	उपदेशक, उपदेश्य
उपद्रव	उपद्रवी, उपद्रुत, उपद्रवग्रस्त
उपनयन	उपनीत, उपनेय,
उपनिषद्	उपनेतव्य औपनिषदिक
उपनिवेश	औपनिवेशिक, उपनिविष्ट
उपन्यास	औपन्यासिक, उपन्यस्त
उपमा,	उपमित,
उपमिति	उपमान, उपमेय
उपयोग	उपयोगी, उपयुक्त
उपलब्धि, उपलम्भ	उपलब्ध, उपलभ्य
उपस्थिति	उपस्थित
उपहार, उपहरण	उपहरणीय
उपहृति	उपहृत, उपहर्त्तव्य
उपहास	उपहसित, उपहसनीय
उपाय	उपेत, उपेय
उपासक	उपास्य, उपासनीय
उर (उरस्)	औरस, उरस्य,
उल्लास	उल्लसित, सोल्लास
उल्लेख,	उल्लिखित, उल्लेख्य
उल्लेखन	उल्लेखनीय
उपवास	उपोषित
ऊँचाई	ऊँचा
ऊन	ऊनी
ऊपर	ऊपरी, उपरला
ऊर्जा, ऊर्जन	ऊर्जित, ऊर्जस्वी, ऊर्जस्वल
ऊर्मि	ऊर्मिल

संज्ञा	विशेषण
ऊह, ऊहा	ऊह्य, ऊहित, ऊहनीय
ऋजुता, आर्जव	ऋजु
ऋण	ऋणी, ऋणग्रस्त
ऋद्धि	ऋद्ध
ऋषि	आर्ष
एकत्व, एकता, ऐक्य	एक
एकीकरण	एकीकृत
एकीभाव	एकीभूत
एतद्देश	एतद्देशीय
एशिया	एशियाई
एषणा	इष्ट, एषणीय
एहसान	एहसानमन्द
ऐकमत्य, मतैक्य	एकमत
ऐश	ऐयाश
ऐश्वर्य	ईश्वर
ओज	ओजस्वी
ओछापन	ओछा
ओष्ठ	ओष्ठ्य
ओहदा	ओहदेदार
औचित्य	उचित
औरत	औरताना
कंकड़	कंकरीला
कंगाली	कंगाल
कंगूरा	कंगूरेदार
कंचुक	काञ्चुकीय
कंटक	कंटकित
कंठ	कंठ्य
कच्चापन	कच्चा
कठिनता, काठिन्य	कठिन
कड़वापन, कड़वाहट	कड़वा
कड़ापन, कड़ाई	कड़ा

संज्ञा	विशेषण
कतल	कातिल
कत्था	कत्थई
कन्नौज	कनौजिया
कथन	कथित, कथ्य, कथनीय
कपट	कपटी
कपूर	कपूरी
कमाई	कमाऊ
कमीनापन	कमीना
कारुण्य	करुणामय, करुण
करुणा	कारुणिक, करुणावान्
कलुष, कालुष्य	कलुषित
कल्पना	कल्पित, कल्पनीय
कल्याण	कल्याणकर, कल्याणप्रद
कवित्व, काव्य	कवि
कमी	कम
कर्म	कर्मठ, कर्मण्य
कर्तृत्व	कर्त्ता
कलंक	कलंकित
कर्त्तन	कृत्त, कर्तनीय
कर्ज	कर्जदार
कसरत	कसरती
कम्प, कम्पन	कम्पित, कम्पनीय, कम्प्र, कम्पायमान
कन्या	कानीन
कलम	कलमी
कवच	कवचित
काम	कमाऊ, कमेड़ा, कामयाब
काम	सकाम, कामुक, कामी
काल	कालिक
कालापन, कालिमा	काला

संज्ञा	विशेषण	संज्ञा	विशेषण
कामना	काम्य	कृष्णता, कार्ष्ण्य	कृष्ण
कामकाज	कामकाजी	केन्द्र	केन्द्रीय
कागज	कागजी	केसर	केसरिया
कांचन	कांचनमय	कैवल्य	केवल
कांटा	कँटीला	कैंकर्य, किंकरता	किंकर
कान्ति	कान्त	कैशोर्य, किशोरता	किशोर
काय, काया	कायिक	कौमार्य, कौमार कौमारक	कुमार
कातरता, कातर्य	कातर	कौटिल्य, कुटिलता	कुटिल
काहिली	काहिल	कौम कौमियत	कौमी
किताब	किताबी	कौवाली	कौवाल
किराया	किरायेदार	कोप	कुपित
किस्मत	किस्मतवर	क्रम	क्रमिक
किस्सा	किस्सागोई, किस्सागो	क्रमण, क्रान्ति	क्रान्त, क्रमणीय
कीर्त्ति	कीर्तिशाली, कीर्तिकर	क्रय, क्रयण	क्रीत, क्रेतव्य
कीर्त्तन	कीर्त्तनीय, कीर्त्तित	क्रिया	सक्रिय, क्रियावान्
कुशलता, कौशल	कुशल	क्रीडा	क्रीडाशील
कुण्ठा	कुण्ठित	क्लम, क्लान्ति	क्लान्त
कुटुम्ब	कौटुम्बिक	क्रोध	क्रोधी, क्रुद्ध
कुत्सा	कुत्सित, कुत्स्य	क्लेद	क्लेद्य, क्लिन्न
कुल	कुलीन	क्लेश	क्लिष्ट
कुसुम	कुसुमित	क्षण	क्षणिक
कुण्डल	कुण्डलित, कुण्डली	क्षति	क्षत, क्षतिग्रस्त
कुदरत	कुदरती	क्षमता	क्षम, सक्षम
कूबड़	कुबड़ा	क्षमा	क्षमी, क्षमावान्, क्षमाशील
कृति	कर्त्ता, कृत, करणीय	क्षात्र	क्षत्र, क्षत्रिय
कृतित्व	कृती	क्षेप, क्षेपण	क्षिप्त, क्षेपणीय
कृपणता, कार्पण्य	कृपण	क्षुधा	क्षुधित
कृपा	कृपालु, कृपावान्	क्षेत्र	क्षेत्री, क्षेत्रीय, क्षेत्रिय
कृशता, कार्श्य	कृश	क्षोभ	क्षुब्ध, क्षुभित
कृषि, कर्षण	[illegible], कर्षणीय	खण्ड, खण्डन	[illegible], खण्डनीय

संज्ञा	विशेषण	संज्ञा	विशेषण
खटाई, खटास, खट्टापन	खट्टा	खैरात	खैराती
खब्त	खब्ती	खोज	खोजी
खयाल	खयाली	खोट, खोटापन	खोटा
खरबूज	खरबूजी	खोंचा	खोंचाफरोश
खरापन	खरा	खौफ	खौफनाक
खराबी	खराब	ख्याति	ख्यात
खरीद, खरीदारी	खरीदार	ख्वाहिश	ख्वाहिशमन्द
खर्च	खर्चीला	गंभीरता, गांभीर्य	गंभीर
खतरा	खतरनाक	गगन	गगनचुम्बी
खपड़ा	खपड़पोश, खपड़ैल	गठन	गठीला
खनन	खात, खननीय	गंगा	गांग, गांगेय
खस्तगी	खस्ता	गति, गमन	गत, गम्य, गंतव्य
खाक	खाकी, खाकसार	गंदगी	गन्दा
खानदान	खानदानी	गन्ध, गन्धवत्ता-गन्धवान्, गन्धी, गान्धिक	
खातमा	खतम	गणन, गणना	गण्य, गणनीय, गणित
खाना	खाऊ	गधापन	गधा
खामोशी	खामोश	गप्प, गप, गपोड़ा	गप्पी, गपोड़
खारापन	खारा	गन्धक	गंधकी
खासियत	खास, खासा	गन्धर्व	गान्धर्व
खिंचाव, खिंचावट	खिंचा	गफलत	गाफिल
खिदमत	खिदमतगार, खादिम	गम	गमगीन
खिलाफत	खलीफा	गया	गयावाल
खीझ	खीझा	गरज	गरजमन्द, गरजू,
खुदी	खुद	गरूर	मगरूर
खुराफात	खुराफाती	गर्व	गर्वीला
खून	खूनी	गर्हा	गर्हित, गर्ह्य
खूबी	खूब	गवेषणा	गवेषित, गवेषणीय
खेती	खेतिहर	गश्त	गश्ती
खेद	खिन्न	गांठ	गाँठदार
खेल, खिलवाड़	खिलाड़ी	गान, गायन	गेय
		गाँव	गँवई, गँवार

संज्ञा	विशेषण
गुच्छा	गुच्छेदार
गुंडई	गुंडा
गुण	गुणी, गुणीभूत, गौण
गुणन	गुणित
गुनाह	गुनाहगार
गुस्सा	गुस्सावर
गुंजन	गुंजित
गृह	गृही
गार्हस्थ्य, गृहस्थी	गृहस्थ
गेहूँ	गेंहुआ
गैरीयत	गैर
गोपन, गूहन	गुप्त, गोप्य, गूढ़, गोपनीय
गोबर	गुबरैल
गौड़	गौड़ीय, गौड़ी
गौरव, गुरुता, गुरुत्व, गरिमा	गुरु, गौरवान्वित
ग्रह, ग्रहण	गृहीत, ग्राह्य, ग्रहणीय
ग्रन्थि, ग्रन्थन	ग्रन्थिल, ग्रथित
ग्रास, ग्रसन	ग्रस्त, ग्रसित
ग्लानि	ग्लान
घर	घरेलू, घरू, घरैया
घर्षण	घर्षित
घात, वध, हनन	वध्य, हत
घिन	घिनौना
घाव	घायल
घृणा	घृणित, घृणी
घूमना	घुमन्तू, घुमक्कड़ घुमावदार
घूस	घूसखोर
घोषणा	घोषित
घ्राण	घ्रेय, घ्रात

संज्ञा	विशेषण
चक्र	चक्रित, चक्री, चक्रधर
चक्षु	चाक्षुष, चक्षुष्य, चक्षुष्मान्
चंगापन	चंगा
(प्र)चण्डता, चण्डिमा	चण्ड
चन्द्र	चान्द्र
चन्द्रमा	चान्द्रमस
चन्द्रिका	चन्द्रिकामय
चमत्कृति, चमत्कार–	चमत्कृत, चमत्कारी
चरित्र	चारित्रिक, चरित्रवान्
चर्चा	चर्चित, चर्चनीय
चर्वण, चर्वणा	चर्वित, चर्व्य
चटोरापन	चटोरा, चटोर
चट्टान	चट्टानी
चतुराई, चातुरी, चातुर्य	चतुर
चमक	चमकीला
चम्पा	चम्पई
चरवाही	चरवाहा
चर्म	चर्ममय, चर्मण्य
चलन	चलाऊ, चलनसार
चाल	चलित, चलायमान, चालू
चाचा	चचेरा
चाटुकारता, चाटुकारी	चाटुकार
चाटुकारिता	चाटुकारी
चापलूसी	चापलूस
चाँद	चाँदनुमा
चिकनाहट, चिकनाई	चिकना
चिकित्सा	चिकित्सक, चिकित्सित
चिट्ठी	चिट्ठीरसा
चिर	चिरंतन
चेतना, चैतन्य	चेतन

संज्ञा	विशेषण	संज्ञा	विशेषण
चीन	चीनी, चिनिया	जगत्	जागतिक
चुम्बक	चुम्बकीय	जटा	जटिल, जटाल, जटी
चुम्बन	चुम्बित	जड़ता, जाड्य	जड़
चुगली, चुगल	चुगलखोर	जनन	जनित, जात, जनक
चुप्पी, चुपकी	चुप्पा, चुपका	जप	जपी, जपनीय
चुस्ती	चुस्त	जबान	जबानी
चेष्टा	सचेष्ट, चेष्टावान्	जवानी	जवान
चैत	चैती, चैता	जमीन	जमीनदार
चोरी, चौर्य	चोर, चौर	जमानत	जामिन
चोटी	चोटीदार	जय— जेय, जित, जयी, जित्वर, जिष्णु	
चौड़ाई	चौड़ा	जरा	जरठ, जीर्ण, जरी
चौधराई	चौधुरी	जरूरत	जरूरी
च्यवन, च्युति	च्युत	जर्दी	जर्द
छत्र	छत्रित, छात्र	जल	जलीय
छद्म	छद्मी	जल्दी	जल्द
छन्द	छान्दस, छन्दोमय	जल्पन	जल्पित, जल्पाक
छल, छलावा	छलिया, छली	जवाब	जवाबी
छवि	छवीला	जहाजरानी	जहाजरान
छल्ला	छल्लेदार	जहालत	जाहिल
छाया	छायामय	जंगल	जंगली, जांगलिक
छाँह	छाँहदार	जागृति, जागरण	जागरूक, जाग्रत
छिछोरापन	छिछोरा	जातीयता, जाति	जातीय
छिद्र	छिद्रित, छिद्रमय, सच्छिद्र	जादू	जादूगर
छूत	छुतहा	जाल	जाली
छेदन	छेत्ता, छिन्न, छेद्य, छेदनीय	जिन्दगी	जिन्दा
छोटाई, छोटापन, छुटपन	छोटा	जिजीविषा	जिजीविषु
जईफी	जईफ	जिज्ञासा	जिज्ञासित, जिज्ञासु, जिज्ञास्य
जंग	जंगी	जिद	जिद्दी
जंजाल	जंजाली	जिम्मेदारी	जिम्मेदार
जखम	जखमी	जिम्मा	जिम्मेवार

संज्ञा	विशेषण
जिस्म	जिस्मानी, जिस्मी
जीवन,	जीवित, जीवी,
जीव	जैविक, जैव
जुआ, जूआ	जुआड़ी
जुगुप्सा	जुगुप्सित
जुदाई	जुदा
जुझार, जूझना	जुझारु, जुझाऊ
जेब	जेबी
जेहन	जहीन
जोगी	जोगिया
जोश	जोशीला
ज्ञान	ज्ञातव्य, ज्ञाता, ज्ञानी, ज्ञेय, ज्ञात
ज्ञापन	ज्ञापित
ज्योति	ज्योतिष्मान्, ज्योतिर्मय
ज्योतिष	ज्योतिषी
ज्वर	ज्वरित, ज्वरी, ज्वरग्रस्त
ज्वलन	ज्वलित
झंकार	झंकृत, झंकारित
झंझट	झंझटी, झंझटिया
झक	झक्की
झगड़ा	झगड़ालू
झुठाई, झूठापन	झूठा
झुर्री	झुर्रीदार
टंकन	टंकित, टंकनीय
टकसाल	टकसाली
टहल	टहलुआ
टालना	टालू
टिकना	टिकाऊ
ढंढा	ढेंढिहा

संज्ञा	विशेषण
टेढ़ापन	टेढ़ा
टोना	टोनहा
टोह	टोही, टोहिया
ठंड, ठंढ़	ठंडा, ठंढा
ठकुराई	ठाकुर
ठगैती, ठगई	ठग
ठहराव, ठहराना	ठहराऊ
ठीका	ठीकेदार
डंक	डंकदार
डकैती, डाका	डकैत, डाकू
डर	डरू, डरपोक
डराना	डरावना
डाक	डाकिया
डाह	डाही
डूबना	डुब्बा
डेढ़	डेढ़ा, डेवढ़ा, डयोढ़ा
डोरा	डोरिया
ढलाई, ढाल, ढलना	ढलवाँ, ढालू
ढिठाई	ढीठा
ढिलाई, ढील	ढीला
ढोलक	ढोलकिया
तंगी	तंग
तन्दूर	तन्दूरी
तन्द्रा	तन्द्रालु, तन्द्री, तन्द्रिल
तजुरबा	तजुरबेदार
तट	तटीय
तत्काल	तात्कालिक, तत्कालीन
तत्परता, तात्पर्य	तत्पर
तत्त्व	तात्त्विक, तत्त्ववान्
तत्सामीप्य, तत्समीपता	तत्समीप

संज्ञा	विशेषण	संज्ञा	विशेषण
तटस्थता, ताटस्थ्य	तटस्थ	तिरोधान	तिरोहित, तिरोधेय
तन्मयता	तन्मय	तिरोभाव	तिरोभूत
तप, तपस्या	तपस्वी, तापस	तिल, तैल	तैलिक
तपन, ताप	तप्त	ताम्बूल	ताम्बूलिक
तबला	तबलिया, तबलची	तिलिस्म	तिलिस्मी
तबाही	तबाह	तीर	तीरवर्त्ती
तम् (तमस्)	तामस, तमोमय	तुङ्गता	तुङ्ग
तमाशा	तमाशाई, तमाशबीन	तुन्द	तुन्दिल
तरंग	तरंगित	तुक, तुकबन्दी	तुक्कड़
तरण	तीर्ण, तरणीय, तार्य	तुतलाहट	तोतला
तरलता	तरल	तुनक	तुनकमिजाज
तरुणाई, तारुण्य	तरुण	तुर्क	तुर्की, तुर्कीना
तर्क	तार्किक, तर्की	तुला, तुलना,	तुल्य, तुलनीय
तर्पण, तृप्ति	तृप्त, तर्पणीय	तुलन	तुलित
तर्ष, तर्षण,	तृषित, तर्षित,	तुष्टि, तोष, तोषण	तुष्ट, तोषित
तृषा, तृष्णा	तृष्णावान्	तृण	तृणमय
तलब	तलबगार	तेज, तेजस्विता	तेजस्वी, तैजस
तल्खी	तल्ख	तेजी	तेज
ताकत	ताकतवर	तेल	तेलिया
ताजगी	ताजा	तैरना	तैराक
ताडन, ताडना	ताडित, ताडनीय	तोंद	तोंदैल
तादर्थ्य	तदर्थ	त्याग, त्यजन	त्यक्त, त्यागी, त्याज्य
तारक	तारकित	त्रास, त्रसन	त्रस्त, त्रासित
ताल	तालिया	त्राण	त्रात, त्राता, त्रातव्य
तालु	तालव्य	त्रासन	त्रासित
तीखापन	तीखा	त्रुटि	त्रुटित, त्रुटिपूर्ण
तितिक्षा	तितिक्षु	त्रिकाल	त्रैकालिक
तितीर्षा	तितीर्षु	त्वचा	त्वाच
तिमिर	तिमिरमय	त्वरा, त्वरण	त्वरणीय, त्वरित
तिरस्कार	तिरस्कृत, तिरस्करणीय	थकान, थकावट	थका, थकित
तिरहुत	तिरहुतिया	थोथापन	थोथा

संज्ञा	विशेषण
दलन	दलित
दस्त	दस्तावर, दस्ती
दाम्पत्य	दम्पति
दाक्षिण्य	दक्षिण
दाक्ष्य, दक्षता	दक्ष
दाखिला	दाखिल
दाग	दागी, दागदार
दंड, दंडन	दण्डनीय, दण्डी. दंड्य
दन्त	दन्त्य, दन्तुल, दन्तुर
दंभ	दंभी, दांभिक
दाढ़ी	दढ़ियल
दर्द	दर्दनाक, दर्दमन्द
दानव	दानवी
दाना	दानेदार
दाम	दामी
दायित्व	दायी
दारण	दीर्ण, दारक, दारित
दारिद्र्य, दरिद्रता	दरिद्र
दारु	दारुमय
दृढ़ता, दार्ढ्य, द्रढिमा	दृढ
दारोगाई, दारोगागरी	दारोगा
दास्य, दासता	दास
दिखावा, दिखावट	दिखावटी, दिखाऊ
दिदृक्षा	दिदृक्षु
दिन	दैनिक
दिमाग	दिमागी, दिमागदार
दिल	दिलदार, दिलवर, दिलेर, दिलावर, दिली
दिल्लगी	दिल्लगीबाज
दिवाला	दिवालिया
दर्शन, दैश	दिष्ट, देशी, देशीय
दीक्षा	दीक्षित
दीनता, दैन्य	दीन
दीप्ति, दीपन	दीपक, दीप्त, दीपित
दीवानी	दीवान
दुःख, दुख	दुःखमय, दुखिया, दुःखी, दुःखित,
दुआ	दुआगो
दूध	दुधिया, दुधार, दुधैल
दुनिया	दुनियावी, दुनियाई
दुम	दुमदार
दौरात्म्य	दुरात्मा
दुबलापन	दुबला
दुर्गति	दुर्गत
दुलार	दुलारा
दूषण, दोष	दूषित, दुष्ट, दोषी, दूष्य
दूत्य, दौत्य	दूत
दूब	दूबिया
देना	देवैया
देह	दैहिक, देही
देव	दैविक
दोला, दोलन	दोलित, दोलायमान
दौलत	दौलतमन्द
द्वार	दौवारिक
द्रव	द्रवित, द्रुत
द्रोह	द्रोही
द्वीप	द्वैपायन
दंगा	दंगाई, दंगई, दंगैत
दंश, दंशन	दष्ट, दंशित
दकियानूसी	दकियानूस
दक्खिन	दक्खिनी

संज्ञा	विशेषण	संज्ञा	विशेषण
दक्षिण	दाक्षिणात्य	धूप	धूपित
दगा	दगाबाज	धूम	धूमिल, धूमी, धूम्र
दधि	दाधिक	ध्यान	ध्येय, ध्यात, ध्यातव्य, ध्यानी
दफा	दफादार	ध्वंस	ध्वस्त
दबाव, दबना	दब्बू	ध्वज	ध्वजी
दमन	दम्य, दान्त, दमित,	ध्वनन, ध्वनि	ध्वनित, ध्वन्य
दम	दयनीय, दमी	नकल	नकलची, नकली
दया	दयालु, दयावान्, दयामय	नक्काशी	नक्काश
दरिया	दरियाई	नाक	नक्कू
दर्प	दृप्त, दर्पित, दर्पी	नख	नखी
दर्शन, दृष्टि	दृश्य, दर्शनीय, दृष्ट	नगर	नागरिक, नागर
दल	दलीय	नजदीक	नजदीकी
दलदल	दलदला	नमन, नति	नत, नम्य, नमनीय
दादा	ददिया	नदी	नादेय
दान	दत्त, दातव्य, देय, दानी	नय, नयन, नीति	नीत, नेय, नेतव्य
दाह, दहन	दग्ध, दहनीय, दाह्य	नफासत	नफीस
दिमाग	दिमागदार, दिमागी	नभ	नभस्य
धन	धनवान्, धनी, धनिक	नमस्या	नमस्य
धनुष	धनुष्मान्, धानुष्क	नरक	नारकीय, नरकी
धरण	धृत, धर्त्ता	नरमी	नरम
धारण	धार्य, धारित, धारणीय	नर्त्तन, नृत्य	नर्त्तित, नर्तक
धरना	धराऊ	नशा	नशेबाज, नशीला
धर्म	धार्मिक, धर्मी, धर्म्य	नाश	नश्वर, नष्ट
धर्षण	धर्षित, धर्षणीय	नासा	नस्य
धवलिमा	धवल	नमक	नमकीन
धातु	धातुमान्, धातुमय	नहर	नहरी
धान	धानी	नाद, नदन	नादित, नदित
धाष्ट्र्य, धृष्टता	धृष्ट	नासिका	नासिक्य
धैर्य, धृति धीरता	धीर	नाटक	नाटकीय, नाटकी
धुंधलापन, धुन्ध	धुँधला	नापित्य	नापित
धुआँ	धुआँयँध	नाभि	नाभ्य, नभ्य
धुरा	धुरीण, धुर्य		

संज्ञा	विशेषण	संज्ञा	विशेषण
नाम	नामी	नुमाइन्दगी	नुमाइन्दा
नाव	नाव्य	नोक	नुकीला
निन्दा, निन्दन—	निन्दनीय, निन्दित, निन्द्य	नोदन, नोद—	नोदित, नोदी, नोदनीय
निकर्ष	निकृष्ट	नौकरी	नौकर
निष्कर्ष	निष्कृष्ट	नौबत	नौबती
निगडन, निगड	निगडित	न्यसन, न्यास –	न्यस्त, न्यासी, न्यसनीय
निराकरण	निराकृत, निराकरणीय	न्याय	न्यायी, न्यायसंगत, नैयायिक
निगरण	निगीर्ण	न्यूनता	न्यून
निठुरपन, निठुराई	निठुर	पंक	पंकिल
निडरपन	निडर	पंक्ति	पांक्तेय
निद्रा	निद्रित, निद्रालु	पंगुता	पंगु
निधान, निधि	निहित, निधेय	पंचायत	पंचायती
निवेदन—	निवेदित, निवेदनीय, निवेद्य	पंजर	पंजरित
निष्पत्ति, निष्पाद—	निष्पन्न, निष्पाद्य	पंडिताई, पांडित्य	पंडित
निष्पादन	निष्पादित, निष्पादनीय,	पँवारा	पँवरिया
निपुणता, नैपुण्य	निपुण	पक्ष	पाक्षिक, पक्षी, पक्षीय
निमित्त	नैमित्तिक	पच्छिम	पच्छिमी, पछवाँ
नियुक्ति,	नियुक्त, नियोज्य	पछाँह	पछाँही
नियोजन	नियोजक, नियोजनीय	पटना	पटनहिया
निवृत्ति, निवर्त्तन	निवृत्त	पटुता, पाटव	पटु
निर्वृत्ति, निर्वर्त्तन	निर्वृत्त	पठन, पाठ	पाठ्य, पठित, पठनीय
निर्वृति, निर्वाण	निर्वृत	पड़ोस	पड़ोसी
निष्ठा	नैष्ठिक, निष्ठित	पण, पणन	पण्य, पणित, पणनीय
निशा	नैश	पतन, पात	पतित, पतनशील
निसर्ग	नैसर्गिक	पतंजलि	पातंजल
नीचता, निचाई—	नीच, नीचा, निचला	पत्थर	पथरीला
नील	निलहा	पथ	पथ्य, पाथेय, पथिक, पान्थ
नीति	नैतिक	पद	पदाति, पदिक
नेकी	नेक	पद्य	पद्यमय, पद्यात्मक
नुमाइश	[illegible]	[illegible]	[illegible]

संज्ञा	विशेषण	संज्ञा	विशेषण
पय	पयस्य, पयस्वी, पयस्विनी	पलायन	पलायित, पलायमान
परख	पारखी	पल्लव, पल्लवन	पल्लवित
परमार्थ	पारमार्थिक, परमार्थी	पशु	पाशविक
परंपरा, परंपर्य	परंपरित, परंपरागत	पस्ती	पस्त
पराजय	पराजित, पराजेय, पराजिष्णु	पहरा	पहरेदार, पहरू
पराभव	पराभूत,	पहुनाई	पाहुन
पराभवन	पराभवनीय	पांसु	पांसन, पांसुल
परामर्श,	परामृष्ट,	पाक	पक्व
परामर्शन	परामर्शनीय	पाचन	पाचक, पाच्य
परिक्षय—परिक्षित्, परिक्षित, परिक्षीण,		पाणिनि	पाणिनीय
परिचय	परिचित, परिचायक	पातिव्रत्य	पतिव्रता
परितोष	पारितोषिक, परितोषणीय	पाद	पाद्य
परिचर्या,	परिचारक,	पान	पेय, पानीय
परिचरण	परिचरणीय	पानी	पनीला, पनिहा
परिणाम, परिणमन	परिणत	पार	पारीण
परिभव, परिभवन	परिभूत	पारतन्त्र्य, परतन्त्रता	परतन्त्र
परिभाषा	परिभाषित,	पारावार	पारावारीण
परिभाषण	पारिभाषिक	पार्थक्य, पृथक्त्व	पृथक्
परिमाण, परिमिति-परिमित, परिमेय		पालन	पालक, पालित, पाल्य, पालनीय, पालतू
परिवर्त्तन - परिवर्त्तनशील, परिवर्त्तित,		पाश, पाशन	पाशित
परिवृत्ति	परिवर्त्तनीय, परिवर्त्ती, परिवृत्त	पिण्ड	पिण्डित, पिण्डीभूत
परिषद्	पारिषद्य, परिषद्बल	पिता	पित्र्य, पैतृक
परिष्वजन, परिष्वङ्ग	परिष्वक्त	पिधान	पिहित, पिधेय
परीक्षा	परीक्षित, परीक्ष्य,	पिपासा	पिपासित, पिपासु
परीक्षण	परीक्षणीय	पिशाच	पैशाचिक
परुषता, पारुष्य	परुष	पीछा, पीछे	पिछला, पिछड़ा
पर्दा	पर्दानशील	पीड़न, पीड़ा	पीड़ित, पीड़नीय
पर्यटन	पर्यटक, पर्यटित, पर्यटनीय	पीतिमा, पीतता	पीत
पर्व	पार्वण	पुंस्त्व	पुमान्, पौंस्न
पर्वत	पर्वतीय, पार्वत		

संज्ञा	विशेषण	संज्ञा	विशेषण
पुच्छ	उच्छल	प्रकाश, प्रकाशन	प्रकाशित, प्रकाशनीय
पुञ्ज	पुञ्जित, पुञ्जीभूत	प्रज्ञा, प्रज्ञान	प्रज्ञ, प्रज्ञात, प्रज्ञेय
पुर	पौर	प्रणाम, प्रणमन, प्रणति—	प्रणत, प्रणम्य
पुरस्कार	पुरस्कृत, पुरस्कार्य	प्रतिभा	प्रतिभावान्, प्रतिभाशाली, प्रातिभ
पुराण	पौराणिक		
पुरोहिती, पौरोहित्य	पुरोहित	प्रतियोगिता	प्रतियोगी
पुलक	पुलकित	प्रतिष्ठा	प्रतिष्ठित, लब्धप्रतिष्ठ
पुश्त	पुश्तैनी	प्रतिपालन	प्रतिपाल्य, प्रतिपालक, प्रतिपालित
पुष्प	पुष्पित		
पूजा	पूजित, पूज्य, पूजनीय	प्रतीति	प्रतीत, प्रतीयमान, प्रातीतिक
पूजन	पूजार्ह, पुजारी, पूजक	प्रत्यय	प्रत्येतव्य, प्रतीत्य, प्रत्येय
पूरण, पूर्त्ति	पूर्ण, पूरणीय, पूरित	प्रत्याशा	प्रत्याशित
पूरब, पूरबीपन	पूरबी, पुरवा, पुरविया	प्रपंच	प्रपंची
पृथिवी	पार्थिव	प्रभाव	प्रभावित, प्रभावशाली, प्रभावी
पेच, पेचीदगी	पेचीदा	प्रमाण	प्रमाणित, प्रामाणिक, प्रमेय
पेट	पेटू	प्रवास	प्रोषित, प्रवासी
पैंतरा	पैंतरेबाज	प्रवृत्ति, प्रवर्त्तन	प्रवृत्त, प्रवर्त्तित
पैशुन्य	पिशुन	प्रविधि	प्रावैधिक
पोल	पोला	प्रवेश, प्रविष्टि	प्रविष्ट, प्रवेष्टव्य
पोशीदगी	पोशीदा	प्रशंसा, प्रशंसन—	प्रशस्त, प्रशस्य, प्रशंस्य
पोष, पोषण	पोषित, पोष्य	प्रशस्ति	प्रशंसित, प्रशंसनीय
पुष्टि	पोषणीय, पुष्ट	प्रसंग, प्रसक्ति	प्रासंगिक, प्रसक्त
पोस	पोसुआ	प्रसाद	प्रसन्न
पुरुष, पौरुष	पौरुषेय	प्रसार	प्रसृत
पौर्वापर्य	पूर्वापर	प्रसारण	प्रसारित
प्यार	प्यारा	प्रस्थान	प्रस्थित
प्यास	प्यासा	प्राक्, प्राची	प्राच्य
प्रकटन, प्राकट्य	प्रकट, प्रकटित	प्राचीनता	प्राचीन
प्रकरण	प्राकरणिक	प्राण	प्राणी, प्राणवान्
प्रक्षेप, प्रक्षेपण	प्रक्षिप्त, प्रक्षेप्तव्य	प्राणन	प्राणित
		प्राथम्य, प्रथमता	प्रथम

संज्ञा	विशेषण
प्राप्ति, प्रापण	प्राप्त, प्राप्य, प्रापणीय
प्रार्थन, प्रार्थना	प्रार्थित, प्रार्थनीय
प्रसव, प्रसूति	प्रसूता
प्रेरण, प्रेरणा	प्रेरित, प्रेरणीय
प्रेषण	प्रेषित, प्रेष्य, प्रेषणीय
प्रौढि, प्रौढता	प्रौढ
प्लवन, प्लव, प्लुति	प्लुत
प्लावन	प्लावित
फरियाद	फरियादी
फायदा	फायदेमन्द, मुफीद
फेन	फेनिल
बखेडा	बखेड़िया
बच्चा, बचपन, बचपना	बचकाना
बड़प्पन, बड़ाई	बड़ा
बन	बनैला
बर्फ	बर्फीला
बहिष्कार	बहिष्कृत, बहिष्करणीय
बहुतायत, बहुलता	बहुत
बाहुल्य, भूमा	बहुल, बहु
बाजार	बाजारू
बाधा	बाधित, बाध्य, बाधाग्रस्त
बालपन, बाल्य	बाल
बिलगाव	विलग
बीच	बिचला
बीज	बीजू
बुजुर्ग बुजुर्गी	बुजुर्गाना
बुद्धि, बुद्धिमत्ता	बुद्धिमान्
बुनियाद	बुनियादी
बुभुक्षा	बुभुक्षित, बुभुक्षु
बुराई, बुरापन	बुरा
बुलंदी	बुलन्द

संज्ञा	विशेषण
बृहस्पति	बार्हस्पत्य
बेवफाई	बेवफा
बोझ	बोझिल
बोध, बोधन	बुद्ध, बोद्धा, बोद्धव्य
बोलती	बोलता
ब्याह	ब्याहता, ब्याहा
ब्रह्म	ब्राह्म
ब्रह्मचर्य	ब्रह्मचारी
भंग, भञ्जन	भग्न, भंगुर
भक्षण	भक्ष्य, भक्षक, भक्षित, भक्षणीय
भगवत्ता,	भागवत, भगवन्मय
भगवान्	भगवदीय
भजन, भक्ति–	भक्त, भजमान, भजनीय
भट्ठी, भठियारपन	भठियारा
भड़क, भड़कना	भड़कीला, भड़कैल
भय	भीत, भीरु, भेतव्य,
भीति	भयंकर, भयानक, भयावना
भरण, भृति–	भृत, भृत्य, भर्तव्य, भरणीय
भर्त्सन	भर्त्सित, भर्त्सनीय
भलाई, भलापन	भला
भव, भवन	भूत, भव्य,
भाव, भूति	भवितव्य
भस्म	भस्मसात्, भस्मीभूत, भस्मित
भाँग	भँगेड़ी
भाईचारा, भायप	भाई
भार, भारीपन	भारी
भाव, भावना	भावित, भावुक
भाषण	भाषित, भाष्य
भाषा	भाषिक, भाषणीय
भिक्षा, भिक्षण—	भिक्षु, भिक्षक, भिक्षित
भीख	भिखारी

संज्ञा	विशेषण
भूत	भूतहा, भुताह
भूमि	भौम
भूषण, भूषा	भूषित, भूषणीय
भेद, भेदन	भिन्न, भेद्य, भेदिया
भ्रंश, भ्रंशन	भ्रष्ट
भ्रम, भ्रान्ति	भ्रमित, भ्रान्त
मक्षिका	माक्षिक
मंगल	मांगलिक, मंगलमय, मँगला
मगध	मागध
मजा	मजेदार
मजाक	मजाकिया
मज्जन	मग्न, मज्जनीय
मति	मत, मतिमान्
मनन	मननीय, मननशील
मद	मत्त, मदिर
मदद	मददगार
मधु	मधुमय, मधुमान्
मधुरता, माधुर्य, मधुरिमा	मधुर
मध्य	मध्यम
मन	मनस्वी, मानस, मानसिक
मनीषा	मनीषी, मनीषित
मरण, मृति	मृत, मरणशील
मृत्यु	मर्त्य
मर्द, मर्दानगी	मर्दाना
मर्म	मार्मिक
मर्यादा	मर्यादित, मर्यादोचित
मल, मालिन्य	मलिन, मलीमस
मलवा	मलबाभरा
मलयालम	मलयाली
मसखरापन, मसखरी	मसखरा
मशाल	मशालची

संज्ञा	विशेषण
महँगी, मँहगाई	मँहगा
महिमा, महत्ता, महत्त्व महानता	महान्
माँग	मँगता, मँगन
मातम	मातमी
मात्रा	मात्रिक
मात्सर्य, मत्सर	मत्सरी
मान, मिति	मित, मेय
मानव	मानवीय, मानवोचित
माया	मायावी, मायी, मायिक
मार्जन	मृष्ट, मार्जित, मार्जनीय
मालवा	मालवीय
मासूमियत	मासूम
माह	माहवारी
मिठास, मिठाई, मीठापन	मीठा
मिलन, मिलना	मिलनसार
मिल्कीयत	मालिक
मिश्रण	मिश्र, मिश्रित
मीआद	मीआदी
मीमांसन	मीमांसक, मीमांसित
मीमांसा	मीमांस्य
मीलन	मीलित
मुक्ति, मोचन	मुक्त, मोचनीय
मुख	मुखर, मुख्य, मौखिक
मुखालफत	मुखालिफ
मुगल	मुगलिया
मुद्रण	मुद्रित, मुद्रणीय, मुद्रणाधीन
मुद्रा	मुद्रांकित
मुमुक्षा	मुमुक्षु, मुमुक्षित
मुमूर्षा	मुमूर्षु, मुमूर्षित

संज्ञा	विशेषण
मुरौवत	मुरौवती
मुर्दनी	मुर्दा
मूर्त्ति	मूर्त्त, मूर्त्तिमान्
मूर्धा	मूर्धन्य
मृदुता, मार्दव, म्रदिमा	मृदु
मेधा	मेधावी
मैल	मैला
मोद, मोदन	मुदित, मोदनीय
मोह	मूढ़, मोहन, मुग्ध, मोहक, मोहित
मौजूदगी	मौजूद, मौजूदा
म्लानि	म्लान
यजन, याग,	याजी, यजनीय
यज्ञ, इष्टि	यज्ञीय, इष्ट
यदृच्छा	यादृच्छिक
यति, यमन, यम	यत, यमी, यमित
मन्त्र, मन्त्रण	मन्त्रित
यश	यशस्वी, यशस्य
यष्टिका	याष्टीक
याचन याचना	याचक, याचित, याचितव्य
यात्रा	यात्री, यात्रिक (उपकरण)
यापन	यापित, याप्य, यापनीय
युग	युगीन, युग्य
युक्ति	युक्त, योक्तव्य, योज्य,
योग	युज्जान, योगी, यौगिक
युद्ध, योधन	योद्धा, योध्य, युद्धीय
युयुत्सा	युयुत्सु
योनि	यौन
यौवन	युवा

संज्ञा	विशेषण
रक्षा	रक्षक, रक्षित, रक्षणीय
रक्षण	रक्षी, रक्ष्य, रक्षितव्य
रंग, रक्ति, राग	रंगीन, रक्त, रागी
रचना	रचित, रचयिता, रचनीय
रज	राजस, राजसिक
रजा	राजी
रति, रमण	रत, रम्य, रमणीय
रथ	रथी, रथ्य
रफू	रफूगर
रस	रसिक, रसवान्, रसीला, रसिया, रसदार
रहम, रहमत	रहीम, रहमदिल
राधा	राधेय
राह	राहगीर, राही
रिहाई	रिहा
रुचि	रुचिर, रोचक, रुच्य
रुद्र	रौद्र
रूढ़ि	रूढ
रूप	रुपवान्, रूपी, रूप्य
रूपा	रूपहला
रेखा	रेखांकित, रेखित
रेचन	रेचक
रेत, रेती	रेतीला
रोग	रुग्ण, रोगी
रोब	रोबदार, रोबीला
रोम	रोमश
रोयाँ	रोयेंदार
रोशनी	रौशन
रोष, रुष्टता	रुष्ट
लक्षण	लक्षित, लक्ष्य, लक्षक
लक्षणा	लाक्षणिक

संज्ञा	विशेषण
लगाव, लाग, लगन	लग्न, लागू
लंघन	लंघित, लंघनीय, लंघ्य
लज्जा लाज	लज्जित, लज्जालु, लजीला
लड़कपन	लड़का
लफ्ज	लफ्फाज, लफ्जी
लय, लयन	लीन, लेय, लयदार
लवन	लव्य
लहर	लहरदार
लाघव, लघिमा, लघुता	लघु
लाठी	लठैत
लाड़	लाड़ला
लात	लतियर (ल), लतखोर
लालसा	लालसित
लाला	लालायित
लाली, लालिमा, ललाई	लाल
लावण्य	लवण
लेप, लेपन	लिप्त, लेप्य
लेह	लेह्य, लीढ
लोक	लौकिक
लोप	लुप्त
लोभ	लोभी, लुब्ध
लोहा	लोहिया
वंश	वंश्य, वंशज
वक्तृता	वक्ता
वचन, उक्ति	उक्त, वक्तव्य, वाच्य
वजारत	वजीर
वञ्चन, वञ्चना	वञ्चित, वञ्चनीय
वत्स, वात्सल्य	वत्सल
वध, हनन, हत्या, घात	हत, वध्य, हन्तव्य

संज्ञा	विशेषण
वन	वन्य, बनैला
वपन, वाप	उप्त, वपनीय
वपु	वपुष्मान्
वफा	वफादार
वमन	वान्त, वमनीय
वय	वयस्क, वयस्य
वरण, वर, वार, वृति	वृत, वरणीय
वर्ग	वर्गीय, वर्ग्य, वर्गीण
वर्गीकरण	वर्गीकृत, वर्गीकरणीय
वर्चस्	वर्चस्वी, वर्चस्वान्
वर्जन, वर्जना	वर्जित, वर्जनीय, वर्ज्य
वर्णन, वर्णना	वर्णित, वर्ण्य, वर्णनीय
वर्धन, वृद्धि	वृद्ध, वर्धिष्णु, वर्धनीय
वर्षण, वर्षा	वर्षुक, वर्षी
वलय	वलयित
वश	वश्य, वशी, वशंगत
वस्तु	वास्तविक
वहन, वाह	ऊढ, वाह्य, वहनीय
वाक्	वाचाल, वाग्मी, वाचिक
वाचस्पति	वाचस्पत्य
वाञ्छा, वाञ्छन	वाञ्छित, वाञ्छनीय
वाणिज्य	वणिक्
वादन, वाद	वादी, वाद्य
वायु	वायव्य, वायवीय
वारण	वारित, वार्य, वारणीय
वार्द्धक, वार्द्धक्य	वृद्ध
वाष्प	वाष्पित
वास	उषित, वासी, वासित
विकल्प	वैकल्पिक
विकास, विकसन	विकसित, विकस्वर
विकिरण	विकीर्ण

संज्ञा	विशेषण
विकृति, विकार, विकरण	विकृत, विकारी
विघ्न	विघ्नित
विद्या	विद्यावान्, सविद्य,
विद्वत्ता, वैदुष्य	कृतविद्य, विद्वान्
विद्युत्	वैद्युत, विद्युत्वान्
विधि	वैध, विहित
विधान	विधेय, विधायक
विनय, विनति	विनत, विनम्र
विपद्, विपदा, विपत्ति	विपन्न, विपद्ग्रस्त
विपर्यय, वैपरीत्य	विपरीत
विपर्यास	विपर्यस्त
विभजन, विभाग, विभक्ति	विभक्त, विभाज्य
विभूति, विभव, वैभव	विभु
विमाता	वैमात्रेय
विरति, विराम	विरत
विरह	विरही, विरहित
विरोध	विरुद्ध, विरोधी, विरोधनीय
विश्रम्भ	विश्रब्ध
विश्वास	विश्वसनीय, विश्वस्त, विश्वासी
विषय	विषयी, वैषयिक
विषाद	विषण्ण, विषादी
विस्तार, विस्तृति	विस्तृत, विस्तीर्ण
विस्मय, विस्मिति, विस्मयन	विस्मित
विस्मरण, विस्मृति	विस्मृत, विस्मरणीय
वेध, वेधन, व्यधन	विद्ध, वेधक, वेधनीय
वैधव्य, विधवात्व	विधवा

संज्ञा	विशेषण
वैधुर्य, विधुरता	विधुर
व्यंजन, व्यंजना, व्यङ्ग, व्यक्ति	व्यक्त, व्यंग्य, व्यंजनीय
व्यय, व्ययन	वीत, व्ययित, व्ययनीय, व्ययसाध्य
व्यवधान	व्यवहित
व्यवस्था, व्यवस्थिति	व्यवस्थित
व्यवहार	व्यवहृत, व्यवहर्त्तव्य, व्यवहार्य, व्यवहारपटु
व्यसन	व्यस्त, व्यसनी
व्याकरण	वैयाकरण
व्याख्यान, व्याख्या	व्याख्याता, व्याख्येय, व्याख्यात, व्याख्यातव्य
व्याघ्र	वैयाघ्र
व्यादान	व्यात्त
व्याधि	व्याधित, व्याधिग्रस्त
व्यापार, व्यापृति	व्यापारी, व्यापृत
व्यास	वैयासिक
शक	शक्की
शक्ति	शक्त, शक्य, शाक्त, शक्तिमान्, शाक्तीक
शमन, शम, शान्ति	शमनीय, शमी, शान्त
शयन	शयित, शयालु
शरण	शरण्य
शरद्	शारद, शारदीय, शारदिक
शराफत	शरीफ
शरीर	शारीरिक, शरीरी
शर्त्त	शर्त्तिया
शर्म	शर्मिन्दा, शर्मीला
शहादत	शहीद, शहीदी
शादी	शादीशुदा

संज्ञा	विशेषण
शान	शानदार
शाप	शप्त, शपनीय
शासन-	शिष्ट, शिष्य, शासक, शासित
शिर	शिरस्थ
शिक्षा	शिक्षित, शैक्षिक, शिक्षु
शिक्षण	शिक्षणीय, शैक्षणिक, शिक्षक
शृंखल	शृंखलित, शृंखलक
शुश्रूषा, शुश्रूषण	शुश्रूषु, शुश्रूषित
शुचिता, शौच	शुचि
शुरुआत	शुरू
शिशुता, शैशव	शिशु
शोक	शोच्य, शोकाकुल, शोकमय
शोधन, शुद्धि, शोध	शुद्ध, शोधनीय, शोधित, शोधक, शोध्य, शोधार्थी
शोभा	शोभित, शोभन, शोभनीय
शोषण, शोष	शुष्क, शोषित, शोषणीय
श्रद्धा	श्रद्धेय, श्रद्धालु, श्रद्धास्पद
श्रवण, श्रुति	श्रुत, श्रवणीय, श्रव्य
श्री	श्रीमान्
श्लाघन, श्लाघा	श्लाघ्य, श्लाघनीय
श्लेषण, श्लेष	श्लिष्ट, श्लेष्य, श्लेषणीय
संयोग, संयोजन	संयुक्त, संयोज्य
संशय	संशयित, सांशयिक, संशयी, संशयान, संशयालु, संशयास्पद
संस्कृति, संस्कार, संस्करण	संस्करणीय, संस्कृत
सख्य	सखा
सभा, सभ्यता	सभ्य
समझ	समझदार
सफर, मुसाफिरी	मुसाफिर
सहायता, साहाय्य	[illegible]
संग, सक्ति, सञ्जन	सक्त, संगी
संक्रम, संक्रमण	संक्रामक, संक्रमित
संक्रान्ति	संक्रान्त, संक्रमणीय
संगीत-	संगीतज्ञ, संगीतकार, सांगीतिक
सजा	सजायाफ्ता
संजीदगी	संजीदा
संदेह	संदिग्ध, संदेही, संदेहास्पद
संधान, संधि	संहित, संधेय, संधित
संध्या	सान्ध्य
संपद्, संपदा, संपत्ति	संपन्न
संपादन	संपादक, संपादित, संपाद्य
संमान	संमानित, संमान्य, सांमानिक
साधन, साधना-	साध्य, साधित, साधनीय
सावधानी	सावधान
सिद्धि	सिद्ध
साल	सालाना
सुन्दरता, सौन्दर्य	सुन्दर
स्थिति	स्थित, स्थायी, स्थावर
स्थान,	स्थानीय
स्थापन, स्थापना	स्थापित, स्थापनीय
स्थिरता, स्थैर्य	स्थिर
स्नान	स्नात
स्नेह, स्नेहन	स्निग्ध, स्नेही
स्पर्धा, स्पर्धन	स्पर्द्धी, स्पर्धनीय
स्पर्श, स्पर्शन	स्पृष्ट, स्पृश्य, स्पर्शनीय
स्पृहा	स्पृहित, स्पृहणीय
स्फूर्ति, स्फुरण	स्फूर्त, स्फुरित
स्मिति, स्मय, स्मयन	स्मित, स्मेर
स्मृति, स्मरण	स्मृत, स्मरणीय. स्मार्त
संग्राम	सांग्रामिक
[illegible]	[illegible]

संज्ञा	विशेषण	संज्ञा	विशेषण
स्वप्न,स्वपन,स्वाप,सुप्ति	सुप्त,स्वप्निल	हवा	हवाई
स्वदन, स्वाद	स्वादु, स्वदनीय	हान, हानि	हीन, हेय, हातव्य
स्वस्थता, स्वास्थ्य	स्वस्थ	हिरण्य	हिरण्मय
स्वीकृति, स्वीकार	स्वीकृत, स्वीकार्य, स्वीकरणीय	हिंसन, हिंसा	हिंसक, हिंस्र, हिंसित
		हृदय	हार्दिक, हृद्य, सहृदय
हँसी	हँसोड़, हँसमुख	हैरत	हैरतअंगेज
हरण, हृति, हार	हृत, हरणीय, हार्य	होश, होशियारी	होशमंद, होशियार
हर्ष, हर्षण	हृष्ट, हर्षित	ह्रास, ह्रसन	ह्रसित, ह्रस्व

वाक्यांश या पद-समूह

भाषा का एक अंग पद और वाक्य का मध्यवर्ती भी होता है, अर्थात् वह अनेक पदों से बन कर भी एक वस्तु का ही बोधक रह जाता है, कोई एक भी पूरी बात ठीक से नहीं व्यक्त कर पाता, क्योंकि इसमें समापिका क्रिया नहीं रहती है। इसे ही वाक्यांश या पद-समूह कहते हैं। यह समापिका क्रिया से हीन अपूर्णार्थक रहते हुए भी अपने आपमें भाषा की एक सार्थक इकाई है। यह वाक्यांश विशेषण भी हो सकता है संज्ञा भी, अव्यय भी और उद्देश्य-भिन्न किसी कारक से युक्त शुद्ध क्रिया, धातु भी।

जैसे, अथ से इति तक अशुद्ध है, वह आँख का अन्धा है, गाँव का गाँव उजड़ गया, वह ज्यों का त्यों रह गया है। अपने हाथ से अपना काम करनेवाले अधिक सुखी रहते हैं। सूरज के डूबते ही चिड़ियाँ चहकने लगीं। इसी प्रकार उनके आने पर, आप की इच्छा के अनुसार, दिन भर का भूखा, घर से लौट कर, पाँव पसार कर सोये रहना आदि। मुहावरे प्रायः ऐसे ही वाक्यांश होते हैं, जिन से वाक्य की शोभा ही कुछ और हो जाती है। उनकी चर्चा आगे की जायगी।

अनेक शब्दों के लिए एक शब्द

बहुव्रीहि

अगतिक—जिसकी कोई गति नहीं। अजय—जो जीता न जा सके। अजातशत्रु—जिसका कोई शत्रु नहीं जनमा। अतिथि—जिसके आने की तिथि ज्ञात न हो। अद्वितीय—जिसके समान कोई दूसरा नहीं। अनन्य—अन्य से रहित, जिसके समान कोई अन्य नहीं। अनन्योपाय—जिसका या जिसे कोई दूसरा उपाय नहीं। अनाथ—जिसका कोई नाथ नहीं। अनायास—जिसके लिए

कोई आयास न करना पड़े। अनुलोम—ऊपर से नीचे की ओर आनेवाला। अन्यमनस्क—जिसका मन कहीं और है। अपत्नीक—बिना पत्नी का। अपलक—बिना पलक गिराए। अभय, निर्भय, निर्भीक—भय से रहित। आगत-पतिका—जिसका पति आया है। आगमिष्यत्पतिका—जिसका पति आनेवाला है। आजानुबाहु—जिस की बाहें घुटनों तक हैं। एकच्छत्र, अप्रतिशासन—जिसका प्रतिद्वन्द्वी शासक नहीं। एकटक—एक ही है टक (पलक) जिसमें। कपोतग्रीव—कबूतर की तरह छोटी गर्दन वाला। कुशाग्रबुद्धि—जिसकी बुद्धि कुश के अग्र भाग की भाँति तीखी है। कृतकृत्य, कृतकार्य, कृतार्थ—जिसका उद्देश्य पूरा हो चुका है। खड्गहस्त—जिसके हाथ में खड्ग है। गुरुपाक—जिसके पाक (पचने) में कठिनाई होती है। गोधूलि—वह काल जब गाँओं के लौटने की धूल उड़ती है। चक्रपाणि—जिसके हाथ में चक्र है, विष्णु। चतु-र्भुज—जिसे चार भुजाएँ हैं, विष्णु। चतुष्पद, चौपाया—जिसे चार पाँव हों। चन्द्रशेखर, चन्द्रमौलि, चन्द्रचूड—जिसके सिर पर चन्द्रमा हैं। जितेन्द्रिय—जिसने इन्द्रियों को जीत लिया है। तिमँजिला, तिनमंजिला—तीन मंजिलों वाला। त्रिकोण—तीन कोणों वाला। त्रिभुज—तीन भुजाओं वाला। त्रिविध—तीन प्रकारों वाला। दत्तचित–जिसने चित्त दिया (लगाया) है (किसी एक काम में)। दशानन, दशमुख दशवदन–दस मुँहोंवाला। दीर्घबाहु–लम्बी भुजाओं वाला। दुर्बुद्धि—बुरी बुद्धि वाला। दुर्बोध—जिसे कठिनता से बोध होता है। दुर्धर्ष—जिसका घर्षण (पराजय) कठिनता से हो सके। दुर्भिक्ष—जब कठिनाई से भिक्षा मिलती है (अकाल)। दृढ़प्रतिज्ञ—दृढ़-प्रतिज्ञा वाला। देवमातृक—वर्षा के जल के पालित (देश)। दोआब (दोआबा)—जिसके दोनों ओर जल है। द्वीप—जिसके चारो ओर जल है। द्विपद—दो पाँवों वाला। धर्मात्मा—धर्म में है आत्मा जिसकी। नदीमातृक—नदी जल से सींचे प्रदेश वाला। निरं-कुश—बिना अंकुश का। निराधार—बिना आधार का। निरामिष—बिना आमिष (मांस) का। निर्गुण—बिना गुण का, गुणहीन। निर्दय—बिना दया का। निर्निमेष—बिना निमेष (पलक) गिराए। निर्मम—बिना ममता का। निर्मूल—बिना मूल का। निष्पाप—बिना पाप का। निस्तेज—बिना तेज का, तेजोहीन। निरक्षर—अक्षर भी नहीं जानने वाला। प्रत्युत्पन्नमति—प्रत्युत्पन्न (झट उत्पन्न) बुद्धिवाला। प्रवत्स्यत्पतिका—जिसका पति प्रवास में जानेवाला है। प्रोषितपतिका—जिसका पति प्रवास में है। भग्नहृदय—टूटे हृदय वाला। बदकिस्मत—बुरी किस्मत वाला। महाबाहु—महान् बाहुओं वाला। महाशय—महान् आशय वाला। महोदय—महान् उदय वाला। मुक्तकण्ठ, उन्मुक्तकण्ठ—खुला है कंठ जिसका। मुक्त (उन्मुक्त) हृदय खुले हृदय

अन्तर्मुख, बहिर्मुख

वाला। मुक्तहस्त—हाथ खोलकर, खुले हाथ वाला। मेघनाद—मेघ के समान गर्जन वाला। लब्धप्रतिष्ठ—प्रतिष्ठा प्राप्त करनेवाला। लम्बोदर—लंबे पेट वाला; गणेश। लापरवाह—जिसे कोई परवाह नहीं। लघुपाक—शीघ्र पच जानेवाला। वज्रपाणि—जिसके हाथ में वज्र है, इन्द्र। विपत्नीक—बिना पत्नी का। विधुर—जिसकी पत्नी मर चुकी है। विद्युत्प्रभ—बिजली की भाँति चमक वाला। विधवा—पतिहीन, मृतपतिका। विरूप—विकृत रूपवाला। वीणापाणि—हाथ में वीणावाला, सरस्वती। शूलपाणि—हाथ में शूल वाला, शिव। सपत्नीक—पत्नी के साथ। सदय—दयावाला। सपरिवार—परिवार के साथ। समवयस्क—तुल्य अवस्था वाला। सोल्लास—उल्लासपूर्वक। सहोदर, सोदर एक उदर से उत्पन्न। सुग्रीव—सुन्दर गर्दन वाला। सधवा—जिसका पति जीवित है। सहनशील—सहने का स्वभाव है जिसका। सामिष—मांस के साथ। साक्षर—अक्षर (लिखना-पढ़ना) जानने वाला। सुहृद्—सुन्दर हृदय वाला। सुशील—अच्छे स्वभाव वाला।

उपपद तत्पुरुष

अग्रज—जो आगे (पहले) उत्पन्न हुआ है। अग्रणी, अग्रसर, अग्रेसर—जो आगे चलता है। अग्रशोची—जो आगे की बात सोचता है। अनुज—बाद में जन्म लेने वाला, भाई। अन्त्यज—अन्तिम वर्ण (शूद्र) से उत्पन्न होने वाला। अण्डज—अंडे से जन्म लेने वाला, पक्षी। अनुग, अनुगामी, अनुचर—पीछे-पीछे चलने वाला। अन्तेवासी—गुरु के पास रहकर पढ़ने वाला। अवश्यंभावी - अवश्य होनेवाला। अव्ययीभाव—जो अव्यय नहीं था उसका अव्यय हो जाना। अल्पभाषी—कम बोलने वाला। अश्वारोही (घुड़सवार)—घोड़े पर चढ़ा व्यक्ति। असूर्यंपश्या—कभी सूरज को नहीं देखनेवाली राजमहिला। आकाशचुम्बी, गगनचुम्बी—आकाश को चूमनेवाला। उरग—छाती के बल चलनेवाला, साँप। अतलस्पर्शी—अत्यन्त गहराई तक पहुँचने वाला। कलाकार—कला को करनेवाला। कलाविद्—कला को जाननेवाला। कृतज्ञ—किए हुए (उपकार) को जाननेवाला, नमकहलाल। कृतघ्न—उपकार को नहीं मानने वाला। खेचर, नभश्चर—आकाश में चलने वाला। गृहस्थ—घर में रहने वाला। गोचर—इन्द्रिय का विषय। चक्रधर—चक्र धारण करने वाला, विष्णु। चिरस्थायी—अधिक दिन ठहरने वाला। जलज—जल में उत्पन्न होने वाला, कमल। जानलेवा—जान लेने वाला। त्रिकालज्ञ या त्रिकालदर्शी—तीनो काल जानने, देखने वाला। दिनकर—दिन करने वाला, सूरज। दीर्घजीवी—

अधिक दिन जीने वाला। दुर्निवार—जिसका निवारण कठिन है। दुर्बोध—जिसे समझना-समझाना कठिन है। दुर्गम—जहाँ जाना कठिन है। दुर्लभ—जिसे पाना कठिन है। दुस्तर—जिसका पार पाना कठिन है। दुर्वह—जिसका वहन (ढोना) कठिन हैं। दुःसह—जिसका सहना कठिन है। दुःखद—दुःख देने वाला। दुष्कर—जिसका करना कठिन है। दुःखकर—दुख उत्पन्न करने वाला। द्रवीभूत—जो पहले द्रव नहीं था, अब द्रव हो गया। द्रुतगामी—तेज जानेवाला। द्वारपाल—द्वार की रक्षा करने वाला। द्विज—दो बार जन्म लेने वाला; ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य। धनद—धन देने वाला, कुबेर। निशाचर—रात में चलने वाला, राक्षस। नृत्यकार—नृत्य करने वाला। प्रियवादी, प्रियंवद—प्रिय बोलने वाला। बहुज्ञ—बहुत जाननेवाला। बहुदर्शी—जो बहुत देख चुका है। बहुभाषाविद्—बहुत-सी भाषाएँ जाननेवाला। बहुभाषाभाषी—बहुत-सी भाषाएँ बोलने वाला। प्राणदा—प्राण देने वाली। प्रियदर्शी—प्रिय (सुन्दर) दिखाई देने वाला। भूधर महीधर—पृथ्वी को धारण करनेवाला, पहाड़। रोमांचकारी—रोमांचित करनेवाला। मधुर (मृदु, मिष्ट) भाषी—मधुर भाषण करने वाला। मनोहर—मन को हरने वाला, सुन्दर। मितभाषी—तौलकर (कम) बोलने वाला। यशोदा—यश को देने वाली। वशंवद, वशवर्त्ती, वश्य—वश में रहने वाला। विश्वहितैषी—विश्व का हित चाहनेवाला। विशेषज्ञ—विशेष रूप से जाननेवाला। शत्रुघ्न—शत्रु को मारनेवाला। संगीतज्ञ—संगीत जाननेवाला। समदर्शी—सबको सम देखने वाला। समीकरण—जो सम नहीं है, उसे सम करना। सव्यसाची—बाएँ हाथ से भी वाण चलानेवाला। सरसिज, सरोज—जलाशय में उत्पन्न, कमल। सर्वज्ञ—सब कुछ जाननेवाला। सर्वभक्षी—सब कुछ खानेवाला। सुखद, सुखप्रद—सुख देनेवाला। सुगम—जहाँ जाना सरल है। स्तनपायी—थन पिलाने, पीनेवाला प्राणी। सुलभ—जिसे पाना सफल है। सूचीकार—सूई का काम करनेवाला, दर्जी। स्वर्णकार—सोने का काम करने वाला, सुनार। हितैषी—हित चाहनेवाला।

द्वितीया तत्पुरुष

आशातीत—जिसकी आशा नहीं की जाती है। इन्द्रियातीत, गोतीत—जहाँ तक इन्द्रियों की पहुँच नहीं है। कष्टसहिष्णु—कष्ट को सह लेने वाला। त्रिगुणातीत—जो सत्, रज, तम तीनों गुणों से परे है। वचनातीत—जो कहा नहीं जा सकता है। वर्णनातीत—जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। संकटापन्न—संकट को प्राप्त। स्थानापन्न—दूसरे के स्थान पर अस्थायी रूप से काम करने वाला।

तृतीया तत्पुरुष

अनलदग्ध—आग से जला, झुलसा। आचारपूत—आचार से पवित्र, पवित्र आचरण वाला। कण्टकाकीर्ण—काँटों से भरा [जिस पर काँटे बिखरे पड़े हैं]। कष्ट-साध्य—कष्ट से सिद्ध करने योग्य। क्षुधातुर—भूख से व्याकुल। तर्कसंगत—तर्क के अनुकूल। मन:पूत–जिसे मन पवित्र मानता हो। रक्ताक्त, रक्तरंजित—खून से भींगा, रँगा। विचारगम्य—जहाँ तक विचार जा सकता है। विधिप्रदत्त–जो विधि द्वारा दिया गया है। शिरोधार्य—जो सिर से [या पर] धारण करने योग्य है। शोकदग्ध— शोक से जला। मुँहमाँगा,

चतुर्थी तत्पुरुष

शयनागार—सोने के लिए कमरा। स्नानागार—नहाने के लिए कमरा। भिक्षाटन—भिक्षा के लिए अटन। सत्याग्रह, रसोईघर

पंचमी तत्पुरुष

आकाशवृत्ति—आकाश से प्राप्त वृत्ति, अनिश्चित जीविका। ईसापूर्व—ईसा से पूर्व। कर्त्तव्यच्युत—कर्त्तव्य से च्युत। जन्मान्ध—जन्म से ही अंधा। विक्रमपूर्व—विक्रम से पूर्व सेवा-निवृत्त, सेवामुक्त = सेवा से निवृत्त।

षष्ठी तत्पुरुष

अन्नप्राशन—बच्चे को पहले-पहल अन्न खिलाना। कार्यकर्त्ता—काम करनेवाला। काकदन्तपरीक्षण—अस्तित्वहीन वस्तु का विश्लेषण-श्रम। जठरानल—जठर (पेट) की आग—पाचनशक्ति। जलयान—पानी पर चलनेवाला-यान। दिग्दर्शक—दिशा दिखानेवाला। देशाटन—देश-देश का घूमना। दावानल—दाव (बन) की आग। नगरपालिका—नगर की रक्षा करनेवाली संस्था। पंडितराज—पंडितों के राजा, सब से बड़े पंडित। पथ (मार्ग) प्रदर्शक—मार्ग दिखानेवाला। पुत्रवधू—पुतोहू, पुत्र की पत्नी। पारदर्शक—पार को दिखानेवाला। पितृहन्ता—पिता को मारनेवाला। पुष्पकीट—फूल में (या पर) रहनेवाला कीड़ा। भयजनक—भय उत्पन्न करनेवाला। भूतेश—भूतों का स्वामी। भविष्यवक्ता—भविष्य की बात करनेवाला। भूगर्भवेत्ता–धरती के भीतर की स्थिति जाननेवाला। मनोवृत्ति—मन की वृत्ति (गति अवस्था)। मातृहन्ता—माता की हत्या करनेवाला। युगनिर्माता—नए युग का निर्माण करनेवाला। युद्धपोत—लड़ाई का

जहाज, जंगी बेड़ा। लोमहर्षक, रोमांचक—रोएँ खड़ा कर देनेवाला। विद्युद्वेग—बिजली का वेग या बिजली की भांति वेग। विश्वपर्यटक—विश्व का पर्यटन करनेवाला। सर्वदमन—सबका दमन करनेवाला। संदेहास्पद—संदेह का स्थान। सिंहशावक—सिंह का बच्चा। हस्तलाघव हाथ का लाघव (सफाई, चालाकी)। हृदय-विदारक—हृदय को विदीर्ण करनेवाला।

सप्तमी तत्पुरुष

अग्रगण्य—आगे आगे (सर्वप्रथम) गिनने योग्य। अरण्यरोदन—जंगल में रोना, जहाँ कोई सुननेवाला नहीं। क्षणभंगुर—क्षण मात्र में नष्ट हो जानेवाला। नरश्रेष्ठ—मनुष्यों में श्रेष्ठ। पुरुषोत्तम—पुरुषों (नरों) में उत्तम। किंकर्त्तव्य-विमूढ़—क्या करना चाहिए इस विचार में अक्षम। युधिष्ठिर—युद्ध में स्थिर रहनेवाला। रणमत—रण में (या से) मतवाला। विषयासक्त—विषयों (सांसारिक भोगों) में आसक्ति वाला। सर्वसाधारण, सर्वसामान्य जो सब में साधारण रूप से पाया जाय।

कर्मधारय [प्रथमा तत्पुरुष, समानाधिकरण तत्पुरुष]

अतिशयोक्ति—बढ़ा-चढ़ाकर कही गई बात। आदिप्रवर्त्तक—पहला प्रवर्त्तक (किसी मत का)। चलसंपत्ति—गतिशील संपत्ति (भूमि आदि से भिन्न)। काकवन्ध्या—एक बार के प्रसव के बाद बाँझ बनी स्त्री। नवजात—नया जनमा। दुग्धोज्ज्वल—दूध की भाँति उजला। नवागन्तुक—नया आया हुआ। पुरुष-सिंह—सिंह के समान वीर पुरुष। प्राक्कथन—किसी मुख्य वक्तव्य के पूर्व का कथन, भूमिका। पर्णकुटी—पत्तों से बनायी गई कुटी। युवराज—युवक जो राजा होनेवाला है, राज्य का उत्तराधिकारी। वज्रबधिर—जो बिलकुल बहरा है। बाडवानल—सामुद्रिक (ज्वालामुखी की) आग। लौह-पुरुष—लोहे की भांति दृढ़ पुरुष। सत्याग्रह—सच्चा आग्रह, या सत्य का (के लिए) आग्रह। समशीतोष्ण—जो समान ही शीत तथा उष्ण है, न अधिक ठंढा है और न अधिक गर्म। सर्वसाधारण (सामान्य)—सभी साधारण जन।

प्रादितत्पुरुष

अनुयोजक—अपील करनेवाला। अनुभूत—जिसका अनुभव किया जा चुका है। अतिवृष्टि—बहुत अधिक वर्षा। अत्युक्ति—बढ़ा-चढ़ाकर कहना। अनुकरणीय—अनुकरण करने योग्य। अतीन्द्रिय—जो इन्द्रिय से परे हो, इन्द्रियातीत। अन्तःपुर—भीतर का नगर, रनिवास, महिलाओं का महल। अन्तर्भाव भीतर होना या कर लेना। अतीत—बीता हुआ। [illegible]—जिसका अनुमान किया गया है।

अभिनेता—अभिनय करनेवाला। अभिज्ञ—अच्छी तरह जाननेवाला। आगत—आया हुआ। आगामी—आनेवाला। आपान—इकट्ठा होकर (शराब) पीना। आलोचक—आलोचना करनेवाला। आलोच्य—आलोचना के योग्य। उद्धारक—उद्धार करनेवाला। कुकर्म—कुत्सित कर्म। दुर्दम्य—जिसका दमन कठिन है। दुर्भेद्य—जिसे भेदना कठिन है। दुर्लङ्घ्य—जिसका लांघना कठिन है। दुष्प्राप्य—कठिनता से पाने योग्य। दुराग्रह—बुरा (अनुचित) आग्रह। निगीर्ण—निगला हुआ। निर्देशक—निर्देशन करनेवाला। परित्यक्त—छोड़ दिया गया। पुनरुक्ति—एक से अधिक बार कहना। पुरस्कार—आगे बढ़ाने के लिए दिया गया इनाम। प्रतिलोम (विलोम), विरूप (विवाह)—निम्न वर्ण के पुरुष के साथ उच्च वर्ण की कन्या का (विवाह)। प्रतिनिधि—जो किसी के बदले आया है। प्रतिमूर्त्ति—किसी आकृति की नकल। प्रत्यागत—लौटकर आया हुआ। प्रातराश—प्रातः काल का जलपान। प्रत्युपकार—उपकार के बदले किया गया उपकार। प्रपर्ण—जिसके सभी पत्ते झड़ चुके हों अथवा जिसमें सुन्दर पत्ते हों। बहिष्कार—बाहर निकाल देना, अस्वीकार। विक्रेता—विक्रय करने (बेचने) वाला। विख्यात—विशेष रूप से ख्यात, प्रसिद्ध। विज्ञ—विशेष रूप से जाननेवाला। विश्वसनीय, विश्वस्त—जिस पर विश्वास किया जाता है। व्याख्याता—व्याख्या करने, व्याख्यान देनेवाला। सदावर्त्त (सदाव्रत)—जहाँ सदा धर्मार्थ खाद्य पेय बँटता रहता है। संदिग्ध—जिस पर संदेह किया जा सकता है। समीक्षक—समीक्षा करनेवाला। संमेलन—बहुत से लोगों का किसी एक उद्देश्य से मिलना। संगम—जहां अनेक नदियों या व्यक्तियों का मिलन हो। सुकर्म—अच्छा कर्म। सुप्राप्य—सरलता से पाने योग्य। स्वयंसेवक—स्वेच्छा से सेवा करनेवाला।

उपवन, उपराष्ट्रपति, उपमन्त्री, उपाध्यक्ष,

नञ् तत्पुरुष

अकथनीय—जो कहने योग्य न हो, कहा न जा सके। अखाद्य—नहीं खाने योग्य। अगोचर—जो इन्द्रिय का विषय न हो, इन्द्रियातीत। अचिन्त्य, अचिन्तनीय—जो चिन्तन के योग्य नहीं है। अजेय—जो नहीं जीता जा सके। अज्ञ—कुछ नहीं जाननेवाला। अतर्कित—जिसका पहले से अनुमान नहीं किया गया हो। अदृश्य, अलक्ष्य—जो देखा नहीं जा सकता। अनावृष्टि—वृष्टि का अभाव, अवर्षण। अनिवार्य—जिसका निवारण नहीं किया जा सकता। अपारदर्शक—जिसके आरपार नहीं देखा जा सकता। अपरिमेय, अपरिमित—जो मापा न जा सके। अनिर्वचनीय—जिसका वाणी से विश्लेषण नहीं किया जा सकता। अप्रमेय—जो प्रमाण से सिद्ध न हो। अप्रत्याशित—जिसकी प्रत्याशा न की जाती हो। अभेद्य—जो भेदा न जा सके। अमर—नहीं मरनेवाला। अमानुषिक

मनुष्यता के प्रतिकूल। अमोध–व्यर्थ नहीं जानेवाला। अलौकिक—जो लौकिक नहीं है, लोक में अपटु या दुर्लभ। अवैतनिक—बिना वेतन का। अश्रुतपूर्व–जो पहले कभी नहीं सुना गया। अवैध—जो विधि अर्थात् कानून के अनुकूल न हो। अव्याहत—जिसमें व्याघात नहीं पड़ता। अशोच्य—जिसके लिए शोक नहीं करना चाहिए। असंभव—जो संभव नहीं है। नास्तिक—जिसे दिष्ट (पूर्वजन्म, भाग्य, ईश्वर) पर विश्वास नहीं है। गैरकानूनी—जो कानून के अनुकूल न हो।

अव्ययीभाव

अध्यात्म—आत्मा से संबन्धित, दर्शन। आगुल्फ—टखना पर्यन्त। आजन्म—जन्म से लेकर। आजानु—घुटना तक। आजीवन—जीवनपर्यन्त। आद्योपान्त–आदि से लेकर अन्त तक। आपादमस्तक–पाँव से सिर तक। आमरण—मृत्युपर्यन्त। परोक्ष—आँखों से परे। प्रत्यक्ष, समक्ष—आँखों के सामने। यथाक्रम–क्रम के अनुसार। यथाशक्ति–शक्ति के अनुसार। यथासाध्य–साध्य (शक्ति) के अनुसार, जहाँ तक संभव है। यावज्जीवन–जीवन पर्यन्त।

कृत् प्रत्यय

ईर्ष्यालु–अधिक ईर्ष्या करनेवाला। कथित–जो कहा जा चुका है। करणीय, कर्त्तव्य—जो किया जाना चाहिए। कवि, कवयित्री–कविता करनेवाला, वाली। क्षम्य—जिस पर क्षमा की जानी चाहिए। जिज्ञासु–जानने की इच्छा वाला। चिकीर्षा—करने की इच्छा। खाद्य—खाने योग्य। जाज्वल्यमान—अत्यधिक प्रज्वलित। जिगीषा–जीतने की इच्छा। जिजीविषा–जीने की इच्छा। तितीर्षा = तैर कर पार करने की इच्छा। दर्शनीय, द्रष्टव्य—देखने योग्य। दातव्य (औषधालय)—जहाँ निःशुल्क दिया जाता है, (औषधालय)। दिदृक्षा—देखने की इच्छा। देय—जो देने योग्य वस्तु है। देदीप्यमान – अत्यधिक दीप्त (चमकनेवाला)। नर्त्तक—नाचनेवाला। नश्वर—विनाशशील, नष्ट होनेवाला। पठनीय, पाठ्य—पढ़ने योग्य। पतित—गिरा हुआ। पिपासा—पीने की इच्छा। पूज्य, पूजनीय—पूजने योग्य, जिसकी पूजा की जानी चाहिए। पेय – पीने योग्य। प्रष्टव्य–पूछने योग्य। बुभुक्षा–भोजन की इच्छा, भूख। भावी–जो होने वाला है, होनहार। मुमुक्षु–मुक्ति चाहनेवाला। मुमूर्षु—जिसकी अतिशीघ्र मृत्यु आशंकित हो। याचक–याचना करनेवाला। लिप्सु—पाने की इच्छा (लिप्सा) वाला। वाहक—वहन करने (ढोने) वाला। शुश्रूषा—सुनने की इच्छा, सेवा। श्रवणीय, श्रव्य—सुनने योग्य। स्पर्धा—किसी बात में दूसरे से बढ़ने की इच्छा, प्रतियोगिता। स्मरणीय—स्मरण के योग्य।

तद्धित प्रत्यय

अक्षरशः—एक एक अक्षर। अन्यतम—अनेक में से कोई एक। आपमित्यक–विनिमय, बदले, में ली गई वस्तु। आस्तिक—दिष्ट (पूर्वजन्म, भाग्य, ईश्वर) पर विश्वास वाला। ऐच्छिक—इच्छा पर निर्भर, वैकल्पिक। काल्पनिक—केवल कल्पना में आनेवाला। कुलीन—अच्छे कुल में उत्पन्न। कौन्तेय—कुन्ती का पुत्र। गाङ्गेय—गंगा का पुत्र। ग्रामीण, ग्राम्य—गाँव का। तेजस्वी—अधिक तेज वाला। दाशरथि—दशरथ का पुत्र। द्रौपदी—द्रुपद की पुत्री। देहलवी या दिल्ली वाल—दिल्ली में रहनेवाला। दैनिक—जो एक दिन का हो। नागरिक—नगर का। पर्दानशीन—पर्दे में रहनेवाली। पार्थिव—पृथ्वी का स्वामी या पृथ्वी से संबद्ध, मिट्टी से बना। पार्वती—पर्वत की कन्या। पाथेय—यात्रा के लिए लिया गया अशन-वसन। पौत्री—पुत्र की पुत्री, पोती। पांचाली, पंचाल (जनपद या देश के राजा) की कन्या। प्राकृतिक—प्रकृति संबन्धी। प्रियतम—सर्वाधिक प्रिय। बादरायण—बेरों के जंगल में जनमा। बारानी (खेती)—केवल वर्षा पर निर्भर, बरसाती। भूमिका—जो किसी मुख्य बात (वस्तु) के आधार के रूप में कही जाय, प्राक्कथन। मुकद्दमेबाज—जो मुकद्दमा लड़ता रहता है। यशस्वी—उत्तम और अधिक यश वाला। यात्री—यात्रा पर निकला व्यक्ति। रथी—रथ पर सवार होकर युद्ध करनेवाला। लोमश—अधिक रोएँ वाला। लौकिक—लोक का, लोकपटु, लोकसुलभ। वाचाल, वाचाट—अनावश्यक बोलनेवाला। वादी, मुद्दई—मुकद्दमा दायर करनेवाला। वैज्ञानिक—विज्ञान का जानकार। वैयाकरण—व्याकरण को जाननेवाला। वैष्णव—विष्णु का उपासक, विष्णु संबन्धी। शाक्त—शक्ति (दुर्गा) का उपासक, या उससे संबद्ध। शाश्वत, शाश्वतिक—सदा रहनेवाला। शैव—शिव का उपासक या उनसे सबद्ध। सँपेरा—साँप को पकड़, पाल कर उसके खेल दिखानेवाला। साहित्यिक—साहित्य से संबद्ध। स्त्रैण—स्त्री के जैसे स्वभाववाला, स्त्रीवश्य। स्मार्त—स्मृति से संबद्ध। हत्यारा—हत्या करनेवाला।

समास से प्रत्यय

अनुमानित—जिसका अनुमान किया गया है। अल्पाहारी—थोड़ा भोजन करने वाला। आत्मघाती अपनी हत्या करनेवाला। अन्तरराष्ट्रीय—अनेक राष्ट्रों से परस्पर सम्बन्धित। इच्छाधीन, ऐच्छिक—जो इच्छा के अधीन है। एकाहारी—चौबीस घंटों में एक बार आहार करनेवाला। पराधीन—जो दूसरे के अधीन है। द्वैपायन—द्वीप में जनमा। परार्थी—जो दूसरे का हित चाहता है। पारलौकिक—परलोक का। पाञ्च भौतिक—पाँच भूतों से बना हुआ। प्रतिवादी—जो प्रति-

वाद, अपने ऊपर लाए गए अभियोग से अपना बचाव, करे। प्रवासी—विदेश में जाकर बसा हुआ। प्रहरी—पहरा देने वाला। फलाहारी—फलाहार करने-वाला। मत्स्याहारी—मांस का आहार करनेवाला। विश्वासघाती—विश्वासघात करनेवाला। विपक्षी—विरोधी पक्ष का। शाकाहारी—शाकाहार करनेवाला। समसामयिक, समकालीन, समकालिक—एक ही समय में वर्त्तमान। सर्वशक्तिमान्—सब प्रकार की शक्ति वाला। स्थानान्तरित—एक स्थान से दूसरे स्थान पर हटाया गया। स्वार्थी—अपना हित चाहने-वाला।

फुटकल

अमानत, थाती, धरोहर—किसी के पास रखी दूसरे की वस्तु। उटज—तिनकों से वना घर। कुवेर—धन का स्वामी, देवता। खल्वाट—जिसके सिर पर वाल न हों। झूठा—अधिक झूठ बोलनेवाला। कसौटी—सोना, चाँदी जाँचनेवाला पत्थर। ठिगना—ठेंगे जैसा छोटा, नाटा, वौना। पाँतर, प्रान्तर—दूर तक सूने स्थान वाला मार्ग, जहाँ पेड़ पानी भी न हो। तुणीर, तरकस—जिस में वाण रखे जाते हैं। दिनानुदिन—दिन पर दिन। नकेल—काठ की सलाई, जो ऊँट की नाक में पहनाई जाती है। प्रायश्चित्त—निषिद्ध कार्य के शोधन के लिए किया गया कृत्य। प्रायोवाद—जो प्रायः कहा जाता है (सदा नहीं)। बाँझ, वन्ध्या—जिसे कोई संतति न हो। बुरका—मुँह पर जालीदार घूँघट वाला औरतों के पूरे शरीर को ढँकने वाला पहरावा। भूतपूर्व—जो पहले था अब नहीं है। बंजर—जो भूमि जोती वोई न जाय। म्यान—जिसमें तलवार रखी जाती है। श्मशान—वह स्थान जहाँ प्रायः मुर्दे जलाये जाते हैं। सद्यः स्नात—जिसने अभी अभी स्नान किया है। अमराई—आम का बगीचा। अर्थी—जिस पर सुला कर मुर्दे को श्मशान तक पहुँचाते हैं। आक्रीड—राजा का उद्यान। अणिमा—छोटा बना देनेवाली सिद्धि। अधित्यका—पहाड़ के ऊपर की भूमि। अधिवेत्ता—एक स्त्री के रहते दूसरा विवाह करनेवाला। अलान—हाथी को बांधने का सिक्कड़ या खूँटा। बेगार—बिना मजदूरी के काम करनेवाला। प्रत्यंचा, ज्या—धनुष की डोरी। बन्दरगाह—जहाजों के ठहरने की जगह। मीनाकारी—सोना, चाँदी आदि पर किया गया रंगीन काम। पोपला—जिसके सब दाँत झड़ चुके हों। दिवाला—उधार-कर्ज लौटाने लेने की आर्थिक क्षमता का नाश। राका—पूर्णिमा की रात। कुहू—अमावस्या की रात। वाष्पयन्त्र—भाप से चलने वाला यन्त्र। नमकहलाल—उपकार माननेवाला। नमकहराम—उपकार नहीं माननेवाला।

पर्याय

पर्याय का अर्थ है समानार्थक। इसके ज्ञान की मुख्य आवश्यकता यह है कि प्रसंग-भेद से एक ही वस्तु की भिन्न-भिन्न विशेषताओं की चर्चा की जरूरत पड़ती रहती है। रामचन्द्र कभी रघुनाथ, रघुपति, राघव कहे जाते हैं, कभी दशरथसुत, दशरथपुत्र, कभी कौसल्या-तनय, कभी भरताग्रज, कभी सीतापति, जानकीवल्लभ, कभी खरारि। एक ही व्यक्ति कभी किसी का पुत्र, कभी किसी का पिता, कभी कहीं का प्राचार्य कहा जाता है। फिर भाषा-भेद से भी पर्याय बदलते हैं।

समानार्थक, पर्याय, प्रतिशब्द या अनुलोम

१. अंग—अवयव प्रतीक, अपघन।
२. अंश—भाग, हिस्सा, खंड, टुकड़ा।
३. अतिथि—आगन्तुक, पाहुन (पाहुना), मेहमान, अभ्यागत।
४. अनुपम—अतुल, अतुलित, अद्भुत, अद्वितीय, अनूठा, अनोखा, अपूर्व।
५. अपमान—अनादर, तिरस्कार, परिभव, अवमान, अवज्ञा, अवहेलन।
६. अमृत—पीयूष, सुधा, अमिय।
७. अवनति—अधोगति, ह्रास, अपकर्ष, क्षय,।
८. अवलेप—मद, घमण्ड, अहंभाव, अहंकार, अभिमान, दर्प।
९. आम—आम्र, रसाल, चूत, सहकार।
१०. आँख—नयन, नेत्र, लोचन, चक्षु, दृग, अक्षि।
११. आकाश—व्योम, गगन, नभ, अन्तरिक्ष, दिव्, अम्बर, आसमान (उर्दू)।
१२. आग—पावक, अनल, अग्नि, वह्नि, कृशानु, हुताशन, दहन।
१३. आनन्द—हर्ष, सुख, मोद, प्रमोद, आमोद, मुद, प्रसन्नता, उल्लास, आह्लाद।
१४. इच्छा—वाञ्छा, आकांक्षा, स्पृहा, मनोरथ, अभिलाष, अभिलाषा, एषणा।
१५. इन्द्र—पुरन्दर, शक्र, वासव, जिष्णु, सुरेश, देवराज, शचीपति, सहस्राक्ष, शतमन्यु।
१६. इन्द्राणी—शची, पौलोमी, पुलोमजा, इन्द्रपत्नी।
१७. ईश्वर—ईश, जगदीश, परमेश्वर, परमात्मा, प्रभु, भगवान्, सच्चिदानन्द।
१८. उन्नति—उत्थान, प्रगति, अभ्युदय, विकास, वृद्धि, उत्कर्ष।
१९. कपड़ा—वस्त्र, वसन, अंशुक, अम्बर, वासस्, चैल, चीर, पट, आच्छादन।
२०. कमल—पद्म, अरविन्द, नलिन, सरसिज, सरोज, राजीव, जलज, सरोरुह, शतदल, पंकज।

२१. कामदेव—कंदर्प, अनङ्ग, पञ्चशर, स्मर, मनसिज, मनोज, कुसुमेषु, रतिपति, मदन, मन्मथ, पुष्पधन्वा, पुष्पवाण।

२२. किरण—मयूख, अंशु, रश्मि, मरीचि, कर, दीधिति।

२३. कुवेर—यक्षराज, गुह्यकेश्वर, धनद, धनाधीश, वैश्रवण, किन्नरेश, शंकरसख, नरवाहन, राजराज।

२४. कोमल—मृदु, मसृण, नरम, मुलायम, अरूक्ष, अकठोर।

२५. कौशल—पटुता, निपुणता, कुशलता, पाटव, नैपुण्य, दक्षता।

२६. क्रोध—कोप, अमर्ष, रोष, गुस्सा।

२७. गणेश—विनायक, गणपति, एकदन्त, हेरम्ब, लम्बोदर, विघ्नराज, गजानन, मूषकवाहन, द्वैमातुर।

२८. गंगा—जाह्नवी, सुरनदी, भागीरथी, भीष्मजननी, सुरसरिता, विष्णुपदी, त्रिपथगा।

२९. गदहा—खर, गर्दभ, गधा, वैशाखनन्दन।

३०. घर—गृह, गेह, निकेतन, सदन, भवन, अगार, निलय, आलय, वेश्म, सद्म।

३१. घोड़ा—अश्व, वाजि, तुरग, तुरंग, हय, सैन्धव, घोटक।

३२. चतुर—बुद्धिमान्, दक्ष, पटु, तीव्रबुद्धि, होशियार, चालाक।

३३. चन्द्रमा—इन्दु, चन्द्र, हिमांशु, विधु, सुधांशु, निशाकर, सोम, शशी, कलानिधि, तारापति, मयंक, ओषधीश, कुमुदवल्लभ, चाँद।

३४. चाँदनी—चन्द्रिका, कौमुदी, ज्योत्स्ना, चन्द्रप्रभा।

३५. चिड़िया—खग, विहंगम, द्विज, विहंग, विहग, शकुनि, पक्षी, पंछी, शकुन्त।

३६. चूहा—मूषक, मूषिका, आखु, गणेशवाहन।

३७. चोर—चौर, स्तेन, तस्कर, दस्यु, मोषक, साहसिक, अपहर्त्ता, पाटच्चर।

३८. जंगल—वन, कानन, विपिन, अरण्य, अटवी, गहन।

३९. झंडा—ध्वज, ध्वजा, वैजयन्ती, पताका, केतन।

४०. तरंग—लहर, लहरी, कल्लोल, ऊर्मि, वीचि, हिल्लोल (हिलोर)।

४१. तारा—नक्षत्र, तारका, उडु, ऋक्ष, भ, सितारा।

४२. तालाब—जलाशय, सर, कासार, तडाग, पद्माकर, पुष्कर, सरोवर।

४३. थोड़ा—स्तोक, ईषत्, किंचित्, अल्प, न्यून (ऊन)।

४४. दिन—दिवस, वासर, वार, अहन्, घस्र।

४५. दुर्गा—अपर्णा, पार्वती, चण्डिका, अम्बिका, गिरिजा, गौरी, उमा, हैमवती, शिवा, भवानी, रुद्राणी।

४६. दुःख—कष्ट, कृच्छ्र, पीडा, व्यथा, क्लेश, खिन्नता, विषण्णता, विषाद।
४७. देवता—अमर, देव, विबुध, सुर, त्रिदश, आदित्य, अजर, आदितेय।
४८. धन—वित्त, विभव, अर्थ, वैभव, संपत्, संपदा, संपत्ति, वसु, दौलत।
४९. धनुष—चाप, कोदण्ड, इष्वास, कार्मुक, शरासन।
५०. नदी—सरित्, सरिता, निम्नगा, आपगा, निर्झरिणी, पयस्विनी, तटिनी।
५१. नरक—निरय, दुर्गति, यमपुर, निरृति।
५२. नाव—नौ, नौका, तरी, तरणी, जलयान, बेड़ा।
५३. पति—भर्त्ता, प्रियतम, धव, स्वामी, वल्लभ, प्रिय, दयित, नाथ, कान्त, वर, रमण।
५४. पत्नी—भार्या, दारा, कलत्र, वधू, जाया, वल्लभा, प्रिया, दयिता, सहधर्मिणी, अर्धांगिनी, प्रियतमा।
५५. पानी—वारि, सलिल, जल, पय, उदक, तोय, पानीय, नीर, अम्बु, अम्भ, आब।
५६. पत्थर—पाषाण, उपल, अश्मा, शिला, दृषत्, प्रस्तर, ग्रावा।
५७. पहाड़—महीधर, महीभृत्, पर्वत, अद्रि, गिरि, अचल, भूधर, शैल, शिखरी।
५८. पुत्र—आत्मज, तनय, सूनु, सुत, नन्दन, बेटा, लड़का।
५९. पुत्री—आत्मजा, दुहिता, तनया, सुता, बेटी, लड़की, नन्दनी।
६०. पिता—तात, जनक, जनयिता, जन्मदाता।
६१. माता—जननी, जनयित्री, प्रसू, अम्बा, अम्मा, माँ।
६२. पृथ्वी—भू, भूमि, धरा, धरित्री, धरती, धरणि, क्षिति, वसुमती, वसुधा, मेदिनी, पृथिवी, वसुंधरा, अवनि, मही, जमीन।
६३. पेड़—तरु, पादप, वृक्ष, द्रुम, महीरुह, शाखी, विटपी, गाछ।
६४. फूल—पुष्प, प्रसून, कुसुम, सुमन।
६५. बाण—तीर, शर, सायक, शिलीमुख, इषु, आशुग, नाराच।
६६. बिजली—तडित्, विद्युत्, चपला, सौदामिनी, चञ्चला, दामिनी क्षणप्रभा।
६७. ब्रह्मा—परमेष्ठी, पितामह, हिरण्यगर्भ, स्वयंभू, चतुरानन, धाता, विरिञ्चि, कमलासन, स्रष्टा, प्रजापति, विधाता, विधि, वेधा अज, कमलयोनि, नाभिजन्मा।
६८. भाई—भ्राता, सोदर, सहोदर, सगर्भ्य, सोदर्य, सहज।
६९. भौंरा—मधुकर, मधुप, अलि, द्विरेफ, भृङ्ग, भ्रमर, षट्पद, मधुव्रत।
७०. मनुष्य—मर्त्य, मानव, मनुज, नर, मानुष, आदमी, इन्सान।
७१. मछली—मत्स्य, मीन, झष, मछली।

७२. मित्र--सखा, सुहृद्, सहचर, वयस्य; दोस्त ।
७३. मुँह--मुख, वक्त्र, वदन, आस्य, आनन, लपन, तुण्ड ।
७४. मुनि--यति, यती, अवधूत, संन्यासी ।
७५. मूर्ख--मूढ, अज्ञ, अज्ञानी, अबोध, जड़; बेवकूफ ।
७६. मेघ--अभ्र, बलाहक, जलद, जलधर, वारिद, घन, जीमूत, पयोद, वारिवाह, धाराधर, तडित्वान्, जलमुक्, धूमयोनि ।
७७. मोक्ष--मुक्ति, निर्वाण, निःश्रेयस, कैवल्य, परमपद ।
७८. यम--धर्मराज, कृतान्त, यमराज, काल, वैवस्वत, अन्तक, पितृपति, शमन, सूर्यपुत्र, दण्डधर, श्राद्धदेव ।
७९. राक्षस--क्रव्याद, रात्रिचर, नैऋत, कौणप, यातुधान, निशाचर, अस्रप, निकषात्मज ।
८०. राजा--नृप, भूपति, नरेश, महीप, पार्थिव, भूमिपति, क्षितिप, भूपाल ।
८१. रात--रात्रि, निशा, क्षणदा, क्षपा, निशीथिनी, विभावरी, रजनी, यामिनी, तमस्विनी, तमी ।
८२. लक्ष्मी--कमला, श्री, इन्दिरा, मा, रमा, क्षीरोदतनया, पद्मा, पद्मालया, हरिप्रिया ।
८३. लड़ाई--युद्ध, समर, रण, संग्राम, संगर, आहव, आजि, संयुग, अनीक ।
८४. वसन्त--ऋतुराज, मधु, माधव, कुसुमाकर, पिकप्रिय; बहार ।
८५. वायु--गन्धवह, अनिल, समीर, मारुत, मरुत, समीरण, वात, पवन, पवमान; हवा ।
८६. विष्णु—नारायण, माधव, दैत्यारि, पुण्डरीकाक्ष, पीताम्बर, अच्युत, शार्ङ्गी, उपेन्द्र, चक्रपाणि, चतुर्भुज, पद्मनाभ, श्रीपति, पुरुषोत्तम, हरि, जनार्दन, विश्वंभर, मुकुन्द, जलशायी, गरुड़ध्वज ।
८७. शरीर—कलेवर, गात्र, वपु, काय, देह, तनु, विग्रह, मूर्त्ति; जिस्म, बदन ।
८८. सब--सकल, समस्त, अखिल, निखिल, सर्व, अशेष, समग्र, संपूर्ण ।
८९. समुद्र—अब्धि, पारावार, उदधि, सिन्धु, सागर, अर्णव, रत्नाकर, जलधि, पयोनिधि, नदीश ।
९०. समूह--समुदाय, निकर, संघात, गण, चय, संहति, वृन्द, निवह, व्रज, स्तोम, ओघ, संचय, राशि, पुञ्ज ।
९१. सरस्वती--शारदा, वीणापाणि, ब्राह्मी, वागीश्वरी, गिरा, भारती, वाग्देवी, विद्याधिष्ठात्री ।
९२. साँप—सर्प, भुजग, भुजंग, भुजंगम, अहि, विषधर, व्याल, द्विजिह्व, कुण्डली, चक्षुःश्रवा, फणी, उरग, पन्नग ।

९३. सिंह—केसरी, मृगेन्द्र, पञ्चानन, हर्यक्ष, हरि, कण्ठीरव; शेर, नाहर।
९४. सुन्दर—शोभन, कान्त, रुचिर, मनोरम, मनोहर, रम्य, रमणीय, कमनीय, रमणीक।
९५. सूर्य—आदित्य, दिवाकर, भास्कर, प्रभाकर, विवस्वान्, सप्ताश्व, उष्णरश्मि, अर्क, मार्त्तण्ड, मिहिर, तरणि, भानु, सहस्रांशु, सविता, रवि, दिनकर।
९६. सेना—कटक, चमू, वाहिनी, सैन्य, पृतना, अनीकिनी; फौज।
९७. सेवक—नौकर चाकर, भृत्य, किंकर, परिचारक, अनुचर।
९८. सोना—सुवर्ण, स्वर्ण, कनक, काञ्चन, हेम, हिरण्य, हाटक, जातरूप।
९९. स्त्री—योषिता, महिला, अवला, योषा, नारी, सीमन्तिनी, वामा, औरत, वनिता।
१००. स्वर्ग—नाक, त्रिदिव, सुरालय, देव-लोक, त्रिविष्टप, द्युलोक, स्वर्लोक।
१०१. हाथी—हस्ती, गज, मतंगज, करी, कुञ्जर, वारण, नाग, दन्तावल, द्विरद, द्विप, स्तम्बेरम।

एक ही शब्द के दो विवरण

शब्द	भिन्न विवरण	शब्द	भिन्न विवरण
अंजलि	अंजली	गधा	गदहा
अँगुली	उँगली	छुरा	छूरा
अन्तरराष्ट्रिय	अन्तर्राष्ट्रीय	जननी	जननि
अवनि	अवनी (पृथ्वी)	जुआ	जूआ
अवलि	अवली, आवलि आवली	तरणि	तरणी (नाव)
उषा	ऊषा	तुरत	तुरन्त
कर्त्तव्य	कर्तव्य	त्यौहार	त्योहार
कर्म	कर्म्म	दिवाल	दीवाल, दीवार
कार्य	कार्य्य	दिवाली	दीवाली
कलश	कलस	दूकान	दुकान
केशरी	केसरी	दुधिया	दूधिया
कोष	कोश	दुःशासन	दुश्शासन
कैलास	कैलाश	दुःसाहस	दुस्साहस
कोशल	कोसल	धरणी	धरणि
कैकेयी	कैकयी	धूल	धूलि, धूली
खिलाड़ी	खेलाड़ी	नीरोग	निरोग

शब्द	भिन्न विवरण	शब्द	भिन्न विवरण
परिवार	परीवार	मूषक	मूषिक
पृथिवी	पृथ्वी	वशिष्ठ	वसिष्ठ
प्रतिकार	प्रतीकार	वेष	वेश
प्रतिहार	प्रतीहार	श्रेणि	श्रेणी
बहन	बहिन	सुवर्ण	स्वर्ण
प्रत्यूष	प्रत्युष	शूकर	सूकर
राष्ट्रीय	राष्ट्रिय	हनुमान्	हनूमान
युवति	युवती		

समानार्थकों में अर्थ भेद

१. अगोचर—जो इन्द्रियों से जानने योग्य न हो।
अज्ञेय—जो किसी प्रकार जानने योग्य न हो।

२. अज्ञ—अज्ञानी, नहीं जाननेवाला, ज्ञान-हीन।
अनभिज्ञ—किसी वस्तु-विशेष से अपरिचित।
मूर्ख—कुछ नहीं पढ़ा लिखा, मोटी बुद्धि का।
मूढ़—बुद्धि-हीन।

३. अधिक—आवश्यकता से स्पष्ट अधिक।
पर्याप्त, प्रचुर, काफी—आवश्यकता की अच्छी तरह पूर्ति करने वाला, किसी दृष्टि से कम नहीं।

४. अभिनन्दन—किसी की महत्ता या उपलब्धि की सार्वजनिक स्वीकृति या घोषणा के लिए उसका किसी सभा में संमान।
स्वागत—किसी के आने पर उसके दर्शन से अपनी प्रसन्नता प्रकट करते हुए उसके ठहरने आदि की सुविधा-प्रद व्यवस्था।

५. अभिवादन—अपना नाम कहते हुए विशेष संमानपूर्वक बड़ों को प्रणाम।
प्रणाम—बड़ों के प्रति संमान व्यक्त करते हुए विनय प्रकट करना।
नमस्कार—बराबरी के लोगों के प्रति आदर प्रकट करना।
नमस्ते—बड़े छोटे सबके लिए आत्मीयता तथा आदर प्रकट करना।
वन्दन, वन्दना—देवबुद्धि से स्तुति करते हुए हाथ जोड़कर प्रणाम।
प्रणिपात (दण्डवत्)—चरणों को इस प्रकार छूना जिसमें नाक, घुटने और वक्षस्थल भी धरती का स्पर्श कर रहे हों (लाठी की तरह सपाट गिर जाना)।

६. अपराध---किसी समाज-विशेष के सामाजिक या राजकीय नियम (कानून) का भंग करने वाला काम।

पाप---शास्त्रीय, धार्मिक, ईश्वरीय नियम का भंग करने वाला काम।

७. अभिज्ञ---किसी विषय-विशेष का अच्छा जानकार, अच्छी तरह जानने वाला।

विज्ञ---किसी विषय-विशेष का विशेष रूप से जानने वाला।

प्रज्ञ या प्राज्ञ---पंडित, विद्वान्।

८. अभिमान—आत्माभिमान, बड़े से बड़े लाभ के लिए अनुचित स्थान में नहीं झुकना, अपना संमान आप बचाना करना।

अहंकार, गर्व, दर्प, घमंड---अपने को औरों से अनुचित रूप से बड़ा समझ कर ऐंठे रहना।

गौरव--अपनी गुरुता, बड़प्पन की उचित रक्षा का भाव।

दम्भ—दूसरों को दिखाने, झूठे प्रदर्शन के लिए अपने को बड़ा प्रकट करना, दिखावा।

९. अपयश—अयश, किसी विशेष दिशा में पूर्णता की कमी।

कलंक--किसी बड़े लाञ्छन, सामाजिक, धार्मिक कुकृत्य का जनता में प्रचार।

निन्दा—प्रशंसा या स्तुति का विपरीत; बुराइयों को ढूँढ़, बढ़ाकर कहना।

१०. अर्पण—अपने से बड़ों को कुछ देना।

दान—याचक या अर्थी को पुण्य की दृष्टि से कुछ देना।

प्रदान—अपने से छोटे को प्रेम या दया से कुछ देना।

संप्रदान—एक कारक, किसी को कोई वस्तु इस प्रकार देना कि दाता फिर उस वस्तु को कभी अपने काम में नहीं लावे।

समर्पण—गुरुजन को देव बुद्धि से कुछ देना।

११. अवस्था—जन्म से वर्त्तमान काल तक का समय।

आयु--जन्म से मृत्यु तक का समय।

१२. आदेश—किसी अधिकारी, उच्च पदस्थ की आज्ञा; हुक्म।

आज्ञा—किसी गुरुजन की आज्ञा।

अनुज्ञा—अनुमति, स्वीकृति।

१३. आमन्त्रण—किसी समारोह में सम्मिलित होने के लिए बुलावा।

निमन्त्रण--कहीं भोजन करने के लिए बुलाहट।

१४. आधि---मानसिक कष्ट।

व्याधि---रोग, शारीरिक कष्ट।

कष्ट---कोई भी दुःख।

१५. अस्त्र—जिसे फेंककर किसी को मारा जाय; जैसे—तीर।
शस्त्र—जिसे हाथ में धारण कर मारा जाय; जैसे—तलवार।

१६. अमूल्य—जो इतना दुर्लभ है कि उसका मूल्य नहीं आँका जा सकता।
बहुमूल्य—जिसका बहुत मूल्य है।
निर्मूल्य--बिना मूल्य का।

१७. ईर्ष्या-:किसी की उन्नति से मन-ही-मन जलना, कुढ़ना।
द्वेष--किसी के प्रति शत्रुता का भाव, राग (अनुराग) का विपरीत।
स्पर्धा—किसी की बढ़ती देखकर स्वयं उससे भी आगे बढ़ने का उत्साह, इच्छा।

१८. ऋषि—सत्य का साक्षात्कार, आविष्कार करने वाला।
मुनि—सत्य का मनन करने वाला।
सन्त—पवित्र, निष्काम, निर्विरोध जीवन बिताने वाला।

१९. आशंका—भविष्य में अमंगल की भयमिश्रित शंका।
शंका—कोई भी संदेह, अनिश्चय, संशय।
भ्रम या भ्रान्ति—वस्तु में अवस्तु का ज्ञान; जैसे—मोहन में सोहन का, पेड़ में चोर का।
संभावना—वस्तु और अवस्तु के संशय में वस्तु की ओर अधिक झुकाव; जैसे—मोहन में सोहन का संशय उठने पर भी, यह मोहन ही लगता है, ऐसा अनिश्चयात्मक ज्ञान।

२०. करुणा—किसी, विशेषतः अपने से छोटे, को अत्यन्त दुःख में डूबा देखकर द्रवित, विह्वल हो उसे बचाने की प्रवृत्ति।
कृपा—किसी की आवश्यकता देखकर उसकी सहायता की इच्छा।
दया—अपने से छोटे के किसी अभाव को दूर करने की चाह।
सहानुभूति—किसी की क्षति में हृदय से दुःखी होना।

२१. उत्साह—काम करने की उमंग, जोश।
साहस—साधन के अपर्याप्त रहने अथवा भय की संभावना में भी किसी बड़े काम को करने की प्रवृत्ति।

२२. ग्लानि—किए हुए समाज-विरोधी काम के लिए पछतावा के साथ लज्जा।
लज्जा—किसी काम में अधिक झिझक, स्त्रीसुलभ मनःस्थिति, शर्म।
व्रीड़ा—समाज-निन्दा के भय से किसी काम में अप्रवृत्ति।
संकोच—किसी से मिलने या कोई काम करने में अनुचित झिझक।

२३. प्रणय—सख्य या दांपत्य।
प्रीति—प्रेम का मधुरतर रूप।
प्रेम—किसी के प्रति अनुराग, सांनिध्य की कामना।
भक्ति—बड़ों के प्रति छोटों का प्रेम।
वात्सल्य—छोटे के प्रति माता, पिता, गुरु आदि का प्रेम।
श्रद्धा—बड़ों के गुण तथा उच्चता से आकृष्ट होकर विश्वास के साथ उन पर भक्ति।

२४. पुत्र, बेटा—किसी का आत्मज, तनय।
बालक—अल्पवयस्क मानव, शिशु से अधिक आयु वाला।
लड़का—बालक और बेटा दोनों अर्थों में प्रसंगानुसार प्रयुक्त।

२५. बड़ाई—प्रशंसा (या बड़ा होना, जैसे—छोटाई-बड़ाई)।
बड़प्पन—महत्ता, स्वभाव की उच्चता।
बड़ापन—आकार में बड़ा होना (छोटापन-बड़ापन)।

२६. बचपन—बच्चे की अवस्था।
बचपना—बच्चों का स्वभाव, बच्चे जैसी चेष्टा।
बच्चापन—बच्चा होना (जैसे बच्चापन-बूढ़ापन)।

२७. धन्यवाद—किसी की सहायता पाकर उसके प्रति कृतज्ञता का भाव प्रकट करना।
स्वागत—किसी के कहीं आने पर उसके प्रति संमान और प्रसन्नता प्रकट करना।
बधाई—किसी की उपलब्धि से अपनी प्रसन्नता प्रकट करते हुए उसकी उन्नति की शुभकामना।
अभिनन्दन—किसी की महान् उपलब्धि या व्यक्तित्व की सामूहिक रूप से स्वीकृति, चर्चा, प्रोत्साहन, साधुवादन।

२८. सहयोग—किसी काम को मिल-जुल कर करना।
सहायता—किसी के काम में मदद, हाथ बँटाना।

एक ही शब्द का विभिन्न शब्द भेदों में प्रयोग

१. अच्छा—विशेषण—वह अच्छा लड़का है। संज्ञा—अच्छों के साथ से ही मनुष्य अच्छा बनता है। क्रियाविशेषण—वह अच्छा बोलता है। विस्मयादिबोधक—अच्छा, तो मैं अब चला।

२. और—समुच्चयादिबोधक—राम और कृष्ण ईश्वर के अवतार थे। सर्वनाम—तुम तो पहुँचे थे, किन्तु और कहाँ रह गए थे। विशेषण—और पुस्तकें कहाँ हैं। संज्ञा—औरों का भी ध्यान रखो।

३. दाम्पत्य—दम्पति का भाव—तुम लोगों का दांपत्य सुखमय हो। दम्पति सम्बन्धी—दांपत्य जीवन—तुम्हारा दांपत्य जीवन सुखमय हो।

४. भला—विशेषण—वह भला लड़का है। संज्ञा—भला करोगे तो भला पाओगे। अव्यय—भला, मैं कहाँ जाऊँ ?

५. मान—संज्ञा (संमान)—वे मान-अपमान का ध्यान नहीं रखते (या परिमाण)—अभी एक डालर का मान कितने रुपए हैं ? क्रिया (मानना)—मै यह मानकर चलता हूँ।

६. संग—संज्ञा—सज्जनों का संग करना चाहिए। क्रियाविशेषण—मैं आपके संग नहीं जाऊँगा।

७. साथ—अव्यय, संबंध बोधक—मेरे साथ मोहन भी आया। क्रियाविशेषण—तुम साथ-साथ पढ़ो। साथ खेलो। संज्ञा—मैं तुम्हारा साथ दूँगा।

८. सीधा—विशेषण—यही सीधा मार्ग है। संज्ञा—सीधों को सभी मूर्ख समझते हैं। क्रियाविशेषण—मैं तो सीधा चलता हूँ।

एक ही शब्द का संदर्भ-भेद से अर्थ-भेद

१. कड़ा—कठोर—वहाँ की धरती कड़ी हैं। दुष्कर—कड़ी मेहनत की थी। निर्दय, साहसी, धीर—आदमी थोड़ा कड़ा है। असह्य—कड़ी ठंड पड़ रही है। कसा—यह कमीज कड़ी पड़ रही है।

२. चाल—गति—इस चाल से पहुँचने में बहुत देर हो जायगी। धोखा—मुझसे ही चाल चलते हो। शतरंज की गोटी रखना—बस ! अगली ही चाल में तुम मात हो। व्यवहार—उनका चाल-चलन ठीक नहीं।

३. चलना—गति—कहाँ चले ? प्रयोग—यह रुपया नहीं चलेगा। वर्त्तमान—चालू वर्ष में मुझे बहुत घाटा लग रहा है। निर्वाह—काम चल जाता है। प्रभाव—आजकल तुम्हारी ही तो चलती है। फैलाव—सब जगह तो उसी की बात चल रही है। प्रचार—आजकल यह सिक्का नहीं चल रहा।

४. डूबना—अस्त होना—सूरज डूब गया। पानी के भीतर जाना—डूबता उतराता वह एक किनारे लगा। नष्ट होना—सारी पूँजी डूब गई। समाप्त होना—दिन डूब रहा है, नाड़ी डूब रही है।

५. धर्म—लक्षण—आग का धर्म हैं जलाना। संप्रदाय—यह देश धर्म-निरपेक्ष है। कर्त्तव्य—यह तो मेरा धर्म था। पुण्य—कुछ धर्म करें महाराज।

६. पता—ठिकाना—आपका क्या पता है। भेद—यहाँ तो पता ही नहीं चलता कि कौन हंस है, कौन वगुला। सूचना—आपको मेरे आने का पता न था? उपयुक्त—पते की बात कही है आपने।

७. पानी—जल—जरा पानी पिलाओ। सौन्दर्य—चेहरे पर पानी आ रहा है। सान—छुरे पर पानी चढ़वाना है। प्रतिष्ठा - उनका भरी सभा में पानी उतर गया।

८. फूटना—छेद होना—शीशी फूट गई। प्रकट होना—इतनी देर के बाद बोली फूटी है। शाखाएँ निकलना—वहाँ से कई धाराएँ फूटी हैं। मतभेद—घर फूटे गँवार लूटें। नष्ट होना—उसकी तो किस्मत ही फूट गई। मुक्तकण्ठ होना—वह फूट-फूट कर रोने लगा।

९. वनाना—निर्माण—वह बड़ी अच्छी जलेबी बनाता है। अर्जन—पैसा बनाना कोई मोहन से सीखे। अच्छा करना—बाबा ने तो उसे बना दिया। रचना—तुम बातें खूब बनाते हो, कविता भी बनाते हो।

१०. भेद—प्रकार—संज्ञा के कितने भेद होते हैं? अन्तर—दोनों में बहुत भेद हैं। रहस्य—इसका भेद अब खुला है। फूट—भेद नीति से काम लो।

११. लड़ना—टक्कर खाना—दोनों भैंसों की तरह लड़ते हैं। अभियोग चलाना—न्यायालय में दोनों आमने-सामने लड़ते हैं, किन्तु एक ही दूकान पर साथ बैठ कर अल्पाहार करते हैं। कुश्ती—प्रातः अखाड़े में लड़ने से शरीर बलशाली होता है। बहस—दोनों गोतिनें रात-दिन लड़ती रहती हैं। मेल खाना—अटकल लड़ गई। संमुख होना—आँखें लड़ गईं, तो विपद ही समझो।

१२. लहर—तरंग—ऊँची लहरें उठ रहीं थीं। उत्साह—गान्धी अपनी नई-नई योजनाओं से जनता में नई-नई लहरें लाते रहते थे। झोंका—ठंडी हवा की लहर कहीं निकलने नहीं देती। झूमना—लम्बी-लम्बी बालियाँ लहरा रही हैं, झण्डा लहरा रहा है। पीड़ा—घाव लहर रहा है।

१३. भारी—बोझवाला—कुर्सी भारी है। दुर्बोध्य—यह कविता भारी है। दुष्पच—अरहर की दाल भारी होती है। दुष्कर—काम तो भारी है। प्रबल—मोहन बड़ा भारी पड़ रहा था। गंभीर, चिन्तित—आज भारी लग रहे हो, क्या बात है। मन भारी हो गया। अनभिलषित—अब क्या मैं भारी हो गया हूँ। गर्भ—सरिता के पाँव भारी है।

अनेकार्थक

अर्क—सूर्य, अकवन, काढ़ा।
अर्थ—मतलब, धन, लिए, उद्देश्य।
अंक–संख्या, चिह्न, गोद, अध्याय।
अगज—जो हाथी से भिन्न है, जो पहाड़ से उत्पन्न है।
अपवाद—कलंक, सामान्य नियम का विरोधी।
अनन्त–अन्तहीन, शेषनाग, विष्णु।
अम्बर—आकाश, कपड़ा।
अरूण–लाल, सूर्य, सूर्य का सारथि।
आम–एक फल, साधारण (अरबी)।
आराम–सुख, उपवन।
उत्तर—जवाब, एक दिशा।
कनक—सोना, धतूरा।
कर—राजस्व, हाथ, किरण।
कल—मधुर, बीता या आगामी दिन, चैन, यन्त्र।
कला—एक अंश (जैसे चन्द्रमा की), कौशल (जैसे संगीत आदि)।
काम—कार्य, इच्छा, कामदेव।
कुशल—क्षेम, निपुण।
कुन्द–एक फूल, भोंथरा (फारसी)।
कुल—वंश, तमाम (अ०)।
कृष्ण—काला, कृष्ण भगवान, वेदव्यास।
केतु–एक ग्रह, ध्वज।
कोट—एक परिधान, किला।
कोटि—सिरा, श्रेणी, करोड़।
खल—दुष्ट, जिसमें कुछ कूटा जाता है।
खैर—कत्था, कुशल, अस्तु (अ०)।
गो—गाय, आँख, इन्द्रियाँ, पृथ्वी, अर्थात्।
गौर–गोरा, विचार (अ०)।
गुरु—शिक्षक, बृहस्पति, भारी।
गुण—विशेषता, अच्छाई, रस्सी; सत्त्व, रज, तम; ओज, प्रसाद माधुर्य आदि।
गण—समूह, गणेश या शिव के अनुचर, छन्दःशास्त्र के संकेत।
गति—चाल, वेग, पहुँच, दशा, मोक्ष, मार्ग, उद्यम।
घन– मेघ, घना; लंबाई, चौड़ाई, मोटाई वाली वस्तु।
चारा—पशुखाद्य, उपाय, [फा०]।
जरा—बुढ़ापा, थोड़ा [तु०]।
ताल—संगीत का ताल, तालाब, ताड़ का पेड़।
तारा—नक्षत्र, आँख की पुतली, बृहस्पति की स्त्री, बालि की स्त्री।
दण्ड—लाठी, सजा।
दल—समूह, पत्ता, नाश।
दीन—निर्धन, धर्म।
द्रोण—द्रोणाचार्य, डोंगी, दोना, एक तौल।
द्विज–ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य; पक्षी, दाँत।
दुर्गेश–दुर्ग अर्थात् किले का स्वामी, दुर्गा का ईश, शिव।
धर्म—पुण्य, सम्प्रदाय, स्वभाव, कर्त्तव्य।

धात्री—धाई, आँवला, धरती ।
नग—पहाड़, रत्न आदि ।
नाग—साँप, हाथी ।
पक्ष—पन्द्रह दिनों का समय, दल, पाँख ।
पतंग—गुड्डी, फतिंगा ।
पत्र—पत्ता, चिट्ठी, अखबार, प्रश्न-पत्र, पन्ना ।
पय—दूध, पानी ।
पद–पाँव, स्थान, भक्तिगीत, शब्द ।
पर—अन्य, पंख, ऊपर, किन्तु ।
पानी—जल, चमक, प्रतिष्ठा ।
पृष्ठ—पन्ना, पीठ ।
फन—साँप का फन, हुनर ।
बस—एक गाड़ी । वश । समाप्ति ।
बाला—लड़की । कलाई का भूषण, वलय ।
भीत–डरा हुआ । भित्ति, दीवार ।
मधु—शहद, वसन्त ।
मान—प्रतिष्ठा, नाप-तौल, परिमाण ।
यति—साधु, विराम ।
रस—काव्य के नव रस, भोजन के छह रस, तरल सार, स्वाद, आनन्द, सोना आदि के भस्म ।
राग—प्रेम, (अनुराग), संगीत का राग ।
रास—लगाम, एक नृत्य विशेष ।
लक्ष्य—निशाना, उद्देश्य ।
लंघन—लाँघना, उपवास ।
वार—दिन, प्रहार ।
विधि–रीति, भाग्य, ब्रह्मा, नियम ।
विग्रह—लड़ाई, शब्द का वियोजन, देव-शरीर ।
विरोध—वैर, विपरीतता ।
विषय—जिस पर विचार किया जाय, भोग-विलास की वस्तुएँ या स्थान ।
वृत्ति–जीविका, छात्रवृत्ति, टीका ।
शरीर–देह, शरारत करने वाला, नटखट ।
शाल—एक पेड़, ऊनी चादर (फारसी) ।
शुद्ध—पवित्र, अमिश्रित ।
शेर–बाघ, उर्दू छन्द के दो चरण ।
श्रुति—वेद, कान, किंवदन्ती ।
सारंग—हरिण, चातक, चितकबरा रंग, आदि ।
सर—सिर, तालाब, पराजित ।
सुर—देवता, स्वर ।
सूत—सारथि, धागा ।
सैन्धव—सेंधा नमक, सिन्धु देशीय घोड़ा ।
संग–साथ, आसक्ति, पत्थर (फारसी) ।
हस्ती—हाथी, अस्तित्व ।
हार—माला, पराजय ।
हीन—रहित, निकृष्ट ।

श्रुति-सम, भिन्नार्थक

शब्द	अर्थ	शब्द	अर्थ
अक्षि	आँख	अस्र	आँसू
अक्ष	धुरा	अस्त्र	हथियार
अनल	आग	अशित	भोंथरा, भक्षित
अनिल	हवा	असित	अश्वेत, काला
अनुदित	नहीं कहा या नहीं उगा	अर्घ	मूल्य, पूजा की सामग्री
अनूदित	अनुवादित	अर्घ्य	पूज्य
अभिराम	सुन्दर	अरि	शत्रु
अविराम	निरन्तर	अरी	स्त्री के लिए सम्बोधन
अवश	विवश	अवधि	काल
अवश्य	निश्चय	अवधी	अवध की भाषा
अवृत्ति	जीविका का अभाव	अलि	भौंरा
आवृत्ति	दुहराना	अली	सखी
अवहित	सावधान	अलिक	ललाट
अबिहित	जो विहित नहीं है	अलीक	झूठ
अशक्त	असमर्थ	आदि	इत्यादि
असक्त	आसक्ति-रहित	आदी	अभ्यासी
आसक्त	आसक्तियुक्त	आयत	चौड़ा
अंश	हिस्सा	आयत्त	अधीन
अंस	कन्धा		
अनिष्ट	अनचाहा	आवृत	ढका
अनिष्ठ	निष्ठा रहित	आवृत्त	दुहराया गया
अपेक्षा	आवश्यकता, तुलना में	इति	समाप्ति
उपेक्षा	अनादर	ईति	फसल की बाधा (अवृष्टि आदि)
अभ्याश	पास	इत्र	सुगन्धित पुष्प रस
अभ्यास	आदत	इतर	अन्य
अन्यान्य	दूसरा-दूसरा	उद्धत	उद्दण्ड
अन्योन्य	परस्पर	उदयत	तत्पर

शब्द	अर्थ
उपयुक्त	उचित
उपर्युक्त	ऊपर कहा हुआ
उपल	ओला
उपला	गोयठा
उपपति	पति-भिन्न प्रेमी
उपपत्ति	सिद्धि
कुल	वंश या समूचा, पूरा
कूल	किनारा
कंकाल	ठठरी
कंगाल	दरिद्र
कर्म	काम
क्रम	सिलसिला
कुजन	बुरा आदमी
कूजन	चहचहाना
कृति	रचना
कृत्ति	चर्म, चमड़ा
कृती	निपुण
कीर्त्ति	यश
कृत	किया हुआ
क्रीत	खरीदा हुआ
कलि	कलियुग
कली	अविकसित पुष्प
कर्ण	कान
करण	साधन, एक कारण
कुच	स्तन
कूच	प्रस्थान
काश	एक लम्बी घास, काँस
कास	खाँसी

शब्द	अर्थ
कोड़ा	चाबुक
कोरा	नया (कपड़ा आदि)
क्षात्र	क्षत्रिय का
छात्र	विद्यार्थी
खरा	शुद्ध
खड़ा	बैठा का विपरीत
चिर	देर, पुराना
चीर	कपड़ा
चिता	शव जलाने के लिए सजाई या चुनी गई लकड़ियाँ
चीता	बाघ जैसा एक हिंस्र पशु
चषक	प्याला
चसक	चस्का, लत
चाष	नीलकण्ठ
चास	खेत की जुताई
चुकना	समाप्त होना
चूकना	समय पर नहीं करना
जगत्	संसार
जगत	कुँए का चबूतरा
जबान	बाणी
जवान	युवक
टोटा	कमी
टोंटा	कारतूस
दिन	दिवस
दीन	गरीब
दारु	लकड़ी
दारू	शराब
द्विप	हाथी
द्वीप	टापू

पतन - गिरावट
पत्तन - नगर

शब्द	अर्थ
धुरा	अक्ष
धूरा	मिट्टी
निहत	मरा
निहित	रखा
नियत	निश्चित
नीयत	इरादा
नशा	मद
निशा	रात
निवृत्ति	लौटना
निर्वृति	मुक्ति, शान्ति, सुख
नाई	हजाम
नाईं	समान, भाँति
नाड़ी	नब्ज
नारी	स्त्री
निकृष्ट	निम्न स्तरीय
निष्कृष्ट	सारांश
प्रसाद	कृपा
प्रासाद	महल
परिणय	विवाह
प्रणय	प्रेम
परिणाम	नतीजा
परिमाण	मात्रा
नीड़	घोंसला
नीर	पानी
नहर	सिंचाई के लिए बनाई पतली नदी
नाहर	सिंह
पाश	जाल
पास	समीप

शब्द	अर्थ
पिक	कोयल
पीक	पान आदि का थूक
प्रकार	किस्म
प्राकार	घेरा
प्रकृत	प्रस्तुत, असली
प्राकृत	एक भाषा, साधारण
पता	चिट्ठी भेजने का स्थान
पत्ता	पेड़ का पत्ता
पथ	रास्ता
पथ्य	रोगी का भोजन
पुर	नगर
पूर	बाढ़
पुरी	नगरी
पूरी	सारी
प्रवाह	बहाव
परवाह	चिन्ता
पूरी	सारी
पूड़ी	घी आदि में बनाई रोटी
पट	कपड़ा
पट्ट	तख्ता, पाट
बलि	बलिदान, उपहार
बली	बलवान्
बहन	बहिन
वहन	ढोना
वदन	मुँह
बदन	शरीर
बाह्य	बाहरी
वाह्य	ढोने योग्य

अर्थ	शब्द	अर्थ	शब्द
वाद	कोई कथन	बरद	बैल
बाद	अनन्तर	वरद	वर देने वाला
वास	गन्ध	व्यंग	विकलांग
वाँस	एक वनस्पति	व्यंग्य	ताना
वास	निवास	लूटना	लूट लेना
बास	गन्ध	लुटना	लूटा जाना
बाई	औरत	शंकर	शिव
वाईं	बाँया का स्त्रीलिंग	संकर	मिश्रित
वर्ण	रंग या आकार	शर	बाण
व्रण	घाव	सर	तालाब
वरण	चुनाव	शूर	वीर
वर्ण	अक्षर, या जाति, रंग	सूर	अन्धा
भिड़	बर्रे, ततैया	शम	शान्ति
भीड़	जनसमूह	सम	बराबर
वार	प्रहार	सुत	पुत्र
वार	दफा	सूत	सारथि
वन्दी	भाट, चारण	शकल	टुकड़ा, शक्ल, चेहरा
बन्दी	कैदी	सकल	पूरा
वारिश	वर्षा	शर्व	शिव
वारिस	उत्तराधिकारी	सर्व	सब
बात	कथन	सुधि	स्मरण, सुध
वात	वायु	सुधी	विद्वान्
बुरा	खराब	शाला	मकान
बूरा	शक्कर, भूरा	साला	पत्नी का भाई
राज्य	शासन	सन्	संवत्
राज	रहस्य	सन	पटुआ
लक्ष्य	उद्देश्य	शीशा	काँच
लक्ष	लाख	सीसा	एक धातु

अर्थ	शब्द	अर्थ	शब्द
समान	प्रकार	शर्म	लाज
सामान	सामग्री, पदार्थ	श्रम	मिहनत
शती	सदी	शशधर	चन्द्रमा
सती	पतिव्रता	शशिधर	शिव
शारदा	सरस्वती	शिखर	चोटी
सारदा	सार देने वाली	शेखर	सिर
शप्त	शाप प्राप्त	श्रवण	सुनना, श्रवण, भिक्षु
सप्त	सात	स्रवण	टपकना
शबल	चितकबरा	श्रोत्र	कान
सबल	बलवान्	स्रोत	सोता, धारा
श्रुति	वेद	शिवा	पार्वती या गीदड़ी
स्रुति	टपकना	सिवा	अलावा
शास्त्र	ग्रन्थ	समभावना	तुल्यता की भावना
सास्त्र	अस्त्र के साथ	संभावना	आशा
सास्र	आँसू के साथ	समवेदना	साथ-साथ दुखी होना
सास्त्र	अस्त्र के साथ	संवेदना	अनुभूति
श्वजन	कुत्ते	शान्त	शान्तियुक्त
स्वजन	अपने लोग	सान्त	अन्त वाला
शकृत्	मल	सन्मति	अच्छी मती
सकृत्	एक बार	संमति	परामर्श
सुकृति	अच्छी कृति	समबल	तुल्य बल वाला
सुकृती	पुण्यात्मा	सम्बल	पाथेय
स्वच्छ	साफ	हँसी	हँसना
स्वक्ष	सुन्दर आँखों वाला	हंसी	हंस की मादा
शुक्ल	सफेद	हाड़	हड्डी
शुल्क	फीस	हार	पराजय

ऊनार्थक शब्द

कुछ ऐसे शब्द होते हैं जिनसे एक ही संज्ञा की विभिन्न अर्थच्छायाओं का बोध होता है। पाणिनि ने इन्हें तद्धितों में गिनाया है। संस्कृत व्याकरणों ने इन्हें स्वार्थिक कहा है। जैसे बाल = बालक, युवा = युवक, कोष्ठ = कोष्ठक, पत्र = पत्रक। पाणिनि ने इन प्रत्ययों के इतने अर्थ बताए हैं—अल्प, ह्रस्व, कुत्सित, अज्ञात, अनुकंपित। वैसे संस्कृत में भी ह्रस्व अर्थ में तद्धित के अतिरिक्त स्त्रीप्रत्यय का प्रयोग शुरू हो गया था, जैसे कंस = कंसी, स्थाल = स्थाली, पुस्तक = पुस्तिका आदि। हिन्दी में इनके अवशेष निम्नलिखित प्रत्यय मिलते हैं—

१. ई – नद = नदी, कट = कटी, घट = घटी, बट = बटी, पहाड़ = पहाड़ी, घाट = घाटी, छूरा = छूरी, कटोरा = कटोरी, ढकना = ढकनी, रस्सा = रस्सी, हथौड़ा = हथौड़ी, नाला = नाली, रोड़ा = रोड़ी, बर्छा = बर्छी, ढोलक = ढोलकी, तसला = तसली, टोकरा = टोकरी, डाल = डाली, कड़ाह = कड़ाही, गगरा = गगरी, गोला = गोली, थाल = थाली, पोखरा = पोखरी, लग्गा = लग्गी, लंगोटा = लंगोटी, पुर्जा = पुर्जी, पिटारा = पिटारी, जूता = जूती, कुर्त्ता = कुर्त्ती। ससुरा - ससुरी, ताया (ताऊ) - तायी,

२. इया—खाट = खटिया, चूहा = चुहिया, कुँआ = कुँइया, डिब्बा = डिबिया, ताल = तलइया, पीढ़ा = पिढ़िया, लोटा = लुटिया, बच्ची = बचिया, बूढ़ी = बुढ़िया, गाय = गइया, बाछी = बछिया। बेटी = बिटिया, कुटी = कुटिया, बड़ी = बरिया, फोड़ा = फुड़िया, रात = रतिया, बात = बतिया, गुड्डा = गुड़िया, आम = अमिया, पुल = पुलिया।

३. क ढोल = ढोलक।

४. ओला—खाट = खटोला, साँप = सँपोला, आम = अमोला।

५. ड़ा—बाछा = बछड़ा, चाम = चमड़ा, टूक = टुकड़ा, मुख = मुखड़ा।

६. की, ची, ड़ी री, ली—टाँग = टँगड़ी [री], देग = देगची, डोल = डोलची, पलंग = पलंगड़ी, सूप = सुपली, गाछ = गछुली, रुपया = रुपल्ली, छीपा = छिपुली, कोठा = कोठरी, गाँठ = गठरी, डफ = डफली, टीका = टिकली, लूगा = लुगरी, कन = कनकी, ढोल = ढोलकी, सूत = सुतली, सुतरी, लोटा = लोटकी।

७. रिया—बहु = बहुरिया (वधूटी > वधूटिका)

८. वा, आ—बच्चा = बचवा, भोज = भोजवा, गाछ = गछवा, मोहन = मोहना, भजन = भजना, हजाम = हजमा, सोनार = सोनुरा, दूध = दुधवा, मीत = मितवा, बेटा = बिटुवा। , राम = रमवा, माँ > माई (मातृ) - मैया

९. ऊ—मीत = मितऊ, चाचा = चचऊ, बाघ = बघऊ। [illegible]
बाप > बापू = बाबू, तात (दादा) - दाऊ, ताऊ
[illegible]

विलोम बनाने की विधियाँ

किसी शब्द का प्रतिलोम बनाने की निम्नलिखित विधियाँ हैं :—

१. नया विपरीतार्थक शब्द देना

शब्द	प्रतिलोम	शब्द	प्रतिलोम
अतिवृष्टि	अनावृष्टि	आदि, आरंभ	अन्त, अवसान
अन्दर, भीतर	बाहर	आध्यात्मिक	आधिभौतिक
अंदरूनी, भीतरी	बाहरी	आम	खास, इमली
अकेला, एकाकी	ससहाय, साथ	आकुञ्चन	प्रसारण
अगला	पिछला	आकुञ्चित	प्रसृत, प्रसारित
अच्छा, भला	बुरा	आजादी	गुलामी
अन्धकार, तम	आलोक, प्रकाश	आर्द्र	शुष्क
अथ	इति	आलस्य	फुर्ती, उद्योग, उद्यम
अनृत, मिथ्या	ऋत, तथ्य, सत्य	आवाहन	विसर्जन
अपना, सगा	पराया	आसक्त, सक्त	विरक्त, असक्त
अमीर, गनी, धनी	गरीब, निर्धन	इन्द्रिय-परायण, विषयी	जितेन्द्रिय
अमृत, सुधा	विष, गरल	ईद	मुहर्रम
अवश्य	शायद, संभवतः	ईषत्	प्रचुर
अमावस्या	पूर्णिमा	उगना, उतराना, तरना, तैरना	डूबना
अवनि	अम्बर	उच्च, ऊँचा	नीच, नीचा
अनुमोदन, समर्थन	विरोध	उठना	बैठना, गिरना
अलग	साथ, इकट्ठा	उजाला	अँधियारा, अँधेरा
अवाई, आगमन	बिदाई, प्रस्थान	उत्तम	अधम
अल्प	अधिक, प्रचुर	उदीची	अवाची
आकाश	पाताल	उपरि, ऊर्ध्व	निम्न, अधः
आगे, सामने	पीछे	उदास, उदासीन, खिन्न	प्रफुल्ल, प्रसन्न
आग	पानी	उदय, उदित	अस्तमन, अस्त
आना	जाना	उधार	नगद

शब्द	प्रतिलोम	शब्द	प्रतिलोम
उर्वर, उपजाऊ	मरु, ऊसर, बंजर	काला, साँवला	गोरा, उजला, सफेद
उपार्जित	स्वयंप्राप्त	कनिष्ठ	ज्येष्ठ
उदार, दानी, खर्चीला	कृपण, सूम, कंजूस	कुत्सा, निन्दा	प्रशंसा, स्तुति
उषा, प्रातः	संध्या, सायं	कड़ा, सख्त, रूखा	मुलायम, नरम
उद्दण्ड, उद्धत	विनीत, विनयी	कृश, क्षीण	पीन, पुष्ट
उग्र, धृष्ट	सौम्य, विनयशील	कृपा, प्रसाद, क्षमा	कोप, क्रोध, दण्ड
उष्ण, तप्त	शीत, शीतल	कृष्ण, श्याम, स्याह	श्वेत, शुक्ल, सफेद
उत्तर	दक्षिण, प्रश्न	कर्कशा, दुःशीला	सुशीला
ऊपर	नीचे	कुसुम, फूल	कंटक, वज्र, काँटा
ऋण	धन, आनृण्य	कर्मठ, फुर्तीला, उद्यमी	सुस्त, आलसी
ऋजु, सरल, सीधा	वक्र, कुटिल, टेढ़ा	कमजोर	मजबूत, ताकतवर
ऋणी	उऋण, अनृण	क्षुद्र, तुच्छ	विशाल, महान्, विराट्
एकत्र	विकीर्ण	कृत्रिम	प्राकृतिक, नैसर्गिक
एक	अनेक	क्षणिक, नश्वर	शाश्वत, चिरंतन, नित्य
ऐहिक	आमुष्मिक, पारलौकिक	क्षय, ह्रास	वृद्धि, विकास
कटु	मधु	खंडन	मंडन
कठिन	सरल	खरा	खोटा
कठोर, क्रूर	कोमल	खड़ा	बैठा
कर्कश, परुष, रूक्ष	मृदुल, मसृण	खरीद	बिक्री
कर्त्तव्य	अधिकार, अकर्त्तव्य	खल, दुष्ट	सज्जन
कड़वा, तिक्त, तीता, खट्टा	मीठा, मधुर	खीझना	रीझना
कच्चा	पक्का, जला	खिलना	मुरझाना
कम, न्यून	ज्यादा, बेश, अधिक	खुशी, खुश	गम, गमगीन
कमी	बेशी	खुला, फैला	बन्द, सँकरा, तंग
काम, श्रम, परिश्रम	आराम, विश्राम	खोलना	बन्द करना

शब्द	प्रतिलोम	शब्द	प्रतिलोम
गंभीर, गहरा	छिछला, उथला	छोटा	बड़ा
गाढ़ा	पतला	छोड़ना	पकड़ना
गीला, नम, भींगा	सूखा	छूट, छुट्टा	कैद, बँधा
गुण	दोष	जागना	सोना
गुरु, महान्	शिष्य, लघु	जलना	बुझना
गुप्त, गूढ़, छिपा, प्रच्छन्न	स्पष्ट, प्रकट	जमीन	आसमान
गृही, गृहस्थ	संन्यासी	जंगल, वन	गाँव, मरुभूमि
गलत, गड़बड़	सही	जन्म, जीवन	मरण, मृत्यु
गौण	मुख्य, प्रधान, प्रमुख	जीना	मरना
ग्रहण, संग्रह	त्याग	जड़	चेतन
ग्राम्य, ग्रामीण	नागर, नागरिक	जनकीय, निजी	राजकीय
ग्रस्त, वद्ध, रुद्ध	मुक्त	जाड़ा	गर्मी
ग्रास, बन्धन	मोक्ष, मुक्ति	जंगम	स्थावर
गाँव, ग्राम—शहर, नगर, जंगल, वन		जाग्रत्, जागरित	सुप्त, शयान
गाड़ना, चिपकाना, साटना	उखाड़ना	जोड़	घटाव
घटना, घटिया	बढ़ना, बढ़िया	ज्योति	तम
घर, घरेलू	बाहर, बाहरी	जटिल	सरल
चतुर, चालाक, होशियार—मूर्ख, बेवकूफ		ज्योत्स्ना	तमिस्रा
चढ़ाव	उतार	जल	स्थल
चुप्पा, गूँगा	बोलता	जनता	सरकार
चोर	साधु	जरा, बुढ़ापा, वार्द्धक्य—यौवन, जवानी	
चिरंतन, स्थायी	तात्कालिक	जीवित, जिन्दा	मृत, मुर्दा, मरा
चुस्त	ढीला	ज्वार	भाटा
चिकना	रूखा	जिन्दगी	मुर्दनी
छली, छलिया, टेढ़ा	भोला, सीधा	झगड़ा, बिगाड़, कलह-पलाह, मेल, सुलह	
छिपाना	दिखाना	झूठ, झूठा	सच, सच्चा

शब्द	प्रतिलोम
झोपड़ी	महल
ठंड, ठंडक, सर्दी	गरमी
ठंडा	गर्म
डरपोक	साहसी, हिम्मती
ढीठा	संकोची, लज्जालु, लजीला
तिमिर	आलोक
तरल, द्रव	ठोस
तरुण, युवा	वृद्ध
तारीफ, प्रशंसा, स्तुति	शिकायत, निन्दा
तानी	भरनी
तारना	बोरना, डुबाना
ताजा	बासी
तरस	तृप्ति
तीव्र, तीक्ष्ण	मन्द, भोंथा, कुन्द
तेज	धीमा
थोक	खुदरा
थोड़ा	बहुत
दंड	पुरस्कार
दाता	ग्रहीता, कृपण, सूम
दक्षिण	वाम, उत्तर
दिन, दिवा	रात, रात्रि
दुष्ट, दुर्जन	सज्जन
दूषित	स्वच्छ
देर, विलम्ब	शीघ्रता, जल्दी, सबेर
देहाती	शहरी

शब्द	प्रतिलोम
द्रुत	विलम्बित
देवता, देव	राक्षस, दानव, दनुज
धूप	छाँह
ध्वंस	निर्माण, रचना
नख	शिखा, शिख
नफा, फायदा, मुनाफा	नुकसान
अर्वाचीन, आधुनिक, सांप्रतिक	पुरातन
नया, नूतन, नवीन	पुराना, प्राचीन
निद्रा, स्वप्न	जागरण, जागृति
न्याय	पक्षपात
नकली	असली
नेकी	बदी
निशीथ	मध्याह्न
निषिद्ध	विहित
निन्द्य	वन्द्य, स्तुत्य, प्रशंसनीय
निजी, वैयक्तिक	सरकारी, सार्वजनिक
निज, स्व, स्वकीय	पर, परकीय
प्रसाद	कोप, अवसाद, विषाद
पहला, अगला	दूसरा, पिछला
पालक	बालक, घालक (घातक)
पालन, रक्षा	संहार, पीडन, विनाश
पेट	पीठ
पाश्चात्य, पश्चिमी	पौरस्त्य, पूर्वी
पिघला	जमा
प्रदोष	प्रत्यूष

शब्द	प्रतिलोम
प्रफुल्ल, प्रसन्न	म्लान, विषण्ण
प्रथम	चरम, अन्तिम, द्वितीय
प्रभु	भृत्य
पाप	पुण्य
प्राय:	बिरले
प्रारब्ध	पौरुष
प्राची	प्रतीची
प्रेम, श्रद्धा	घृणा, वैर
प्रस्फुटित, विकसित	संकुचित
पूरब, पूर्व	पच्छिम, पश्चिम,
पहले	बाद, अनन्तर
पूर्वाह्ण	अपराह्ण
प्रस्थान, प्रयाण, गमन	आगमन
पहुँचना	छूटना, खुलना
पृथु	तनु
फेन	गाद
फैला	सिमटा, सिकुड़ा
बच्चा, वाल, बालक	बूढ़ा, वृद्ध
बाल्य, बचपन	वार्द्धक, बुढ़ापा
बहार	खिजाँ
बसाना	उजाड़ना
बनाना	बिगाड़ना
बीमार, रोगी	तन्दुरुस्त—नीरोग, स्वस्थ
बाढ़, वृष्टि	सूखा, अवृष्टि
बाह्य	आभ्यन्तर, आन्तरिक

शब्द	प्रतिलोम
बहिष्कार	अंगीकार, स्वीकार
बर्बर	सभ्य
भूत	भविष्य, वर्त्तमान
भूमा, बाहुल्य, प्रचुरता	अल्पता
भौतिक	दैविक, आध्यात्मिक
भोगी	योगी, त्यागी
भीरू, कायर	निर्भीक, निर्भय, वीर, साहसी
भय	निर्भयता, साहस
भरा, पूरा	खाली, अधूरा
भारी	हल्का
भाग्य	अभाग्य, कर्म
मेल	फूट, झगड़ा
मनुष्य	पशु, राक्षस
मर्त्य	अमर
मनुज, मानव	दनुज, दानव
मँहगा	सस्ता
मौन, मूकता	मुखरता, वाचालता
मूक, मुखर	वाचाल, तूष्णीक
मोटा	पतला, दुबला
मिट्टी	सोना
मंगल	विघ्न, अमंगल
मुख, मुँह	पृष्ठ, पीठ
मेहनती, उद्यमी, परिश्रमी	आलसी
मिलन,	बिछोह, विरह,
मिलना	बिछुड़ना, फूटना
यथार्थ	कल्पित

शब्द	प्रतिलोम
युवक, युवा	जरठ, बूढ़ा
युद्ध, कलह, क्रान्ति, उपद्रव–शान्ति, सुलह	
रक्षक	भक्षक
राग	द्वेष
राम	रावण
राजा, राव	प्रजा, रंक
रिक्त	पूर्ण
रंगीन	सादा, रंगहीन, सफेद
रोग	स्वास्थ्य
रोगी	स्वस्थ
राका	कुहू
रोपण	उन्मूलन
लिखना	मिटाना
लेना	देना
लपेटना	खोलना
लौकिक	दिव्य
लालची, लोभी	संतोषी
लुप्त	प्रकट
विधि, विहित	निषेध, निषिद्ध
विस्तार, विस्तृत–संक्षेप, संक्षिप्त, संकुचित	
वन्य, बनैला,	ग्राम्य, पालतू,
जंगली	घरेलू, पालित
वसन्त	पतझड़
विस्तीर्ण, उदार	संकीर्ण, संकुचित
वाग्मी	मितभाषी, अल्पभाषी

शब्द	प्रतिलोम
शत्रु	मित्र, सखा
शान्ति	अशान्ति, शोर, कोलाहल
शान्त, नीरव	कोलाहलपूर्ण
शासक	शासित
शोषक	शोषित, पोषक
श्रीगणेश	इतिश्री
शिरोमणि	चरणधूलि
श्रव्य	दृश्य
श्रोता	वक्ता
श्यामा	गौरी
शुष्क	आर्द्र, तरल
शूद्र	ब्राह्मण
सृष्टि	संहार, प्रलय
सिकुड़ना, सिमटना	फैलना
समेटना	फैलाना
साफ, स्वच्छ	गन्दा, मलिन
समाज, समष्टि	व्यक्ति, व्यष्टि
स्वर्ग	नरक
संगम, संयोग	विरह, वियोग
साँझ, शाम	सवेरा, सुबह
सिर	पाँव, पैर
सर्द, सर्दी	गर्म, गर्मी
सटाना	हटाना
संधि	विग्रह
सुन्दर, रूपवान्	कुरूप
स्थिर	चंचल

शब्द	प्रतिलोम	शब्द	प्रतिलोम
स्थायी, नित्य	नश्वर, भंगुर, क्षणिक	सेव्य, स्वामी, मालिक	सेवक, नौकर
स्थूल	सूक्ष्म, तनु	स्थावर	जगम
सूना, खाली	बसा, भरा	स्त्री, नर	पुरुष, नारी
सात्विक	तामस, तामसिक	स्त्रैण	पुरुषोचित
सदाचारी	व्यभिचारी	हँसना	रोना
सामान्य	विशेष, अनुपम	हर्ष	विषाद, शोक
साधारण	विशिष्ट, अद्वितीय	हास, हँसना	रुदन, रोना
संग्रह	त्याग	हार	जीत
सर्वदा, सदा, सदैव	कभी-कभी	ह्रस्व	दीर्घ
स्वादिष्ट	फीका	हानि	लाभ

२. शब्द के आरम्भ में कुछ जोड़ना—

(क) निषेधार्थक अव्यय का योग—

क्रोध	अक्रोध	स्वीकार	अस्वीकार
खाद्य	अखाद्य	लौकिक	अलौकिक
गण्य	अगण्य	धर्म	अधर्म
घोर	अघोर	प्रिय	अप्रिय
चर	अचर	साधारण	असाधारण
चल	अचल	सभ्य	असभ्य
छेद्य	अच्छेद्य	मंगल	अमंगल
जेय	अजेय	शुभ	अशुभ
ज्ञान	अज्ञान	मोघ	अमोघ
कर्मण्य	अकर्मण्य	इच्छा	अनिच्छा
कीर्त्ति	अकीर्त्ति	उचित	अनुचित
यश	अयश	अवसर, समय	अनवसर, असमय
नित्य	अनित्य	आवरण	अनावरण

शब्द	प्रतिलोम	शब्द	प्रतिलोम
उदार	अनुदार	पाक	नापाक
इष्ट	अनिष्ट	काबिल	नाकाबिल
उपस्थित	अनुपस्थित	खुश	नाखुश
एक	अनेक	हाजिर	गैरहाजिर
ऋत	अनृत	मुनासिब	गैरमुनासिब
अधिकारी	अनधिकारी	मामूली	गैरमामूली
आस्तिक	नास्तिक	इन्साफ	गैरइन्साफ
गण्य	नगण्य, अगण्य	शरीफ	गैरशरीफ
लायक	नालायक	मुमकिन	गैरमुमकिन
पसन्द	नापसन्द	सरकारी	गैरसरकारी

(ख) किसी विरोधार्थी उपसर्ग या प्रातिपदिक का योग—

दान	आदान	राग	विराग
गमन	आगमन	योग	वियोग
यात	आयात	युक्त	वियुक्त
स्थित	प्रस्थित, उत्थित	क्रय	विक्रय
जय	पराजय	लगाव	विलगाव
यश	अपयश	देश	विदेश
मान	अपमान, अवमान	सम	विषम
चय	अपचय	कर्म	दुष्कर्म
आशा	निराशा	गति	दुर्गति
स्मरण	विस्मरण	लोक	परलोक

३. दोनों में पूर्व खण्ड का परिवर्तन—

(क) उपसर्गों का—

आगमन	निर्गमन	आरोह	अवरोह
आयात	निर्यात	आदान	प्रदान

शब्द	प्रतिलोम
संमान	अपमान
उत्कर्ष	अपकर्ष
संयोग	वियोग
प्रवृत्ति	निवृत्ति
आकर्षण	विकर्षण
अनुरक्त	विरक्त
अनुलोम	विलोम, प्रतिलोम
उन्मुख, ऊर्ध्वमुख	पराङ्मुख, अधोमुख अवाङ्मुख
सुजन	दुर्जन
सुगति	दुर्गति
सुख	दुःख
उन्नति	अवनति
उत्खनन	निखनन
सुकृत	दुष्कृत
उत्पतन	निपतन, अवपतन
उपकार	अपकार
अभिमुख, संमुख	विमुख

शब्द	प्रतिलोम
अनुकूल	प्रतिकूल
संघटन	विघटन
आय	व्यय
विजय	पराजय
सुमति, सुबुद्धि	दुर्मति, दुर्बुद्धि
सौभाग्य	दुर्भाग्य
सुगन्ध	दुर्गन्ध
सुकर	दुष्कर
सुलभ	दुर्लभ
सुगम	दुर्गम
संपत्ति	विपत्ति
सुकर्म	दुष्कर्म
सुयश	अपयश
उत्कर्ष	अपकर्ष
प्रकृति	विकृति
प्रबल	निर्बल
प्रवात	निर्वात

(ख) अव्ययों का—

उपरितन	अधस्तन
सुमति	कुमति
सुबुद्धि	कुबुद्धि
सद्गति	दुर्गति
सत्संग	कुसंग
सुकर्म, सत्कर्म	कुकर्म
सद्भाव	दुर्भाव

प्रख्यात	कुख्यात
आविर्भाव	तिरोभाव
स्वीकार, अंगीकार	बहिष्कार
सावलंब	निरवलम्ब
सायंकाल	प्रातःकाल
सपक्ष	विपक्ष
प्रातःकृत्य	सायंकृत्य

शब्द	प्रतिलोम	शब्द	प्रतिलोम
सेश्वर	निरीश्वर	अबल	प्रबल, सबल
सफल	विफल, निष्फल	सजीव	निर्जीव
साकार	निराकार	अचेत	सचेत
सज्जन	दुर्जन	सचेष्ट	निश्चेष्ट
सपूत	कपूत	अन्तर्गत	बहिर्गत
सरस	नीरस	अन्तर्भूत	बहिर्भूत
निश्चिन्त	सचिन्त	अत्रत्य	तत्रत्य
अज्ञ	प्रज्ञ, विज्ञ	पुरातन	इदानीन्तन, अधुनातन

(ग) अव्यय-भिन्न प्रातिपदिकों का—

सुखकर	दुःखकर, कष्टकर	अधिकांश	अल्पांश
स्वतन्त्र	परतन्त्र	पूर्ववर्त्ती	उत्तरवर्त्ती, परवर्त्ती
स्वार्थ	परार्थ, परमार्थ	पूर्वाह्ण	अपराह्ण
स्वाधीन	पराधीन	पूर्वरात्र	अपररात्र
खुशबू	बदबू	स्वदेश	परदेश
अल्पसंख्यक	बहुसंख्यक, अधिकसंख्यक	उत्तमर्ण	अधमर्ण
अल्पज्ञ, किंचिज्ज्ञ	बहुज्ञ	दिनचर्या	रात्रिचर्या
खुशकिस्मत	बदकिस्मत		

(घ) मिश्रित परिवर्त्तन—

इहलोक	परलोक	स्वदेश	विदेश
ऐहलौकिक	पारलौकिक	प्रत्यक्ष, समक्ष	परोक्ष
महात्मा	दुरात्मा	प्राचीन	अर्वाचीन
अल्पव्ययी, मितव्ययी	अपव्ययी	नर	नारी

४. उत्तर खंड का परिवर्त्तन—

(क) प्रत्यय का—

उपजीव्य	उपजीवी	वृत्त	वर्त्तिष्यमाण
उपकारी	उपकृत	सेव्य	सेवक
उपकर्त्ता, उपकारक	उपकार्य		
भक्ष्य	भक्षक	हन्ता	हत
भर्त्ता	भृत्य, भार्या	भोक्ता	भोग्य, भोज्य

शब्द	प्रतिलोम	शब्द	प्रतिलोम

(ख) प्रातिपदिक का—

शब्द	प्रतिलोम	शब्द	प्रतिलोम
कृतज्ञ	कृतघ्न	चिन्तामुक्त (रहित)	चिन्ताग्रस्त (युक्त)
सेवानिरत (रत)	सेवामुक्त (निवृत्त)	कुलभूषण (तिलक)	कुलदूषण (कलंक)
		कुलदीपक	कुलांगार
विश्वासभाजन	विश्वासघाती	श्रद्धारहित	श्रद्धासहित, श्रद्धायुक्त
पदारूढ़	पदच्युत	गोचर	गोतीत
नमकहलाल	नमकहराम	कामनायुक्त	कामनामुक्त
स्वार्थपरायण	स्वार्थविमुख	ज्वराक्रान्त	ज्वरमुक्त

(ग) मिश्र—

शब्द	प्रतिलोम	शब्द	प्रतिलोम
बुद्धिमान्	बुद्धिरहित, बुद्धिहीन	क्रोधी	क्रोध-रहित
स्वादिष्ट	स्वादहीन	प्रच्छन्न	प्रकट
मलिन	निर्मल	आर्त्तिकर	आर्त्तिहर
गुणी, गुणवान्	गुणातीत, निर्गुण	प्राज्ञ, प्रज्ञावान्	प्रज्ञाहीन
ज्ञानवान्, ज्ञानी	ज्ञानरहित, अज्ञानी	धनवान्	धनहीन

५. एक में पूर्व खंड का दूसरे में उत्तर खंड का—

शब्द	प्रतिलोम	शब्द	प्रतिलोम
धनवान्	निर्धन	तलवान्	अतल
ईमानदार	बेईमान	लज्जावान्, लज्जाशील	निर्लज्ज
खंडनीय	अखण्ड	बलवान्	निर्बल, बलहीन
गरजमन्द	लागरज	शर्मिन्दा	बेशर्म
छली	निश्छल		
गमगीन	बेगम	समझदार	नासमझ
तुलनीय	अतुल	हयादार	बेहया

६. दोनों खंडों में परिवर्त्तन—

शब्द	प्रतिलोम	शब्द	प्रतिलोम
उपर्युक्त	अधोलिखित	भीरु	निर्भीक
खुशनसीब	बदकिस्मत	लोभी	निर्लोभ
अपराधी	निरपराध	स्वार्थपरायण	निःस्वार्थ
दोषी, दुष्ट	निर्दोष	मोहयुक्त, मोहपरायण	निर्मोह
डरपोक	निडर	[illegible]	बेदर्द

अभ्यास

१. कोई भी प्रत्यय कृत् है या तद्धित इसकी पहचान क्या है, दोनों के ३-३ उदाहरण दें।

२. इन प्रत्ययों का एक-एक उदाहरण दें—
अन, ति, अनीय, अक्कड़, इयल, आना, ईला, मन्द, वर, दार।

३. बतावें कि इनमें क्या प्रकृति है, क्या प्रत्यय ? यह प्रत्यय कृत् है, या तद्धित—
फिरता, ओढ़नी, खेती, धूलिसात्, दानव, साङ्कृत्यायन, इन्द्रिय, घटाव, कमेड़ा, गुस्ताखी, दोस्ताना

४. इनमें समास बतावें—
अबूझ, भवजाल, धर्मार्थ, द्रवीभूत, सोचा-समझा, घरमुँहा, महोदय, अनुपम, दतिनमंजिला, हानि-लाभ, हृष्ट-पुष्ट, दन्तकथा, अष्टधातु।

५. निम्नलिखित रिक्तियों को काले अक्षरों के विपरीतार्थकों से भर कर वाक्य पूरा करें :—

(क) एक **व्यंजन** तथा एक······से बने अक्षर की पुनरुक्ति से अनेक **शब्द** निर्मित होते हैं।

(ख) जो लोक-सेवा में निरत रहने लगते हैं, वे क्रमशः **राग**······से ···· हो जाते हैं।

(ग) सभा में संमान न **वाचाल** का, न·········का, मितभाषी का होता है।

(घ) कल आप कुछ ····· दिखते थे, आज तो **प्रफुल्ल** हैं।

(ङ) अधिक **विस्तार** न करें, कृपया ·········में अपनी समस्या बताएं।

(च) सब बातें किसी से **प्रकट** नहीं की जाती, कुछ बातें सबों से ········ रखी जाती है।

(छ) तुम **दीर्घ** स्वरों का भी······उच्चारण क्यों करते हो ?

(ज) इसकी **उपत्यका** अब कुछ अधिक जन संकुल हो गई है, इसलिए प्रायः सभी ऋषि-मुनि······पर चले गए हैं।

(झ) उनका **लिखित** अनुरोध तो पढ़ा, कुछ ········भी कहा है ?

(ञ) मैं अभी तक **सन्देह** की ही स्थिति में हूँ, ·········की स्थिति में नहीं आ पा रहा हूँ।

६. निम्नलिखित शब्दों के उपयुक्त विपरीतार्थकों से वाक्य पूरा करें :—

कुटी, स्वार्थ, अर्वाचीन, बाहरी, नश्वर, प्रकट, गंभीर, ऐहिक, अनावरण, अपकर्ष, महान्, तीव्र ।

भारत का ......इतिहास अति गौरवमय है। किन्तु इसे.......... कलहों से बड़ी क्षति पहुँचती हैं। प्रत्येक विधायक..........में ही रहना चाहता है। सन्त तो ....परायण होते ही हैं। ...... सुख के लिए कुछ त्याग-तप करना पड़ता है। मौन मूर्ख का सब से बड़ा .... है। यश ही मनुष्य का .... स्मारक है। तुमने अभी कुछ बातें..........भी रखी हैं। दूसरों के .... से मन में द्वेष उपजता है। उसका स्वभाव बहुत .... है।

७. कोष्ठ में दिए शब्दों से वाक्य-पूर्त्ति करें —

(क) जहाँ का........समुन्नत नहीं, वहाँ का..........कैसे प्रगति करेगा। [व्यक्ति-समाज]

(ख) .... किए गए काम में..........स्वयं समाविष्ट हो जाना है। [बहुजनहित-सर्वजनहिताय]

(ग) सृष्टि में..........की प्रगति के लिए .... की उपस्थिति भी आवश्यक है ? [दानव-मानव]

(घ) किसी के प्रति उत्कट........भी अन्त में उसके प्रति........ में बदल जाती है ? [प्रेम-घृणा]

(ङ) जिस परिवार में कोई..........नहीं रहता उसमें..........की उपेक्षा हो जाती है। [बालक-वृद्ध]

(च) जो व्यक्ति..........करता है उसे........भी अवश्य करना चाहिये। [त्याग-संग्रह]

(छ) ......ही नहीं........आम भी लाभदायक होता है। [कच्चा-पका]

(ज) समाज के संरक्षण के लिए जिससे ......की आशा की जाती है, उसे...... का भी अधिकार देना चाहिए। [निग्रह-अनुग्रह]

८. रिक्त स्थानों की पूर्त्ति दिए हुए शब्दों के विलोमों के विशेषणों से कीजिए—

रात, आलोक, बाहर, प्रेम, जीत, निकर्ष।

(क) उस....... गली में प्रवेश करने में झिझक होती थी।

(ख) ....कृत्यों में थोड़ी देर ध्यान का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है।

(ग) जिसे लोग फकीर कहते हैं उसे प्रायः एक..... ताकत हासिल होती है।

(घ) स्वार्थपरायण व्यक्ति अपने राष्ट्र के भी ...... बन जाते हैं।

(ङ) .... हुआ व्यक्ति भी हिम्मत रखने पर एक दिन कामयाब हो जाता है।

(च) .... [illegible] से ही कोई योगी [illegible] की गरिमा प्राप्त करता है।

९. इन संज्ञाओं से बने उपयुक्त विशेषणों से वाक्य पूर्त्ति करें—

वस्तु ओज, अशक्ति, संशय, निश्चय, प्राथम्य, शील, धैर्य ।

(क) मैं उनके ········ भाषण से मुग्ध हो गया ।

(ख) मैं········ और······ व्यक्ति के नेतृत्व में काम करना नहीं चाहता ।

(ग) अभी किसी की जीत ······— नहीं कहीं जा सकती ।

(घ) ········ पुरस्कार किसे मिला ?

(ङ) ये आदर्श ········· जीवन में नहीं चल पाते ।

१०. अशुद्ध पर्यायों को रेखांकित करें ।

जैसे—सूर्य, दिवाकर अर्क, मार्तण्ड, शुभ्रांशु

(क) दुःख, श्रान्ति, व्यथा, कष्ट, पीड़ा

(ख) आत्मजा, तनया, स्वसा, दुहिता, सुता

(ग) किरण, मयूख, अंशु, प्रभा, रश्मि

(घ) अन्धकार तिमिर, छाँह, तम, ध्वान्त

(ङ) मार्ग, पथ, सरणि, धरणि, अध्वा

११. इन अव्ययों के पूर्वयोग से दो-दो शब्द बताएँ—

आविस्, प्रादुस्, अन्तर्, तिरस्, सम्, नि, प्रति उद्, परा, ना ।

१२. निम्नलिखित शब्दों में प्रकृति प्रत्यय बताएँ —

माहात्म्य, सौहार्द, तनिमा, उष्णभोजी, ध्येय, भाग, द्रष्टव्य, अधिष्ठाता, क्रुद्ध, वायव्य, शोषक, वर्चस्वी ।

१३. इनमें समास बताएँ—

अधजल, भगदड़, प्रियदर्शिनी, अनादि, पंचानन, शताब्दी, यावज्जीवन, महाशय, कहासुनी, पुंगव, पनशाला, पंचामृत ।

१४. निम्नलिखित विशेषणों के संज्ञा-शब्दों के प्रतिलोम शब्दों से वाक्य पूरा करें—लोभी, उपेक्षित, विषण्ण, आविर्भूत, अधीर ।

(क) ··········· मनुष्य की भौतिक प्रगति में बाधक होता है ।

(ख) ············ में भी बहुत इतराना नहीं चाहिए ।

(ग) ············ से मनुष्य बड़ी-से-बड़ी विपत्ति भी पार कर लेता है ।

(घ) नेताजी के असमय ············ देश सन्न रह गया ।

(ङ) मैं वहाँ आप की भी ········ कर रहा था ।

१५. इन प्रत्ययों से एक-एक शब्द बनावें —

ईन, त्य, ल, आऊ, आव, आयन, वर, उआ, इष्णु, इयत, गी, एय, आवट, ती ।

१६. प्रयोग के द्वारा इन युग्मों का अन्तर बताएँ—

वहन-बहन, बाट-बाँट, कास-काश, सकल-शकल, सम्मति-सन्मति, सम्भावना सम्भावना, आमूत आमूल, [illegible]

१७. उपयुक्त पर्याय से वाक्य पूरा करें—

(क) मैं आप से मिलने के लिए उपयुक्त ………… ढूँढ़ रहा था। [समय, मौका, अवसर]

(ख) सूर्योदय के पूर्व थोड़ी देर………… से बड़ा लाभ होता है। [चलने, टहलने, घूमने]

(ग) मैंने आप की पत्रिका का………किया। [दर्शन, अवलोकन, निरीक्षण]

(घ) महत्त्वाकांक्षा कभी-कभी मानव को ………… बना देती है। [राक्षस, असुर, दानव]

(ङ) ………से जर्जर शरीर कष्टप्रद हो जाता है। [बुढ़ापा, वार्द्धक, जरा]

(च) मैं तुम से दुश्मनी नहीं, ………… की चाह में यहाँ आया हूँ। [मित्रता, शरण, दोस्ती]

(छ) वह परीक्षा के लिए………परिश्रम कर रहा है। [उग्र, भीषण, घोर]

१८. निम्नलिखित प्रत्येक पद समूह के लिए एक शब्द दें—

जिसका मनोरथ टूट चुका है। सत्कार के योग्य। जिसे पुत्र न हो। उत्साह के साथ। जो करना सरल है। जो कष्ट से मिलने योग्य हो। बर्फ की तरह उजला। मानव से उच्चतर प्राणी। जीने की इच्छा वाला। छूने योग्य। तत्काल का मरा। पुत्री का पुत्र। बिना किसी कामना का।

१९ इनका विपरीतार्थक लिखें –

साकार, परिवार, निश्चिन्त, इन्सान, शैतान, छत, दूध, एड़ी, एहवात, ढीला, बदी।

२०. रेखांकित शब्द समूह के लिए एक शब्द दें—

वह जलाशय मानव से कृत नहीं, प्रकृति द्वारा निर्मित था। उस की शोभा आँखों को बहुत प्रिय लगती थी। जलाशय के बीच में कई ऐसे स्थल थे, जो पानी से ऊपर उठे हुए थे। किनारे ऐसा जंगल था जो काँटों से भरा था, अतः वहाँ बड़ी कठिनाई से पहुँचा जा सकता था। जंगल के भीतर ऐसा अँधेरा था, जिसमें सूई ही घुस सकती थी, इस कारण उसे बहुत से भय उत्पन्न करने वाले जंगली जानवर रहते थे। कुछ पेड़ तो आसमान को भी छू रहे थे।

Idiom, phrase

अध्याय—१३

मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ

मुहावरे

मुहावरा उस पद-समूह, वाक्यांश या अधूरे वाक्य को कहते हैं जो किसी वाक्य में प्रविष्ट होकर उसके अभिप्रेत अर्थ को अपनी लक्षणा तथा व्यंजना से अधिक सबल और प्रभावक बना देता है। वाक्य रचना में मुहावरों और लोकोक्तियों का बड़ा महत्त्व है। जो बात पूरे एक अनुच्छेद से स्पष्ट की जा सकती है, वह एक मुहावरे या लोकोक्ति से ही स्पष्ट हो जाती है। कारण यह है कि सामान्यतः कोई भी शब्द या वाक्य अपने अभिधेय अर्थ को प्रकट करता है, जिस की पहुँच बहुत कम दूर की है। मुहावरा और लोकोक्ति के शब्द या वाक्य अभिधेय का स्पर्श कर लक्ष्य तथा व्यङ्ग्य तक पहुँच जाते हैं, जिनकी पहुँच की कोई सीमा नहीं बाँधी जा सकती। जैसे, 'आँख दिखाना' का अभिधेय अर्थ है अपनी आँख किसी को दिखाना—"जाओ डाक्टर पांडेय को आँख दिखाओ और शीघ्र उपचार आरम्भ कर दो, आँख की उपेक्षा नही करनी चाहिये"। पर 'आँख दिखा रहे हो ? तुम्हारी शक्ति का मुझे खूब पता है' में प्रसंग बता रहा है कि यहाँ अभिधेय अर्थ से प्रयोजन नहीं है। 'यहाँ आँख दिखाने' का लक्ष्य अर्थ है **डराना**। डराने के लिये छोटे बच्चों को अपलक आँख दिखाते हैं। कहते हैं, निरन्तर सामने देखते रहने से बाघ भी डर जाता है। व्यंग्य अर्थ है बहुत डराना। इसी प्रकार 'शिक्षक तो रोज ही सुनील का कान ऐंठते हैं, और क्या करें' में कान 'ऐंठना का केवल' अभिधेय अर्थ में प्रयोग है, किन्तु 'कान ऐंठता हूँ, तुम से कभी नहीं बोलूँगा' में 'कान ऐंठना' का अर्थ है दृढ़ प्रतिज्ञा करना, जो लक्षणा तथा व्यंजना से ही प्राप्त है। नीचे कुछ प्रसिद्ध मुहावरे दिये जा रहे हैं, सामने लक्ष्य तथा व्यंग्य अर्थ दे दिये गये हैं और उनमें से कुछ के प्रयोग भी मार्गदर्शन के लिए अंकित हैं—

१. अँतड़ी जलना (तेज भूख लगना)—मेरी तो अँतड़ी जल रही है, पहले पेट-पूजा कर लूँगा, तब तुम्हारी बात सुनूँगा।

२. अँधेरे घर का उजाला (इकलौता बेटा)—मोहन अँधेरे घर का उजाला है, उसे मुँहमाँगा खर्च मिल जायगा।

३. अंधे की लाठी (एकमात्र सहारा)—रामनाथ अंधे की लाठी है, उसे सेवा से मत निकालो।

४. अन्धेर नगरी (अन्याय का स्थान)—मैं इस मुहल्ले में नहीं रहूँगा, आजकल यह अन्धेर नगरी बन गया है।

५. अंधा बनना (बिना सोचे विश्वास कर लेना)—सुरेश बहुमत प्राप्त करने के लिए अंधा बना हुआ है, अभी उससे जो चाहो, उतार लो।

६. अन्धेर खाता (मनमानी की जगह)—यह कोषागार है, अन्धेर खाता नहीं, प्रमाणित होने पर ही पैसे की निकासी की अनुमति मिलेगी।

७. अंग टूटना (बहुत थकावट का अनुभव करना)—मेरे तो अंग टूट रहे हैं, सोने जा रहा हूँ, स्नान बाद में करूँगा।

८. अंगारों पर पैर रखना या चलना (जानकर खतरे में पड़ना)—१९४२ के आन्दोलन में भाग लेना अंगारों पर पैर रखना (या चलना) था।

९. अंग-अंग मुस्काना (बहुत प्रसन्न होना)—आज रमेश का अंग-अंग मुस्का (मुस्कुरा या मुस्किरा) रहा है, बेटा प्रवेशिका परीक्षा में पहला आया है न!

१०. अंगूठा दिखाना (अस्वीकार करना)—मैंने उससे साइकिल माँगी, तो उसने अंगूठा दिखा दिया; जब मेरी साइकिल थी, तब अक्सर माँगकर ले जाता था।

११. अंगारे उगलना (क्रुद्ध होकर बोलना)—प्राचार्य आज अंगारे उगल रहे थे, समय पर घंटी नहीं बजी।

१२. अंगूठा चूमना (खुशामद करना)—मैं उसका अंगूठा नहीं चूम सकता, अपना रोना भगवान से ही रोऊँगा।

१३. अपनी डफली अपना राग (नेतृत्व का अभाव)—जब चोटी के नेताओं में भी अपनी डफली अपना राग है, तो देश का क्या होगा?

१४. आँख आना (आँख में एक रोग-विशेष होना)—मेरी तो आँख आई है, अभी धूप में नहीं निकलूँगा।

१५. आँख नहीं उठना (सामने नहीं ताकना)—जब से रंगे हाथ पकड़ा गया है, तब से किसी के सामने उसकी आँख नहीं उठती।

१६. आँख उठाकर भी नहीं देखना (बिल्कुल ध्यान नहीं देना)—घर की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखोगे तो यही होगा, पढ़ाई-लिखाई में इतना डूबना भी अच्छा नहीं।

१७. आँख उठाना (बुरी दृष्टि से देखना)—किसकी हिम्मत है कि श्यामा की ओर आँख उठाए, उसका भाई आँख निकाल लेगा।

१८. आँख खुलना (ज्ञान होना)—घड़ी गायब होने पर तुम्हारी आँख खुली है, मैंने तो पहले ही कहा था कि दिनेश विश्वसनीय नहीं है।

१९. आँख गड़ना (लालच होना)—मेरी कलम पर बहुत दिनों से उसकी आँख गड़ी थी, आखिर उड़ा ही ली उसने !

२०. आँखें चुराना (सामने पड़ने से बचना)—कबतक आँखें चुराते रहोगे, जाकर क्षमा क्यों नहीं माँग लेते हो ?

२१. आँखों का तारा, उजाला या पुतली (अत्यन्त प्यारा)—श्याम अपने शिक्षकों की आँखों का तारा (या उजाला या पुतली) है; यदि वह तुम्हारा मित्र है, तो काम बना ही समझो।

२२. अपनी खिचड़ी अलग पकाना (मतभेद रखना)—सभी नेता अपनी खिचड़ी अलग पकाने लगते हैं; कभी संगठित होकर सामना नहीं कर पाते।

२३. अंकुश देना या रखना (नियन्त्रण रखना)—माता-पिता को अपने बच्चों पर अंकुश भी देना (या रखता) चाहिए, केवल लाड़-प्यार से वे बिगड़ जाते हैं।

२४. अपना उल्लू सीधा करना (मूर्ख बनाकर अपना काम निकालना)—रजनीश से जरा सावधान रहना, वह कभी अपना उल्लू सीधा कर भाग खड़ा होगा।

२५. आँखों में धूल झोंकना (धोखा देना)—आँखों में धूल झोंककर कबतक अपना उल्लू सीधा करते रहोगे, एक-न-एक दिन कलई खुल ही जायगी !

२६. आँखों पर परदा पड़ना (भ्रम में पड़ना)—आखिर कबतक तुम्हारी आँखों पर परदा पड़ा रहेगा, अब तो आधी सम्पत्ति बिक चुकी !

२७. आँख दिखाना या लाल-पीली या नीली-पीली करना (क्रोध करना)—मालिक आँख दिखाते (लाल-पीली या नीली-पीली करते) रह गये, नौकर टका-सा जबाब देकर चला गया।

२८. आँखों की किरकिरी (काँटा) होना (कष्टदायक शत्रु होना)—सुरेश दारोगा जी की आँखों की किरकिरी (काँटा) बना हुआ हैं, क्योंकि वह उनकी हिटलरशाही नहीं चलने देता।

२९. आँखों के आगे अँधेरा छाना (हताश होना)—चुनाव-युद्ध में पराजय की बात सुनते ही मदन की आँखों के आगे अँधेरा छा गया।

३०. आँखों पर (में) चर्बी छाना (घमंड से चूर होना)—दिनेश की आँखों पर (या में) चर्बी छा गई है, अब वह आँखें चार होते ही कन्नी कटाकर निकल जाता है।

३१. आँखें चार होना (आमने-सामने पड़ जाना)—ऊपर का ही उदाहरण।

३२. आँखों में पानी न होना या आँखों का पानी गिर जाना (लज्जा न होना)—महेन्द्र की आँखों में पानी नहीं है (या महेन्द्र की आँखों का पानी गिर गया है); जब विपत्ति में पड़ा था तब भीगी बिल्ली बनकर सहायता के लिए हाथ पसारा करता था, अब अभिवादन से भी कतराता है।

३३. आँखों में गड़ना या फूटी आँखों न सुहाना या भाना (अच्छा न लगना)—दरवाजे पर उगा वह बेर का पेड़ मेरी आँखों में गड़ता रहता या मुझे फूटी आँखों न भाता (या सुहाता) था, अच्छा हुआ कि रात की आँधी-पानी में वह स्वयं गिर गया।

३४. आँखों पर चढ़ाना (अवसर की ताक में रहना)—दारोगा जी ने उसे आँखों पर चढ़ा लिया है, किसी-न-किसी चोरी के अभियोग में उसका नाम दे देंगे।

३५. आँखें बिछाना (उत्सुक प्रतीक्षा करना)—छुट्टी होते ही मैं पहली गाड़ी से घर पहुँचता था; दादी मेरे लिए आँखें बिछाये रहती थी।

३६. आँखों से गिरना (सम्मान गँवाना)—जब से सुरेश ने विद्यालय की घड़ी चुराई है, तब से वह सब की आँखों से गिर गया है।

३७. आँख मारना (इशारा करना)—वह तो रुपये देने को मन-ही-मन तैयार हो गया था, मैंने जब आँख मारी, तब वह सम्हला; नहीं तो आज उसके भी दस हजार डूब गए होते।

३८. आँख अटकना (आकृष्ट होना)—विदेशी पर्यटकों की आँखें चाँदनी में ताज-महल पर अटकी रह जाती है।

३९. आँखें डबडबा जाना या भर आना (आँखों में आँसू भर आना)—शकुन्तला की बिदाई के समय कण्व की भी आँखें डबडबा गई या भर आई थीं, साधारण माता-पिता की क्या दशा होती होगी ?

४०. आँख बदल जाना (स्नेह में कमी हो जाना)—इन दिनों उनकी आँखें बदली लगती हैं, मिलने पर अब उनमें पहले-सा उछाह नहीं दिखता।

४१. आँखें या छाती जुड़ाना (देखकर प्रसन्न होना)—बहुत दिनों पर बेटे को सकुशल घर आया देख माँ की आँखें (छाती) जुड़ा गई।

४२. आँखें लाल होना या आँखों में खून उतरना (बहुत क्रुद्ध होना)—नरेन्द्र को देखते ही उसकी आँखें लाल हो गई या आँखों में खून उतर आया।

४३. आँच न आना (थोड़ा भी कष्ट नहीं आना,—भैया के रहते मुझ पर कोई आँच नहीं आई थी, अब आटे-दाल का भाव मालूम होने लगा है।

४४. आटे-दाल का भाव मालूम होना (सांसारिक झंझटों में पड़ना)—ऊपर ही दिया गया उदाहरण।

४५. आस्तीन का साँप (प्रच्छन्न शत्रु)—हर देश में कुछ आस्तीन के साँप रहते हैं, जो तुच्छ स्वार्थ के लिए शत्रु से मिल जाते हैं।

४६. आठ-आठ आँसू रोना (पछताना)—उस समय तो माता-पिता का अनुशासन कड़ुवा लगता था, अब आठ-आठ आँसू रोने से क्या होगा ?

४७. आकाश-पाताल एक करना (कठिन परिश्रम करना)—आकाश-पाताल एक कर आखिर उसने अपने बेटे को सरकारी सेवा में घुसा ही दिया।

४८. आड़े हाथों लेना (मीठी झिड़की देना)—प्राचार्य ने उसे दो दिन बिलम्ब से कक्षा में घुसते देख आड़े हाथों लिया है, फलतः अब वह भीगी बिल्ली बन गया है।

४९. आँखों में ही रात काटना (रात भर चिन्ता या व्यग्रता में जागा रहना)—बस दुर्घटना का समाचार पढ़कर उसने आँखों में ही रात काटी, भागा-भागा वह मुजफ्फरपुर पहुँचा।

५०. आकाश के तारे गिनना (चिन्ता के मारे रात भर जागा रहना)—भोपाल की खबर सुनकर मैं तो रात भर आकाश के तारे गिनता रह गया; मुन्नू भोपाल स्टेशन के ही पास तो रहता है !

५१. अपने पाँव (में) आप कुल्हाड़ी मारना (अपना नुकसान स्वयं करना)—रमेश, मामा जी से इस तरह झगड़ कर अपने पाँव में आप कुल्हाड़ी मत मारो।

५२. अपने पैरों पर खड़ा होना (स्वावलम्बी बनना)—अपने पैरों पर खड़ा होने के पूर्व यह स्वाभिमान घातक होगा।

५३. अक्ल का दुश्मन (उल्लू का पठ्ठा या आधी खोपड़ी का = महामूर्ख)—गिरीश अक्ल का दुश्मन (या उल्लू का पठ्ठा, या आधी खोपड़ी का) है; उसे किसी योजना में मत रखो, अन्यथा सबकी मिट्टी पलीद होगी।

५४. अंगुली या उँगली पर नचाना (बस में करना)—राजेश को उसकी पत्नी अँगुली पर नचाती है; इसलिए जो कहना हो उसकी पत्नी से ही कहो।

५५. अक्ल सठियाना (बुद्धि क्षीण पड़ना)—रामू की अकल सठिया गई है।

५६. अगिया बैताल (बहुत क्रुद्ध)—तुम अगिया बैताल क्यों हो रहे हो ?

५७. अढ़ाई दिनों की हुकूमत (थोड़े दिनों का अधिकार)।

५८. अड़ियल टट्टू (जिद्दी)—श्यामू अड़ियल टट्टू है।

५९. अन्धे के हाथ बटेर लगना (संयोग से किसी अच्छी वस्तु का अयोग्य को मिल जाना)—निदेशकता मोहन को मिली ! यह तो अन्धे के हाथ बटेर लगी।

६०. आसन डोलना (धैर्य टूटना, सक्रिय होना)—ब्रह्मा का भी आसन डोल गया।
६१. आँसू पीकर रह जाना (निरुपाय होकर कष्ट सह लेना)।
६२. अंधा या उल्लू बनाना (मूर्ख वनाना)—तुम मुझे अँधा (या उल्लू) नहीं बना सकते।
६३. अपनी ही ओटना (अपनी ही बात कहते जाना, औरों की नहीं सुनना)।
६४. अब-तब या आज-कल करना (आनाकानी करना, टालते जाना)।
६५. आग उगलना (क्रोध से कड़वी बातें बोलना)—वह तो आते ही आग उगलने लगा।
६६. आग में घी डालना (क्रोध भड़काना)—आग में घी मत डालो, चुप रहो।
६७. आग में कूदना (जानबूझ कर अपने को विपत्ति में डालना)।
६८ आँसू पीकर रह जाना (निरुपाय होने से भीतर ही भीतर रो कर रह जाना)।
६९. आँसू पोंछना (आश्वासन देना)—उसके आँसू पोंछनेवाला भी तो कोई नहीं।
७०. आकाश के तारे तोड़ना (असंभव काम में हाथ लगाना)।
७१. आग लगाना (उपद्रव मचाना)— तुम्हीं ने तो यह आग लगाई है।
७२, आगा-पीछा करना (हिचकना)—आगा-पीछा मत करो, अपने निर्णय पर स्थिर रहो।
७३. आसमान पर चढ़ना या उड़ना (घमंड करना)—विधायक बनते ही वह आसमान पर चढ़ गया या (में उड़ने लगा) है।
७४. इशारे पर नाचना (वश में होना)—दिनेश रीता के इशारे पर नाचता है।
७५. ईद या दूज) का चाँद (कठिनाई से दिखने वाला)—आजकल तो तुम ईद (या दूज) के चाँद बन गये हो।
७६. ईंट का जवाब पत्थर से देना (शत्रु को क्षमा नहीं कर दण्ड देना)।
७७. उड़ती चिड़ियाँ पहचानना (दूर तक की बात समझ लेना)—मैं उड़ती चिड़िया पहचानता हूँ।
७८. उल्टे छूरे से मूड़ना (मूर्ख बना कर ठग लेना)—मुझे ही उल्टे छूरे से मूड़ने चले हो!
७९. उलटे पाँव लौटना (निराश होकर लौट आना)—वह उलटे पाँव लौट आया।
८०. उलटी गंगा बहाना (असंभव कर दिखाना)—तुम उलटी गंगा बहाना चाहते हो।
८१. उधेड़-बुन में पड़ना (दुविधा में पड़ना)—किस उधेड़-बुन में पड़े हो ?

८२. उतार-चढ़ाव देखना (दीर्घकालीन अनुभव रखना)।

८३. उगल देना (सब ज्यों-का-त्यों कह देना)—पुलिस को देखते ही उसने सब उगल दिया।

८४. उठ जाना (मर जाना)—पहाड़ी बाबा तो कब न उठ गये।

८५. उँगली पकड़ कर पहुँचा पकड़ना (पहले थोड़ा ले कर बाद में सर्वस्व लेना)।

८६. एक आँख से देखना (समदृष्टि रखना)—बैरागी बाबा तो सबको एक आँख से देखते हैं।

८७. एक लाठी से हाँकना (सब को एक ही प्रकार से बाध्य करना)।

८८. एड़ी चोटी का पसीना एक करना (बहुत परिश्रम करना)।

८९ एक टाँग पर खड़ा रहना (सदा क्रियाशील रहना)—वह एक टाँग पर खड़ा रहा।

९०. एक ढेले से दो शिकार करना (एक काम से दो फल पाना)।

९१. एक न चलना (बस न चलना)—उसकी एक न चली।

९२. ऐंठ कर रह जाना (मन मसोस कर रह जाना)—रमेश तो ऐंठ कर रह गया।

९३. ऐसा-वैसा (साधारण)—सुशील ऐसा-वैसा छात्र नहीं।

९४. ओठ चबाना (क्रोध करना)—धीरेन्द्र ओठ चबा कर रह गया।

९५. ओठ बिचकाना (घृणा या तिरस्कार प्रकट करना)—वह मुझे देखते ही ओठ बिचका देता है।

९६. औंधे मुँह गिरना (धोखा खाना)—दिनेश इस बार औंधे मुँह गिरा है।

९७. और का और (उलटा)—तुमने और का और समझ लिया।

९८. कलेजा मुँह को आना या फट जाना (बहुत दुःख होना)।

९९. कलेजे पर साँप लोटना या कलेजे में आग लगना (ईर्ष्या करना)।

१००. कलेजा पत्थर करना या कलेजे पर पत्थर रखना (धैर्य रखना)।

१०१. कागज काला करना (निरर्थक बातें लिखना)—क्यों कागज काला करते हो।

१०२. कन्धे से कन्धा मिलाना (सहयोग करना)—कन्धे से कन्धा मिलाकर चलो।

१०३. कागजी घोड़े दौड़ाना (लिखा-पढ़ी अधिक, प्रगति कुछ नहीं)।

१०४. काठ मार जाना (सन्न रह जाना)—सुरेन्द्र को तो काठ मार गया।

१०५. कुएँ में ही भाँग या भंग पड़ना (सबों का एक-सा पागल हो जाना)।

१०६. कान खड़े होना (सावधान, चौकन्ना होना)—मेरे तो कान खड़े हो गये।

१०७. कान खोलना (सावधान होना)—कान खोल कर सुन लो।

१०८. कान पकड़ना या ऐंठना (प्रतिज्ञा करना)—मैंने कान पकड़ा, ऐसा न करूँगा।

१०९. कान खाना (सदा कुछ-न-कुछ सुनाते रहना, माँगना)।

११०. कान करना (ध्यान देकर सुनना)—मेरी बात कान न करोगे, तो पछताओगे।

१११. कान में तेल डाल कर बैठना (कुछ न सुनना, ध्यान न देना)।

११२. कान फूँकना या भरना (सिखाना, प्रायः गलत बात कहना, शिकायत करना)—तुमने मोहन का कान फूँका (या भरा) है।

११३. कान काटना (आगे निकल जाना)—नरेन्द्र तो सबके कान काट रहा है।

११४. कान पर जूँ न रेंगना (अनसुना करना, ध्यान न देना)।

११५. कंचन बरसना (बहुत धन आना)—उनके यहाँ तो कंचन बरस रहा है।

११६. ककड़ी-खीरा समझना (छोटा समझना)—मुझे क्या ककड़ी खीरा समझ रखा है?

११७. कच्चा चिट्ठा खोलना (रहस्य खोलना)—तुम्हारा कच्चा चिट्ठा खोल दूँगा।

११८. कच्ची गोटी नहीं खेलना (अनुभवहीन नहीं होना)—मैंने कच्ची गोटी नहीं खेली है।

११९. कंठ का हार (बहुत प्यारा)—उमेश सब शिक्षकों के कंठ का हार है।

१२०. कंठ बैठना, गला बैठना (आवाज फँस जाना, भारी हो जाना)।

१२१. कंठ फूटना (मुँह से शब्द निकलना)—अब तुम्हारा कंठ फूटा है।

१२२. कमर सीधी करना (विश्राम करना)—जरा कमर सीधी कर लूँ।

१२३. कमर कसना (तैयार होना)—कमर कस कर मेरे पीछे चल पड़ो।

१२४. कमर टूटना (उत्साह नष्ट होना)—राजेन्द्र की तो कमर ही टूट गई, जवान बेटा मर गया।

१२५. कलई खुलना (रहस्य प्रकट होना)—आखिर उसकी भी कलई खुल कर रही।

१२६. कौड़ी का तीन होना (बहुत तुच्छ होना)—कला के स्नातक तो कौड़ी के तीन हो रहे हैं।

१२७. काया पलटना (बहुत अधिक परिवर्त्तन होना)—उसका तो काया-पलट हो गया!

१२८. कुत्ते की मौत (ऐसी मृत्यु, जिसमें कोई पूछने वाला न हो)।

१२९. काफूर होना (गायब हो जाना)—आरक्षी को देखते ही उसका नशा काफूर हो गया।

१३०. किस खेत की मूली होना (महत्त्वहीन होना)—वह किस खेत की मूली है?

१३१. कीचड़ उछालना (अपमान या निन्दा करना)—उस पर क्यों कीचड़ उछालते हो?

१३२. कलम तोड़ कर लिखना (प्रशंसा करना, अनूठी बात कहना)।

१३३. कपास ओटना (महत्त्वहीन काम में लगना)—मैं क्या यहाँ कपास ओटता रहूँ?

१३४. कतरा कर निकलना (दिखाई पड़ने से बचना)—रामू मुझे देख कतरा कर निकल गया।

१३५. कलेजा धक्-धक् करना, धड़कना या काँपना (बहुत डर जाना)।

१३६. कलेजा ठंडा होना (मन को शान्ति मिलना, प्रायः शत्रु की हानि से)।

१३७. कलेजा काढ़ना या निकालना (बहुत प्रिय वस्तु ले कर वेदना पहुँचाना)।

१३८. कलेजा निकाल कर रख देना (अत्यन्त मूल्यवान् वस्तु दे देना)।

१३९. कलेजा फटना या टूक-टूक होना (बहुत दुःखी होना)।

१४०. कलेजा चीर कर दिखाना (पूर्ण विश्वास दिलाना)—उसने कलेजा चीर कर दिखा दिया।

१४१. कुँआ खोद कर पानी पीना (परिश्रम कर गुजारा करना)—मैं तो कुँआ खोदकर पानी पीता हूँ। मैं रोज कुँआ खोदता हूँ और पानी पीता हूँ।

१४२. केंचुल बदलना (बिलकुल बदल जाना)—अमेरिका से लौटने के बाद से तो उसका केंचुल ही बदल गया है।

१४३. कौड़ी दे कर पढ़ना (पढ़-लिखकर भी मूर्ख रह जाना)—मैंने कौड़ी देकर नहीं पढ़ा है।

१४४. कोरा जवाब देना (निराशाजनक उत्तर देना)—उसने तो मुझे कोरा जवाब दे दिया।

१४५. किताबी कीड़ा (हमेशा पढ़ते रहने वाला)—सुरेश तो किताबी कीड़ा है।

१४६. खाक छानना (इधर-उधर भटकना)—अभियन्ता बन कर भी वह खाक छान रहा है।

१४७. खाक में मिलना (नष्ट होना)—दिनेश की सम्पत्ति खाक में मिल गई।

१४८. खटाई में पड़ना (कार्यान्वियन में विलम्ब होना)—मंचिका खटाई में पड़ी है।

१४९. खून के घूँट पीना (क्रोध को दबाना, सहना)—वह खून के घूँट पी कर रह गया।

१५०. ख्याली पुलाव (काल्पनिक बात का आनन्द)—ख्याली पुलाव मत पकाओ।

१५१. खिल्ली उड़ाना (हँसी उड़ाना)—तुम तो सबकी खिल्ली उड़ाते हो।

१५२. खुशामदी टट्टू (केवल स्वार्थ से मुँह पर बड़ाई करने वाला)।

१५३. खेत आना (मारा जाना)—भारत-विभाजन में लाखों आदमी खेत आये।

१५४. खाकर डकार नहीं लेना (हजम कर जाना किसी को भनक भी नहीं लगने देना)—विद्यालय के सारे पैसे खा कर उसने डकार भी नहीं ली।

१५५. खबर लेना (खूब पिटाई करना)—उस डब्बे के लोगों ने पाकेटमार की खूब खबर ली।

१५६. खटपट होना (झगड़ा होना)—सुरेश और मोहन में आजकल खटपट है।
१५७. खा-पका डालना (खतम कर देना)—सारा अनुदान खा-पका डाला ?
१५८. खाली हाथ (बिना रुपये या हथियार का)—उसे खाली हाथ मत भेजो।
१५९. खरा-खोटा परखना (भला बुरा, असली नकली पहचानना)।
१६०. खराद पर चढ़ना (बस या जाँच में आना)—अभी खराद पर नहीं न चढ़ा है !
१६१. खरी-खोटी सुनाना (भला बुरा कहना)—जनता ने नेताजी को खूब खरी-खोटी सुनाई।
१६२. खून की नदी बहाना (मारकाट करना)—अकालियों ने खून की नदी बहा दी।
१६३. खून खौलना (क्रोध होना)—आजकल समाचार पढ़ कर खून खौल उठता है।
१६४. खेल बिगड़ना (काम बिगड़ना)—सारा खेल बिगड़ चुका, अब जाकर क्या करोगे ?
१६५. खोपड़ी खाना (बेकार बकवाद करना)—मेरी खोपड़ी मत खाओ।
१६६. खोपड़ी (या सिर) गंजी करना (मार कर खोपड़ी के बाल उड़ा देना)।
१६७. गज भर की छाती होना (बहुत साहस या उदारता होना)।
१६८. गड़े मुर्दे उखाड़ना—बीती अप्रिय बात की चर्चा करना।
१६९. गाढ़ी छनना (बड़ी मित्रता होना)— मोहन और सुरेश में आजकल गाढ़ी छनती है।
१७०. गाँठ का पूरा (धनी)—छकौड़ी लाल गाँठ के पूरे भले हों,आँख के अन्धे नहीं।
१७१. गाल बजाना (डींग हाँकना)—अधिक गाल न बजाओ, मुझे सब मालूम है।
१७२. गारत करना (नष्ट करना)—तुमने तो सारा खेल ही गारत कर दिया।
१७३. गहरा हाथ मारना—आशा या इच्छा से अधिक पा लेना।
१७४. गुस्सा पीना (क्रोध रोकना)—दारोगा जी गुस्सा पीकर रह गये।
१७५. गोटी लाल होना (लाभ होना)—आजकल सेठ जी की गोटी लाल है।
१७६. गाजर-मूली समझना (छोटा समझना)—उसे गाजर-मूली न समझो।
१७७. गूदड़ी का लाल (साधारण कुल में जनमा असाधारण व्यक्ति)।
१७८. गाँठ बाँधना (याद रखना)—मेरी बात गाँठ बाँध लो।
१७९. गुल खिलना (कोई अनोखी बात होना)—लगता है आज वहाँ कोई गुल खिला है।
१८०. घात लगाना (किसी को मारने के मौके की तलाश करना)।
१८१. घाव हरा होना (दुःखद याद आना)—अभी घाव हरा है।

१८२. घड़ों पानी पड़ना (लज्जित होना)—अजीत पर तो घड़ों पानी पड़ गया।

१८३. घी के दीए जलाना (खुशियाँ मनाना)—तुम तो घी के दीए जलाओगे ही।
१८४. घोड़ा बेचकर सोना (निश्चिन्त सोना, गहरी नींद में)।
१८५. न घर का, न घाट का (कहीं का न रहना)—वह न घर का रहा, न घाट का।
१८६. घर बसना (विवाह होना)— रजनीकान्त का भी घर बसेगा ही।
१८७. घास छीलना या भाड़ झोंकना (व्यर्थ काम करना)—वहाँ क्या घास छील रहे थे ? (भाड़ झोक रहे थे ?)
१८८. घुटने टेक देना (हार मानना)—तुम ने अभी घुटने टेक दिये !
१८९. घपले में पड़ना (फेर में पड़ना)—धरनीधर के घपले में हरगिज न पड़ना।
१९०. घर फोड़ना (घर में झगड़ा लगाना)—वह घर फोड़ने में माहिर है।
१९१. घाट-घाट का पानी पीना—व्यापक अनुभव प्राप्त करना।
१९२. घर का दीया बुझ जाना (इकलौते पुत्र का मर जाना)।
१९३. चाँदी काटना (बहुत नफा करना)—वह दूकानदार आजकल चाँदी काट रहा है।
१९४. चार चांद लगना (सुन्दरता बढ़ना)—इस कालीन से बैठके में चार चाँद लग गये।
१९५. चार दिनों की चाँदनी (थोड़े समय का सुख)—चार दिनों की चाँदनी है।
१९६. चांद का टुकड़ा (बहुत सुन्दर)—दुलहा तो बस चाँद का टुकड़ा है।
१९७. चाँद पर थूकना (व्यर्थ कलंक लगाना)—मोहन की निन्दा करना चाँद पर थूकना है।
१९८. चाँदी का जूता मारना (घूस देना)—आजकल चाँदी का जूता मार कर काम कराया जाता है।
१९९. चकमा देना (ठग लेना)—तुम ने मुझे चकमा क्यों दिया ?
२००. चेहरे या मुँह पर हवाइयाँ उड़ना (घबरा जाना)—उसके चेहरे या मुँह पर हवाइयाँ उड़ रही थीं।
२०१. चट कर जाना (खा जाना)—वह तो सारा दही चट कर गया।
२०२. चाल में आना (ठगा जाना)—तुम सरोज की चाल में कैसे आ गये।
२०३. चंगुल में फँसना (वश में पड़ना)—अब तो तुम थाने के चंगुल में फंस चुके !
२०४. चादर देख कर पाँव फैलाना (शक्ति के अनुसार काम करना)।
२०५. चलता पुरजा (चालाक)—कम पढ़ा-लिखा है तो क्या, लड़का चलता पुरजा है।
२०६. चंडाल चौकड़ी (दुष्टों का समूह)—आज चंडाल चौकड़ी कहाँ जमी है ?
२०७. चंडूखाने की गप (झूठमूठ बातें)—तुम ने यह चंडूखाने की गप कहाँ सुनी ?

२०८. चिराग गुल होना (मरना)—चिराग गुल हो चुका, अब दवा दे कर क्या होगा ?

२०९. चिराग तले अँधेरा (योग्य के पास अयोग्य का होना)।

२१०. चिराग लेकर ढूँढ़ना (बहुत ढूँढ़ना)—ऐसा लड़का चिराग लेकर ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलेगा।

२११. चिड़िया फँसाना (सीधे आदमी को फँसाना)—आज कितनी चिड़ियाँ फँसी ?

२१२. चबा-चबा कर बातें करना (रोब दिखाने के लिए ठहर-ठहर कर एक-एक शब्द बोलना)—कार्यालय में चबा-चबा कर बातें करते हैं।

२१३. चुटकियों में उड़ाना (महत्त्वहीन समझना)—मेरा कहना चुटकियों में मत उड़ाओ।

२१४. चूड़ियाँ पहनना (कायर होना)—जब युवक ही चूड़ियाँ पहन लेंगे, तब देश का क्या होगा ?

२१५. चुल्लू भर पानी में डूब मरना (बहुत अधिक लज्जा से मुँह न दिखाना)।

२१६. चैन की बंशी बजाना (आनन्द के जीवन बिताना)—अब चैन की बंशी बजाओ।

२१७. चौकड़ी भूल जाना (घबरा कर गतिहीन हो जाना)—वारन्ट देखते ही वह सारी चौकड़ी भूल गया।

२१८. छक्के छुड़ाना (दुर्दशा करके हराना)—शिवाजी ने औरंगजेब के छक्के छुड़ा दिए।

२१९. छठी का दूध याद आना (भीतर-ही-भीतर बहुत पीड़ा का अनुभव होना)।

२२०. छप्पर फाड़ कर देना (बिना मिहनत के बहुत देना)।

२२१. छाती पर मूँग या कोदो दलना (दिखा कर कष्ट देना)।

२२२. छीछालेदर करना या होना (पोल खोलना या खुलना, मजाक उड़ाना)।

२२३. छाती जलना या फटना या छाती पर साँप लोटना (डाह होना)।

२२४. छाती पीटना (विलाप करना)—उत्तरा अभिमन्यु का शव लेकर छाती पीटने लगी।

२२५. छाती या कलेजा जुड़ाना या ठंढी होना (मनोरथ पूरा होना)।

२२६. छाती निकाल कर चलना (अकड़ कर चलना)—अब छाती निकालकर चलने लगा है।

२२७. छाती फुलाना (इतराना, गर्व करना)—छाती तो फुलाएंगे ही मिश्रजी, लड़का प्रथम आया है न !

२२८. छाती पर बाल होना (अधिक हिम्मत होना)—किसकी छाती पर बाल है !

२२९. छाती पर का पत्थर (सदा चिन्ता की वस्तु)—लड़की छाती पर का पत्थर हो जाती है।
२३०. छाती पत्थर की करना या छाती पर पत्थर (सिल) धर लेना (दुःख सहने के लिए दिल कड़ा करना)—अब तो छाती पत्थर की करनी ही पड़ेगी।
२३१. छापा मारना (सहसा आक्रमण करना)—कल आरक्षियों ने ललितेश के घर छापा मारा।
२३२. छान डालना (अच्छी तरह खोज लेना)—कल आरक्षियों ने सारा नगर छान डाला।
२३३. छिपा रुस्तम (साधारणों में छिपा असाधारण)—भालेन्दु तो छिपा रुस्तम निकला।
२३४. जले पर नमक छिड़कना (कष्ट बढ़ाना)—जले पर नमक न छिड़को, अपना काम करो।
२३५. जबान देना (प्रतिज्ञा करना)—मैं तुम्हें जबान नहीं दे सकता।
२३६. जबान खोलना (माँगना)—सुरेश कभी अपनी जबान नहीं खोलता।
२३७. जबान में लगाम न होना (वाणी पर नियन्त्रण न होना)।
२३८. जमीन आसमान एक करना (बहुत कोशिश करना)।
२३९. जमीन में गड़ जाना (लज्जित होना)—यह सुनते ही केदार जमीन में गड़ गया।
२४०. जली-कटी सुनाना (कड़वी बातें कहना)—उसे ऐसी जली-कटी क्यों सुना रहे हो ?
२४१. जहर उगलना (कष्ट पहुँचाने वाली बात कहना)—जहर मत उगलो।
२४२. जहर का घूँट पीना (क्रोध रोकना)—दिनेश जहर का घूँट पी कर रह गया।
२४३. जान के लाले पड़ना (जान बचना कठिन हो जाना)—रवि के जान के लाले पड़ गये।
२४४. जामे से बाहर होना (बहुत क्रुद्ध होना)—जामे से बाहर क्यों हो रहे हो !
२४५. जल-भुन कर खाक हो जाना (बहुत क्रुद्ध होना)—वह जल-भुन कर खाक हो गया।
२४६. जीती मक्खी निगलना (जानबूझ कर किसी के प्रति अकरणीय क्षमा करना)।
२४७. जान पर खेलना (प्राण संकट में डालना)—जान पर खेल कर मैंने उन्हें बचाया था।
२४८. जमीन पर पैर न पड़ना या रखना (बहुत इतराना)।
२४९. जाल फैलाना या बिछाना (फँसाने की युक्ति करना)—खूब जाल फैला रखा है तुमने।

२५०. जादू डालना (वश में करना)—उस छोकरे ने तो मंत्री जी पर जादू डाल रखा है।

२५१. जिस पत्तल में खाना, उसी में छेद करना (कृतघ्नता करना)।

२५२. जूता चाटना (खुशामद करना)—वह तो सबके जूते चाटता है।

२५३. जोड़-तोड़ करना (उपाय करना)—बैठने से नहीं होगा, कुछ जोड़-तोड़ करो।

२५४. झंडा गाड़ना (जीत लेना)—आखिर भारतीय जनता पार्टी ने वहाँ झंडा गाड़ ही दिया।

२५५, झाँसे में आना (धोखे में आना)—मैं तुम्हारे झाँसे में नहीं आ सकता।

२५६. झख मारना (विवश होना या समय नष्ट करना)—उसे झख मार कर यही करना पड़ेगा। वहाँ क्या झख मार रहे थे ?

२५७. झोपड़ी में रह कर महल का सपना देखना (सामर्थ्य से बाहर की कल्पना)।

२५८. टका सा मुँह लेकर रह जाना (बहुत लज्जित होना)।

२५९. टट्टी की ओट शिकार खेलना (छिप कर किसी के विरुद्ध बुरा काम करना)।

२६०. टपक पड़ना (अचानक आना)—तुम कहाँ से टपक पड़े ?

२६१. टस-से,मस न होना (नही डिगना)—रजनीश टस-से-मस नहीं हुआ।

२६२. टांग अड़ाना (बाधा पहुँचाना)—मेरे काम में टाँग मत अड़ाओ।

२६३. टूट पड़ना (अचानक आक्रमण)—उस पर तीनों एक ही साथ टूट पड़े।

२६४. टेढ़ी खीर (कठिन कार्य)—संचिका का पीछा करना तो टेढ़ी खीर है।

२६५. टाँग पसार कर सोना (निश्चिन्त सोना)—अभी वह टाँग पसार कर सोता है; गर्मी की छुट्टी है न ?

२६६. टाँय-टाँय फिस हो जाना (असफल होना)—तुम्हारी योजना टाँय-टाँय फिस हो गई ?

२६७. टुकड़ों पर पलना (किसी और के या दूसरे के अन्न से गुजारा करना)।

२६८. ठन-ठन गोपाल होना (कंगला होना)—अभी तो ठनठन गोपाल है, मेला कैसे जाऊँ।

२६९. ठंढी साँस लेना (आहें भरना)—वह ठंढी साँस लेकर रह गया, करता क्या ?

२७०. डंक मारना (कटु वचन बोलना)—मैं उसका डंक मारना नहीं सह सकता।

२७१. डंडी मारना (कम तौलना)—एक तो महँगा देते हो, दूसरे डंडी भी मारते हो ? सरकारी सहायता में बिचौलिये डंडी मार लेते हैं।

२७२. डकार तक न लेना (सफाई से गायब करना)।

२७३. डेढ़ चावल की खिचड़ी अलग पकाना (सब से अलग, अकेला रहना)।

२७४. डोरी ढीली करना (नियन्त्रण कम कर देना)—जरा डोरी ढीली करो, फिर देखो।

२७५. ढाई दिनों की बादशाहत (कुछ ही दिनों का संमान)।
२७६. ढिंढोरा पीटना (सबसे कहते फिरना)—तुमने तो सर्वत्र ढिंढोरा ही पीट दिया।
२७७. तलवा धो-धोकर पीना या तलवा सहलाना या चाटना (खुशामद करना)।
२७८. तक़दीर फूटना (भाग्य बिगड़ना)—मेरी तो तक़दीर फूट गई।
२७९. तलवार के घाट उतारना (जान से मारना)—सैकड़ों को तलवार के घाट उतारा।
२८०. तारे गिनना (चिन्ता में रात भर जागना)—मैं तो तारे गिनता रह गया।
२८१. तिल को ताड़ करना (बढ़ा-चढ़ा कर कहना)—तिल को ताड़ मत बनाओ।
२८२. तूती बोलना (प्रभाव होन)—आजकल जगन्नाथ जी की तूती बोलती है।
२८३. तिलांजलि देना (सम्बन्ध समाप्त करना)—मैंने उसे तिलांजलि दे दी।
२८४. त्योरियों में बल पड़ना (क्रुद्ध होना)—यह सुनते ही उसकी त्योरियों में बल पड़ गए।
२८५. त्रिशंकु बनना (कहीं का नहीं रहना)—बिचारा त्रिशंकु बन गया।
२८६. तीन-तेरह करना (तितर-बितर करना)—तुमने सब तीन-तेरह कर दिया।
२८७. तीन-पाँच करना (टाल-मटोल करना)—तीन-पाँच मत करो, साफ कहो।
२८८. थाली का बैंगन (स्थिर न रहने वाला)—वह तो थाली का बैंगन है।
२८९. दाँत खट्टे करना (पराजित करना)—उसने दुश्मनों के दाँत खट्टे कर दिए।
२९०. दाँत निपोरना, दिखाना या काढ़ना (गिड़गिड़ाना)—मैं किसी के आगे दाँत नहीं निपोर सकता।
२९१. दाँतों तले उँगलियाँ दबाना (अचरज में पड़ना)।
२९२. दाँत काटी रोटी (घनिष्ठ मैत्री)—दोनों में दाँत काटी रोटी है।
२९३. दाल गलना (स्वार्थ पूरा होना)—यहाँ तुम्हारी दाल नहीं गलेगी।
२९४. दाल में काला होना (कोई खटका होना)—लगता है, दाल में कुछ काला है।
२९५. दाहिना हाथ होना (बड़ा सहायक होना)—नेहरू गाँधी के दाहिने हाथ थे।
२९६. दरवाजे की मिट्टी खोदना (कुछ माँगने के लिए बार-बार आना)।
२९७. दिन फिरना (अच्छा समय आना)—कभी मेरे भी दिन फिरेंगे।
२९८. दिमाग आसमान पर चढ़ना (घमंड होना)—अभी उसका दिमाग आसमान पर चढ़ा है।
२९९. दूध का धोया (बिल्कुल बेदाग)—वहाँ दूध का धोया कौन है?
३००. दूध के दाँत न टूटना (अनुभवहीन होना)—अभी उसके दूध के दाँत नहीं टूटे हैं।

३०१. दो नावों पर पैर रखना (दोनों ओर होना)—दो नावों पर पाँव मत रखो।
३०२. धता बताना (टाल देना)—उसने तो मुझे भी धता बता दिया।
३०३. धोखे की टट्टी (दिखावटी)—दरवाजे की कार मत देखो, वह तो धोखे की टट्टी है।
३०४. धूप में बाल सफेद न करना (अनुभव हीन नहीं होना)।
३०५. धरती पर पाँव नहीं रखना या पड़ना (बहुत अधिक प्रसन्न होना)।
३०६. धुन सवार होना (लगन होना)—आजकल उसे परीक्षा की धुन सवार है।
३०७. धज्जियाँ उड़ाना (बहुत दोष दिखाना)—आज की बैठक में उसकी धज्जियाँ उड़ाई गईं।
३०८. नकेल हाथ में होना (वश में होना)—मोहन की नकेल तो राधा के हाथ है।
३०९. नजर चुराना (सामने न होना)—सुरेश मुझ से नजर चुराता है।
३१०. नजर लगना (बुरी दृष्टि का कुप्रभाव पड़ना)—उसे किसी की नजर लग गई है।
३११. नाम लेना (गुण गाना)—भारत सदा दयानन्द का नाम लेता रहेगा।
३१२. नाक कटना (प्रतिष्ठा नष्ट होना)—मेरी तो नाक कट गई।
३१३. नाक का बाल (अत्यन्त प्रिय)—नरेन्द्र अपने शिक्षकों की नाक का बाल है।
३१४. नाक रगड़ना (आरजू-मिन्नत करना)—मैं नाक रगड़ता रह गया।
३१५. नाक न दी जाना (तीव्र दुर्गन्ध आना)—वहाँ नाक नहीं दी जाती थी।
३१६. नाक पर मक्खी न बैठने देना (सर्वथा बचे रहना)।
३१७. नाक में दम या नाकों दम करना या नाकों चने चबवाना (खूब परेशान करना।)
३१८. नाक-भौं चढ़ाना या सिकोड़ना (घृणा या क्रोध दिखाना)।
३१९. नाक रखना (प्रतिष्ठा बचाना)—मोहन ने विद्यालय की नाक रख ली।
३२०. निन्यानवे के फेर में पड़ना (धन कमाने के चक्कर में पड़ना)।
३२१. नानी याद आना (बहुत कष्ट में पड़ना)—उसे तो नानी याद आती थी।
३२२. नींद हराम होना (बेचैन होना)—लड़कों की अनुशासन-हीनता से मेरी नींद हराम है।
३२३. नींव का पत्थर होना (आरम्भ का दृढ़ सहारा बनना)।
३२४. नाक पर गुस्सा होना (तुरत क्रुद्ध होना)—उसकी तो नाक ही पर गुस्सा रहता है।
३२५. नुकताचीनी करना (छिद्रान्वेषण करना)—तुम सबकी नुकताचीनी ही करते हो।
३२६. नौ-दो-ग्यारह होना (चम्पत होना)—वह तो देखते-देखते नौ-दो-ग्यारह हो गया।

३२७. पत्थर की लकीर (अमिट)—उसकी बात पत्थर की लकीर होती है।
३२८. पगड़ी रखना (लाज रखना)—तिवारी जी, आप ने मेरी पगड़ी रख ली।
३२९. पट्टी पढ़ाना (बुरी राय देना)—तुमने ही उसे यह पट्टी पढ़ाई है।
३३०. पटरी बैठना (मेल होना)—दोनों में कभी पटरी नहीं बैठी।
३३१. पलड़ा भारी पड़ना या होना (अधिक वजनी होना)—सिंहजी का पलड़ा भारी पड़ता है।
३३२. पारा चढ़ना (क्रोध होना)—तुम्हारा पारा किस बात पर चढ़ा है?
३३३. पाला पड़ना (फेर में पड़ना)—पाला पड़ने पर गधे को भी बाप बनाना पड़ता है।
३३४. पाकेट गरम करना (घूस देना)—पाकेट गरम कर दो, तो तुरंत काम बन जाएगा।
३३५. आपे से बाहर होना (अधिक क्रोध करना)—अभी वे आपे से बाहर हैं।
३३६. पाँचों उँगलियाँ घी में होना (बहुत लाभ मे होना)—उसकी तो पाँचों उँगलियाँ घी में हैं।
३३७. पानी के मोल (बहुत सस्ता)—उस समय दूध पानी के मोल बिकता था।
३३८. पत्थर पर दूब जमाना या पानी में आग लगाना (असंभव काम करना)।
३३९. पानी-पानी होना या पानी पड़ना (बहुत लज्जित होना)—उस पर तो पानी पड़ गया या वह पानी-पानी हो गया।
३४०. पाँव तले की जमीन (मिट्टी) खिसकना (स्तब्ध हो जाना)।
३४१. पाँव उखड़ना (पराजित होना)—शत्रुओं के पाँव उखड़ चुके हैं।
३४२. पाँव खींचना (रुकावट डालना)—तुम ही मेरे पाँव खींचते हो।
३४३. पाँव भारी होना (गर्भवती होना)—अभी तो उसके पाँव भारी हैं।
३४४. पाँव फिसलना (गलती होना)—घबराते क्यों हो, किस के पाँव नहीं फिसलते।
३४५. पाँवों में पर लगना (बहुत तेज चलना)—रुपये मिलते हो उसके पाँवों में पर लग गये।
३४६. पानी उतारना (अपमानित करना)—तुमने मेरा पानी उतार लिया।
३४७. पसीने की जगह खून बहाना—बहुत अधिक प्रत्युपकार करना।
३४८. पापड़ बेलना (कष्ट झेलना)—सुरेशजी ने बहुत पापड़ बेले हैं।
३४९. पानी फेरना (नष्ट करना)—तुम ने मेरी आशा पर पानी फेर दिया।
३५०. पीठ दिखाना (हारकर भाग जाना)—पीठ मत दिखाओ, धीरज से काम लो।
३५१. पीठ ठोंकना (प्रोत्साहित करना)—पीठ ठोंकने पर छोटे भी बड़ा काम कर लेते हैं।

३५२. पीठ पर होना (सहायक होना)—उसकी पीठ पर बड़े-बड़े लोग हैं।
३५३. पीठ फेरना (मुँह मोड़ना)—विपत्ति में मित्र भी पीठ फेर लेते हैं।
३५४. पुराना घाघ होना (बहुत चतुर होना)—मेहरोत्रा पुराना घाघ है।
३५५. पेट में चूहें कूदना (तेज भूख लगना)—मेरे पेट में तो चूहे कूद रहे थे, सुनता क्या ?
३५६. पेट फूलना या पेट में कुछ न पचना (रहस्य न छिपा सकना)।
३५७. पोल खुलना (रहस्य प्रकट होना)—दिनेश की पोल खुल चुकी है।
३५८. पौ फूटना (सूरज उगना)—पौ फूटते ही मैं घर से प्रस्थित हुआ।
३५९. पौ बारह होना (खूब लाभ होना)—सेठ जी के पौ बारह हैं।
३६०. फूटी आँखों न देख सकना या सुहाना या भाना (देखना भी सह्य न होना)।
३६१. फूले न समाना (बहुत खुश होना)—सिनहा साहब आज फूले न समाते थे।
३६२. फूँक-फूँक कर पाँव रखना (सँभल-सँभल कर चलना)।
३६३. बरस पड़ना (क्रोध में आकर कड़ी-कड़ी बातें बोलने लगना)।
३६४. बगुला भगत (कपटी)—महन्थ जी बगुला भगत हैं।
३६५. बत्तीसी दिखाना (व्यर्थ हँसना)—तुम क्यों अपनी बत्तीसी दिखाने लगे ?
६६६. बगलें झाँकना (भागने की चेष्टा करना)—चोरबाजारी की बात उठते ही मुन्नू बगलें झाँकने लगा।
३६७. बाग-बाग होना (बहुत खुश होना)—मुंशी जी बाग-बाग हो गये।
३६८. बछिया का ताऊ (बैल, महामूर्ख)—कपिलदेव तो बछिया का ताऊ है।
३६९. बाछें खिलना (अति प्रसन्न होना)--दहेज की गाड़ी देखते ही समधी जी की बाछें खिल गईं।
३७०. बोल बाला (चलती)—आज कल पाँड़े जी का ही तो बोल बाला है।
३७१. बालू की भीत (तुरत नष्ट हो जाने वाली वस्तु) – राज्यपाल का पद भी बालू की भीत ही है।
३७२. बात बढ़ना (झगड़ा होना)—बात बढ़ने लगी, तब मैंने हस्तक्षेप किया।
३७३. बाल-बाल बचना (विपद् में पड़ते-पड़ते साफ बच जाना)—कमलेश कल बाल-बाल बचा।
३७४. बाल की खाल निकालना काढ़ना या खींचना (बहुत अधिक बारीकी निकालना)।
३७५. बंश डुबाना (कलंक लगाना)—तुमने मेरा वंश डुबा दिया।
३७६. बहती गंगा में हाथ धोना (औरों को देख अवसर से गलत लाभ उठाना)।
३७७. बाएँ हाथ का खेल (आसान काम)– उनके लिए यह बांए हाथ का खेल है।
३७८. बावन तोले पाव रत्ती (शत-प्रतिशत)—तुम्हारा कथन बावन तोले पाव रत्ती ठीक है।

३७९. वे-पेंदी का लोटा (स्थिर नहीं रहने वाला)—वह तो वे-पेंदी का लोटा है।
३८०. भाड़ झोंकना (व्यर्थ समय बिताना)—पाँच बरस वहाँ क्या तुमने भाड़ झोंका ?
३८१. भगीरथ प्रयत्न (कठिन परिश्रम)—भगीरथ प्रयत्न से ही उन्होंने विजय पाई है।
३८२. भाड़े का टट्टू (केवल पैसे के लिए कोई भी काम करने वाला)—इन भाड़े के टट्टुओं से क्या होगा ?
३८३. भंडा फूटना (रहस्य प्रकट होना)—भंडा फूटने पर कहीं मुँह नहीं दिखा पाओगे।
३८४. भींगी बिल्ली बनना (डर से दुबकना)—बाहर शेर बनते हो, घर में भींगी बिल्ली हो जाते हो ?
३८५. भूत झाड़ना (घमंड चूर करना)—राव साहब उस का भूत झाड़ देंगे।
३८६. भेड़िया धसान (अन्ध अनुकरण)—वहाँ बिलकुल भेड़िया धसान है, कोई विचार नहीं करता।
३८७. भैंस के आगे बीन बजाना (अपात्र को कुछ समझाना)।
३८८ मक्खी मारना (कुछ न करना)—दिनभर मक्खी मारता रहता है।
३८९. माई का लाल (बहादुर)—उसे चुनाव में हरानेवाला कौन माई का लाल है ?
३९०. माथापच्ची करना (व्यर्थ दिमाग लगाना)—मान जाओ, क्यों माथापच्ची करते हो ?
३९१. मार-मार कर हकीम बनाना—जबर्दस्ती अयोग्य को आगे बढ़ाना।
३९२. मजा चखाना (बदला लेना)—मैं उसे मजा चखा के रहूँगा।
३९३. मतलब गाँठना (काम निकालना)—वह मतलब गाँठकर घर चलता बना।
३९४. मन के लड्डू खाना या फोड़ना (काल्पनिक प्रसन्नता में रहना)।
३९५. मन चलना या डोलना (इच्छा या लोभ होना)—उसका मन नहीं डोला।
३९६. मिट्टी में मिलाना (नष्ट करना)—तुमने मेरी संस्था मिट्टी में मिला दी।
३९७ मुँह खोलना (माँगना)—मैं सब करने को तत्पर हूँ, वे मुँह तो खोलें।
३९८ मुँह ताकना, देखना या जोहना (आसरा करना)—कब तक उनका मुँह ताकूँ ?
३९९. मुँह फुलाना (रूठना)—वे चार दिनों से मुँह फुलाये हुए हैं।
४००. म्याऊँ का मुँह पकड़ना (सबसे अधिक खतरे का काम करना)।
४०१. मुँह में पानी भरना (जी ललचना)—रसगुल्ले देखते ही उसके मुँह में पानी भर आया।
४०२. मुँह लटकाना (उदास होना)—वह अपने दरवाजे पर मुँह लटकाये बैठा था।
४०३. मुट्ठी गर्म करना (घूस देना)—मुट्ठी गर्म करो तो मिनटों में काम बन जाए।

४०४. मुँह मोड़ना (साथ न देना)—भाग्य के प्रतिकूल होने पर अपने भी मुँह मोड़ लेते हैं।

४०५. मुँह में कालिख लगना या पुतना (कलंक लगना)—संस्था के मुँह में कालिख लगी या पुती।

४०६. मुँह की खाना (बुरी तरह हारना)—इस चुनाव में उन्होंने भी मुँह की खाई।

४०७. मुँह का कच्चा (जिस की वाणी नियन्त्रण में न हो)—नन्दू मुँह का कच्चा है।

४०८. मुँह लगाना (गुस्ताख बनाना)—नौकरों को मुँह न लगाओ।

४०९. मुँह चुराना (लज्जावश सामने न आना)—कब तक मुँह चुराते रहोगे ?

४१०. मुँह धोना (आशा न करना)—उस घड़ी से तुम मुँह धो रखो।

४११. मुँह में लगाम न होना (बिना समझे बोलना)—उसके मुँह में लगाम नहीं।

४१२. मैदान मारना (जीतना)—आखिर यादव जी ने ही मैदान मारा।

४१३. मोटा असामी (मालदार ग्राहक)—सेठ जी मोटे असामी की राह देखते हैं।

४१४. मोम होना (दयाद्रवित होना)—दारोगा जी को कभी मोम होते नहीं देखा गया।

४१५. रंग जमना या बँधना (धाक जमना)—उनका वहाँ रंग जम चुका है।

४१६. रंगा सियार (बाहर से और, भीतर से और)—केशव रँगा सियार है।

४१७. रंग में भंग (आनन्द में विघ्न)—परशुराम के आने से रंग में भंग हो गया।

४१८. रंग लाना (असर दिखाना)—रंग लाती है हिना पत्थर पै घिस जाने के बाद। राजेन्द्र की नियुक्ति विश्वविद्यालय में रंग ला रही है।

४१९. रंग उखड़ना, उड़ना या बिगड़ना (रोब घटना)—अब सिंहजी का रंग उखड़, उड़ या बिगड़ रहा है।

४२०. रास्ता देखना (प्रतीक्षा करना)—मैं तुम्हारा ही रास्ता देख रहा था।

४२१. रास्ता नापना (जाना)—अपना रास्ता नापो, मैं तुम्हारी बातों में नहीं आता।

४२२. रास्ते पर आना (सुधरना)—अब वह भी रास्ते पर आ गया।

४२३. राई को पर्वत करना (छोटी बात को बड़ी बनाना)—राई को पर्वत मत करो।

४२४. रास कड़ी करना (अंकुश देना)—रास कड़ी नहीं करोगे, तो लड़का नालायक हो जायगा।

४२५. रेल पेल (भीड़)—उस रेल पेल में मैं शर्मा जी को कहाँ ढूँढ़ता ?

४२६. रोंगटे खड़े होना (डरना, चकित होना)—मेरे तो रोंगटे खड़े हो गये।

४२७. लंका काण्ड (कलह और हत्या)—पंजाब में आज कल लंका काण्ड मचा हुआ है।

४२८. लम्बी तानना (सोना)—शायिका मिलते ही उसने लम्बी तानी।

४२९. लकीर का फकीर (अन्ध विश्वासी)—विद्वान् भी लकीर के फकीर होते हैं ?

४३०. लाख को (से) लीख (बड़े से छोटा)—भगवान लाख से (को) लीख कर देता है ।
४३१. लोहा मानना (प्रभुत्व मानना)—सबों को उसका लोहा मानना पड़ा ।
४३२. लोहा बजाना (युद्ध ठानना)—अमेरिका से लोहा बजाना कठिन है ।
४३३. लोहा लेना (साहस से सामना करना)—वियतनाम अन्त तक अमेरिका से लोहा लेता रहा ।
४३४. लोहे के चने चबाना (कठिन काम करना)—स्वतंत्रता के लिए भारत को लोहे के चने चबाने पड़े ।
४३५. लेने के देने (लाभ के बदले हानि)—उसे लेने के देने पड़ गए ।
४३६. वजन रखना (महत्त्व रखना)—उनका कहना कुछ वजन रखता है ।
४३७. शेर मारना (बहादुरी करना)—तुमने कौन शेर मारा है कि छाती फुलाए फिरते हो !
४३८. श्री गणेश करना (आरम्भ करना)—तुम केवल श्री गणेश कर दो, पूरा तो भगवान् करेंगे ।
४३९. सिर आँखों पर होना (स्वीकार होना)—आप का आदेश सिर आँखों पर है ।
४४०. सिर उठाना (विरोध करना)—जो सिर उठाए, उसे कुचल दो ।
४४१. सिर पर सवार (सदा सामने)—तुम रोज ही मेरे सिर पर सवार हो जाते हो ।
४४२. सिर चढ़ाना (शोख बनाना)—बेटे को सिर चढ़ाया है, तो भुगतो ।
४४३. सफेद झूठ (सरासर झूठ)—उस के जैसा सफेद झूठ शायद ही कोई गढ़ या बोल सकता है ।
४४४. सिक्का जमना (धाक जमना)—आजकल तो पांडेय जी का ही सिक्का जमा है ।
४४५. सितारा चमकना (तरक्की करना)—अब ओझा जी का सितारा चमका है ।
४४६. समझ या अक्ल पर पत्थर या पर्दा पड़ना (बुद्धि भ्रष्ट होना)—तुम्हारी समझ या अक्ल पर ही पत्थर या पर्दा पड़ गया है ।
४४७. साँप छछूँदर की हालत (ऐसी दुविधा, जिसमें किसी में लाभ नहीं) ।
४४८. सिर फिरना (पागल होना)—उस का सिर फिर गया है ।
४४९. साँप को दूध पिलाना (शत्रु को पोसना)—जान-बूझ कर क्यों साँप को दूध पिलाते हो !
४५०. सिर मारना, या खपाना (सोचने-विचारने में हैरान होना)—मैं इस में सिर नहीं मारूँगा या खपाऊँगा ।
४५१. सिर पर भूत सवार होना (धुन सवार होना)-उसके सिर पर भूत सवार है ।

४५२. सिर खुजलाना (बहाना करना, ढूँढ़ना)—सायकिल माँगी तो वह सिर खुजलाने लगा।

४५३. सिर पीटना (शोक करना)—परीक्षाफल देख कर उसने सिर पीट लिया।

४५४. सिर से पैर तक (आदि से अन्त तक)--मैं उसे सिर से पैर तक जानता हूँ।

४५५. सिर पर आना (नजदीक आ जाना)-विपत्ति सिर पर आ जाएगी, तब सोचोगे!

४५६. सिर ऊँचा होना (प्रतिष्ठा मिलना)—तुम्हारी इस उपलब्धि से मेरा सिर ऊचा हुआ है।

४५७. सिर खाना (परेशान करना)—क्यों एक ही बात के लिए रोज सिर खाते हो!

४५८. सिर पर आसमान उठा लेना (बहुत शोर-गुल मचाना)।

४५९. सिर मढ़ना (जबर्दस्ती लादना)—यह काम मैंने सुरेश के सिर मढ़ दिया है।

४६०. सिर पर खेलना (दूसरे के मत्थे कुछ करना)—मन्त्रीजी के सिर पर कब तक खेलोगे? एक दिन पोल खुल कर रहेगी!

४६१. सिर मुड़ाते ही ओले पड़ना (आरम्भ में ही हानि होना)।

४६२. सिर से कफन बांधना (प्राणों की परवाह न करना)—क्रान्ति तो सिर से कफन बाँधकर ही की जाती है।

४६३. सोने में सुगन्ध (एक गुण के साथ दूसरा गुण)—वह सुन्दर भी है, सुशील भी, सोने में सुगन्ध है।

४६४. सेमर का फूल (सुन्दर, परन्तु गुणहीन)—वह सेमर का फूल है, उस पर लुभाओगे तो रोओगे।

४६५. सैकड़ों घड़े पानी पड़ना (बहुत लज्जित होना)—यह सुनते ही मनोज पर सैकड़ों घड़े पानी पड़ गया।

४६६. सूरज को दीपक दिखाना (बहुत गुणों का थोड़ा वर्णन)—आप के बारे में कुछ कहना सूरज को दीपक दिखाना है।

४६७. सिर पर (या से) सेहरा बँधना (विजय या अधिक यश मिलना)—काम तो बहुतों ने किया, पर सेहरा राजू के सिर पर ही बँधा।

४६८. सात घाटों का पानी पीना (बहुत भटकना)—उसने सात घाटों का पानी पिया है।

४६९. सिर से बोझ उतरना (चिन्ता टलना)—चलो, सिर से बोझ उतरा।

४७०. सिर पर होना या सिर पर किसी का हाथ होना (संरक्षक होना)—मेरे सिर पर कोई या किसी का हाथ नहीं है।

४७१. हजामत बनाना (बुरी तरह पीटना या ठगना)—आज उसकी हजामत बनेगी।

४७२. हक्का-बक्का रह जाना (भौंचक होना)—मैं तो हक्का बक्का रह गया।

४७३. हथेली पर सरसों जमाना (अधिक चालाकी दिखाना)—तुम हथेली पर सरसों जमाने चले हो?

४७४. हवा होना (भागना)—चोरी की चर्चा चलते ही वह हवा हो गया।

४७५. हथेली पर जान रखना (जान की परवाह न करना)—ऐसे काम हथेली पर जान रख कर ही किए जाते हैं।

४७६. हवा से बात करना (तेजी से जाना)—घोड़ा हवा से बात करने लगा।

४७७. हाथ का खिलौना या कठपुतली होना (दूसरे के इशारे पर नाचना)।

४७८. हाथ खींच लेना (संबन्ध तोड़ लेना)—तुम ने बीच में ही हाथ खींच लिया।

४७९. हरी-हरी घास दिखाना (प्रलोभन देना)—अभी तो हरी-हरी घास दिखायेगा ही।

४८०. हवन कर देना (नष्ट कर देना)—पिता के मरते ही उसने सारी संपत्ति हवन कर दी।

४८१. हाथ धोकर पीछे पड़ना (जी जान से अनिष्ट करने में लग जाना)।

४८२. हाथ मलना (अफसोस करना)—वह हाथ मल कर रह गया।

४८३. हाथ लगाना (आरम्भ करना)—हाथ तो बहुतों ने लगाया, पर अन्त तक कम ही टिके।

४८४. हाथ उठाना (पीटना)—खबरदार! उस पर हाथ मत उठाओ।

४८५. हाथ-पैर मारना (प्रयत्न करना)—उसने बहुत हाथ-पैर मारा, पर मैं अडिग रहा।

४८६. हाथ पसारना (माँगना)—वह किसी के आगे हाथ नहीं पसारता।

४८७. हाथ बँटाना (सहयोग करना)—मेरे काम में हाथ बँटाने वाला कोई नहीं।

४८८. हाथ खाली होना (पास में पैसे न होना)—आज मेरा हाथ खाली है।

४८९. किसी पर हाथ साफ करना (चुरा लेना)—तुम्हें मुझी पर हाथ साफ करना था?

४९०. हाथापाई (झगड़ा)—बातों बातों में हाथापाई शुरू हो गई।

४९१. हाथ का मैल (तुच्छ वस्तु)—धन तो हाथ का मैल है, यश बड़ी वस्तु है।

४९२. हाथ-पर-हाथ धरे बैठना (समय व्यर्थ बिताना)—कब तक हाथ-पर-हाथ धरे बैठोगे?

४९३. हाथ कट जाना (लिख कर दे देना)—अब तो मेरा हाथ कट गया, क्या करूँ?

४९४. हाथ को हाथ न सूझना (बहुत अँधेरा होना)—हाथ को हाथ नहीं सूझता था, कैसे निकलता?

४९५. हाथ के तोते उड़ना (स्तब्ध होना)—उसके तो हाथ के तोते उड़ गए!

४९६. हाथ भर का कलेजा (साहस)—हाथ भर का कलेजा है उसका।

४९७. हवा का रंग देखना (अवसर पहचानना)—हवा का रंग देखकर काम करो।

४९८. हवा के घोड़े पर सवार (बहुत शीघ्रता में)—थोड़ा बैठो, तुम तो हवा के घोड़े पर सवार हो !

४९९. हुलिया बिगाड़ना (मुँह पर ऐसा मारना कि सूरत बिगड़ जाय)।

५००. होश उड़ना (डरना)—उसके तो होश उड़ गए मुझे देखकर !

५०१. हुक्का पानी बन्द करना (जातिच्युत करना)—उसका हुक्का पानी बन्द है।

कहावतें (लोकोक्तियाँ) Saying, proverb

लोकोक्तियाँ भी लक्षणा-व्यंजना से समृद्ध होती हैं। उनमें मुहावरों से स्थूल अन्तर यह है कि मुहावरे कभी पूर्ण वाक्य नहीं होते, और लोकोक्तियाँ सदा पूर्ण वाक्य ही होती हैं। इस से लाभ यह होता है कि ये अपने पार्श्ववर्त्ती वाक्य के कथन का सबल समर्थन करती हैं। इन में अपने आप में एक पूरे अनुच्छेद का, कहीं-कहीं पूरी कहानी का सारांश दिया रहता है। जैसे; "तुम तो राष्ट्रीय प्रशासन सेवा की निन्दा करोगे ही; अँगूर खट्टे हैं न", कहने का अर्थ है कि जिस प्रकार एक कथा की नायिका लोमड़ी ऊँची डाली तक पहुँचने और वहाँ का अँगूर खाने में असफल हो कर निराश लौट आई, और पूछने वाले को यह उत्तर दिया कि चूँकि अँगूर खट्टे हैं, इसीलिये उसने खाने का प्रयास ही नहीं किया, उसी प्रकार तुम्हारे लिये इस प्रतियोगिता में सफल होना संभव नहीं लगता तो तुम उस प्रतियोगिता की ही निन्दा कर रहे हो। इसी प्रकार, न 'नौ मन तेल होगा; न राधा नाचेगी' का अर्थ हुआ कि किसी राधा नाम की अच्छी नर्त्तकी से लोगों ने अपना नाच दिखाने का आग्रह किया होगा, पर उसने नाचने का मन नहीं होने से ऐसी शर्त्त रख दी कि लोग उसे पूरा नहीं कर सके, और वह नाचने के अनीप्सित कार्य से बच गई।

नीचे कुछ लोकोक्तियाँ प्रयोग के साथ दी जा रही हैं :—

१. उलटे चोर कोतवाल को डाँटे (स्वयं गलती करना, और दूसरे पर क्रोध करना)—वाह तुम ने ही मेरी किताब चुराई, और तुम्हीं ने गुरु जी से नालिश भी कर दी। उलटे चोर कोतवाल को डाँटे ?

२. ऊँची, दूकान फीका पकवान (ऊपर की दिखावट अच्छी, पर भीतर कुछ तत्त्व नहीं)—बड़ी आशा से इस विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया था, पर यहाँ के अध्यापकों से बड़ी निराशा हुई, ऊँची दूकान फीका पकवान।

३. खेत खाय गदहा, मार खाय जुलाहा (कसूर कोई और (बलवान्) करे, बदला किसी और (निर्बलतर) से लिया जाय)—भाई, कसूर किया धीरेन्द्र ने, तो तुम मुझ से क्यों लड़ रहे हो ? खेत खाय गदहा, मार खाय जोलहा ?

४. दुधार गाय की लात भी भली—मास्टर साहब बिगड़ते हैं तो क्या ? पढ़ाते कितना अच्छा हैं ? दुधार गाय की लात भी भली।

५. मियाँ की दौड़ मस्जिद तक—(शक्ति की पहुँच कम दूर तक होना)—डरा क्या रहे हो. बहुत बिगड़ोगे तो अपनी किताब नहीं दोगे, और क्या कर लोगे ? मियाँ की दौड़ मस्जिद तक।

नीचे कुछ लोकोक्तियाँ अर्थ के साथ अंकित हैं :—

१. अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता—बड़ा काम अकेला आदमी नहीं कर पाता।
२. अधजल गगरी छलकत जाय—थोड़े ज्ञान, धन आदि से अधिक घमंड होता है।
३. अब पछताये होत क्या, चिड़िया चुग गई खेत—समय पर चूक जाने पर बाद में पछताना व्यर्थ होता है।
४. अपने मुँह मियाँ मिट्ठू—आत्म प्रशंसा करना।
५. अशर्फी की लूट, कोयले पर छाप—महँगी वस्तु की उपेक्षा कर, सस्ती की रक्षा में चौकसी करना।
६. अंधों में काना राजा—अपने से बहुत छोटों के बीच थोड़ा भी बड़ा बहुत सम्मान पा लेता है।
७. अंधों के आगे रोना, अपना दीदा खोना—अनुपयुक्त व्यक्तियों को अपनी समस्या सुनाना व्यर्थ होता है।
८. अपने दरवाजे पर कुत्ता भी शेर होता है—अपने घर में सब मजबूत बनते हैं।
९. अंधेर नगरी चौपट राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा—मूर्ख के शासन में भले-बुरे की पहचान नहीं होती।
१०. अटकल पच्चे डेढ़ सौ—अंदाज से उत्तर देना।
११. आगे कुँआ, पीछे खाई—दोनों ओर खतरा।
१२. आगे नाथ न, पीछे पगहा—हर प्रकार के नियन्त्रण तथा उत्तरदायित्व से मुक्त, स्वच्छन्द।
१३. आम का आम, गुठली का दाम—हर तरह से लाभ।
१४. आप डूबे तो जग डूबा—स्वयं दुखिये के लिए सारा संसार दुखमय है।
१५. आप भला तो जग भला—जो स्वयं भला होता है, उसे संसार भी भला ही दिखता है।
१६. आये थे हरि भजन को, ओटन लगे कपास—करना चाहिये था कुछ, करने लगे कुछ।
१७. आधा तीतर, आधा बटेर—बेढंगा मिश्रण।
१८. अपने दही को खट्टा कौन कहता है—अपनी वस्तु की न्यूनता की चर्चा कोई नहीं करता।

१९. इहाँ कुम्हड़ बतिया कोउ नाहीं—इधर भी कोई कमजोर आदमी नहीं है।

२०. आटे के साथ घुन भी पिसता है—दोषी के साथ रहने पर निर्दोष भी पकड़ा जाता है।

२१. ईश्वर की माया, कहीं धूप कहीं छाया—संसार में कहीं दुःख बरस रहा है, तो कहीं सुख।

२२. उलटे चोर कोतवाल को डाँटे—दोषी दोष बतलाने वाले को ही दोषी बतलाने लगता है।

२३. ऊँट के मुँह में जीरा—आवश्यकता से बहुत कम होना।

२४. ओठ चाटने से प्यास नहीं बुझती—आवश्यकता से बहुत कम होना।

२५ ऊँट किस करवट बैठता है—विजय किसकी होती है, संदेह की स्थिति।

२६. ऊधो का लेना, न माधो का देना—लटपट से अलग रहना।

२७. ऊखल में दिया सर, तो मूसल से क्या डर—खतरा मोल लेने पर डरना क्या ?

२८. एक पंथ दो काज—एक साधन से दो काम कर लेना।

२९. एक अनार, सौ बीमार—वस्तु बहुत कम, माँगने वाले बहुत अधिक।

३०. एक तो चोरी, दूसरे सीनाजोरी—गलती स्वीकार न कर रोब जमाना।

३१. एक म्यान में दो तलवार—दो समान महत्व के व्यक्तियों का एकत्र वास।

३२. एक तो करेला, दूजे नीम चढ़ा—बुरे के साथ रहकर बुरा और बुरा हो जाता है।

३३. काला अक्षर भैंस बराबर—निरक्षर व्यक्ति।

३४. एक हाथ से ताली नहीं बजती—एक के करने से झगड़ा या सुलह नहीं होती।

३५. एक ही साधे सब सधे, सब साधे सब जाय—एक बार एक ही काम ठीक से करना चाहिए, अनेक में हाथ नहीं लगाना चाहिए।

३६. कभी नाव पर गाड़ी, कभी गाड़ी पर नाव—अवसर पर छोटा भी बड़े का सहायक हो जाता है।

३७. कहाँ राजा भोज, कहाँ भोजवा (गाँगू) तेली—छोटे बड़े के तुल्य नहीं कहे जा सकते हैं।

३८. कबीरदास की उल्टी बानी, बरसे कम्बल भींजे पानी—उल्टा काम या बात।

३९. कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा, भानुमती ने कुनबा जोड़ा—दूसरे-दूसरे की चीज बटोरकर अपनी चीज तैयार कर लेना।

४०. का वर्षा जब कृषि (षी) सुखाने (नी)—अवसर बीत जाने पर अभिलषित वस्तु भी बेकार हो जाती है।
४१. काबुल में भी गदहे होते हैं--भले-बुरे (या बड़े-बड़े) सर्वत्र होते हैं।
४२. खग जाने खग ही की भाषा—मनुष्य अपने तुल्यों की ही बातें समझ पाता है।
४३. खोदा पहाड़ निकली चुहिया—अत्यधिक परिश्रम से तुच्छ फल की प्राप्ति।
४४. खरबूजे को देखकर खरबूजा रंग बदलता है—संगति का प्रभाव पड़ता है।
४५. खिसियानी बिल्ली खम्भा नोचे—लज्जा या असफलता से मनुष्य गलत जगह क्रोध प्रकट करता है।
४६. खूँटे के बल बछड़ा कूदता है—दूसरे के भरोसे शक्ति (या अनुभव) का प्रदर्शन करना।
४७. गये थे रोजा छुड़ाने, गले पड़ी नमाज या चौबे गए छब्बे बनने, बन गए दुब्बे—संकट टलने की जगह बढ़ गया।
४८. गाँव (घर) का जोगी जोगड़ा, आन गाँव का सिद्ध—निकट के विशिष्ट से दूर के साधारण का भी अधिक आदर होता है।
४९. जो गरजे सो बरसे नाहीं—डींग हाँकने वाले अधिक नहीं करते।
५०. गुड़ खाय, गुलगुले से परहेज—बनावटी (या दिखावटी) परहेज।
५१. गोद में लड़का, नगर (गाँव) में ढिढोरा—पास की वस्तु की दूर जाकर खोज।
५२. गुरु गुड़ रह गए, चेला चीनी हो गया—गुरु से शिष्य आगे बढ़ गया।
५३. गुरु कीजै जान, पानी पीजै छान—अच्छी तरह जाँच-पड़ताल के बाद ही कोई निर्णय लेना चाहिए।
५४. घर का भेदिया लंका दाह—आपसी फूट से सर्वनाश होता है।
५५. घर की मुर्गी दाल बराबर—पास का महत्त्वपूर्ण भी महत्त्वहीन लगता है।
५६. घर-घर देखा, एक ही लेखा—सबों की एक ही स्थिति है।
५७. घी कहाँ गिरा, दाल (खिचड़ी) में—कोई वस्तु बर्बाद होती-होती काम आ गई।
५८. घर में दिया जलाकर मन्दिर में जलाया जाता है—पहले स्वार्थ, तब परमार्थ।
५९. घी का लड्डू टेढ़ा भी भला—बहुत अच्छी वस्तु का बुरा भी रंग-रूप ग्राह्य हो जाता है।

६०. चमड़ी जाय पर दमड़ी न जाय---किसी हालत में खर्च न करना।

६१. चार दिनों की चाँदनी, फिर अँधेरी रात---सुख कम दिन ही ठहरता है।

६२. चूहे के चमड़े से नगाड़ा नहीं मढ़ा जाता—तुच्छ वस्तु से महान् का निर्माण नहीं होता।

६३. चोर की दाढ़ी में तिनका---अपराधी की मुद्रा में ही अपराध प्रतिबिम्बित रहता है।

६४. चोर-चोर मौसेरे भाई—बुरे लोग आपस में एक रहते हैं।

६५. छोटा मुँह, बड़ी बात—योग्यता (शक्ति) से अधिक की बातें करना।

६६. छछूँदर के सिर में चमेली का तेल—अयोग्य को अच्छी वस्तु देना।

६७. छोटे मियाँ तो छोटे मियाँ, बड़े मियाँ सुभान अल्लाह—बड़ों में छोटों से अधिक बुराई।

६८. जब तक साँस, तब तक आस—अन्त तक आशा रखना।

६९. जल में रहके मगर से बैर—जिसके देश में रहना, उसी से शत्रुता करना।

७०. जैसा देश, वैसा वेश—स्थान के अनुसार काम करना।

७१. जैसी बहे बयार, पीठ तब तैसी दीजै—परिस्थिति के अनुसार काम करना।

७२. जैसी करनी वैसी भरनी—काम (अपराध) के अनुसार फल (दण्ड) पाना।

७३. जिसकी लाठी, उसकी भैंस—शरीर-बल से किसी वस्तु पर अधिकार करना।

७४. जिन ढूँढ़ा तिन पाइयाँ, गहरे पानी पैठ—कठिन परिश्रम से सफलता मिलती है।

७५. जाके पाँव न फटे बिवाई, सो क्या जानें पीर पराई (या बाँझ क्या जाने प्रसव की पीरा)—दुःखी ही दुःखी का हाल समझता है।

७६. जान है तो जहान है—जीवन सबसे अधिक प्यारा है।

७७. जैसा राजा, वैसी प्रजा---छोटे बड़ों का अनुसरण करते हैं।

७८. जिस पत्तल में खाना, उसी में छेद करना—कृतघ्नता।

७९. जहाँ मुर्गा नहीं बोलता, वहाँ क्या सवेरा नहीं होता—किसी के बिना काम नहीं रुकता।

८०. जस दूल्हा, तस बनी बराती---अपने जैसे साथी मिल गये।

८१. (एक) टके की चटाई, नौ टका बिदाई—लाभ से खर्च अधिक।

८२. टेढ़ी अंगुली (से) ही घी निकलता है—सीधा बनने से काम नहीं चलता।

८३. ठठेरे ठठेरे बदलौवल—धूर्त्त का धूर्त्त से चाल चलना।

८४. डूबते को तिनके का सहारा---विपत्तिग्रस्त थोड़ी सहायता से भी उबार पा जाता है।

८५. डूबा वंश कबीर का, उपजा पूत कमाल—महान् कुल में तुच्छ व्यक्ति का जन्म ।

८६. तुम डाल-डाल, मैं पात-पात, या नहले पर दहला—चालबाज को अधिक चालबाजी से मात करना ।

८७. तीन लोक से मथुरा न्यारी—विचित्र तरीका ।

८८. थोथा चना, बाजे घना—गुणहीन में आडम्बर बढ़ जाता है ।

८९. तीन कनौजिया, तेरह चूल्हा—झूठा घमण्ड, ढकोसला, मतभेद ।

९०. तीन में, न तेरह में—सर्वथा उपेक्षित ।

९१. दस की लाठी, एक का बोझ—अनेक व्यक्तियों के सहयोग से सुकरता ।

९२. दमड़ी की हँड़िया गई, कुत्ते की जात पहचानी गई—थोड़े ही घाटे मे बेईमानी का पता चल गया ।

९३. दूध का जला मठ्ठा भी फूँक कर पीता है—धोखा खाया व्यक्ति अतिसावधान हो जाता है ।

९४. दूर का ढोल सुहावन—दूर से साधारण वस्तु भी विशिष्ट दिखती है ।

९५. दाल भात म मूसलचन्द—बिना बुलाए बीच में दखल देना ।

९६. देशी मुर्गी बिलायती बोल—बे-मेल काम ।

९७. दीवार के भी कान होते है—गोपनीय बात बहुत धीमी आवाज में करनी चाहिये ।

९८. दुविधा में दोनों गये, माया मिली न राम—एक ही ओर दृढ़ रहना चाहिए।

९९. धोबी का कुत्ता, न घर का, न घाट का—उठल्लू आदमी कहीं का नहीं होता ।

१००. न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी—कलह की जड़ को हटा देना ।

१०१. नौ की लकड़ी, नब्बे खर्च—लाभ कम, व्यय अधिक ।

१०२. नौ नगद, न तेरह उधार—संभावित अधिक से हाथ में आ रहा कम ही अच्छा ।

१०३. न नौ मन तेल होगा, न राधा नाचेगी—काम न करने का मन हो तो शर्त बढ़ा देना ।

१०४. नक्कारखाने में तूती की आवाज—अधिक महत्त्व के प्रसंग में कम महत्त्व की बात अनसुनी कर दी जाती है ।

१०५. नेकी और पूछ-पूछ—किसी को कुछ देने में पूछना क्या ?

१०६. नाचे न जाने, आँगन टेढ़ा—काम न जानने पर साधन की अनुपयुक्तता का बहाना बनाना।

१०७. नीम हकीम, खतरे जान—अयोग्य व्यक्ति से लाभ के स्थान में हानि का भय रहता है।

१०८. नाम बड़े, दर्शन थोड़े—प्रचार अधिक, गुण कम।

१०९. न ऊधो का लेना, न माधो का देना—लटपट नहीं रखना।

११०. प्रथमे ग्रासे मक्षिकापातः—आरम्भ में ही विघ्न हो जाना।

१११. पहले भीतर, तब देवता पीतर—भूखे भजन न होहिं गोपाला।

११२. पढ़े फारसी, बेचे तेल—दुर्भाग्य के कारण योग्यता के अनुसार काम न मिला।

११३. पीर, बावर्ची, भिश्ती, खर—एक ही आदमी का छोटे-बड़े सभी काम करना।

११४. बन्दर क्या जाने अदरख का स्वाद—मूर्ख गुण का आदर नहीं करता।

११५. बहुत जोगी, मठ उजाड़—अधिक अधिकारियों से काम नष्ट हो जाता है।

११६. बड़े मियाँ तो बड़े मियाँ, छोटे मियाँ सुभान अल्लाह—सब एक-दूसरे से बढ़कर।

११७. बिल्ली के भाग से छींका टूटा—संयोग से काम बनना।

११८. बेकार से बेगार भला—निकम्मा रहने से कुछ भी करना अच्छा है।

११९. बैल न कूदे, कूदे तंगी (या लड़े पठान, कूदे जुलाहा)—मालिक से अधिक सहायक ही रोब दिखाता है।

१२०. भागते भूत की लंगोटी भली—सर्वनाश से बचा हुआ धन भी ले लेना चाहिए।

१२१. भैंस के आगे बीन बजाये, भैंस बैठी पगुराये—मूर्ख के आगे गुण की चर्चा व्यर्थ है।

१२२. मियाँ की दौड़ मस्जिद तक—क्षेत्र-विशेष तक सीमित रहना।

१२३. मुँह में राम बगल में छुरी या हाथ सुमिरनी बगल कतरनी या बिष रस भरा कनक घट जैसे—ऊपर से हित, भीतर से शत्रु।

१२४. मान न मान, मैं तेरा मेहमान—जबरदस्ती किसी पर कोई बोझ डालना।

१२५. मुद्दई सुस्त, गवाह चुस्त—जिसका काम है, वही शिथिल है, दूसरा उसके लिए परेशान है।

१२६. मन चंगा तो कठौती में गंगा—मन पवित्र है, तो तीर्थ भ्रमण की आवश्यकता नहीं।

१२७. मानो तो देव, नहीं तो पत्थर—विश्वास से लाभ होता है।

१२८. मँगनी के बैल के दाँत नहीं गिने जाते—मुफ्त में मिली किसी वस्तु का गुण-दोष नहीं देखते।

१२९. मरता क्या न करता—निराश व्यक्ति कुछ भी कर सकता है।

१३०. रोग का घर खाँसी, झगड़े का घर हाँसी—अधिक दिल्लगी खतरनाक है।

१३१. रस्सी जल गई, ऐंठन नहीं छूटी—सब धन जाने पर भी घमंड नहीं गया।

१३२. रुपया परखे बार-बार, आदमी परखे एक बार—मनुष्यता की परीक्षा एक बार में हो जाती है।

१३३. राम नाम जपना, पराया माल अपना—ऊपर से त्याग, भीतर गलत पैसा बटोरना।

१३४. लश्कर में ऊँट बदनाम—दोषी समाज में एक की अधिक बदनामी।

१३५. लिखे ईसा, पढ़े मूसा, या लिखे अल्ला, पढ़े खुदा—बुरी लिखावट।

१३६. लातों के भूत बातों से नहीं मानते—दुष्ट दण्ड से ही शान्त होते हैं।

१३७. लेना-देना साढ़े बाईस—व्यर्थ का मोल-तोल करना।

१३८. लूट में चरखा नफा—मुफ्त में जो हाथ लग जाय, वही लाभ है।

१३९. सब धन बाईस पसेरी—अच्छा-बुरा सबको एक समझना।

१४०. साँप मरे, न लाठी टूटे—बिना किसी के नुकसान के काम हो जाये।

१४१. सत्तर चूहे खाकर बिल्ली चली हज को—जीवन भर पाप कर अन्त में धर्मात्मा बनने का ढोंग।

१४२. सौ सयाने एक मत—सभी बुद्धिमान एक ही ढंग से सोचते हैं।

१४३. सौ सोनार की, एक लोहार की—बलवान सभी कसर एक ही बार में निकाल लेता है।

१४४. सीधे का मुँह कुत्ता चाटे—अधिक सीधापन से पराजय होती है।

१४५. सीधी उँगली (से) घी नहीं निकलता—अधिक सीधापन से काम नहीं चलता।

१४६. होनहार बिरवान के होत चीकने पात—महानता की झाँकी बचपन में ही मिल जाती है।

१४७. हाथ कंगन को आरसी क्या—सामने की बात के लिए प्रमाण क्या ढूँढ़ना?

१४८. हाथी के दाँत खाने के और, दिखाने के और—भीतर-बाहर अन्तर रखना।

१४९. हाथी चले बजार, कुत्ता भूँके हजार—काम करने वाले महान् छोटों की चिन्ता नहीं करते।

१५०. हँसुए के ब्याह में खुरपे का गीत—बे मौके की बात।

अभ्यास

१. निम्नलिखित कहावतों के अर्थों में से शुद्ध को चिह्नित करें—

(क) दूध के दाँत नहीं टूटना—मजबूत दाँत होना, किसी से झगड़ा नहीं करना, कम अनुभव होना, पर्याप्त दूध मिलना।

(ख) मरने की फुरसत न होना—बहुत दिन जीना, बहुत कार्यों में लगा रहना, नीरोग रहना, मरने से डरना।

(ग) रास्ता देखना—रास्ते को पहचानना, घर में बैठ कर रास्ते में लोगों को देखते रहना, प्रतीक्षा करना, रास्ते पर गिरी कोई वस्तु ढूँढ़ना।

(घ) निन्नानवे का फेर—कष्ट उठाकर भी संचय करते जाना, निन्नानवे रुपयों से अधिक नहीं जोड़ पाना, निन्नानवे का पहाड़ा नहीं जानना, निन्नानवे बार हार जाना।

(ङ) बाँछें खिलना—मूछें आना, बहुत प्रसन्न होना, वांछित पदार्थ मिलना, एक फूल का खिलना।

(च) मियाँ की दौड़ मस्जिद तक—मियाँ लोग ही मस्जिद तक जाते हैं, हर आदमी की पहुँच की एक सीमा होती है, मियाँ लोग मस्जिद तक दौड़कर जाते है, मस्जिद में मियां लोग दौड़ते रहते हैं।

२. अधोनिर्दिष्ट मुहावरों के अर्थ लिखें :—

(१) आदमी बनना (या बनाना)।
(२) आपे में न रहना या होना।
(३) आसमान पर थूकना।
(४) आसमान टूटना।
(५) सुरखाब के पर लगना।
(६) सिट्टी-पिट्टी गुम होना।
(७) सुहाग लुटना।
(८) सब्ज-बाग दिखना।
(९) लहू का घूँट पीना।
(१०) मूछों पर ताव देना।
(११) माथा-पच्ची करना।
(१२) मुँह से लार टपकना।
(१३) बाजार गर्म होना।
(१४) बम बोलना।
(१५) पौ-बारह होना।

—— ग़लत उत्तर :-

दाँतों पसीने आ[illegible]-

वाक्य विचार

वाक्य का शब्दार्थ है वाच्य, कहने योग्य। यह वर्णात्मक भाषा की अपने आप में पूरी सब से छोटी सार्थक इकाई है। वाक्य से छोटी इकाई को हम न सोच सकते हैं न बोल सकते हैं, न ग्रहण कर सकते हैं। इस प्रकार, वाक्य उस पदसमूह (या पद) को कहते हैं, जिससे किसी संज्ञा या सर्वनाम की कोई क्रिया या गुण सूचित होता है। 'खाऊँगा' से 'मैं' का आक्षेप हो जाता है, और 'मोहन' से 'जाएगा' का। उद्देश्य विधेय का संयोग सार्थक हो, इसके लिए तीन बातों की अपेक्षा है—

१. आकाङ्क्षा—किसी वाक्य के एक या अनेक पदों को सुनने के बाद उससे निकले अपूर्ण अर्थ की पूर्णता के लिये आवश्यक किसी एक या अनेक पदों की अपेक्षा ही आकाङ्क्षा है; जैसे —'तुम' कहने पर एक आकाङ्क्षा होती है, जिसे 'पढ़ो' पूरा कर देता है; 'तुम पढ़ने' कहने पर उठी आकांक्षा को 'जाओ' शान्त करता है, 'तुम पढ़ने जा रहे' की आकांक्षा को 'हो', 'तुम कहाँ पढ़ने' की आकांक्षा को 'जा रहे हो'। इसकी पूर्ति नहीं होने पर वाक्य का पूरा अर्थ ही नहीं लगता।

२. आसत्ति—वाक्य में प्रत्येक पद की अपने संबंधित पद से यथासम्भव कालकृत तथा स्थानकृत अव्यवहित आसन्नता, निकटता ही आसत्ति कहलाती है। 'तुम कहाँ पढ़ने' कहने के बाद यदि अधिक देर के बाद 'जा रहे हो' कहा भी जाय, तब भी पूर्ण अर्थ की प्रतीति नहीं होगी, क्योंकि इस पद-समूह की एकतानता नष्ट हो जाती है। अथवा 'तुम रहे जा कहाँ हो पढ़ने' कहा जाय तब भी अर्थ प्रतीति में बाधा होगी। इसीलिये असमर्थ कवियों की कविता अन्वय की दुरूहता से क्लिष्ट हो जाती है। पदों का क्रम भी ठीक रहना आवश्यक है।

३. योग्यता – आकांक्षा और आसत्ति हो, पर वाक्य से निकला अर्थ ही संगत न हो तब भी वह, वाक्य सार्थक नहीं माना जाता। इसी लिये पागलों की बात का कोई अर्थ नहीं होता। यदि कहीं लिखा है 'प्रतिदिन आग खाया करो' तो स्पष्ट ही वाचक समझ लेता है कि यह मुद्रणाशुद्धि है, भला आग कोई कैसे खाएगा ? यह अवश्य 'आम 'का 'आग' छप गया है। और वह किसी प्रमाण की प्रतीक्षा किये बिना 'आग' को 'आम' बना लेता हैं।

अतः इन तीनों से युक्त वाक्य बोलना-लिखना चाहिये।

वाक्य रचना

व्याकरण का मुख्य ध्येय वाक्य की शुद्ध रचना सिखाना ही है। इसके लिये निम्नलिखित बातों का ज्ञान आवश्यक है।

(अ) अर्थ की दृष्टि से वाक्य के पांच भेद होते हैं :—

१. वर्णनात्मक—इसे साधारण या निश्चयात्मक भी कहा जा सकता है; जैसे-(क) विध्यात्मक—तुम सच कहते हो, (ख) निषेधात्मक–तुम सच नहीं कहते।

२. प्रश्नबोधक—क्या तुम सच कहते हो ?

३. इच्छादिबोधक—तुम सच कहो, भगवान् करे तुम सच बोलो।

४. संदेहादिबोधक—हो सकता है, संभव है, तुम सच कहते हो, तुम सच ही कहते होगे; यदि तुम सच कहते; यदि तुम ने सच कहा होता।

५. विस्मयादिबोधक—हाय ! तुम ने सच कहा था ! शाबाश, तुम ने सच कह दिया !

कुछ लोग इनके अतिरिक्त तीन और भेद मानते हैं। आज्ञाबोधक, संकेतबोधक तथा निषेधबोधक। इनमें आज्ञाबोधक का इच्छादिबोधक में तथा संकेतबोधक का संदेहादिबोधक में अन्तर्भाव हो जाता है। बल्कि ये चारों एक ही श्रेणी में रखे जा सकते हैं। निषेधात्मक तो उपर्युक्त सारे वाक्य बनाए जा सकते हैं। ऊपर के सारे उदाहरण विध्यात्मक हैं।

(आ) क्रिया में वाच्यता तथा प्रधानता की दृष्टि से छह प्रकार के वाक्य हो सकते हैं, यह पहले भी कहा जा चुका है :—

१. कर्त्तृप्रधान कर्त्तृवाच्य—मोहन दवा नहीं पीता था।
२. कर्मप्रधान कर्त्तृवाच्य—मोहन ने दवा नहीं पी।
३. भावप्रधान कर्त्तृवाच्य—मोहन ने दवा को छुआ तक नहीं।
४. कर्मप्रधान कर्मवाच्य—आलमारी में कोई दवा नहीं पाई गई।
५. भावप्रधान कर्मवाच्य—मोहन को डाक्टर के पास पहुँचाया गया।
६. भावप्रधान भाववाच्य—मोहन से आज बैठा भी नहीं जा रहा है।

उद्देश्य–विधेय

जैसे प्रत्येक शब्द में दो खण्ड होते हैं, प्रकृति और प्रत्यय, वैसे ही प्रत्येक वाक्य में भी दो खण्ड होते हैं, उद्देश्य और विधेय। जिसके बारे में कुछ कहा जाता है, उसे उद्देश्य कहते हैं, और उसके बारे में जो कुछ विधान किया जाता है, उसे विधेय। उद्देश्य धर्मी रहता है, विधेय उसका धर्म; जैसे—'संजय खेलता है' में

'संजय' उद्देश्य है, 'खेलता है' ('खेलना' क्रिया) विधेय। वाक्य में प्राय: प्रथमान्त ही उद्देश्य रहता है, चाहे वह संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रियार्थक संज्ञा, वाक्यांश अथवा पूरा एक वाक्य ही क्यों न हो; जैसे :—

संज्ञा—संजय खेलता है।
सर्वनाम—वह खेलता है।
विशेषण—पगला किधर गया ?
क्रियार्थक संज्ञा—तैरना अच्छा व्यायाम है।
वाक्यांश—निश्चेष्ट होकर बैठ रहना सबसे बड़ा अधर्म है।
वाक्य—मालूम नहीं, वह कहाँ चला गया।

उद्देश्य के विस्तार निम्नलिखित हो सकते हैं :—

साधारण विशेषण—अच्छे लड़के सूर्योदय से पहले जाग जाते हैं।
सार्वनामिक विशेषण—ये लड़के कहाँ से आये हैं।
षष्ठ्यन्त विशेषण—तुम्हारे लड़के बड़े सुशील हैं।
संज्ञात्मक विशेषण—हिमालय पहाड़ हमारा प्रहरी है।
समानाधिकरण विशेषण—रामचन्द्र के पिता दशरथ अब बूढ़े हो चुके थे।
भूतकालिक कृदन्त—बीता समय वापस नहीं आता।
वर्तमानकालिक कृदन्त—रोता बालक किधर गया ?
वाक्यांशात्मक विशेषण—हाथ में किताब-कापियाँ लेकर इधर आ रहा लड़का किसका है ? दिल्ली से संदेश लेकर आया आदमी कहाँ है ?

उद्देश्य प्रच्छन्न भी रह सकता है; जैसे :—'जाओ' में 'तुम', 'जा रहा हूँ' में 'मैं'। वाच्य की दृष्टि से छह प्रकार के वाक्यों में से चार में कर्त्ता ही उद्देश्य रहता है। कर्मप्रधान तथा भावप्रधान कर्मवाच्य वाक्यों में कर्त्ता की प्राय: चर्चा ही नहीं रहती, वहाँ कर्म उद्देश्य होता है; जैसे—उस जंगल में हरिण नहीं पाये जाते हैं। मोहन को बुलाया जाय। यह कर्म रूप उद्देश्य भी संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि अनेक रूपों में आ सकता है।

विधेय

विधेय सदा कोई-न-कोई क्रिया ही रहती है, प्रत्यक्ष या परोक्ष; जैसे—संजय खेलता है' में 'खेलता है' विधेय है। कौन है ?;......'मैं' में 'हूँ' विधेय छिपा है।

निम्नलिखित शब्द विधेय के पूरक कहलाते हैं, जिनके बिना विधान अपूर्ण रह जाता है :—

१. विशेषण—मोहन सुन्दर है
२. संज्ञा—गंगा नदी है। चंपारन जिला है।

३. षष्ठ्यन्त--पुस्तक मेरी है।

४. क्रिया विशेषण—अष्टमी आज है। चन्दन यहाँ है।

विधेय का विस्तार निम्नलिखित प्रकार के शब्दों से होता है :—

१. प्रधान कर्त्ता या कर्म से भिन्न किसी एकाकी अथवा सविशेषण पद से :—

(क) करण—श्याम रात की गाड़ी से घर गया।

(ख) संप्रदान--श्याम ने छोटे बच्चों को मिठाइयाँ दीं।

(ग) अपादान--अपने घर से कब आये ?

(घ) अधिकरण--अब इस घर में ही रहो।

(ङ) संबंधसूचक अव्यय से युक्त पद—वह माँ के साथ पेड़ तले बैठा था।

(च) अप्रधान, (कर्त्तृवाच्य क्रिया का) कर्म--तुम राम को जानते हो, कहानी कहते हो।

(छ) कर्मपूरक—तुम छोटे भाई को ही मालिक बना दो।

(ज) क्रिया विशेषण--वह तेज दौड़ता है, अच्छा गाता है।

(झ) क्रिया विशेषणवत् प्रयुक्त पद—

(अ) विशेषण--वह उदास बैठा था।

(आ) संज्ञा--वह खाक समझेगा।

(इ) पूर्वकालिक क्रिया--वह देख कर गया है।

(ई) निमित्तवाचक--सोहन खाने गया है।

२. क्रिया विशेषणवत् प्रयुक्त वाक्यांश :—

(अ) संज्ञा--वह पाँच वर्ष सात महीने सतरह दिन यूरोप में रहा।

(आ) वर्त्तमानकालिक कृदन्त—वह पटना से दिल्ली दौड़ते-दौड़ते हैरान हो गयी। फलतः घर पहुँचते ही बीमार पड़ गई।

(इ) भूतकालिक कृदन्त--वह गोद में बच्चा लिये भागी जा रही थी।

३. क्रिया विशेषणवत् प्रयुक्त वाक्य—इतनी रात गये (या बीते) क्यों लौटे ?

अन्वय, अधिकार तथा क्रम

अन्वय का शब्दार्थ है अनुगमन। इसी को मेल भी कहते हैं। इसमें यह बताया जाता है कि वाक्य के सभी पद किस प्रकार परस्पर अन्वित अर्थात् संबद्ध रहते हैं। वैसे तो वाक्य के सभी पद साक्षात् या परंपरया समापिका क्रिया से अन्वित

रहते ही हैं, पर विशेषतः कोई एक पद किसी दूसरे एक ही पद का साक्षात् अनुगमन या अनुसरण करता है। यदि एक पद दूसरे पद के अनुसार चल रहा है, तो कहा जाता है कि दूसरे का पहले पर अधिकार है, पहला दूसरे से शासित, नियन्त्रित हो रहा है। परस्पर अन्वित पदों का क्रम भी वैसा ही रखा जाता है कि उनके अन्वय तथा नियन्त्रण में कम-से-कम कठिनाई हो। यह भाषा-भेद से भिन्न होता है।

अन्वय

(१) क्रिया वाक्य के किसी और कारक का नहीं, केवल प्रथमान्त अर्थात् प्रधान कर्त्ता या कर्म का अनुसरण करती है, अन्यथा स्वतन्त्र होकर सदा अन्य पुरुष, पुंलिग, एकवचन रहती है। इस प्रकार कर्तृप्रधान कर्तृवाच्य की क्रिया कर्त्ता के, एवं कर्म प्रधान कर्तृवाच्य या कर्मप्रधान कर्मवाच्य की क्रिया कर्म के लिंग, वचन, पुरुष का अनुसरण करती है और भावप्रधान कर्तृवाच्य, भावप्रधान कर्मवाच्य तथा भावप्रधान भाववाच्य की क्रिया सदा अन्यपुरुष, पुंलिग, एकवचन रहती है; जैसे—(क) मैं जब किसी शेरनी को देखता हूँ।

(ख) मैंने इधर कोई शेरनी नहीं देखी।

(ग) मैंने किसी शेरनी को नहीं देखा।

(घ) इधर कोई शेरनी नहीं देखी गई है।

(ङ) इधर किसी शेरनी को नहीं देखा गया है।

(च) अब यहाँ नहीं रहा जाता है।

(२) जब प्रधान कर्ता या कर्म एक रहता है तब क्रिया साधारणतः एकवचन रहती है, पर यदि एक होने पर भी वह व्यक्ति आदरणीय रहता है, तब वह बहुवचन हो जाती है; जैसे—मोहन कब जाएँगे ? ज्योतिषी जी बुलाये गये हैं।

(३) कुछ ऐसे शब्द हैं जो सदा बहुवचन रहते हैं। अतः उनकी क्रिया भी बहुवचन ही रहती है; जैसे—उसके तो होश उड़ गये। मुन्ना के तो प्राण सूख गये।

(४) संग्रहार्थक योजक ('और', 'तथा', 'एवं', 'व') से जुड़े एक लिंग-पुरुष के अनेक प्रधान कर्त्ता या कर्म के साथ आई क्रिया उसी लिंग-पुरुष में बहुवचन रहती है; जैसे—राम और श्याम पढ़ रहे हैं, परीक्षा में भेजे जाएँगे। सीता तथा गीता सितार बजा रही हैं, परीक्षा में भेजी जाएँगी।

(५) वाक्य में यदि एक से अधिक प्रथमान्त हैं तो क्रिया साधारणतः बहुवचन, तथा उनमें से यदि एक भी पुंलिग है तो पुंलिग रहती है। परन्तु क्रिया पर दूरवर्ती कर्ता की तुलना में अव्यवहित पूर्ववर्त्ती कर्त्ता का अधिक प्रभाव पड़ जाता है,

अतः इस नियम का उल्लंघन नहीं हो, इस दृष्टि से दोनों नियमों के समन्वय के लिये यही ठीक होता है कि पुंलिंग तथा बहुवचन कर्त्ता ही क्रिया से अव्यवहित पूर्व में रखा जाय; जैसे—तुम्हारी बकरियाँ, उसकी घोड़ी और मेरा बैल उस खेत में चरता है और 'उसकी घोड़ी मेरा बैल तथा तुम्हारी बकरियाँ उस खेत में चरती हैं' से अधिक उपयुक्त है—तुम्हारी बकरियाँ उसकी घोड़ी और मेरा बैल उस खेत में चरते हैं।

(६) इसी प्रकार यदि एक से अधिक पुरुष के अनेक प्रथमान्त रहते हैं तो क्रिया उत्तमपुरुष का, उसके अभाव में मध्यमपुरुष का अनुसरण करती है। ऐसी स्थिति में वह पुंलिंग बहुवचन होने की जगह ऐच्छिक रुप से यथास्थान उत्तमपुरुष अथवा मध्यमपुरुष के कर्त्ता के एकवचन तथा स्त्रीलिंग का भी अनुसरण करती है। यहाँ भी उसी कर्त्ता को क्रिया के अव्यवहित पूर्व रखना ठीक होता है, जिसका क्रिया पर अधिकार चल रहा है; जैसे—शारदा तुम और मैं चलेंगे या चलूँगा (चलूँगी या चलेंगी)। उपर्युक्त त्रिविध कर्त्ताओं के बाद 'सब' और द्विविध कर्त्ताओं के बाद 'दोनों' कह कर 'चलेंगे' कहना ज्यादा ठीक रहता है।

(७) जब अनेक प्रथमान्त विकल्पार्थक योजक से जुड़ते हैं, तो क्रिया अन्तिम प्रथमान्त के लिंग-वचन-पुरुष का अनुसरण करती है; जैसे—वहाँ तीन बच्चे या एक जवान जाएगा, सुशील अथवा सुनीता जाएगी।

(८) जब प्रथमान्त अनेक पदार्थ रहते हैं, पर उन सबों के मिलने से कोई एक वस्तु भी बनती है, तब क्रिया एकवचन तथा अन्तिम प्रथमान्त के लिंग में भी रह सकती है; जैसे—वहाँ दही, चूड़ा, पूड़ी, चीनी (भोजन) मिलती है, मेरे पास लोटा, थाली और ग्लास बर्तन रहता है। इसे पूरा करने में चार बरस तीन मास (का समय) लगा है (या लगे हैं)। ऐसे प्रथमान्त प्रायः द्रव्यवाचक, समूह-वाचक अथवा भाववाचक संज्ञा शब्द रहते हैं।

(९) जब प्रत्येक प्रथमान्त एकवचन के साथ 'एक' विशेषण लगा रहता है, तब क्रिया एकवचन तथा अन्तिम प्रथमान्त के लिंग की होती है; जैसे—वहाँ एक अध्यापक, एक छात्र तथा एक छात्रा आई।

(१०) बहुत बार 'एक' के प्रत्यक्ष प्रयोग के बिना भी अमानव प्रथमान्त के साथ ऐसा होता है; जैसे—बैल और गाय अभी-अभी पहुँची है, बैल और घोड़ा अभी पहुँचा है (या पहुँचे हैं)।

(११) अन्तिम प्रथमान्त यदि किसी आकारान्त विशेषण से विशेषित रहता है, तो परवर्ती क्रिया उसीका अनुसरण करती है; जैसे—राजधानी में राजा और उनका मन्त्री रहता है, साथ में माँ, पत्नी और छोटा लड़का आया है।

(१२) जहाँ भिन्न लिंग वाले अथवा केवल पुंलिंग अनेक प्रथमान्त एकवचन रहते हैं, वहाँ क्रिया पुंलिंग बहुवचन रहती है; जैसे—राजा और रानी [या मंत्री] बाहर गये हैं, माता पिता या पिता माता भी साथ ही गये हैं। बाघ और बकरी [या हरिण] एक घाट पानी पीते हैं। बैल और गाय [या भैंसा] एक ही हल में जोत दिये जाते हैं।

(१३) जब प्रथमान्तों के लिंग ही नहीं, वचन भी भिन्न रहते हैं, तब क्रिया अन्तिम प्रथमान्त के लिंग का भी अनुसरण करती है, विशेषतः जब कि अन्तिम प्रथमान्त सविशेषण रहने से अधिक सबल हो जाता है; जैसे—नारायण का घोड़ा और गौएँ वहाँ (रहते हैं या) रहती हैं। छह बैल और दस गौएँ वहाँ बाँधी जाती हैं। आश्रम तो बहुत छोटा है, इसमें इतने छात्र और छात्राएँ कहाँ रहते हैं (या रहती हैं)।

(१४) ऐसी जगह यदि सबका संग्राहक कोई एक शब्द आ जाये तो सुविधा होती है, क्रिया उसी का अनुसरण करती है; जैसे—दिल्ली के हजारों मर्द तथा औरतें सब कतल कर दिये गये।

(१५) क्रिया सामान्यतः मुख्य प्रथमान्त (कर्त्ता या कर्म) का अनुसरण करती है, उसके पूरक विधेय का नहीं, क्योंकि वह तो क्रिया का नेता नहीं रह जाता, अंग बन जाता है; जैसे—इधर कई औरतें मर्द बन गई और कई मर्द औरतें बन गये हैं। अर्जुन बृहन्नला हो गये थे। उनकी सहानुभूति ही मेरा सहारा थी, समझी जाती थी। अधिक लड़के पारिवारिक कलह का बीज बन जाते हैं। बच्चे घर की शोभा माने जाते हैं।

(१६) पर जहाँ मुख्य कर्त्ता या कर्म भाववाचक संज्ञा है, वहाँ पूरक विधेय ही क्रिया का नेता बन जाता है; जैसे—वहाँ जाना मूर्खता होगी, यह समझना भूल होगी।

(१७) जहाँ पूरक विधेय मध्यम अथवा उत्तम पुरुष है वहाँ भी पूरक की ही प्रधानता हो[1] जाती है; जैसे—उनकी एक मात्र आशा तुम हो, मैं हूँ।

(१८) जहाँ किसी कारण विधेय पद प्रबल हो जाता है वहाँ विधेय ही क्रिया का नियन्त्रण करता है; जैसे—उनकी पूरी खुराक मेरा एक निबाला होता है, मेरा एक निबाला उनकी पूरी खुराक होती है हृदय भी ईश्वर ने क्या वस्तु बनाई है। इनमें सबल विशेषण के योग के कारण विधेय ही प्रबल बन गया है।

---

१. तथ्य यह है कि यहाँ भी 'तुम' और 'मैं' पूरक विधेय नहीं, ये ही मुख्य कर्त्ता हैं, पूरक विधेय 'आशा' है। बलाघात के कारण उसका पूर्व प्रयोग मात्र हो रहा है, इसी से ऐसा भ्रम हो रहा है।

(१९) किन्तु प्रथमान्तता का त्याग करते ही मुख्य उद्देश्य की भी प्रधानता छिन जाती है, क्रिया सदा पुँलिंग एकवचन हो जाती है; जैसे—तुम राजा बनाये जाओगे। मैं राजा बनाया जाऊँगा, सीता सती मानी गई, पर तुम को राजा बनाया जायगा। मुझको राजा बनाया जायेगा, सीता को सती माना गया।

प्रातिपदिकों का परस्पर अन्वय

संज्ञा और सर्वनाम—

सर्वनाम में लिंगभेद से रूपान्तर तो नहीं होता, पर वह जिस संज्ञा के लिये प्रयुक्त होता है, उसके वचन तथा लिंग से ही अन्वित तथा नियन्त्रित होता है। केवल उसकी विभक्ति का नियन्त्रण आसन्न क्रिया अथवा प्रातिपदिकान्तर से होता है। यह भी आदर में एकवचन की जगह बहुवचन हो जाता है; जैसे—सोहन कहाँ गया है? वह कब आएगा? उसको ढूँढ़ो। उसके पिता जी आए हैं। सरिता कहाँ गई है? वह कब आएगी, लड़के कहाँ गये? वे कब आएँगे? लड़कियाँ कहाँ गई हैं, वे कब आएँगी? पिता जी कहाँ गए हैं, वे कब आएँगे? उन्हें मैं कब से ढूँढ रहा हूँ।

विशेष्य और विशेषण—

(१) विशेषण सदा विशेष्य के लिंग, वचन, विभक्ति में रहता है; जैसे—अच्छा तथा बुद्धिमान् लड़का सर्वत्र आदर पाता है। जो लड़का अच्छा तथा बुद्धिमान् है वह सर्वत्र आदर पाता है। सुरेश का लड़का भला तथा बुद्धिमान् दिखता है। सुरेश के लड़के भले तथा बुद्धिमान् दिखते हैं। भली तथा बुद्धिमती लड़की घर की लक्ष्मी बन जाती है। लड़की सुन्दरी और भली मिल जाय तो एक पैसा दहेज नहीं लूँ। सुरेश के लड़के पर हर आदमी भरोसा करता है। लड़की सुरेश की लगती है। लड़के सुरेश के लगते हैं। भले लड़के को हर आदमी प्यार करता है। भले घरों में अंग्रेजी का व्यवहार बढ़ता जा रहा है।

उर्दू के विशेषण प्रायः इसके अपवाद रहते हैं, वे यथावस्थ बने रह जाते हैं; जैसे—"यहाँ उम्दा तथा ताजा सन्तरे बिकते हैं', 'सन्तरे ताजा और उम्दा हैं', खानदानी घर में पैदा लड़के को तहजीब सिखाना सरल है। 'पर ताजे और उम्दे सन्तरे खाने चाहिए भी प्रयोग होता है।'

(२) यदि विशेष्य में 'को' विभक्ति जुटी हो और विशेषण विधेय की भाँति प्रयुक्त हो रहा हो, तो वह विशेष्य के वचन का अनुगमन नहीं कर सदा एकवचन में बना रहता है; जैसे—उन बच्चों को छोटा मत समझो। लिंग का अनुसरण भी वह ऐच्छिक रूप से ही करता है; जैसे—उन लड़कियों को छोटा (या छोटी) मत समझो।

(३) यदि एक विशेषण के कई विशेष्य हों, तो वह निकटवर्ती विशेष्य का अनुसरण करता है; जैसे—सुरेन्द्र की माँ और [उस का] छोटा भाई आया है। सुरेन्द्र का परिवार और [उसके] मित्र आए हैं।

विशेष्य के लिंग-वचन का अनुसरण करने पर भी साधारणतः आकारान्त-भिन्न विशेषणों में रूपान्तर नहीं होता; जैसे—चतुर लड़का या लड़के, या लड़की या लड़कियाँ। सुन्दर लड़का, सुन्दर लड़के, सुन्दर (या सुन्दरी) लड़कियाँ, बुद्धिमान् लड़का या लड़के, पर बुद्धिमती लड़कियाँ।

इस प्रकार वाक्य में प्रत्येक पद का पदान्तर से अन्वय तथा इस अन्वय के कारण उन में से एक का दूसरे पर अधिकार होता है।

क्रम

इस अन्वय की सुविधा के लिए उनका परस्पर निकट रहना आवश्यक हो जाता है। इस प्रकार किसी भी वाक्य के पदों में एक शिष्ट-स्वीकृत क्रम होता है।

हिन्दी के वाक्यों में पदों का साधारण क्रम यह है :

(१) कर्त्ता सबसे पहले, क्रिया सब से अन्त में और कर्म अथवा पूरक क्रिया के पूर्व आता है; जैसे-राजेश ने उदय को पढ़ाया है। उदय प्रतिभाशाली छात्र लगता है।

(२) शेष कारक साधारणतः कर्त्ता और कर्म के बीच में रहते हैं पर वे कर्त्ता के पूर्व भी आ सकते हैं; जैसे—तुमने अपने कान से यह बात सुनी है ? मैं तो बच्चों को दूध दे रहा था। लड़के विद्यालय से छात्रावास कब पहुँच गये ?

(३) सभी विशेषण अर्थात् व्यावर्तक चाहे वे प्रातिपदिक के हों या क्रिया के, अपने विशेष्य अर्थात् व्यावर्त्य के पूर्व रहते हैं; जैसे—अच्छा लड़का, राम के लड़के, अपना काम, अच्छा गाता है, तेज दौड़ता है।

(४) स्थान-वाचक तथा काल-वाचक अव्यय प्रायः वाक्य के आरम्भ में रहते हैं; जैसे—वहाँ बहुत से लड़के खड़े हैं। आज अवश्य कोई उत्सव है।

(५) निषेधार्थक (अव्यय) निषेध्य क्रिया के अव्यवहित पूर्व आते हैं, जैसे—मोहन ने रोटी नहीं खाई, तुम लोग मसाला मत खाओ; परन्तु संज्ञा सर्वनाम, विशेषण के अनन्तर, राम नहीं, श्याम जाएगा।

(६) संबोधन तथा विस्मयादिबोधक पद प्रायः वाक्य के आरम्भ में आते हैं, पर वे कभी-कभी अन्त में भी प्रयुक्त होते हैं, भगवन्, कहाँ हो ? कहाँ हो भगवन् ? शाबाश। बहुत अच्छा किया। बहुत अच्छा किया, शाबाश।

(७) प्रश्न अथवा निषेध के कारण हिन्दी वाक्यों के पद-क्रम में कोई अन्तर नहीं पड़ता; जैसे—तुम दूध पियोगे ? तुम दूध पियोगे ? तुम दूध नहीं पियोगे, मत पीना।

(८) प्रश्नवाचक 'क्या' प्रायः पहले आ जाता है, पर कभी-कभी बाद या मध्य में भी आता हैं; जैसे—**क्या** तुम भी घर जाओगे ? तुम भी घर जाओगे क्या ? तुम भी क्या घर जाओगे ?

(९) अवधारक जिस का अवधारण करते हैं, उसके अव्यवहित बाद आते हैं; जैसे— मैं ही (भी) दिनेश को पीटूँगा; मैं दिनेश को ही (भी) पीटूँगा। मैं दिनेश को पीटूँगा ही (भी)।

बलाघात

किसी पद-विशेष पर अधिक बल देने के लिये वाक्य में पहले उसका प्रयोग किया जाता है; जैसे —यह पुस्तक मोहन लेगा। तलवार से तो कोई भी काट देगा। तुम्हारे लिये मैं सब कर सकता हूँ। घर से तुम कब चले ? विद्यालय में सब ठीक चल रहा है। जाओगे तुम कहाँ ? नहीं जाऊँगा मैं। दोगे तुम जबाब ? सोचा था क्या, हो गया क्या ?

बलाघत के कारण क्रम बदलने से अर्थ में अन्तर पड़ जाता है; जैसे— अब मैं जाऊँगा, मैं अब जाऊँगा, मैं जाऊँगा अब। मैं पटना जाऊँगा, पटना मैं जाऊँगा, मैं जाऊँगा पटना, जाऊँगा मैं पटना।

अभिधा, लक्षणा, व्यंजना— प्रत्येक शब्द के प्रथम तथा अवश्य उपस्थित अर्थ को अभिधेय या वाच्य (या शक्य) कहते हैं, उस शब्द को **अभिधायक**, वाचक या शक्त तथा उस शक्ति या संबंध को अभिधा (या शक्ति), जिससे वह शब्द उच्चरित होते ही अपने अभिधेय अर्थ को प्रकट कर देता है; जैसे—सिंह, बैल, गदहा, उल्लू, सियार, गीदड़ आदि।

परन्तु शब्द की शक्ति इससे आगे भी बढ़ जाती है। जब किसी को कहते हैं कि 'वह सिंह है,' 'शेर है', 'उसे क्या डर' ? तब सादृश्य संबन्ध से 'शेर' का अर्थ शेर के समान वीर, निर्भीक हो जाता है। इसी प्रकार जब शिक्षक किसी छात्र को क्रुद्ध होकर 'बैल', 'गदहा', 'उल्लू' कहते हैं, तब सादृश्य संबन्ध से उसका अर्थ होता है बुद्धिहीन मूर्ख। 'क्या बात है, सारा गाँव शोर मचा रहा है', में 'गाँव' का अर्थ है गाँव के लोग। यह अर्थ लक्ष्य कहा जाता है, शब्द लक्षक तथा दोनों का संबन्ध लक्षणा।

उपर्युक्त स्थलों में यह भी कहा जा सकता था कि वह वीर है, निर्भीक है, वह मूर्ख है, गाँव के लोग क्यों शोर मचा रहे हैं ? परन्तु इन कथनों में उपर्युक्त कथनों वाली तीव्रता नहीं है, क्योंकि उनसे शक्य या अभिधेय तथा लक्ष्य अर्थों के अतिरिक्त कुछ और अर्थ भी निकल रहे हैं। सिंह का अभिधेय अर्थ है एक [illegible]-

शाली निर्भीक पशु; लक्ष्य अर्थ है वीर, निर्भीक व्यक्ति। इससे आगे भी एक अर्थ है; परम वीर, परम निर्भीक। इस अर्थ को **व्यंग्य** या द्योत्य कहते हैं। उसे प्रकट करने वाले शब्द को **व्यंजक** या द्योतक तथा दोनों के बीच के संबन्ध को **व्यंजना**। 'बैल', 'गदहा', 'उल्लू' का लक्ष्य अर्थ है 'मूर्ख' और व्यंग्य अर्थ है 'महा-मूर्ख'। 'सारा गाँव' का लक्ष्य अर्थ है 'गाँव के (प्राय:) सभी आदमी,' और व्यंग्य अर्थ है 'बच्चा, बूढ़ा, नर-नारी, धनी, गरीब प्रत्येक आदमी'।

व्यंजना केवल शब्दों में ही नहीं पद-समूह तथा पूरे वाक्य में भी रहती है। 'सूरज डूब चुका' का अभिधेय अर्थ एक ओर अति सरल है, परन्तु व्यंग्य अर्थ वक्ता, श्रोता, प्रसंग, स्थान आदि के भेद से अनेक हैं। दूकानदार का अभिप्राय है कि 'बत्ती जला दो'। किसान का मतलब है कि "खेत से घर को लौटो"। खेल शिक्षक का अर्थ है "खेल समाप्त करने की घण्टी बजा दो"। मुहावरे और लोकोक्तियाँ लक्षणा-व्यंजना की शक्तियों से ही अपने कथ्य में प्रभावोत्पादकता भर देती हैं।

अभ्यास

१. निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध करो :—

चंपा ने एक सिगरेट निकाला, उसे राजा के होठों से लगाई। उसने अपने को शूद्रक की राजलक्ष्मी बताई। वर्त्तमान लेखक ने इस सीमा को और उत्तर निर्धारित की है। मैं उसे पूरी पढ़ गया। राज्यपाल पुरस्कार पाने वाले कवियों से हाथ मिलाये। इस की तैयारी तो दो सप्ताह से होती थी। तुम मेरा सारा समय व्यर्थ नष्ट कर दिये। मैं और तुम वहीं चलोगे। सुरेश की सभी लड़कियाँ सुन्दरियाँ हैं। उनकी पत्नी भी विद्वान् है। मैं ताजमहल को देखा हूं। माँ कही हैं कि आज जल्दी लौटना। यहाँ भात दाल तरकारी खायी जाती हैं। बाजार से चावल दाल को कब लाओगे? यह शर्त्त को मेरे कहने से सबों ने मान लिया। कहते हैं कि स्वयं वाणी ही वाण कवि बना था।

२. माँ कुछ नहीं खाई। बहुत सी महिलाएँ भी आकर देखी। दादी हम सबों को कहानियाँ सुनाई। सब लड़के पाँच-पाँच रोटी लिए। पिताजी कहे हैं कि मुझसे पूछ कर जाना। तुमने तीन कुर्त्ते कब बनवाया? श्यामा ने मंजुला को देखी। मैंने तुमको चिट्ठी तो भेज दिया था। मेरी माताजी मुझे बहुत मानती है। मैं अनुभव किया हूँ, देखा हूँ। तुम सोनपुर मेला देखे हो? लड़के खाये होते तो जरूर बहे होते। तुम लोगों को वहाँ कुछ दिखे, क्या मिले? उसके आँख से आँसू क्यों गिर रही है? चन्द्रमा का किरण घर-घर में पहुँच जाता है। तुम वह

कहीं से खरीदना होगा। तुमको तीनों कहानी पढ़ना हो, तो मेरे यहाँ आ जाना। मोहन को चारों वेद खरीदना था।

३. मुझे कल बहुत काम करना है। बच्चों को पूरी खुराक अवश्य मिलना चाहिये। तीनो संतरे तुम्ही को नहीं खाना चाहिये। शीला को बच्चों के कपड़े भी धोना है, रसोई भी बनाना है। नौकरानी सब खायी जा रही है। इतना खा लिये हो कि तुमसे चाय भी नहीं पिया जा रहा है। मुझे तीन पुस्तकें चाहिएँ। यहाँ सब की बात सुनाई पड़ जाता है। ऐसे वाक्य अशुद्ध माने जाने चाहिएँ। कल तुमने कहाँ जाना है? मेरे को इस में क्या करना है? सब सन्तरे यहीं रख देना चाहिये। हाँ जलेबियों को अभी वहीं रहनी चाहिये। वह तेजी से कदम बढ़ायी, घूँघट सम्हाली कौन जा रही है? तुम धरती में आँखें गड़ायी कहाँ जा रही थी? मैं लीची नहीं खाया हूँ। ललिता मुझे देखती ही रोने लगी। उपवास करना ही एक मात्र चिकित्सा था। फेफड़ा धौंकनी बन गयी थी। कहानी ही पाथेय हो गया। ईख की खेती ही आधार था। समाचार पत्र में लिखा है एक युवक युवती हो गई है। चाचाजी कहिन हैं।

४. तुम क्या द्वितीय श्रेणी में पास किये। मुन्नी अकेली ही सब खायी जा रही है। बिचारी दो घंटे से गाती-गाती थक गई है। औरतें बातें करती-करती बहुत दूर निकल गई। मुझे ढूँढ़ती-ढूँढ़ती माँ का मन अधीर हो चुका था। वह रोज एक ही बात सुनता-सुनता ऊब चुका था। श्याम मुझ से इस प्रकार बातें करता है, मानो यह मेरा गुरु है। तुम यहाँ रहोगे या वहाँ; मुझे इससे क्या मतलब? मन लगा कर पढ़ते जाओ, जिससे अच्छे अंक मिलेंगे। वे भले ही वहाँ नहीं जाएँगे, मैं तो अवश्य जाऊँगा। वहाँ लड़के और लड़कियाँ क्या कर रही हैं। मोहन और मैं आज ही जा रहा हूँ। श्याम और तुम कब आ रहे हैं? मैं, रमेश और तुम एक ही बात कहोगे। वहाँ बैल या गौएँ चर रहे हैं। वहाँ मैं और तुम रहोगे। यहाँ तुम या लड़के रहोगे, मैं जाऊँगा। न मैं, न लीला गाएँगे तुम गाओगे।

५. उन लोगों का एक नहीं चला। दोनों में खूब छनता है। उनमें आपस में ही नहीं बनता। तुम्हें भोजन का ही पड़ा है। विद्वानों का झुण्ड कहाँ जा रहा है? छात्रों का गिरोह किसका समर्थन कर रहा है? तुम अकेले दो सेर मछलियाँ क्या करोगे। पाव भर कचौड़ियों से बल्लू को क्या होगा? मैंने केवल पाँच जलेबी खाया है। रात में सादी रोटियाँ खानी अच्छी होती है। सुरेश की लिखावटें अच्छी नहीं होती। सबों के सामने ही उसका प्राण निकला। बस दुर्घटना का समाचार पढ़ कर मेरा तो होश ही उड़ गया। वह लोग कब आ रहे हैं? अब

भी तुम्हारी आँख नहीं खुली ? शशि ने तो घनश्याम का भी कान काट लिया। अभी ही तुम्हारे पेट में चूहा कूदने लगा। तुम्हारे कारखाना में हड़ताल क्यों हो गया है। तुमको बुधन मारिस है ?

६. उस मेला से पड़ोस के लोगों को बहुत लाभ है। यहाँ केवल पाँच लड़के के लिए प्रबन्ध किया गया है। एक साथ तीन बच्चे को पढ़ाना कठिन है। मेरे पास केवल दस रुपया का एक नोट है। वीणा ललिता से हम तुरत आ रहे हैं, कह कर लपकती हुई आगे बढ़ गयी। तुम दुष्ट हो, मैं तुझ से बात नहीं कर सकता। आप कहाँ से आ रहे हो। देखो तो दरवाजे पर कौन-कौन आया है। पुस्तकालय में हर छात्रों को पढ़ने की अनुमति है। सुरेश के बायाँ हाथ में गेंद थी, दायाँ हाथ में बल्ला। किशोर को देखते ही लड़की शर्मिन्दी हो गई। आज के अखबार में कई ताजा खबर हैं। वह अमरेन्द्र है, इस में एक महान् दोष है। कक्षा में कै छात्र उपस्थित थे। मेरा कोट तुम से अधिक साफ है। सुशील कक्षा में सब से तीव्रतम छात्र हैं। तृतीय खबर यह है कि आप की दरखास्त अस्वीकृत कर दी गई। मृदुला कितनी सोती है। न तुम हाँ कहते हो, न ना। तुमको लड़की हुई है ?

७. स्वामी दयानन्द ने अनेको महत्वपूर्ण काम किये। तुम्हें मैं ने एक पुस्तकों की सूची दी थी। कई इतिहास के अच्छे विद्वान् भी इसमें नहीं आ सके। इस कक्षा में कई छात्र पुरस्कार देने के योग्य हैं। सभी छात्र और छात्राएँ यहीं आएँगी। इसी बगीचे में राजा और रानियाँ टहलती हैं। मैं इस लिए वहाँ नहीं गया, क्योंकि उन्होंने मुझे निमन्त्रण नहीं दिया था। अभी तुम्हारी आयु क्या होगी। ऊँची-ऊँची अटारियाँ बहुत सुन्दर लग रही थीं। मेरा नाम श्री सुरेश शर्मा है। मेरा वह उद्देश्य कदापि नहीं, जो कि आप समझते हैं। प्रातःकाल के समय भ्रमण बहुत स्वास्थ्यप्रद है। मै तुरत ही वापस लौट आया, अतः अधिक नहीं जानता। वकीलों ने कागजात का निरीक्षण किया। उसने तरह-तरह का बहाना किया। मोहन को दो लड़कियाँ हैं।

८. सैकड़ों वर्षों तक भारत के गले में परतन्त्रता की बेड़ियाँ पड़ी रहीं। राजनीति में रह कर सत्य की रक्षा करना तलवार की नोक पर चलना है। उनके भी जिम्में एक आध काम किए गए थे। तुम्हारे एक-एक वाक्य मुझे आज भी याद हैं। मैंने उन्हें हाथ जोड़ा। मेले में सभी वर्ग के लोग मिल जाते हैं। आप सभी यहाँ आकर अपना नाम लिखा जायें। अभी तो दस ही बजा है। अकाल से सैकड़ों आदमी कुत्ते की मौत मर गये। विद्यालय के सामने अनेकों आरक्षी जवान खड़े हैं। इस बात को तो मैं पहले से ही जानता था। तुम को वहीं जाना

आवश्यक है। तुम्हारा मेरे ऊपर भी विश्वास नहीं है। किसी भी पत्रालय से टिकट खरीद लोगे। उनके कहने के बावजूद भी तुमने नहीं माना। चाहे जैसे भी हो तुम वहाँ समय पर उपस्थित रहो। हमको तो एक ही लड़की है।

९. फिर उसके बाद तुमने किसे सूचना दी। भारतीय प्रशासन-सेवा में सफलता के साथ ही मोहन के परिवार की विपन्नता का अन्त हो गया। सुरेश ने महाविद्यालय से लौटते ही भोजन किया, और सो गया। यहाँ हम लोग कुशल हैं। शोक है कि मैं समय पर आपको सूचना नहीं दे सका। पुत्र प्राप्ति पर उन्होंने मुक्तहस्त से धन लुटाया। मैं विद्यालीय और पुस्कालय संबन्धी झगड़े घर पर नहीं सुनना चाहता। उन्होंने पेकिंग को अपनी राजधानी बना लीं। इब्न बतूता सदा सर्वदा के लिए महान् व्यक्तियों में गिना जाना चाहिए। ऐसा किसी अन्य देशों में नहीं हुआ। भाषा के वे अंश जो बहुधा प्रयोग में आते हैं, उनका मूल अंश तो रह जाता है, किन्तु शरीर विकल हो जाता है। मुझे प्रेमचन्द की कहानियाँ पढ़नी अच्छी लगती हैं। लोग फिर आने आरम्भ हो जाएँगे। हिन्दी का व्याकरण अत्यन्त कठिन होने के कारण इसे सीखना कठिन है।

१०. आपकी प्रेरणानुसार ही उसने यह कदम उठाया है। शान्ति की इच्छारहित विजय का स्थायी लाभ नहीं होता। इस स्थान का पानी इतना ठंडा होते हुए भी न जाने इसका नाम गरम पानी क्यों चला आ रहा है। प्रताप ने सब किले लौटा लिए और जीवन भर प्रतिज्ञा पर अटल रहे। मैकमोहन रेखा को ही सीमा मानी जाती हैं। "भारत के प्रमुख उद्योग" हिन्दी की एक मौलिक रचना होने के कारण इसकी भाषा अत्यन्त सरल एवं प्रवाहपूर्ण है। यह पत्र दीदी लिखी है। राम लक्ष्मण और सीता वन को गई। अनाधिकार प्रवेश मना है। मेरे कहने के बावजूद भी वह नहीं गाया। हमें गुरुजनों की इच्छानुसार काम करना चाहिए।

११. विदेश यात्रा के दौरान में उसने अनेकों काम किए। कृपया हमारे सामानों का ख्याल रखें। हम कहे थे कि वह घर के अन्दर में है। दर असल में हमें शिक्षा पद्धति को ऐसी बनाना है कि वह व्यावहारिक जीवन में काम आए।

अध्याय : १५

विराम-चिह्न

जब कोई बोलता या पढ़ता है तब बीच में उसे साँस लेने के लिये भी रुकना पड़ता है। इसमें वक्ता या पाठक यह भी ख्याल रखता है कि वह किसी एक वक्तव्य को समाप्त कर ही रुके। अधूरा काम भी नहीं छोड़ा जाता, भाव भी। इस रुकावट को ही विराम कहते हैं। भाव की पूर्णता के स्तर के ही अनुकूल विराम का काल भी रहता है। लिखने में इन विरामों का काल-भेद चिह्न-विशेषों से सूचित किया जाता है। श्रोता तथा पाठक को इन विरामों के विभिन्न स्तरों से पता चल जाता है कि वक्ता या लेखक कहाँ तक के कथन को अपने अभिप्राय की एक इकाई बताना चाहता है। पाठक तो विराम-चिह्न के अभाव में बहुत कठिनाई में पड़ जा सकता है। विभिन्न विराम-चिह्न किसी वाक्य के पदों, वाक्यांशों, तथा खण्डवाक्यों के बीच प्रयुक्त होकर यथास्थान विराम के साथ वक्ता के विभिन्न आशयों को भी स्पष्ट करते हैं। "मोहन वहाँ क्या है" और "मोहन, वहाँ क्या है" के अर्थ में स्पष्ट अन्तर है। अतः इन चिह्नों को विराम चिह्न कहने की जगह विस्मयादि चिह्न या मनोभाव चिह्न कहना चाहिये।

१. पूर्ण विराम (।)—

(क) प्रत्येक वाक्य की समाप्ति पर पूर्ण विराम दिया जाता है; यह एक अभिप्राय की समाप्ति सूचित करता है; जैसे—सुशील अच्छा लड़का है। वह माता-पिता का कहना मानता है। उसके शिक्षक भी उससे बहुत प्रसन्न रहते हैं।

(ख) किसी कविता के दो चरणों की समाप्ति पर एक पूर्ण विराम, तथा चार चरणों की समाप्ति पर दो पूर्ण विराम देते हैं; जैसे—
'सठ सुधरहिं'सत संगति पाई। पारस परस कुधातु सुहाई ।।

इधर हिन्दी में अपना पूर्ण विराम। यह खड़ी लकीर नहीं, अंग्रेजी का पूर्ण विराम . यह एक बिन्दु देने की प्रथा आरम्भ हो रही है।

२. उप-विराम या अपूर्ण विराम (कोलन :)—जहाँ एक वाक्य के समाप्त हो जाने पर भी अभी विवक्षित भाव समाप्त नहीं होता, आगे की जिज्ञासा बनी ही रहती है, वहाँ पूर्ण विराम से कम देर ठहरते हुए आगे तक बढ़ते जाते

हैं, जब तक वक्तव्य पूरा स्पष्ट नहीं हो पाता; इसलिए वहाँ पूर्ण नहीं, अपूर्णविराम देते हैं; जैसे—शब्द और अर्थ के बीच तीन में से कोई भी सम्बन्ध हो सकता है : अभिधा, लक्षणा, व्यंजना। इसका प्रयोग कम होता है।

३. **अर्ध विराम** (सेमिकोलन ;)—जहाँ अपूर्ण विराम या उपविराम से भी कम ठहरने का संकेत होता है, वहाँ यह चिह्न देते हैं; जैसे—"हमने यह देखा कि आगे का रास्ता कितना ज्यादा लम्बा है; यह देखा कि हर एक कदम से कठिनाई कम होने के बजाय और बढ़ती है; यह देखा कि कुछ मांगें अगर पूरी होती हैं, तो बहुत सी नई खड़ी हो जाती हैं।" अपूर्ण विराम की जगह भी इससे काम ले लेते हैं।

४. **अल्प विराम** (कौमा ,)—इसका क्षेत्र बहुत व्यापक है। यह निम्नलिखित स्थानों में आता है :—

१. दो खण्ड वाक्यों के बीच में; जैसे :—

(क) जहाँ योजक छोड़ दिया जाता है ; 'पति बहुत खुश हुआ, वह बाप बनने वाला था न'। विध्वंस एक दिन में हो सकता है, नवनिर्माण नहीं'। 'जो होगा, देखा जायगा'।

(ख) योजक के आने पर भी—'संस्थाओं ने हमारे प्रस्थान का स्वागत तो किया, पर खुले दिल से नहीं'। 'हम इन पत्रों से काफी घबराए, क्योंकि हमें अभी अपने सिर के बाल काफी प्यारे हैं'। उन बीजों को पैदा किया गान्धी ने, और भारत की धरती को अपनी पदयात्रा द्वारा बार-बार जोत कर के उन्हें बोया है बिनोवा ने'।

(ग) दो बड़े वाक्यांशों के बीच—"परन्तु उनके कष्ट-सहन से, उन कष्टों को मानव कल्याण के प्रयत्नों में ढालने की उनकी शक्ति से आधुनिक युग को अजस्त्र जीवन-प्रेरणा मिली है'।

(घ) जहाँ एक प्रकार के अनेक शब्द या शब्द समूह (वाक्यांश) आएँ और योजक अव्यय का प्रयोग केवल अन्तिम दोनों के बीच आए, वहाँ शेष दो के बीच; जैसे—दशरथ के चार लड़के थे—राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न। चारों भाई सुन्दर, सबल, नम्र तथा दयालु थे। चारों साथ ही खेलते, खाते, पढ़ते तथा टहलते थे।

(ङ) हाँ, नहीं, जी, बस, अच्छा आदि के आगे किसी दूसरे वाक्य के आने पर भी; क्योंकि ये लघुवाक्य ही हैं; "बस, इतने ही के लिये बुलाया था", अच्छा, अवश्य आऊँगा।

(च) संबोधन के बाद—नन्दन, जरा इधर सुनना।

५. **प्रश्न-विराम या प्रश्नसूचक चिह्न**—जहाँ प्रश्न पूछने के कारण विराम की आवश्यकता पड़ती है, वहाँ पूर्ण विराम की भाँति खड़ी लकीर देते हैं, पर उसे टेढ़ी-मेढ़ी कर देते हैं, जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि यहाँ ठहरना ही नहीं है, एक प्रश्न भी पूछना है। इसका उच्चारण एक विशेष आरोह-अवरोह से किया जाता है,

सीधा वाक्य—राम आ रहा है। वह मोहन का लड़का है।

प्रश्न वाक्य—राम आ रहा है ? वह मोहन का लड़का है ?

प्रश्नवाचक सर्वनाम या सार्वनामिक अव्यय का प्रयोग रहे या नहीं, प्रश्नात्मकता को उच्चारण के आरोह-अवरोहमात्र से भी स्पष्टतर कर देने के लिये पूर्णविराम की जगह इसी का प्रयोग किया जाता है।

६. **आश्चर्य-विराम या आश्चर्य-सूचक चिह्न**—जहाँ किसी वाक्य के उच्चारण के बाद पूर्ण-विराम के साथ आश्चर्य आदि कोई मनोवेग भी प्रकट करना होता है, वहाँ भी उच्चारण का एक भिन्न जातीय आरोह-अवरोह रखते हैं, इसे प्रकट करने के लिये पूर्ण विराम के नीचे एक बिन्दी लगाई जाती हैं और पूर्ण विराम से भिन्नता दिखाने के लिये इसकी खड़ी लकीर ऊपर से नीचे की ओर कुछ पतली भी कर दी जाती है; जैसे–ऐ ! तू आ गया ! (हर्ष), मंगरू मर गया ! (शोक) तू कैसा पापी है ! (घृणा)। गाड़ी चली गई ! असम्भव ! आश्चर्य ! वाह ! विचित्र बात है !

कुछ लोग सम्बोधन के बाद अल्प-विराम नहीं, यह चिह्न ही लगाते हैं, नरेश ! इधर आओ।

७. **निर्देश चिह्न (डैश)**—इसका प्रयोग आगे कहे जानेवाले अनेक शब्दों, वाक्यांशों या वाक्यों के बारे में बताने वाले वाक्य के बाद पूर्ण विराम की जगह होता है; जैसे—

(क) धर्म के दस लक्षण हैं—धृति, क्षमा, दया…।

(ख) इन अवसरों पर घण्टी अवश्य बजनी चाहिये–(१) कार्यालय का काम शुरू होने के पाँच मिनट पहले, (२) शुरू होने पर, (३) बीच में आधे घंटे का विश्राम बताने के लिये और (४) समय समाप्त होने पर।

(ग) हमें ये बातें याद रखनी चाहिये—(१) प्रतिदिन सूर्योदय के पूर्व शय्या त्याग कर देना चाहिये, (२) उठ कर सबसे पहले मुँह साफ करना चाहिये, (३) फिर शौचादि से निवृत्त होकर बाहर टहलना चाहिये,

ऐसे अवसरों पर पहले अपूर्णविराम देकर भी उससे सटा हुआ निर्देश चिह्न देते है, जैसे :—अथवा केवल अपूर्णविराम भी : ।

(घ) जहाँ कही हुई बात को ही स्पष्टतर करना होता है, वहाँ भी निर्देश चिह्न देते हैं :—"अब एक ही समस्या है—मुन्नू को घर कौन पहुँचाए"। राम – भारत सम्राट् दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र – को भी बन जाना पड़ा था।

(ङ) उद्धरण के पूर्व या बाद में :—इतने में कोई गरजा—"रास्ता छोड़ो।" "चौके की क्या हालत थी"—इन्दु ने पूछा।

(च) वार्तालाप में वक्ता के नाम के आगे :—राम—"तुम कब आओगे"?

(छ) जहाँ वाक्य टूटता है वहाँ :—सिंह जी—भगवान् झूठ न कहलावें—सब जानबूझ कर कर रहे हैं"।"आप में से कोई—खैर, छोड़िये यह बात—मोहन कैसा है" ?

(८) विवरण चिह्न :—यह चिह्न निर्देश-चिह्न की स्थिति क तथा ख में लगाते हैं; जैसे, प्रत्येक विद्यार्थी में निम्नलिखित गुण होना चाहिये :—

(१) विद्या के प्रति अनुराग। (२) गुरू के प्रति श्रद्धा। (३) रहन-सहन में सादगी।

(९) अवतरण या उद्धरण चिह्न :—इससे किसी के वक्तव्य को ऊपर की ओर घेर देते हैं, जैसे राम "कौन है' ? श्याम :—"मैं हूँ, श्याम"।

यह उद्धरण चिह्न दुहरा " " ऐसा अथवा इकहरा ' ' ऐसा रहता है। प्रायः ऐसा करते हैं कि उद्धरण को दुहरे चिह्नों से घेरते हैं, और उस उद्धरण के भीतर यदि फिर कोई उद्धरण आ जाता है, तो उसे इकहरे चिह्नों से घेरते हैं अथवा इसके विपरीत ही करते हैं।

राम ने छूटते ही उत्तर दिया—"शशी, यही समय है, जब तुम मेरी सहायता कर सकते हो; तुलसीदास ने भी कहा है—'धीरज धरम मित्र अरु नारी, आपतकाल परेखिअ चारी', सोचकर जवाब दो"।

(१०) योजक—यह निर्देशक से छोटी, ठीक उसी प्रकार की एक पड़ी रेखा है। यह दो स्थानों में आती है—

(क) समस्त पद के सभी खण्डों के बीच, ऊपर की शिरोरेखा तोड़ कर; जैसे, खिलाने-पिलाने की बात पर ब्राह्मणी बोली—"थोड़ा-बहुत घी-दूध उसे दे देती हूँ, मेहनत-मजदूरी कर के इतना ही जुटा पाती हूँ।"

(ख) पंक्ति के अन्त में यदि कोई शब्द पूरा नहीं लिखा जा सका, कोई अंश छूटा रह गया है, तब शिरो-रेखा से थोड़ा नीचे ऐसा चिह्न कर देते हैं।

(११) कोष्ठक चिह्न—यह तीन प्रकार का होता है।

१, ( ), २. { }, ३. [ ]

इनमें दूसरा तीसरा तो प्राय: गणित में काम आता है। पर पहला साधारण भाषाओं में भी उस खण्ड को घेरने के काम में आता है, जिसका प्रस्तुत वाक्य में (क) किसी स्पष्टीकरण के लिये उल्लेख होता है, अथवा (ख) अन्वय नहीं दिखाना होता है, अथवा (ग) क्रम संख्या दिखानी होती है। जैसे—

(क) हम मादरे-हिन्द (भारतमाता) की खिदमत में अपना सर चढ़ाने के लिए तैयार हैं। देशरत्न (डा० राजेन्द्र प्रसाद) की सादगी से हर व्यक्ति प्रभावित था।

(ख) आर्यावर्त (पटना) में एक बिज्ञप्ति निकली है।

(ग) (१), (२), (३) या (क), (ख), (ग) आदि।

(१२) लोप चिह्न (ब्लैंक)—इसके प्रयोग स्थल निम्नलिखित हैं :—

(क) यदि उद्धरण का कोई अंश प्रस्तुत में अपेक्षित नहीं रहता है, (ख) यदि उद्धरण का कोई अंश सुनाई नहीं पड़ता है, (ग) यदि प्रस्तुत वाक्य में कुछ अंश गोपनीय, अश्लील आदि रहता है, (घ) यदि रिक्त स्थानों की पूर्ति आदि का प्रश्न रहता है, तो वहाँ यही चिह्न वना देते हैं..............

(१३) अनुवृत्ति चिह्न—" "—जब लिखने में एक ही शब्द बार-बार ठीक नीचे लिखना पड़ता है तब यह चिह्न देते हैं, जैसे—

पं० महावीर प्र० द्विवेदी।
" रामचन्द्र शुक्ल
" कामता प्र० गुरू
" किशोरी दास वाजपेयी
" हजारी प्र० द्विवेदी

अभ्यास

इन वाक्यों में अपेक्षित मनोभाव-चिह्न लगाएँ—शास्त्र में लिखा है कि धनमिच्छेत् हुताशनात् रोज देखिये कि आय कितनी है कैसे बढ़ सकती है व्यय कितना है कैसे घट सकता है उधार दीजे दुश्मन कीजे लोकोक्ति बहुत प्रसिद्ध है नहीं बहुत भोगी हुई भी है अतएव यथासंभव न तो ऋण दीजिये और न लीजिये। ऋण लेते ही तुलसी की यह उक्ति आब गया आदर गया नैनन गया सनेह पूर्णतया चरितार्थ होती है बनिये की तरह बनिये धन कमाना है तो पंडित की तरह ज्ञानी न बनकर बनिये की तरह सरल मधुर सावधान और अर्थकारी विद्या के जानकार बनिये।

अध्याय : १६

पद एवं वाक्य का विश्लेषण

पद-परिचय (**Parsing**)

शब्द के विवरण में बताया जाता है कि उसकी वर्तनी क्या है; जैसे क्रिया की वर्तनी है 'क् र् संयुक्त ह्रस्व इकार य् आकार'। इसी प्रकार किसी शब्द अथवा पद के परिचय में यह बताया जाता है कि यह किस प्रकार का शब्द है और वर्तमान वाक्य में क्या काम कर रहा है, किस से अन्वित है। आठ प्रकार के शब्दों के बारे में निम्नलिखित बातें बताई जाती हैं—

संज्ञा—प्रकार, लिंग, वचन, कारक, विभक्ति, अन्वित क्रिया या पदान्तर।

सर्वनाम—प्रकार, पुरुष, लिंग, वचन, कारक, विभक्ति, अन्वित पदान्तर।

विशेषण—प्रकार, लिंग, वचन, कारक, विशेष्य, कार्य।

क्रिया—प्रकार, काल, पुरुष, वचन, वाच्य, लिंग, अन्वित कर्त्ता या कर्म।

क्रिया विशेषण—भेद, अन्वित पद।

संबन्ध बोधक—प्रकार, अन्वित पदान्तर।

समुच्चयादि बोधक— „ „ या वाक्यान्तर

उदाहरणार्थ—वहाँ **मैंने सैकड़ों गाँव और बाजार देखे**।

(१) गाँव, बाजार—संज्ञा, जातिवाचक, पुंलिंग, बहुवचन, 'देखे' क्रिया से उक्त कर्मकारक, प्रथमा विभक्ति।

(२) मैंने—सर्वनाम, निश्चयवाचक, पुरुषवाचक, उत्तमपुरुष, एक वचन, पुंलिंग (अथवा स्त्रीलिंग) 'देखे' क्रिया का अनुक्त कर्त्ता कारक, तृतीया विभक्ति।

(३) सैकड़ों—विशेषण, संख्यावाचक, अनिश्चित बहुत्व सूचक, बहुवचन, उभयपुंलिंग, विशेष्य गाँव तथा बाजार को विशेषित कर रहा है।

(४) देखे—देखना क्रिया, सकर्मक, मौलिक, सामान्य भूत, अन्य पुरुष, बहुवचन, कर्मप्रधान कर्तृवाच्य, कर्म गाँव और बाजार से अन्वित, नियन्त्रित।

(५) और—योजक, सजातीय, युक्त पद गाँव तथा बाजार।

(६) वहाँ—क्रिया विशेषण, स्थानवाचक, 'देखे' क्रिया से अन्वित।

वाक्य विश्लेषण (Analysis)

रचना या गठन की दृष्टि से वाक्य के तीन भेद होते हैं :—

(१) एकात्मक अथवा सरल वाक्य :—जिस में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष एक ही समापिका क्रिया होती है, उसे एकात्मक अथवा सरल (साधारण) वाक्य कहते हैं।

जैसे; राम जाता है। जाओ। हाँ। नहीं। भूख। राम ने सीता के उद्धार के लिये दंडकवन से लंका में जाकर सुग्रीव की सेना की सहायता से रावण को मारा।

(२) अनेकात्मक वाक्य उसे कहते हैं, जिसमें एक से अधिक एकात्मक या खण्ड वाक्य होते हैं जो पूरे महावाक्य के उपवाक्य कहे जाते हैं। अनेकात्मक वाक्य के तीन भेद हैं :—

[क] संयुक्त—जिसमें एक से अधिक परस्पर स्वतन्त्र उपवाक्य किसी योजक से जुड़े हों, उसे संयुक्त कहते हैं; जैसे—भारत एक विशाल देश है, और उस की संस्कृति बहुत पुरानी है।

[ख] मिश्र—जिसमें एक से अधिक सरल उपवाक्य हों और उनमें एक ही मुख्य या प्रधान उपवाक्य हो, शेष सब उसके अंग या गौण उपवाक्य, उसे मिश्र कहते हैं; जैसे, भारत वास्तव में आज भी एक महान् देश है, क्योंकि इस की संस्कृति बहुत पुरानी है।

[ग] संसृष्ट या संकीर्ण—जिसमें (क) एक से अधिक मिश्र उपवाक्य, (ख) अथवा एक संयुक्त के साथ एक मिश्र उपवाक्य, (ग) अथवा एक मिश्र के साथ एक सरल उपवाक्य हो, उसे संसृष्ट या संकीर्ण कहते हैं। जैसे, भारत, जिसकी पुरानी आर्थिक और नैतिक समृद्धि नष्टप्राय हो चुकी है, क्योंकि वह हजारों वर्षों से निरन्तर पराधीन रहा, आज भी अपनी विश्व की सबसे प्राचीन संस्कृति

को अक्षुण्ण रखे हुए हैं, और संसार के समृद्धतम देशों के लिए भी आध्यात्मिक तथा सांस्कृतिक प्रगति की आशा का केन्द्र बना हुआ है।

अंग, गौण, अप्रधान या आश्रित उपवाक्य तीन प्रकार के हो सकते हैं :—

[१] संज्ञा उपवाक्य—यह मुख्य उपवाक्य की क्रिया के कर्ता, कर्म या पूरक का, या उसके समानाधिकरण का कार्य करता है; जैसे, मोहन जानता है कि मैं यहाँ हूँ। यहाँ' मैं यहाँ हूँ' यह गौण उपवाक्य मुख्य उपवाक्य 'मोहन जानता है' की सकर्मक क्रिया 'जानता है' का कर्म होकर आ रहा है।

!२] विशेषण उपवाक्य—यह मुख्य उपवाक्य की किसी संज्ञा या सर्वनाम को विशेषित करता है; जैसे—'जो सोता है, वह खोता है 'में' 'जो सोता है' यह गौण उपवाक्य 'वह खोता है' इस मुख्य उपवाक्य के सर्वनाम' वह को विशेषित करता है।

[३] क्रिया-विशेषण उपवाक्य—जो गौण उपवाक्य मुख्य उपवाक्य के क्रियाविशेषण का कार्य करता है, उसे क्रियाविशेषण उपवाक्य कहते हैं। यह स्थान, काल, कारण, रीति आदि प्रकट करता है; जैसे

'आप जब चाहें, प्रसन्नता से आयें' में गौण उपवाक्य 'जब चाहें' मुख्य उपवाक्य 'आप प्रसन्नता से आएँ' का काल निर्दिष्ट करता है।

प्रत्येक प्रकार के वाक्य के विश्लेषण का एक-एक उदाहरण—

[क] सरल वाक्य [१] आज पटना विश्वविद्यालय के कुलपति ने स्नातकोत्तर कक्षा के छात्रों को विविध उदाहरणों से अपनी शिक्षा विषयक नीति का संक्षिप्त परिचय दिया है।

[२] पुराने जमाने में वसुदेव के पुत्र कृष्ण ने अत्याचारी कंस को मारकर उस की जगह उसके पिता उग्रसेन को यादवों का राजा बनाया।

उद्देश्य		विधेय	विधेय वर्धक			
उद्देश्य	उद्देश्य का विस्तार	विधेय (क्रिया)	कर्म	पूरक	कर्म या पूरक का विस्तार	विधेय विस्तार
१ कुलपति ने	पटना वि० वि० के (उद्देश्य 'कुलपति' का विशेषण)	दिया है।	परिचय	—	(क) अपनी शिक्षा विषयक नीति का (ख) संक्षिप्त।	(क) आज-स्थानवाचक क्रि०वि० (ख) विविध उदाहरणों से, सविशेषण तृतीया-विभक्त्यन्त करण कारक (ग) छात्रों को—संप्रदानचतुर्थी।
२. कृष्ण ने	वसुदेव के पुत्र (उद्देश्य 'कृष्ण' का विशेषण)	बनाया	उग्रसेन को	राजा	क) उसके पिता (कर्म उग्रसेन का विशेषण, (ख) यादवों का (राजा का विशेषण)	(क) अत्याचारी कंस को मारकर, (ख) उसकी जगह (पर), (ग) पुराने जमाने में,
३. घंटी	—	बजी	—	—	—	— —
छात्र	सभी (उद्देश्य छात्र का सार्वनामिक विशेषण)	दौड़े	—	—	—	व्यायाम के लिए (चतुर्थ्यन्त) और, (योजक)
४. ढिल्ला जी	—	पहुँचा	—	—	—	जब, वहाँ (योजक)
कोई	—	नजर आया (दिखा)	—	—	+	(१) उसे, कर्तृ षष्ठ्यन्त (२) नहीं, क्रि० वि० (३) तो योजक

१, नजर आना = नजर में आना (सप्तमी लोप)।

[ख] संयुक्त वाक्य—[१] घण्टी बजी और सभी छात्र व्यायाम के लिये दौड़े, ।

यह एक संयुक्त वाक्य है [अ] घण्टी बजी, मुख्य उपवाक्य [आ] सभी छात्र व्यायाम के लिये दौड़े 'अ' का सजातीय, मुख्य उपवाक्य [इ] संयोजक 'और' दोनों सजातीय मुख्य वाक्यों को जोड़ रहा है। दोनों सरल वाक्यों का फिर ऊपर की भाँति विश्लेषण होगा।

[२] दो टुकड़ियाँ दो तरफ से सामने लड़ रही थीं, और एक टुकड़ी पीछे से सूरज टेकड़ी पर चढ़ने की कोशिश कर रही थी।

यह एक संयुक्त वाक्य है (अ) दो टुकड़ियां दो तरफ से सामने लड़ रही थीं, मुख्य उपवाक्य। (आ) एक टुकड़ी पीछे से सूरज टेकड़ी पर चढ़ने की कोशिश कर रही थी, 'अ' का सजातीय उपवाक्य, मुख्य ही। (इ) संयोजक-और। इन दोनों सरल वाक्यों का फिर ऊपर के एकात्मक सरल वाक्य की 'भाँति विश्लेषण किया जा सकता है।

[ग] मिश्र वाक्य—(१) जब ढिल्ला जी वहाँ पहुँचा, तो उसे कोई नजर नहीं आया। यह मिश्र वाक्य है—(अ) उसे कोई नज़र नहीं आया, मुख्य उपवाक्य (आ) ढिल्ला जी वहाँ पहुँचा, 'अ' का आश्रित, क्रिया विशेषण उपवाक्य, उसकी 'पहुँचना' क्रिया का काल बता रहा है (इ) 'जब-तो' नित्य-संबंधी योजक।

[२] "मोहन ने कहा—अभी लाता हूँ"। यह एक मिश्र वाक्य है (अ) मोहन ने कहा—मुख्य वाक्य। (आ) अभी लाता हूँ, 'अ' का आश्रित संज्ञा वाक्य, उसकी 'कहा' क्रिया का कर्म। (इ) संयोजक 'कि' लुप्त।

[३] जो आदमी यह संदेश लाया था, वह सुवह से लापता है। यह एक मिश्र वाक्य है (अ) वह सुवह से ही लापता है, मुख्य उपवाक्य।

(आ) जो आदमी यह संदेश लाया था, 'अ' का आश्रित विशेषण, उपवाक्य, 'अ' के 'वह' को विशेषित कर रहा है। (इ) योजक जो वह, नित्य सवन्धी, युग्म।

(घ) संकीर्ण वाक्य—प्राण घातक गोली लगने के बाद यदि कुछ देर जीवित रह कर गाँधीजी अपनी राजनीति और अहिंसा धर्म पर कुछ प्रकाश डाल जाते, तो संसार का बहुत उपकार हुआ होता; पर उस सांघातिक प्रहार के बाद उन्होंने केवल 'हे राम' कहा और शीघ्र ही प्राण त्याग दिये।

यह एक संसृष्ट वाक्य है—

(अ) संसार का बहुत उपकार हुआ होता– मुख्य उपवाक्य

(आ) प्राणघातक गोली लगने के बाद ··· ··· प्रकाश डाल जाते—'अ' का क्रिया विशेषण उपवाक्य, शर्त्त बताने वाला।

संयोजक—यदि–तो; नित्य संबंधी युग्म, विजातीय। यह एक मिश्र वाक्य है।

[इ] उस सांघातिक प्रहार के बाद ··· ···कहा, मुख्य उपवाक्य

[ई] और शीघ्र ही प्राण त्याग दिये—'इ' का सजातीय मुख्य उपवाक्य। संयोजक––और, सजातीय।

यह एक संयुक्त वाक्य है।

ये दोनों वाक्य संयोजक 'पर' से मिल कर एक संसृष्ट वाक्य बना रहे हैं।

एक आशय किसी सरल वाक्य से भी व्यक्त किया जा सकता है, और किसी संयुक्त अथवा मिश्र वाक्य से भी। यह वक्ता की क्रमशः समास तथा व्यास शैली पर निर्भर करता है : जैसे,

	एक वाक्य	मिश्र वाक्य
१.	मैंने उसी दिन अति व्यस्तता के कारण इस सभा का सभापतित्व करने में अपनी असमर्थता प्रकट कर दी थी।	मैंने उसी दिन यह स्पष्ट कर दिया था कि मैं इस सभा का सभापतित्व नहीं कर सकता, क्योंकि मैं अति व्यस्त हूँ।

अनेक वाक्य—मैं अति व्यस्त हूँ। मैं इस सभा का सभापतित्व नहीं कर सकता। यह मैंने उसी दिन स्पष्ट कर दिया था।

	एक वाक्य	संयुक्त वाक्य
२.	मैंने स्वयं वहाँ जाकर, एक-एक से पूछ कर उन्हें एक पूर्ण संतोष देने वाला स्पष्ट प्रतिवेदन भेजा।	मैं वहाँ स्वयं गया, एक-एक से पूछा और उन्हें एक स्पष्ट प्रतिवेदन भेजा, अतः उन्हें पूर्ण संतोष हो गया।

अनेक वाक्य—मैं स्वयं वहां गया। वहां मैंने एक-एक से पूछा। उसके बाद मैंने उन्हें एक स्पष्ट प्रतिवेदन भेजा। उससे उन्हें पूर्ण संतोष हो गया।

इसी प्रकार कोई कथ्य समास शैली में एक ही सार बात के द्वारा समाप्त किया जा सकता है, अथवा व्यास शैली में उस के कुछ अधिक व्यौरे दिये जा सकते हैं।

जैसे, समास शैली —गंगा में भीषण बाढ़ आई थी।

व्यास शैली—गंगा का दृश्य उस समय देखने योग्य था। पटना से हाजीपुर तक का सारा प्रदेश गंगा के गर्भ में समाया हुआ था। बीच में कहीं भी कोई भी टीला या पेड़ दृष्टिगोचर नहीं हो रहा था। न जाने कितनी झोपड़ियां, कितने पेड़ उस के उच्छृंखल प्रवाह में बहे जा रहे थे। मछुए अपनी नावें किनारे लगा लहरों के थपेड़ों से उन्हें बचाने की कोशिश में लगे थे। स्टीमर का आना जाना बन्द हो गया था। दिन भर बाढ़ के दर्शनार्थी किनारे खड़े हो कर गंगा की यह भीषण मूर्त्ति आश्चर्य से निहार रहे थे। कहीं कहीं बहती हुई लाशों पर कौऐ झपट-झपट कर निर्भीक मांसास्वादन कर रहे थे। कुपित गंगा सारे पाटलिपुत्र शहर को ही न कवलित कर ले इस भय से त्रस्त नरनारी म्लानमुख हो रहे थे। कई इंजीनियर प्रतिक्षण नाप तौल कर रहे थे कि पानी की गति कैसी है, बढ़ रही है, स्थिर है, या घट रही है।

अभ्यास

१. निम्नलिखित वाक्यों तथा उनके पदों का विश्लेषण करो—

पवित्र नामों की कुछ ऐसी महिमा है कि उनके साथ पवित्र विभूतियों का स्मरण होता है, उनका चरित्र सामने आ जाता है और उसी में से अपने उद्धार का मार्ग भी निकल पड़ता है। भक्तों की रक्षा और दुष्टों के नाश के लिए भगवान् ने अपने हाथ में चक्र धारण किया है इसका सदा स्मरण रहे, इसलिए भानुदास ने अपने पुत्र का नाम चक्रपाणि रखा।

२. इन वाक्यों के पदों का पद-निर्देश करें—

(क) संसार में पहला ऐतिहासिक प्रमाण यदि कोई है, तो वह वेद है।

(ख) यदि संसार में चार दिन रहना है, तो राम का गुलाम बनकर रहने में ही मुझे आनन्द है—ऐसा तुलसीदास कहते हैं।

३. इनका वाक्य विश्लेषण भी करें।

अध्याय : १७

पत्र एवं निबंध

पत्र

पत्र लेखन

जिस प्रकार पद्य का विभाजन विभिन्न छन्दों (Stanza) और और गद्य का अनुच्छेदों में किया जाता है, उसी प्रकार पत्र का भी विभिन्न खंडो' में। इसके निम्नलिखित अंग होते हैं :—

१. सब के शीर्ष पर इष्ट देवता का उल्लेख मात्र रहता है। कार्यालयीय पत्रों में तो यह नहीं ही रहता, आजकल निजी पत्रों में भी यह छूटता जा रहा है।

२. सम्बोधन—इष्ट देवता स्मरण के बाद नीचे बाएँ कोने में सम्बोधन रहता है। प्रेषक के प्रेषिती के नाते के अनुसार इसकी चार श्रेणियाँ रह सकती हैं :—

(क) अत्यन्त आदरणीय के लिए—प्रात.स्मरणीय गुरुदेव; श्रद्धेय, पूज्य पिताजी, भैया; पूजनीया माँ, परम पूज्य आदि।

(ख) सामान्य आदरणीय के लिए— परम आदरणीय चाचाजी, माताजी, पंडितजी आदि।

(ग) समकोटिक—प्रिय मित्र सुहृद्; बन्धु, महोदय आदि।

(घ) अपने से छोटे के लिए—चिरंजीवी, आयुष्मान्, सुरेश, पप्पू आदि।

३. अभिवादन—यह सम्बोधन से एक-दो पंक्तियाँ नीचे उसके कुछ दाएँ हटकर लिखा जाता है। इस ं उपर्युक्त के अनुसार चार श्रेणियाँ हैं :—

(क) साष्टांग प्रणिपात, सभक्ति, सविनय चरणस्पर्श आदि।

(ख) सविनय, सादर प्रणाम आदि।

(ग) सप्रेम नमस्कार, आलिंगन, नमस्ते आदि।

(घ) शुभ आशीर्वाद, हार्दिक शुभकामना आदि।

कार्यालयीय पत्रों आवेदनों में उपर्युक्त (२) तथा (३) की जगह निम्न-वस्तुएँ रहती हैं :—

२. प्रेषक :— अपना पूरा नाम, पदनाम, पता।

३ सेवा में :—प्रेषिती का नाम, पदनाम, स्थान, पता।

४. इसकी दाईं ओर प्रायः सामने, या निजी पत्र में कुछ ऊपर और कार्यालयीय पत्र में थोड़ा नीचे निम्नलिखित दो वस्तुएँ रहती हैं :—

(क) पत्र या आवेदन किस स्थान से प्रेषित किया जा रहा है तथा (ख) किस तिथि को। (क) में आवश्यकतानुसार अपना पूरा पता देते हैं, या संकेत मात्र। (ख) में तिथि पूरी दी जाती है; तारीख, मास तथा वर्ष।

५. पत्र या आवेदन का मुख्य भाग, विषयवस्तु। यह भी आवश्यकतानुसार कई अनुच्छेदों में बँटा रहता है।

६. समापन, उपसंहार। इसके भी तीन खंड होते हैं :—

(क) जहां पत्र भेजा जा रहा है, वहां के शेष बड़े छोटे सम्बन्धियों को भी प्रणाम तथा आशीर्वाद; उनका स्मरण, उनका कुशल-प्रश्न आदि। यह आवेदन में नहीं रहता।

(ख) आत्म-निवेदन, जैसे (अ) आपका चरण सेवक, आशीर्वादभाजन, प्यारा बेटा, सेवक आदि।

(आ) आपका कृपाकांक्षी, स्नेहभाजन, आपका बन्धु। आवेदन में केवल भवदीय या 'आपका विश्वासभाजन।

(इ) तुम्हारा बन्धु, तुम्हारा जीजाजी, तुम्हारा अपना ही।

(ई) तुम्हारा शुभेच्छु, हितैषी, मंगलेप्सु आदि।

(ग) अपना नाम या नाता।

(अ) पूरा पता कभी-कभी यहां भी दिया जाता है।

(आ) कार्यालयीय पत्र या आवेदन में केवल आवेदक का नाम रहता है।

नीचे कुछ नमूने दिए जा रहे हैं।

१. वी० पी० द्वारा पुस्तकें भेजने के लिए प्रकाशक को पत्र।

४, लखनऊ रोड,
दिल्ली
६-४-००

व्यवस्थापक महोदय,
वाणी मंदिर (पब्लिशर्स ऐण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स)
गोविन्द मित्र रोड, पटना।

कृपया निम्नलिखित पुस्तकों की एक-एक प्रति वी० पी० द्वारा भेजने का कष्ट करें :—

१. इंटर रसायन (भाग १, २)—मित्र एवं मिश्रा।

२. मूलभूत भौतिकी (भाग १, २, ३)—शर्मा, सिंह, प्रसाद ।

३. ए न्यू मेथड फौर वौलूमेटिक कैलकुलेशन—भट्टाचार्य ।

आपके कथनानुसार १५-०० रुपये अग्रिम मनीआर्डर से भेज रहा हूँ ।

भवदीय,
राजीव कुमार त्रिवेदी

२. विद्यालय-शुल्क देने से मुक्त करने के लिए आवेदन पत्र ।

सेवा में :—

प्रधानाध्यापक,
जिला स्कूल, जमशेदपुर ।

महोदय,

मैं आपके विद्यालय की आठवीं श्रेणी का छात्र हूँ । परिवार के भरण-पोषण के लिए अपेक्षित व्यय की तुलना में पिताजी की आय अत्यल्प है। एक मामूली नौकरी के अलावा उनके पास आय का और कोई साधन नहीं है । कमाने वाले एक वे ही हैं, व्यय करने वाले अधिक । दो बड़े भाइयों की पढ़ाई का खर्च अलग है । ऐसी स्थिति में मेरे भी विद्यालय शुल्क का वहन करना सचमुच ही पिताजी के लिए असंभव है ।

साथ ही, पिछली परीक्षा में मैंने सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया है । मैं विद्यालय खेलकूद प्रतियोगिता का कप्तान हूँ, वाद-विवाद परिषद् का मंत्री हूँ । यदि मैं विद्यालय शुल्क से मुक्त नहीं किया गया, तो मुझे विवश होकर पढ़ाई छोड़ देनी होगी, मेरी प्रतिभा कुंठित हो जायगी ।

अतः श्रीमान् से करबद्ध प्रार्थना है कि विद्यालय-शुल्क देने से मुक्त कर मुझ निर्धन छात्र को भी अध्ययन का एक अवसर दें । इसके लिए मैं श्रीमान् का आजीवन आभारी रहूँगा ।

आपका आज्ञाकारी छात्र
संजीव कुमार
अष्टम 'अ'

३. निमंत्रण-पत्र।

बेली रोड,
पटना,
६-४-८४

प्रिय श्री मिश्रजी,

मेरे पुत्र चि० मनोहर का शुभ विवाह बलिया निवासी डा० रामानन्द द्विवेदी की पुत्री कुमारी आशा से २०-४-८४ को होना निश्चित हुआ है।

आपसे साग्रह अनुरोध है कि उक्त अवसर पर बारात में सम्मिलित हो, वर-वधू को आशीर्वाद देकर इस यज्ञ की शोभा बढ़ाने की कृपा करें।

दर्शनाभिलाषी,
राजकुमार

कार्यक्रम

१९-४-८४	मुसल्लहपुर, वारीपथ स्थित आवास से बारात ९-०० बजे पूर्वाह्ण में बलिया के लिए प्रस्थान करेगी;
२०-४-८४	शाम को ६ बजे द्वार पूजा;
२०-४-८४	रात के ९ बजे विवाह संस्कार,
२१-४-८४	पूर्वाह्ण ९ बजे बारात विदा।

४. शोक-पत्र

छपरा
२-३-१९८४

प्रिय रमेश,

सप्रेम नमस्ते।

मुझे तुम्हारे पिताजी की आकस्मिक मृत्यु के समाचार से मार्मिक चोट पहुँची। हमें क्या पता था कि वे एक सप्ताह बाद ही हमलोगों को छोड़ परलोक सिधार जायेंगे। मृत्यु के निर्मम हाथों ने उन्हें हमलोगों से छीन लिया। मेरी समझ में नहीं आता है कि मैं तुम्हें किस तरह सान्त्वना दूँ। इस दुःखद घटना ने अवश्य ही पूरे परिवार के सदस्यों को शोक-संतप्त कर दिया होगा। किंतु क्या किया जाय, मृत्यु पर तो हम मानवों का वश नहीं चलता। वही होता है, जो नियति चाहती है। अब तो मित्र, अतीत को भूल जाओ और आने वाले कल को सुनहरा बनाने की चेष्टा करो, क्योंकि तुम्हें अभी बहुत मंजिलें तय करनी है।

मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हू कि वह दिवंगत आत्मा को शांति और शोक संतप्त परिवार को यह मर्मान्तिक आघात सहने की शक्ति प्रदान करे।

मां को धीरज बंधाते रहना। मैं भी समय मिलते ही आ रहा हूँ।

श्री रमेश चन्द्र
३३१, सरस्वती सदन
करमटोली, रांची

तुम्हारा बन्धु,
प्रेम कुमार

५. परीक्षा में प्राप्त सफलता पर बधाई

मोतीहारी,
५-३-१९८४

प्रिय अमृतेश,

सप्रेम नमस्ते।

अभी तुरंत दैनिक आर्यावर्त लेकर पढ़ने बठा ही था कि दूसरे पृष्ठ पर तुम्हारा फोटो उन लड़कों में देखा, जिन्होंने इस बार ग्रामीण छात्रवृत्ति परीक्षा में प्रथम दस स्थान प्राप्त किये हैं। मेरे हर्ष का पारावार न रहा। मैंने तुरंत अपने साथियों को तुम्हारा फोटो दिखलाया। सबों ने तुम्हारी सफलता पर तुम्हें बधाइयां दी हैं। सचमुच मित्र, सच्चा परिश्रम कभी व्यर्थ नहीं जाता है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि तुम भविष्य में और शानदार सफलता प्राप्त करोगे तथा मैं पुनः तुम्हें बधाई भेजूंगा।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित,

तुम्हारा,
आशुतोष मधुकर

६. अनुज के नाम परामर्श पत्र

आरा
८-४-८४

चि० गीरीश,

शुभ आशीष।

सुनने में आया है कि तुमने पिछली परीक्षा में सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया है। इस सफलता पर तुम्हें मेरी हार्दिक बधाई। आगे भी इस स्थान को बरकरार रखने की कोशिश करना।

किंतु मुझे पता चला है कि तुम खेलकूद में बिल्कुल भाग नहीं लेते हो, यहां तक कि प्रतियोगिताओं को देखने की भी तुम्हारी इच्छा नहीं होती। सचमुच यह दुःखद बात है। सिर्फ पुस्तकें एवं अध्ययन जीवन के सब पहलुओं को समृद्ध नहीं बना सकते। सदा पुस्तकों से चिपके रहनेवाला छात्र सरस जीवन का आनन्द नहीं ले पाता है। यदि तुम विश्व के ताजा समाचारों की ओर से आंखें मूँद लो, तो तुम्हारा दृष्टिकोण संकुचित हो जायगा, जीवन का दायरा सीमित हो जायगा, जीवन की उन्मुक्त उड़ान का मजा नहीं पाओगे। खेलों से हमें दलीय भावना, अनुशासन, सहिष्णुता की शिक्षा मिलती है। खेल-कूद शरीर को स्वस्थ, मजबूत एवं सक्रिय बनाती है। कालिदास ने भी कहा है: शरीरमाद्यं खलु धर्म-साधनम्। तुम्हारा शरीर यदि स्वस्थ रहेगा, तभी तुम देश की सहायता कर सकते हो, अन्यथा देश के लिए तुम बोझ बन जाओगे। तुम देश के बोझ को अपने कंधे पर नहीं लोगे, बल्कि देश को ही तुम्हारा बोझा ढोना पड़ेगा। अतः पुस्तकों के साथ खेलों में भी दिलचपी लो एवं स्वस्थ नागरिक बनकर अपना तथा देश का सर्वांगीण विकास करो।

मां बाबूजी तुम्हें शुभाशीर्वाद लिखा रहे हैं।

प्रेम एवं शुभकामनाओं सहित,

तुम्हारा अग्रज,

अमृतेश प्रियदर्शी

७. उपदेशात्मक-पत्र

मुजफ्फपुर
४-४-१६००

प्रिय विभाकर,

शुभाशीष।

तुमने माध्यमिक विद्यालय की शिक्षा प्राप्त कर उच्च विद्यालय में प्रवेश लिया है। यह तुम्हारे लिए एक नया जीवन है। अब तक तुम माता-पिता की देख-रेख में पले थे, किन्तु अब तुम्हें अपनी देख-रेख स्वयं करनी होगी। अब तक तुम गांव में रहे हो एवं शहरी जीवन से पूर्णतः अपरिचित रहे हो। शहर की चमक-दमक देखकर बहुत से लोगों की आंखें चौंधियां जाती हैं। शहर में मन को बरबस अपनी ओर खींच लेनेवाले अनेक प्रलोभन मिलते हैं। इन प्रलो-

मरीचिकाओं में फंसने से बचना, क्योंकि वे मकड़े के जाल की तरह हैं, जिनमें फँसते ही जाओगे एवं कभी बाहर नहीं निकल सकोगे। भोग-पिपासा को उत्तरोत्तर बढ़ानेवाली वस्तुओं के पीछे पड़कर अपने भविष्य को अन्धकारमय मत बना लेना। तुम छात्र हो, छात्र-धर्म को ध्यान में रखकर प्रगति-पथ पर अग्रसर होते जाना, ताकि भविष्य सुनहरा हो सके।

श्री अनिल कुमार मिश्र
नयी गोदाम, गया

तुम्हारा शुभाकांक्षी
दिवाकर

८. साइकिल के लिए अनुरोध

रांची
७-४-१९००

पूज्य पिताजी,
सादर चरण-स्पर्श।

आप जानते ही होंगे कि मुझे विद्यालय जाने-आने में नित्य पांच मील पैदल चलना पड़ता है। इसमें काफी समय या शक्ति नष्ट हो जाती है। पाठशाला से लौटने पर अधिक थकावट के कारण पढ़ाई बिलकुल नहीं हो पाती है। छात्रावास तथा विद्यालय के छात्रों में काफी प्रतिस्पर्द्धा प्रतियोगिता है। हर छात्र दूसरे से आगे बढ़ना चाहता है। ऐसी स्थिति में अध्ययन में दिन-रात एक करना होगा, तभी मुझे उत्तम सफलता मिल सकती है।

अतः मेरी प्रार्थना है कि आप मेरे लिए एक साधारण साइकिल खरीद कर भेजने का कष्ट करें। इससे समय की भी बचत होगी, साथ-साथ थकावट की मात्रा भी कम हो जायगी। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि साइकिल की व्यवस्था हो जाने पर मैं अधिकतम समय अध्ययन में दूँगा एवं वार्षिक परीक्षा में सर्वोत्तम परीक्षाफल लाने की चेष्टा करूँगा। पूजनीया माताजी को मेरा प्रणाम कहेंगे और रश्मि को हार्दिक प्यार।

आपका वात्सल्यभाजन,

रत्नाकर

निबन्ध

(Essay)

जिस रचना में किसी भी विषय पर विभिन्न तथ्य एक जगह समेट कर लिखित रूप में एक आकार में बाँध दिए जाते हैं, उसे ही निबन्ध कहते हैं। इसी अर्थ में लेख शब्द भी प्रचलित हो गया है। यही तथ्य-समूह जब बोला जाता है, तब पूर्वापर का तारतम्य प्रत्यक्ष नहीं रहने से उसका आकार इस तरह नहीं बँध पाता कि उस आकृति में आरम्भ, मध्य, अन्त का शरीर के प्रत्येक अंग की भाँति उपयुक्त अनुपात हो, अनुच्छेद-विभाजन हो। वह भाषण कहलाता है। इसके अतिरिक्त भाषण का श्रोता प्रत्यक्ष, मध्यमपुरुष में रहता है, और लेख का पाठक परोक्ष, अन्यपुरुष में। इसलिए भाषण की भाषा से निबन्ध की भाषा में अधिक व्यवस्था, परिष्कृतता, चुस्ती रहती है। भाषण में श्रोताओं की प्रतिक्रिया के अनुसार कुछ शैथिल्य आ जाता है, जो निबन्ध में बिलकुल नहीं रहता।

विषय तथा शैली की दृष्टि से निबन्ध निम्नलिखित प्रकार के होते हैं :—

(१) वर्णनात्मक (*Descriptive*)—स्थिर और स्थूल वस्तु का वर्णन, जैसे - भारत, हिमालय, गाय, रेल गाड़ी, जन्माष्टमी, गणतन्त्र दिवस, रिक्शा आदि। इसकी शैली है; यह ऐसा है, ऐसा होता है।

(२) विवरणात्मक या कथात्मक (*Narrative*) कालक्रम से घटित वस्तु, घटना का विवरण, कथा; जैसे, पारितोषिक वितरण, नौका बिहार, कन्दुक प्रतियोगिता, ध्वजोत्तोलन, वनभ्रमण, स्वतन्त्रता संग्राम, सरस्वती पूजा आदि। इसकी शैली है; तब यह हुआ, तब यह हुआ।

(३) विवेचनात्मक (*Reflective*) प्रायः अमूर्त्त वस्तु का निरूपण, विश्लेषण; जैसे, सत्संगति, अहिंसा, सत्य, अनुशासन, क्रोध, युद्ध, समाज-कल्याण, देशभक्ति, राष्ट्रभाषा, अणुशक्ति। इसकी शैली है; ऐसा करना चाहिये, यह उचित है, कर्त्तव्य है। इस में तर्कात्मकता तथा उपदेशात्मकता आ जाती है।

(४) भावात्मक (*Emotional*)—इसमें वक्ता या लेखक किसी वस्तु के संदर्भ में अपनी कल्पनाओं की उड़ानें भरता है; अपनी प्रतिक्रियाएँ, मनोभाव, व्यक्त करता है; जैसे चांदनी, उषाकाल, सूर्योदय, सूर्यास्त, वसन्त, झरना आदि। इसकी शैली है; ऐसा लगता है, दिखता है, प्रतीत होता है, मानो···। यह काव्यात्मक तथा कल्पना-प्रधान होता है।

किसी भी निबन्ध तथा विषय में प्रायः एक से अधिक प्रकारों का मिश्रण रहता ही है। फिर भी जिसकी प्रधानता रहती है, उसी के अनुसार उस का वर्गीकरण किया जाता है।

(५) उपर्युक्त सभी प्रकार के निबन्ध दो रीतियों से लिखे जाते हैं; (क) एक तो विषय वस्तु को केन्द्र बनाकर; उसे वस्तुनिष्ठ (*Objective*) कहते हैं, (ख) दूसरे वस्तु के परिप्रेक्ष्य में अपने को केन्द्र बनाकर. इसे व्यक्तिनिष्ठ या आत्मनिष्ठ (*Subjective*) कहते हैं। यही वैयक्तिक (*Personal*) निबन्ध कहलाता है। इस में किसी व्यक्ति या वस्तु की स्मृति, कल्पना प्रत्यक्ष आदि से जो दिवास्वप्नधारा सी चिन्तनधारा चलने लगती है, उसका चित्रण होता है। यह शुद्ध चिन्तनात्मक होता है।

(६) जो निबन्ध छोटा रहता है, जिस में बहुत ब्यौरा नहीं, किसी एक विषय-बिन्दु पर सारा ध्यान केन्द्रित रहता है. वह लघु निबन्ध कहलाता है। जो अन्तर नाटक और एकांकी, उपन्यास और कहानी, काव्य और मुक्तक में है, प्रायः वही निबन्ध और लघु निबन्ध में।

प्रत्येक छात्र अपनी रूचि तथा क्षमता के अनुकूल दिशा में ही अपनी लेखनी दौड़ा पाता है, इसी लिए प्रश्न पत्र में अनेक प्रकारों की ऐच्छिकता रखी जाती है।

निबन्ध-लेखन में भी विचार-बिन्दुओं के अनुसार अनुच्छेद-विभाजन का ध्यान अवश्य रखना चाहिए। पूरे लेख या निबन्ध को प्रायः तीन खडों में बाँट लेना चाहिए। (क) पहले अनुच्छेद में विषय का प्रवेश, आरम्भ या भूमिका रहनी चाहिए। निबन्ध का आरम्भ कहानी की भाँति बीच से नहीं हो जाता। (ख) अन्तिम अनुच्छेद में उपसंहार, अपना मन्तव्य, निर्णय देना चाहिए। (ग) बीच के अनुच्छेदों में विषय का वर्णन, विवेचन, दृष्टान्त, उद्धरण आदि इस क्रम से सजाना चाहिए कि लेख का पूरा शरीर सिर, धड़, पाँव आदि की भांति क्रमिक और आनुपातिक आरोह-अवरोह वाला बन जाय। भाषा को जान बूझ कर क्लिष्ट नहीं बनाना चाहिए।

कुछ सरल निबन्धों के उदाहरण मात्र प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

(१/ छात्र और राजनीति

छात्र-जीवन, जीवन का सबसे महत्वपूर्ण भाग है। वह हर व्यक्ति के जीवन में ऐसा बिन्दु है, जहाँ से उसके भावी जीवन की शुरुआत होती है। छात्र-जीवन तपस्या और साधना का जीवन होता है, जिसमें विद्यार्थी की

रखनेवाले को एक कष्ट-सहिष्णु, कठोर और दृढ़संकल्प साधक की तरह तपना पड़ता है। तपस्या की इस दाहक अग्नि का सुफल जीवन के उन मधुर वर्षों में मिलता है, जब व्यक्ति अपना एक अस्तित्व बना लेता है। दूसरी तरफ राजनीति वह भगदड़ है, जहां किसी को दूसरे की ओर देखने का न अवकाश है, न रुचि; सब स्वार्थ के पुतले होते हैं। आज की राजनीति धर्मरहित होने के कारण उस लाश की सी बदबूदार हो गई है, जो महीनों से सड़ चुकी है। राजनीति को द्यूत-क्रीड़ा भी कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं, क्योंकि इसमें सत्य-असत्य, अच्छा-बुरा के प्रति व्यक्ति आंखें मूँद लेता है।

स्पष्टतः छात्रों के कोमल मस्तिष्क को आज की राजनीति की गंदी गलियों में भटकने लिए छोड़ देना बहुत ही चिन्तनीय विषय है। यह दुःस्थिति राष्ट्र के भविष्य के लिए भी उतनी ही बुरी है।

वस्तुतः इस समय छात्रों को राजनीति से कोई सीधा सम्बन्ध भी नहीं है। किन्तु देश के कुछ पदलोलुप स्वार्थी नेता अपने स्वार्थ के लिए राष्ट्र का गला घोंट देने में नहीं हिचकते। वे राष्ट्र के भावी कर्णधार छात्र समुदाय को मार्गभ्रष्ट बनाए जा रहे हैं। छात्र संगठन कोई क्रियात्मक संस्थान न रहकर समाज का सिरदर्द बन गया है। आज कल छात्र-हड़ताल विश्वविद्यालयों की आम घटना बन गई है। परीक्षाओं की तारीख बढ़वाने, उनका बहिष्कार करने से उन्हीं को अधिक क्षति पहुँच रही है। इस से जौ के साथ घुन की भाँति विद्याव्यसनी छात्र भी पिस जाते हैं। यह बहुत ही खेदजनक हैं। देश के भविष्य-निर्मातागण अनिश्चितताओं के भुलावे में इधर-उधर भटकें, यह ठीक नहीं। किन्तु वस्तु-स्थिति को देखने से यह बात भी पूर्णतया स्पष्ट हो जाती है कि यह युग छात्रों से राजनीति के प्रति पूर्ण उदासीनता की अपेक्षा भी नहीं करता। वर्तमान युग छात्रों की सचेतनता की कामना करता है, क्योंकि विश्व की बढ़ती जटिलताओं का अध्ययन उनके लिए बहुत जरूरी है। ऐसी स्थिति में ऐसा किया जा सकता है कि छात्रों का राजनीति से प्रत्यक्षतः कोई सम्बन्ध न हो, राजनीति उनके जीवन का पेशा न बने, किन्तु वह शिक्षा का एक विषय बन जाय। राजनीति का यह स्वरूप छात्रों के लिए लाभप्रद और समाज के लिए भी मंगलकारी हो सकता है।

(२) जातिवाद: एक अभिशाप

वर्ण-वर्ण में छिड़ा द्वन्द्व है, जाति-जाति से जूझ रही है।
स्वार्थ किये हैं व्यग्र सभी को, [illegible] कब सूझ रही है?

जातिवाद एक सामाजिक अभिशाप है जिसकी आड़ में छिप कर समाज के चन्द प्रभावशाली स्वार्थी अनेक गरीबों, दलितों का रक्त-चूषण कर रहे हैं।

आज जनजीवन के कोने-कोने में जातिवाद का बोलवाला है। इस ने समाज को खंडित कर दिया है, देश की अक्षुण्ण एकता नष्ट कर दी है। आज एक जाति में भी कई प्रजातियां हैं। ऊँची जाति के कहलानेवाले लोग नीची कहलानेवाली जाति के गरीब लोगों का स्पर्श भी सहन करने को तैयार नहीं। कितना दुःखद दृश्य है यह! ब्रह्मा ने तो सृष्टि करते समय हर मानव मूर्ति का निर्माण एक ही मिट्टी और पानी से किया है, किन्तु मानव अपने क्षुद्र स्वार्थों के कारण परस्पर अलगाव और घृणा बढ़ाता जा रहा है।

जातिवाद की इस गहरी भावना ने समाज को युग युगान्तर से जो हानि पहुँचाई है, उसकी क्षतिपूर्ति कभी नहीं हो सकती। जाति-भेद से मनुष्य की प्रतिभा क्षीण हुई है, उसकी क्षमता का ह्रास हुआ है। बेईमानी और भ्रष्टाचार का कुप्रभाव सारे समाज को ग्रस चुका है। आज देश में जातिवाद के साथ हर वर्ष कितने झगड़े होते हैं। जातिवाद ने मानव की सामाजिकता पर बहुत गहरी चोट की है, उसने मानव की मानवता को संकुचित कर दिया है। उसे अपंग बना दिया है।

प्रत्येक राष्ट्र का स्वरूप राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति के सहयोग से निर्मित होता है। परन्तु यदि राष्ट्र की आबादी का कोई बहुत बड़ा भाग दबा रह गया, उसे सर उठाने का अवसर न मिला, तो राष्ट्र के सुमनों का संतुलित विकास कभी नहीं हो पायगा। जो राष्ट्र अपनी प्रोन्नति और प्रगति चाहता है, उसे जातिवाद-उन्मूलन की हर नीति का अनुसरण करना ही होगा। अतः सरकार को कानून के द्वारा अस्पृश्यता-उन्मूलन करने के लिए बाध्य होना पड़ा है।

जातिवाद आज किसी समाज-विशेष, राष्ट्र-विशेष की नहीं, अपितु समूचे विश्व की समस्या है। आज भी गोरे कालों से, अमेरिकन लोग निग्रो लोगों से, अंग्रेज लोग फ्रेंच लोगों से, मुसलमान ईसाइयों से, हिन्दू मुसलमानों से, द्विज शूद्र से और बड़े पेशेवाले छोटे पेशेवाले से घृणा करते हैं। यह जातिवाद समूचे विश्व के नाम पर कलंक है, काला धब्बा है।

भारतीय समाज तो जातिवाद की भयानक व्याधि से बहुत पुराने समय से पीड़ित रहा है। आज का समय राष्ट्र के हर व्यक्ति को यह अशोभनीय लबादा उतार फेंकने को प्रेरित करता है। वस्तुतः जातिवाद के कारण समूचे देश का ही अस्तित्व खतरे में पड़ गया है।

सच तो यह है कि हम सब एक मानव जाति के, मानव परिवार के सदस्य हैं।

(3)

साक्षरता समस्या और हमारे कर्तव्य

निरक्षरता किसी भी देश के वर्तमान और भविष्य दोनों के लिए अभिशाप है। जहां निरक्षरता है, वहां अंधकार हैं, रूढ़ियां है। हमारी आखों में एक सपना झूल रहा था कि हम जब स्वतंत्र होंगे, तो हमारी स्थिति बिल्कुल बदल जायेगी। परन्तु आज स्थिति ज्यों की त्यों है। वस्तुतः जनता की निरक्षरता ही इसके लिए उत्तरदायी हैं।

आज जितने स्कूल खुले हैं, उनकी संख्या कम नहीं है। दुःख इस बात का है कि जितने शिक्षण संस्थान अब तक खोले गये हैं, उनका उपयोग ठीक से नहीं हो रहा है। दूसरी बात यह है कि स्त्री शिक्षा की ओर ठीक से ध्यान नहीं दिया जा रहा हैं। स्त्रियां पारिवारिक जीवन की रीढ़ होनें के साथ-साथ राष्ट्र की विधात्री भी हैं। अगर वे अशिक्षित, निष्क्रिय, बेकार होंगी, तो यह निश्चित है कि देश का एक महत्त्वपूर्ण अंग भी बेकार ही रहेगा।

साक्षरता अभियान के संबंध में चर्चा करते समय हमें वियतनामी सरकार और वहां की जनता से कुछ सीख लेनी चाहिए। वे निश्चय ही श्लाघ्य हैं। आज विएतनाम के क्षेत्र में व्यक्ति-व्यक्ति साक्षर बनाया जा चुका है। स्त्री समाज के साथ-साथ वर्तमान अपढ़ नवयुवक समाज को भी साक्षर करना बहुत जरूरी है। अगर वर्तमान नवयुवक पीढ़ी में साक्षरता आ जायेगी, तो हमारी समस्याएँ स्वयं हल हो जाएँगी।

साक्षरता अभियान की सफलता के लिए एक विस्तृत योजना की आवश्यकता है, जो देश के कोने-कोने को साक्षरता इकाइयों में बांटे और हर इकाई को पूर्ण रूप से साक्षर करे। इस योजना में सरकार का ही नहीं, अपितु जनता का भी पूर्ण सहयोग होना चाहिए। इसके लिए : ईच वन टीच वन : का नारा राष्ट्रव्यापी स्तर पर गूँजना चाहिए। निरक्षरता प्रगतिशील भारत की विकट समस्या है, उसकी भौतिक और आध्यात्मिक प्रगति के लिए दुर्गम रुकावट है। जब तक देश का हर नागरिक मानसिक रूप से जागरित नहीं होगा, हर मनुष्य की बौद्धिक क्षमता विकसित नहीं होगी, तब तक हमारा प्रजातंत्र स्वप्न ही बनकर रहेगा।

(४) बढ़ती जनसंख्या और इसके समाधान

प्रगतिशील भारत जिन समस्याओं से घिरा है, उनमें जनसंख्या-वृद्धि की समस्या सबसे महत्त्वपूर्ण है। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद शिक्षा के विकास,

न-अभियान और स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं में

वृद्धि के कारण जनसंख्या में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। जनसंख्या की इस बाढ़ ने देश को दीन बना दिया है। देश को उन्नत और सम्पन्न बनाने के लिए जनसंख्या की वृद्धि को रोकना सबसे जरूरी है।

परिवार नियोजन विभाग की स्थापना इस दिशा में सबसे महत्त्वपूर्ण कदम है। इस विभाग द्वारा विभिन्न स्थलों पर परिवार नियोजन केन्द्र खोले गये हैं। इन केन्द्रों में मुफ्त में लोगों को नसबंदी की सुविधा प्रदान की गई है। इसी कारण आज देश में लगभग १० प्रतिशत जनसंख्या की नसबंदी हो चुकी हैं। परन्तु परिवार नियोजन की सफलता तभी संभव है, जब सामान्य जनता इसकी महत्ता से परिचित हो। इसके लिए काफी काम करना बाकी है। सरकार की जनसंख्या-नीति को भी तभी सफलता प्राप्त होगी, जब हर नागरिक इसकी महत्ता से परिचित हो, क्योंकि इस समय अधिकांश जनता, जनसंख्या-नीति क्या है, इसे भी नहीं जानती है। पंजाब सरकार ने परिवार नियोजन को अनिवार्य कर दिया है और यह घोषणा भी की है कि जो लोग योजना में निश्चित की गई संख्या से अधिक बच्चा पैदा करेंगे, उन्हें कर देना होगा। वर्तमान सरकार ने इस सम्बन्ध में अपनी प्रतिक्रिया भी व्यक्त की है कि इतने कठोर कदम नहीं बनाए जायेंगे।

वस्तुतः परिवार नियोजन नए भारत की नई मांग है। आज जब स्वतंत्रता प्राप्ति को ३९ वर्ष हो चुके हैं, तब भी हम विश्व के उन इने-गिने राष्ट्रों में नहीं आ पाये हैं, जो सम्पन्न और समृद्ध स्वीकार किये जाते हैं। अतः आवश्यकता इस बात की है कि हर व्यक्ति इसकी महत्ता को स्वीकार करे।

अगर कुछ वर्षों के लिए परिवार नियोजन को अनिवार्य बना दिया जाय, तो शायद जनसंख्या की यह विध्वंसक, विनाशक बाढ़ रुक सकेगी। जनसंख्या विस्फोट की यातनाओं से, उसके प्रकोपों से बचने का और कोई उपाय भी नजर नहीं आता। इस भूत को शीघ्रातिशीघ्र भारत से भगाना जरूरी है, अन्यथा हमारी आर्थिक स्थिति और बिगड़ती चली जायगी।

(7) सन १९७० का चुनाव

चुनाव प्रजातांत्रिक शासन पद्धति का मूल प्राण है, क्योंकि यही वह माध्यम है, जिससे जनता अपने प्रशासनिक यंत्र को स्वेच्छानुसार परिवर्तित एवं परिवर्द्धित करती है। इस प्रकार चुनाव सामान्य जनता के अस्तित्व के महत्त्व का प्रतीक है।

१९७० का चुनाव इसी बात का सूचक है कि जनता ने अपनी इच्छा के अनुसार शासन व्यवस्था एक नये वर्ग को सौंप दी। १९६६ से १९७७ तक

कांग्रेस की सरकार ने अपनी नीतियों के अनुसार देश का मार्ग दर्शन किया, उसके

वर्तमान को संवारने और भविष्य को उज्ज्वल स्वरूप प्रदान करने का यत्न किया। उस सरकार की सफलताओं और असफलताओं पर विचार करते हुए जनता ने इस चुनाव में नई करवट ली और शासन जनता पार्टी के हाथों में सौंप दिया।

लेकिन इस चुनाव की महत्ता इस तथ्य में है कि इस चुनाव ने जनतंत्र को नई दिशा प्रदान की। कांग्रेस ने स्वतंत्रता दिलाई थी। अतः वह यह समझती थी कि केवल इसके सहारे वह बहुत दिनों तक सत्तारूढ़ रह सकेगी। किंतु इस चुनाव के परिणामों से यह स्पष्ट हो गया कि भारतीय प्रजातंत्र ने एक नई मोड़ ली है।

इन सब चीजों के अलावा जो सबसे महत्त्वपूर्ण बात सामने आई है, वह यह कि भारत में भी द्विदलीय प्रजातंत्र की भावना जोर पकड़ रही है। इससे शायद देश का भविष्य उन्नति के पथ पर अग्रसर हो सकेगा। साथ ही इस चुनाव से यह भी स्पष्ट हो गया कि भारतीय जनता अपना निर्णय लेना भी जानती है।

हर चुनाव की अपनी उपलब्धियां होती है। इस चुनाव के परिणामों से बहुत ही उच्चकोटि की उपलब्धियों की आशाएँ नहीं की गई थी। देखना यह था कि भविष्य क्या बोलता है। क्या भारतीय जन-जीवन नई जिंदगी प्राप्त करने में सफल हो सकता है, या नहीं ?

पंडित नेहरू ने कहा था कि चुनाव जनता को राजनीतिक शिक्षा देने का विश्वविद्यालय है। इस परिप्रेक्ष्य में निश्चय ही इस चुनाव का महत्त्व बहुत अधिक हैं। वस्तुतः चुनाव युद्ध नहीं, एक तीर्थ है, जहां हर व्यक्ति की महत्ता पूजित और स्वीकृत होती है।

अभ्यास

(१) अपनी मां को एक पत्र लिखकर सूचित करें कि आप पूर्ण स्वस्थ हैं, चिन्ता की कोई बात नहीं, परीक्षा की तैयारी में लगे हैं, इसी लिए कभी-कभी पत्र देना भूल जाते हैं।

(२) इन पर निबन्ध लिखें—शरद् ऋतु, समाचार पत्र, राजीव गांधी, १५ अगस्त, सरस्वती पूजा, देशाटन।

(३) इन पर लघु निबन्ध लिखें—जहां चाह वहां राह, स्वास्थ्य, सांच बराबर तप नहीं, अन्धेर नगरी चौपट राजा।

अध्याय : १८

संक्षेपण

(Precis)

संक्षेपण का अर्थ है संक्षिप्त करना, अर्थात् जो बात कहीं विस्तार से, व्यास शैली से कही गई है, उसे यहां संक्षिप्त कर, संक्षेप में, कहना। यह समास शैली का ही एक प्रकार है।

संक्षेपण में इतनी बातों का ध्यान रखा जाता है :—

(१) संक्षेपित रचना में मूल रचना से प्राय: एक तिहाई शब्द ही रखे जाते हैं, अधिक या कम नहीं। अत: पहले मूल रचना की शब्द गणना कर लेनी चाहिए।

(२) इसके लिए ऐसा किया जाता है कि मूल रचना को एकाधिक बार पढ़कर उसके मुख्य विचार-बिन्दुओं को रेखांकित कर लेते हैं, ताकि संक्षेपण में वे न छूटें, दूसरे न घुसें, अर्थात् "सार सार को गहि रहे, थोथा देय उड़ाय"। इस हेतु दो काम करते हैं, (क) यदि कथन पद्यात्मक या कथोपकथनात्मक है, तो उसे मन में ही साधारण गद्यात्मक (निबन्धात्मक) कर लेते हैं, (ख) किसी तथ्य की व्याख्या के लिए जो उपमा आदि अलंकारों, कहावतों, दृष्टान्तों, उदाहरणों का सहारा लिया गया है, विस्तार से व्यौरा दिया जाता है, उसका मोह यथासंभव छोड़कर शुद्ध तथ्य ले लेते हैं।

(३) कहीं-कहीं व्यस्त शब्दों को समास या प्रत्यय से एकात्मक बना लिया जाता है; जैसे, भारत के नागरिक = भारतीय, उपन्यास लिखने वाले = उपन्यासकार आदि।

(४) ऐसा कर के कहीं अलग एक प्रारूप बना कर शब्द-गणना कर देख लिया जाता है। यदि अब भी शब्द संख्या तिहाई से अधिक है, तो दुबारा छँटनी करनी पड़ती है, कम है तो छाँटे गए तथ्यों में से किसी अपेक्षाकृत महत्त्वपूर्ण को फिर ले लिया जाता है, क्योंकि संक्षेपण तिहाई से एक ही दो शब्द अधिक या कम रहता है।

(५) गणना में विभक्ति-चिह्न पृथक् नहीं गिने जाते; जैसे 'अन्धकार में' एक शब्द है, किन्तु—'अन्धकार के समय' या 'अन्धकार के कारण' दो।

(६) यथासंभव मूल भाषा, मूल शब्दों को बने रहने देना चाहिए। प्रत्येक पर्याय में अर्थ की छाया कुछ भिन्नता अवश्य रहती है। अत: मूल पदों या

लेखक द्वारा प्रयुक्त भाषा और शब्दों को रहने देने से उनका तात्पर्य अधिकतम सुरक्षित रह जाता है। यह याद रखना चाहिए कि तात्पर्यार्थ से संक्षेपण एक भिन्न वस्तु है।

(७) इतना कर लेने के बाद सोच कर इस रचना के विषय का ऊपर एक संक्षिप्त शीर्षक दे देना चाहिए।

(८) तब इसके शब्दों की गणना कर नीचे दाहिनी ओर कोष्ठ में इसकी तथा मूल रचना की, दोनों, संख्याएँ दे देनी चाहिए, जैसे--

(मूल शब्द १००, संक्षेपित संख्या ३४)

नीचे एक उदाहरण से इसे दिखाया जा रहा है—

अनुच्छेद

बिना आत्मशुद्धि के प्राणिमात्र के साथ एकता का अनुभव नहीं किया जा सकता और आत्मशुद्धि के अभाव में अहिंसा धर्म का पालन करना भी हर तरह नामुमकिन है। चूँकि अशुद्धात्मा परमात्मा के दर्शन करने में असमर्थ रहता है, इसलिए जीवन-पथ के सारे क्षेत्रों में शुद्धि की जरूरत रहती है। इस तरह की शुद्धि साध्य है, क्योंकि व्यष्टि और समष्टि के बीच इतना निकट का संबन्ध है कि एक की शुद्धि अनेक की शुद्धि का कारण बन जाती है और व्यक्तिगत कोशिश करने की ताकत तो सत्यनारायण ने सब किसी को जन्म ही से दी है।

प्रारूप—प्राणिमात्र के साथ एकता का अनुभव, परमात्मा का दर्शन और अहिंसा धर्म का पालन आत्मशुद्धि के बिना नामुमकिन है। सत्यनारायण ने सबको व्यक्तिगत कोशिश की ताकत दी है। अतः यह साध्य है।

अन्तिम रूप—आत्मशुद्धि के बिना प्राणिमात्र के साथ एकता का अनुभव, परमात्मा के दर्शन और अहिंसा धर्म का पालन नामुमकिन है। सत्यनारायण ने सबको व्यक्तिगत कोशिश की ताकत दी है। वह साध्य है।

(मूल रचना में प्रायः ७२ शब्द, संक्षेपण में प्रायः २४)

अभ्यास—

निम्नांकित का संक्षेपण करें—

सकाम भक्ति अथवा गंवार मनुष्य की भावना का बड़ा महत्त्व है। अन्त में इससे महान् सामर्थ्य पैदा होती है। जीवधारी कोई भी और कैसा ही हो, वह जब एक बार परमेश्वर के दरबार में आ जाता है, तो फिर मान्य हो जाता है। आग में किसी लकड़ी को डालिए, वह जल ही उठेगी। परमेश्वर की भक्ति एक अपूर्व साधना है। परमेश्वर सकाम भक्ति की भी कद्र करेगा। बाद में वह भक्ति निष्कामता और पूर्णता की ओर चली जायगी।

परीक्षा के प्रश्न

बिहार विद्यालय परीक्षा समिति

१९८४ वार्षिक

१. 'उ' ध्वनि का उच्चारण स्थान क्या है ? (क) कण्ठ, (ख) मूर्धा, (ग) तालु, (घ) ओष्ठ् ।

२. 'सूर्योदय' का संधि-विच्छेद क्या है ?
(क) सूर्यो + दय, (ख) सूर्यः + उदय, (ग) सूर्या + उदय, (घ) सूर्य + उदय ।

३. 'नायक' का सही स्त्रीलिंग रूप क्या है ?
(क) नायीका, (ख) नायका, (ग) नायिका, (घ) नयिका ।

४. 'वह जन्म का भिखारी है'— इस वाक्य में 'का' किस कारक की विभक्ति है ? (क) सम्बन्ध, (ख) अधिकरण, (ग) सम्प्रदान, (घ) करण ।

५. 'वह, जो अभी आया था, मेरा भाई है ।'—इस वाक्य में 'जो अभी आया था' क्या है ?

६ 'एक पंथ दो काज' मुहावरे का सही अर्थ क्या है ?
(क) एक कार्य के लिए दो रास्ते पर चलना, (ख) अनेक कार्य करना, (ग) किंकर्त्तव्यविमूढ़ होना, (घ) एक साथ दो काम करना ।

७. 'नाचे न जाने आँगन टेढ़' लोकोक्ति का सही अर्थ क्या है ?
(क) नाचने का ज्ञान न होना, (ख) अपने को नाच में कुशल मानना, (ग) अपना ऐब न देखकर दूसरों में ऐब देखना, (घ) आँगन का कारीगर ।

८. निम्नलिखित शब्दों में कौन-सा शब्द 'योगरूढ़' है ?
(क) विद्यालय, (ख) लम्बोदर, (ग) स्वर्ण, (घ) नीतिमान् ।

९. निम्नलिखित ध्वनियों को मिलाकर एक शब्द बनावें—
न् + अ + द् + ई + श् + अ ।

१०. 'प्रेरणार्थक क्रिया' किसे कहते हैं ?

११. 'पन' प्रत्यय के योग से एक शब्द बनावें ।

१२. 'लड़का रोटी खाता है ।'—इसे कर्मवाचक वाक्य में बदलें ।

१३. 'जो आँख से सुनता है ।'—इस वाक्य के लिए एक शब्द दें ।

१४. 'दशानन' का सविग्रह समास बतावें ।

१५. निम्नलिखित शब्दों में जो शुद्ध है, उसे लिखें—परिस्थिति, परिस्थिती ।

१६. 'व्योम' का एक समानार्थी शब्द लिखें।

१७. 'रावण' शब्द से भाववाचक संज्ञा बनाकर वाक्य में प्रयुक्त करें।

१८. वाक्य-प्रयोग द्वारा 'तरणि'—'तरणी' का अर्थ-भेद स्पष्ट करें।

१९. निम्नांकित वाक्यों में मोटे (काले) शब्दों का विपरीतार्थक शब्द लिखकर वाक्य पूरा करें—

(क) संसार में सभ्य और······ दोनों प्रकार के प्राणी होते हैं।

(ख) वर्तमान भारत की सभ्यता प्राचीन और·········का मिश्रण है।

२०. (क) प्रीतिभोज के निमंत्रण की अस्वीकृति एक वाक्य में दीजिए।

(क) पत्र लिखते समय बड़ी बहन को आप किस प्रकार संबोधित करेंगे ?

२१. निम्नलिखित विशेषणों से संज्ञा बनाकर वाक्यों में प्रयुक्त करें—

(क) काला, (ख) अच्छा

३०. उपयुक्त शीर्षक देकर निम्नलिखित का संक्षेपण करें—

इस संसार में आनन्द प्राप्ति के लिए मनुष्य भटकता रहता है; यह इस बात का परिचायक है कि शाश्वत सुख की अनुभूति उसके जीवन की सर्वोपरि आवश्यकता है। इसकी पूर्ति के लिए कभी वह एक तरह का माध्यम ढूँढ़ता है तो कभी दूसरे प्रकार का। व्यक्ति के सुख का केन्द्र सदा बदलता रहता है। शैशव काल माँ की गोद में, बाल्यावस्था खिलौने में, छात्र जीवन पुस्तक में, यौवन पत्नी और धन-संचय में, गृहस्थाश्रम पुत्रमोह में, यश प्राप्ति में नियोजित रहता है। गम्भीरता से विचार करने पर पता चलता है कि जिन भौतिक चीजों से आनन्द प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है, वे वस्तुतः आनन्द से रहित हैं। यदि आनन्द होता तो मन सदा उनमें लीन रहता, पर आनन्द प्राप्ति के केन्द्र का सतत बदलते रहना इस बात का प्रमाण है कि यह विशेषतः उन भौतिक वस्तुओं में नहीं है।

३१. निम्नलिखित विषयों में किसी एक पर लगभग ३०० शब्दों में निबन्ध लिखें :—(क) रामचरित मानस, (ख) शरद् पूर्णिमा, (ग) देशभक्ति, (घ) खेल जगत में क्रिकेट का स्थान, (ङ) चन्द्रशेखर आजाद।

३२. निम्नलिखित उक्तियों में से किसी एक पर अपना विचार लघु निबन्ध के रूप में लगभग २०० शब्दों में लिखें :— (क) बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय। (ख) पर उपदेश कुशल बहुतेरे। (ग) सत्यमेव जयते। (घ) सुखी मीन जहँ नीर अगाधा।

१९८५ (वार्षिक)

१. 'मैं इस महीने के अन्त तक अपने पद से त्याग पत्र दे दूँगा।'— इस वाक्य में "इस महीने के अन्त तक" क्या है ? निम्नलिखित में से चुन कर लिखें :—

(क) पद बंध, (ख) समस्त पद, (ग) पद, (घ) उप वाक्य।

२. "फ" का उच्चारण स्थान क्या है ?
(क) कंठ, (ख) ओष्ठ, (ग) तालु, (घ) मूर्द्धा।

३. नारायण" का सही सन्धि-विच्छेद क्या है ?
(क) नर+आयण, (ख) नार+आयन, (ग) नार+अयन, (घ) नार+अयण।

४. निम्नांकित शब्दों में कौन-सा शब्द तद्भव है ?
(क) पुत्र, (ख) लोटा, (ग) कीमत, (घ) पलंग।

५. निम्नांकित शब्दों में कौन-सा योगरूढ़ है ?
(क) रात्रि, (ख) मित्र, (ग) चन्द्रशेखर, (घ) छल-छन्द।

६. 'झूठ मत बोलो।'—इस वाक्य में "मत" कौन-सा निपात है ?
(क) विस्मयादिबोधक, (ख) सीमाबोधक, (ग) प्रश्नबोधक, (घ निषेधबोधक।

७. "आग में घी डालना" मुहावरे के चार अर्थ दिये गये हैं। सही अर्थ कौन है ?
(क) आग प्रज्वलित करना, (ख) क्रोध भड़काना, (ग) घी को नष्ट करना, (घ) हवन करना।

८. निम्नलिखितों में कौन-सा मिश्र वाक्य है ?
(क) उसने अपना सब धन लुटा दिया। (ख) क्या उसने अपना धन लुटा दिया ? (ग) उसके पास जो कुछ धन था उसे उसने लुटा दिया। (घ) उसके पास धन था और उसने लुटा दिया।

९. प्रेरणार्थक क्रिया किसे कहते हैं ?

१०. निम्नलिखित ध्वनियों को मिलाकर एक शब्द बनावें :—
प्+अ+र्+ई+क्+ष्+आ।

११. बलाघात किसे कहते हैं ?

१२. 'आयुष्मान्' का स्त्रीलिंग रूप क्या है।

१३. विस्मयादिबोधक वाक्य का एक उदाहरण लिखें।

१४. 'लोहा' से विशेषण बनायें।

१५. "ती" प्रत्यय के योग से एक कृदन्त शब्द बनावें।

१६. "नराधम" कौन समास है ?

१७. "गाड़ी स्टेशन पर पहुँची और यात्रीगण डब्बे से बाहर निकलने लगे।" प्रस्तुत वाक्य को सरल वाक्य में परिवर्तित करें।

१८ 'मानव' का विपरीतार्थक शब्द लिखें।

१९. सर्वनाम किसे कहते हैं।

२०. निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध करें :—
(क) हमारे शिक्षक प्रश्न किया है। (क) श्रीकृष्ण के अनेकों नाम हैं।

२१. नीचे लिखे वाक्यों के सामने कोष्ठक में दिये गये शब्दों से भाववाचक संज्ञा बनाकर रिक्त स्थानों की पूर्ति करें।

(क) पिछले आम—में कांग्रेस की अभूतपूर्व जीत हुई। [चुनना]

(ख) आज भाई-भाई में क्यों——हो रही है ? [लड़ना]

२२. नीचे लिखे शब्दों का अलग-अलग वाक्य-प्रयोग द्वारा अर्थान्तर स्पष्ट करें :—
मद्य, मध्य।

२३. निम्नांकित उद्धरण का संक्षेपण करें एवं उपयुक्त शीर्षक दें :-

प्रेमचंद की बेचैनी इसलिए थी कि वे चाहते थे कि जीवन-दीप का प्रकाश दूर-दूर तक फैले, वक्त पर फैले, अच्छी तरह फैले। वे अपनी सारी किताबें, अपना सारा साहित्य अपने प्रेस में ही छपवाकर समूचे देश में फैला देना चाहते थे। किसानों, मजदूरों, युवकों, विद्यार्थियों, स्त्रियों अछूतों की दर्दनाक जिन्दगी को आधार बनाकर जो कोई भी लिखे, सभी कुछ छापकर जनता को सजग सचेत बना देने का संकल्प प्रेमचन्द के अन्दर हिलोरें ले रहा था। अधिक-से-अधिक लिखते जाना, अधिक-से-अधिक छापते जाना, अधिक-से-अधिक लोगों को जागरूक बनाते जाना—शोषण, गुलामी, ढोंग, दंभ, स्वार्थ, रूढ़ि, अन्याय, अत्याचार इन सब की जड़ें खोद डालना और धरती को नई मानवता के लायक बनाना—यही प्रेमचन्द का उद्देश्य था।

३३. निम्नांकित विषयों में से किसी एक पर लगभग ३०० शब्दों में एक निबन्ध लिखें :—[क] आपका जीवन लक्ष्य, [ख] रिक्शाचालक, [ग] दीवाली, [घ] भारतीय कृषि की समस्या। (ङ) राष्ट्रकवि दिनकर।

२४. निम्नांकित उक्तियों में से किसी एक पर लगभग २०० शब्दों में अपना विचार लघु निबंध के रूप में लिखें :— [क] जो तो को कांटा बुए, ताहि बोय तू फूल। [ख] जिन ढूँढा तिन पाइयाँ, गहरे पानी पैठ। [ग] बिनु सत्संग विवेक न होई। [घ] घर का जोगी जोगड़ा, आन गाँव का सिद्ध।

बिहार इन्टरमिडियट कौंसिल परीक्षा

राष्ट्रभाषा [हिन्दी भाषी] कला, १९८४

२. निम्नलिखित विषयों में से किसी एक पर निबन्ध लिखिए—

(क) परीक्षा में कदाचार, (ख) आपके प्रिय कवि,
(ग) आपके जीवन की कोई स्मरणीय घटना, (घ) राष्ट्रीय एकता।

५. अपने जिला-आपूर्ति पदाधिकारी के नाम क्षेत्र के आवश्यक सामानों की जन-वितरण-प्रणाली के अन्तर्गत विक्रेता के विरुद्ध अनियमितता सम्बन्धी आवेदन-पत्र लिखिए।

६. किन्हीं दो के उत्तर दीजिए—

(क) वाक्य-प्रयोग द्वारा किन्हीं पाँच के अर्थ स्पष्ट कीजिए—

आँख लगना, सिर मुड़ाते ओले पड़ना, मुँह फुलाना, सिर धुनना, हाथ पर हाथ धरना, पीठ दिखाना, तीन तेरह होना।

(ख) किन्हीं पाँच शब्द-युग्मों के अर्थ-भेद स्पष्ट कीजिए—

नारी-नाड़ी, [illegible], तरणि-तरणी।

(ग) वाक्य-प्रयोग द्वारा किन्हीं पाँच के लिंग-निर्णय कीजिए—
चौकी, गिलास, जी, जूँ, नाखून, नारंगी।

७. निम्नलिखित संदर्भ का संक्षेपण कीजिए—

देशभक्त अपनी मातृभूमि को सच्चे हृदय से प्रेम करता है। यदि एक ओर इसे अतीत के गौरव पर गर्व है, तो दूसरी ओर वह अपने भविष्य को भी उज्ज्वल बनाता है। वह सदैव समाज में क्रांति चाहता है, किन्तु वह क्रांति जो न विशृंखल कही जा सकती है और न ही नागरिकता के प्रतिकूल। वह समाज में उन प्रचलित रूढ़ियों, अन्धविश्वासों परम्पराओं एवं परिपाटियों के विरुद्ध क्रांति करता है, जो देश की उन्नति के पथ की बाधायें हैं। लोगों में एकता, प्रेम और सहानुभूति उत्पन्न करना, उनकी राष्ट्रीय, सामाजिक एवं नैतिक चेतना जागृत करना, उन्हें कर्त्तव्यपरायण और अध्यवसायी बने रहने के लिए प्रोत्साहन देना ही देशभक्ति है।

राष्ट्रभाषा [अहिन्दी भाषी] कला, १९८४

१. निम्नलिखित विषयों में से किसी एक पर निबन्ध लिखिए—
(क) जाड़े की रात, (ख) राष्ट्रीय एकता, (ग) गाँव का मेला, (घ) पुस्तकालय।

२. एक-तिहाई शब्दों में संक्षेपण कीजिए—

साहित्य में अपनी ही आत्मा पर विश्वास रखने के केवल उपदेश ही, नहीं, किन्तु जीवनियाँ भी अनेक लिखी हुई हैं। इस कोटि में स्त्री और पुरुष, दोनों को बराबर जगह मिली है। पार्वती तपस्या में दृढ़निष्ठ है। वह महादेव को पति रूप से प्राप्त करना चाहती हैं। उनकी तपस्या की परीक्षा करने, उनके मनोबल को तोलने के इरादे से ऋषि उनसे कहते हैं, तुम क्यों व्यर्थ ही शिव-जैसे पागल के पीछे पड़ी हो? इससे तो अच्छा है कि विष्णु की कामना करो। वह सुन्दर हैं और सब तरह से महादेव से श्रेष्ठ हैं। यह सुनकर पार्वती का उत्तर नम्र होकर भी दृढ़ होता है। वह अपनी प्रतिज्ञा पर अटल रहती है।

३. किन्हीं दो के उत्तर दीजिए—

(क) वाक्य-प्रयोग द्वारा किन्हीं पाँच के अर्थ स्पष्ट कीजिए—

तलवा चाटना, दाँत खट्टे करना, नाक काटना, पसीने-पसीने होना, पाँव तले की मिट्टी खिसकना, पीठ फेरना, सिर उठाना।

(ख) वाक्य-प्रयोग द्वारा किन्हीं पाँच के लिंग-निर्णय कीजिए—
लालच, घास, जेब, खाट, खटमल, चादर, घमण्ड।

(ग) किन्हीं पाँच के विपरीतार्थक शब्द लिखिए—
आस्तिक, लौकिक, सन्धि, पंडित, सहल, राजा, उत्थान।

राष्ट्रभाषा [हिन्दी भाषी] कला, १९८५

१. किसी एक विषय पर निबन्ध लिखिए :—
(क) मातृभूमि, (ख) आतंकवाद की राजनीति, (ग) विज्ञान और जीवन, (घ) अंतरिक्ष यात्री, (ङ) [illegible], (च) [illegible]।

२. संपादक के नाम एक पत्र लिखें जिसमें यह उल्लेख करें कि किन-किन प्रयत्नों से भारत की गरीबी दूर हो सकती है।

३. किन्हीं दो के उत्तर दीजिए :—

(क) किन्हीं पाँच के अर्थ स्पष्ट कीजिए :—

हाथ पकड़ना, मुँह चुराना, सिर फिरना, छू-मंतर होना, अँगूठा दिखाना, पाँव मारना, माथा पकड़ना।

(ख) किन्हीं पाँच के वाक्य-प्रयोग से लिंग निर्दिष्ट कीजिए :—

मैल, पूर्णिमा, चील, नेह, मेघ, ब्रह्मपुत्र, जहाज, गोष्ठी।

(ग) किन्हीं पाँच के विपरीतार्थक शब्द दीजिए :—

आविर्भाव, आदि, आशा, रात्रि, पात, प्रकाश, धरती, जल।

४. निम्नलिखित गद्य-खंड का संक्षेपण कीजिए :—

यदि भारत तलवार की नीति अपनाए तो वह क्षण-स्थायी विजय पा सकता है, लेकिन तब भारत मेरे गर्व का विषय नहीं रहेगा। मैं भारत की भक्ति करता हूँ, क्योंकि मेरे पास जो कुछ भी है, वह सब उसी का दिया हुआ है। मेरा विश्वास है कि उसके पास सारी दुनिया के लिए एक संदेश है। मैं भारत से उसी तरह बंधा हूँ जिस तरह कोई बालक अपनी माँ की छाती से लिपटा रहता है, क्योंकि अनुभव करता हूँ कि वह मुझे मेरा आवश्यक आध्यात्मिक पोषण देता है।

राष्ट्रभाषा [हिन्दी भाषी] विज्ञान एवं वाणिज्य, १९८४

१. निम्नांकित विषयों में से किसी एक पर निबन्ध लिखिए—

(क) बेकारी की समस्या, (ख) आपके प्रिय कहानीकार, (ग) बिना टिकट रेल यात्रा, (घ) राष्ट्रीय त्योहार।

२. जिलाधिकारी के नाम लेखापाल के पद पर नियुक्ति हेतु आवेदन पत्र दीजिए।

३. किन्हीं दो के उत्तर दीजिए—

(क) वाक्य-प्रयोग द्वारा किन्हीं पाँच के अर्थ स्पष्ट कीजिए—

आँख दिखाना, हथेली पर बाल जमाना, नाक का बाल होना, कान काटना, नौ दो ग्यारह होना, नाको चने चबाना, दिन में तारे दिखाई देना।

(ख) निम्नलिखित शब्द-युग्मों में से किन्हीं पाँच के अर्थ-भेद स्पष्ट कीजिए—

असन-आसन, सूर-शूर, चिर-चीर, कुल-कुल, वदन-बदन, सत-शत।

(ग) वाक्य-प्रयोग द्वारा किन्हीं पाँच के लिंग-निर्णय कीजिए—

बुलबुल, मोती, पक्षी, हार, कमीज, टेबुल।

४. निम्नलिखित अवतरण का संक्षेपण एक-तिहाई शब्दों में कीजिए

मनुष्य सुख की खोज आदिकाल से कर रहा है। इसी की प्राप्ति उसके जीवन का मुख्य उद्देश्य रहा है। दुख से वह इतना घबड़ाता है कि इस जीवन में ही नहीं।

राष्ट्रभाषा [अहिन्दी भाषी] विज्ञान एवं वाणिज्य, १९८४

१. निम्नलिखित विषयों में से किसी एक पर निबन्ध लिखिए—
(क) चाँदनी रात, (ख) साइकिल की सवारी, [ग] गृह-उद्योग, (घ) रिक्शावाला।

२. एक-तिहाई शब्दों में संक्षेपण कीजिए—
किसी राष्ट्र या जाति में संजीवनी शक्ति भरनेवाला साहित्य ही है। इसलिए यह सर्वतोभावेन संरक्षणीय है। सब कुछ खोकर भी यदि हम इसे बचाये रहेंगे, तो·······

३. किन्हीं दो के उत्तर दीजिए—
(क) वाक्य-प्रयोग द्वारा किन्हीं पांच के अर्थ स्पष्ट कीजिए—
हाथा पाई होना, मुँह में लगाम न होना, पेठ-पीठ एक होना, बाल-बाल बचना, मन मारकर बैठना, मुट्ठी गरम करना, मुँह की खाना।
(ख) वाक्य-प्रयोग द्वारा किन्हीं पाँच शब्दों के लिंग-निर्णय कीजिए—
दही, जीरा, इलायची, नशा, पहरा, मूँछ, नाच।
(ग) किन्ही पाँच के विपरीतार्थक शब्द लिखिए—
अन्त, शान्त, आकाश, गरीब, सीधा देव, निरामिष।

राष्ट्रभाषा [हिन्दी भाषी] विज्ञान एवं वाणिज्य, १९८५

१. निम्नलिखित विषयों में से किसी एक पर निबन्ध लिखिए—
(क) छात्र और राजनीति, (ख) दहेज प्रथा, (ग) विज्ञान के वरदान, (घ) बर्षा की एक रात।

२. अपने गाँव या मुहल्ले की समस्याओं का उल्लेख करते हुए किसी दैनिक पत्र के संपादक के नाम पत्र लिखिए।

३. किन्हीं दो के उत्तर दीजिए—
(क) वाक्य में प्रयोग द्वारा किन्हीं पाँच के अर्थ स्पष्ट कीजिये—
छक्के छुड़ाना, कलेजा मुँह को आना, जले पर नमक छिड़कना, आसमान के तारे तोड़ना, अँधेर मचना, लोहा लेना, सिर धुनना, खाक छानना, थाली का बैगन होना, आठ-आठ आँसू रोना।
(ख) वाक्य में प्रयोग द्वारा किन्हीं पाँच शब्दों का लिंग-निर्णय कीजिए—
बालू, समीर, पोशाक, नयन, ताबीज, पीतल, तरंग, सलिल, राह, लोमड़ी, चिन्तन, एकांकी।
(ग) किन्हीं पाँच शब्दों के दो-दो पर्याय लिखिए—
पानी, वायु, पृथ्वी, पर्वत, लहर, आकाश, फूल, पुस्तक, उजला, सूर्य।

४. निम्नलिखित अवतरण का संक्षेपण एक-तिहाई शब्दों में कीजिए।
किसी राष्ट्र या जाति में संजीवनी शक्ति भरनेवाला साहित्य ही है। इसलिए यह सर्वतोभावेन संरक्षणीय है। सब कुछ खोकर भी यदि हम इसे बचाये रहेंगे, तो फिर इसके द्वारा हम सब कुछ पा भी सकते हैं। इसे खोकर यदि बहुत कुछ पा भी लेंगे, तो भी फिर इसे कभी न पा सकेंगे। कारण, है कि यह हमारे पूर्वजों का चिर संचित ज्ञान-वैभव ही साहित्य है। अन्यान्य लौकिक वैभव नश्वर हैं। यह अविनाशी है। इसलिए इसका जो पल्ला पकड़े रहेगा, वह भी अमर रहेगा।